Vidyasagar Nautiyal Ke Upanyason Ka Samajshastriya Adhyayan

A thesis submitted to the University of Hyderabad in partial fulfillment of the requirements for the award of the degree of

Doctor of Philosophy

in

Hindi

By

Habeeb Shaik

07HHPH02

Department of Hindi

School of Humanities

University of Hyderabad

Hyderabad 500 046

December 2011

CERTIFICATE

This is to certify that the thesis entitled *Vidyasagar Nautiyal Ke Upanyason Ka Samajshastriya Adhyayan* submitted by Ms Habeeb Shaik (07HHPH02) in partial fulfillment of the requirements for the award of the degree of Doctor of Philosophy in Hindi is a bonafide work carried out by her under my supervision and guidance. This thesis has not been previously published in part or in full to this or any other university or institution for the award of any degree or diploma.

Signature of the supervisor

Dr Shyam Rao

Department of Hindi

University of Hyderabad

Head

Department of Hindi

University of Hyderabad

Dean

School of Humanities

University of Hyderabad

DECLARATION

I, Habeeb Shaik, hereby declare that this thesis entitled *Vidyasagar Nautiyal Ke Upanyason Ka Samajshastriya Adhyayan* submitted by me under the supervision and guidance of Dr Shyam Rao is a bonafide research work and it has not been submitted to this university or any other university or institution for the award of any degree or diploma.

Habeeb Shaik

(07HHPH02)

विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन

(हैदराबाद विश्वविद्यालय की पीएच.डी., (हिन्दी)उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-सार)

2011

प्रस्तुतकर्त्री

हबीब शेख़

07HHPH02

अध्यक्ष

प्रो. रविरंजन
हिन्दी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय
हैदराबाद - 500046

निर्देशक

डॉ.श्याम राव
रीड़र, हिन्दी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय
हैदराबाद - 500046

अनुक्रमणिका

भूमिका

प्रथम अध्याय 1 - 54

1. साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन - अवधारणा

1.1 साहित्य - परिभाषा और स्वरूप विवेचन

1.2. समाज - अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप

1.3. साहित्य और समाज - परम्परागत दृष्टिकोण

1.4. समाज शास्त्र - अर्थ एवं परिभाषा

1.5. समाज शास्त्र - क्षेत्र एवं विषयवस्तु

1.6. समाज शास्त्र का अन्य शास्त्रों से संबंध

1.7. साहित्य के समाज शास्त्र का स्वरूप

1.8. साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन की प्रासंगिकता

1.9. उपन्यास की व्युत्पत्ति

द्वितीय अध्याय 55 - 75

2. विद्यासागर नौटियाल - व्यक्ति और रचनाकार

2.1. प्रस्तावना

2.2. टिहरी गढ़वाल की सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ

2.3. टिहरी गढ़वाल की साहित्यक परिस्थितियाँ

2.4. टिहरी गढ़वाल की राजनीतिक परिस्थितियाँ

2.5. विद्यासागर नौटियाल का पारिवारिक जीवन

2.6. राजनैतिक कार्यकर्ता के रूप में नौटियाल जी

2.7. विद्यासागर नौटियाल - रचना मानस

तृतीय अध्याय 76 -169

3. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों का कथ्य एवं शिल्प

3.1.कथ्य एवं शिल्प - अर्थ और परिभाषा

3.1.1. सूरज सबका है

3.1.2. उत्तर बायां है

3.1.3. झुंड से बिछुडा

3.1.4. यमुना के बागी बेटे

3.1.5. भीम अकेला

3.2. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों के प्रमुख पात्र

3.2.1. सूरज सबका है उपन्यास के पात्र

3.2.2. उत्तर बायाँ है उपन्यास के पात्र

3.2.3. झुण्ड से बिछुडा उपन्यास के पात्र

3.2.4. यमुना के बागी बेटे उपन्यास के पात्र

3.2.5. भीम अकेला उपन्यास के पात्र

चतुर्थ अध्याय 318 - 375

4. विद्यासागर नौटियाल जी के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन

4.1. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में सामाजिक परस्थितियाँ

4.2. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में सांस्कृतिक परिस्थितियाँ

4.3. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में आर्थिक परिस्थितियाँ

4.4. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में राजनीतिक परिस्थितियाँ

पंचम अध्याय **318 -375**

5. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में नारी

5.1 विभिन्न कालों में नारी की स्थिति

5.1.1. आदिकाल

5.1.2. मध्यकाल

5.1.3. आधुनिक काल

5.1. 2. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित नारी

5.2.1. नारी की सामाजिक स्थिति

5.2.2. नारी की नैतिक स्थिति

5.2.3. नारी की आर्थिक स्थिति

5.3. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित नारी शोषण

5.4. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित आत्मविश्वासी नारी

5.5. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित पराधीन नारी

5.6. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित स्वावलंबी नारी

उपसंहार **376 - 385**

ग्रंथ - सूचि

आधार ग्रंथ

संदर्भ - ग्रंथ

सहायक ग्रंथ

पत्र - पत्रिकाएँ

प्रथम अध्याय

1. साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन - अवधारणा

1.1 साहित्य - परिभाषा और स्वरूप विवेचन

1.2. समाज - अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप

1.3. साहित्य और समाज - परम्परागत दृष्टिकोण

1.4. समाज शास्त्र - अर्थ एवं परिभाषा

1.5. समाज शास्त्र - क्षेत्र एवं विषयवस्तु

1.6. समाज शास्त्र का अन्य शास्त्रों से संबंध

1.7. साहित्य के समाज शास्त्र का स्वरूप

1.8. साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन की प्रासंगिकता

1.9. उपन्यास की व्युत्पत्ति

द्वितीय अध्याय

2. विद्यासागर नौटियाल - व्यक्ति और रचनाकार

2.1. प्रस्तावना

2.2. टिहरी गढ़वाल की सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ

2.3. टिहरी गढ़वाल की साहित्यक परिस्थितियाँ

2.4. टिहरी गढ़वाल की राजनीतिक परिस्थितियाँ

2.5. विद्यासागर नौटियाल का पारिवारिक जीवन

2.6. राजनैतिक कार्यकर्ता के रूप में नौटियाल जी

2.7. विद्यासागर नौटियाल - रचना मानस

तृतीय अध्याय

3. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों का कथ्य एवं शिल्प

3.1.कथ्य एवं शिल्प - अर्थ और परिभाषा

3.1.1. सूरज सबका है

3.1.2. उत्तर बायां है

3.1.3. झुंड से बिछुडा

3.1.4. यमुना के बागी बेटे

3.1.5. भीम अकेला

3.2. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों के प्रमुख पात्र

3.2.1. सूरज सबका है उपन्यास के पात्र

3.2.2. उत्तर बायाँ है उपन्यास के पात्र

3.2.3. झुण्ड से बिछुडा उपन्यास के पात्र

3.2.4. यमुना के बागी बेटे उपन्यास के पात्र

3.2.5. भीम अकेला उपन्यास के पात्र

चतुर्थ अध्याय

4. विद्यासागर नौटियाल जी के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन

4.1. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में सामाजिक परस्थितियाँ

4.2. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में सांस्कृतिक परिस्थितियाँ

4.3. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में आर्थिक परिस्थितियाँ

4.4. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में राजनीतिक परिस्थितियाँ

पंचम अध्याय

5. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में नारी

5.1 विभिन्न कालों में नारी की स्थिति

5.1.1. आदिकाल

5.1.2. मध्यकाल

5.1.3. आधुनिक काल

5.1. 2. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित नारी

5.2.1. नारी की सामाजिक स्थिति

5.2.2. नारी की नैतिक स्थिति

5.2.3. नारी की आर्थिक स्थिति

5.3. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित नारी शोषण

5.4. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित आत्मविश्वासी नारी

5.5. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित पराधीन नारी

5.6. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित स्वावलंबी नारी

भूमिका

मनुष्य समाज में रहता हैं। समाज के साथ उसे अपना संबन्ध बनाए रखना पडता है। क्योंकि इसके बिना जीवन संघर्ष में वह कदापि विजयी नहीं हो सकता। समाज मुनष्यों का समिष्टिकृत या सामूहिक रूप है और उन रूपों में ही वह प्रकृति के साथ संघर्ष कर सकता है और जीवित रह सकता है। इसलिए प्रकृति के विरूध्द संघर्ष करके अपनी जाति की सुरक्षा के लिए समाज एक उपयोगी साधन है। साहित्य का संबन्ध मानवीय जीवन से है। साहित्य का कथ्य समाज की घटना है, जो कि स्वयं में बहुत विस्तृत है। जब साहित्य भाषा जैसे सामाजिक माध्यम को अपनाता है और समाज के पूर्वानुभवों से संबध्द रहता है, तो अवश्य ही समाज वस्तु अथवा घटना उसके विषय का निर्धारण करती है। साहित्य का संपूर्ण कथ्य समाज की घटनाएँ है। समाज की सीमा और उपलब्धियों का यथार्थ चित्रण करना साहित्य का धर्म है।

साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन के अंतर्गत साहित्य तथा कला की पहचान सामाजिक संदर्भों के परिप्रेक्ष्य में किया जाता है। क्यों कि समाज का क्षेत्र जितना विस्तृत होगा उतना ही सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, संस्कृतिक व्यापक एवं समग्र सामाग्री से युक्त हागा। साहित्य का समाजशास्त्र अपने विषय संबध्द हेतु साहित्य की विवध विधाओं यथा उपन्यास, कहानी, नाटक, कविता, निबन्ध, रिपोतार्ज, संस्मरण आदि का विश्लेषण करता है। उपन्यास समाज का गद्य है।उपन्यास वर्णित समाज भी मानव समाज की तरह ही है। वह मानव जीवन की अभिव्यक्ति एवं व्याख्या है। जो एक ऐसा कथात्मक गद्य है जो जीवन की संपूर्ण गतिविधियों, सामाजिक प्रक्रियाओं, मानव जीवन के विभिन्न प्रारूपों मानवीय अंतःक्रियाओं, सामाजिक संबन्धों, संस्थाओं, सामाजिक परिवर्तन आदि के चित्रण में सक्षम है। समाजशास्त्र के आलोचकों के अनुसार प्रत्येक उपन्यास में समाजशास्त्र की सामाग्री और समाजशास्त्र के परिच्छेद में उपन्यास का अंकुर खोज निकाल सकते हैं।

विद्यासागर नौटियाल गढवाल के महान सपूत और महात्वपूर्ण कथाकार है।टिहरी-गढवाल रियासत के क्रूर सामंतवाद और कांग्रेस कार्यवाद का साहसपूर्वक प्रतिरोध कर मध्य हिमालय की घाटियों-चोटियों की विकट राहों पर कंधे पर अपने साथियों के साथ रिक्तम पताका झेलने वाले गढवाल के इस महान सपूत ने अपने जीवन कृतित्व के द्वारा मिसालें कायम की है।हिन्दी कथाकारों में यशपाल और अज्ञेय अपने जीवन में क्रान्तिकारी रहे थे। उनके बाद की पीढी में

फणीश्वरनाथ रेणु और विद्यासागर नौटियाल दो ऐसे कथाकार है जिन्होंने जीवन के आरंभिक वर्षों में संघर्ष और लडाई का रास्ता चुना। विद्यासागर नौटियाल एक ऐसे रचनाकार है जिन्होंने अपनी रचनाओं का वस्तु परिदृश्य तो पर्वतीय रखा है किन्तु केवल पर्वतीय जीवन तक सीमित नहीं है। उसके प्रभाव क्षेत्र समग्र विश्व में और विशेषकर भारत में उपलब्ध है। उनमें गरीबी, अन्याय, शोषण,जातिवादी संकीर्णता, प्रभुवर्ग की प्रताडना, शातिर अफसर शाही और दास्यु-व्यापारियों से राजनीतिज्ञों की मिली भगत से उभरने वाले षड्यंत्रों के रूप में मानव विरोधी हरकतें सारे विश्व में फैली हुई है। विद्यासागर नौटियाल ने इस तरह समूची मनुष्य जाति के प्रति मानव-विरोधी दृष्टि के फैलाव को व्यक्त किया है और मुनष्य को आगाह किया है कि इसे रोकना अब जीवित लोगों का ही दायित्व है। विद्यासागर नौटियाल जी का अधिकांश लेखन जातीय स्मृति का दस्तावेज है।

नौटियाल जी की रचनाओं की भाषा चुस्त और संयत है। शब्द प्रयोग गद्य में कविता की तरह है। जीवंत, सार्थक, ठोस और आवश्यक।सब कुछ नपा - तुला सधा और संयत है। जैसे पात्र, जैसा उनका जीवन है,वैसी उनकी भाषा है। गढवाली समाज में अनेक राजाओं ने शासन किया। अंग्रेज अपना हक जामा रखा। शासक बदलते रहे, आम जनता स्वतंत्रता के लिए लडती रही। अंग्रेजों के पालन का तो अंत हुआ लेकिन परगणाधिकारी, पटवारी आदि अधिकारियों के जुल्म तो गढवाली प्रजा को सहना पडता था।

नौटियाल जी के लिए जन की शक्ति प्रकृति की शक्ति है। मानव जीवन प्रकृति से अधिक प्रभावित होता है। वनस्पति जगत और मानव जगत में जीवन संबन्धों को दर्शाते हुए प्रकृति को प्रतिष्ठा प्रदान करते हैं। प्रत्येक देश और वहाँ की भाषाओं, बोलियों के काव्य में प्रकृति के विविध रूपों, विविध क्रिया-व्यापारों और गतिविधियों का सजीव चित्रण हुआ है।

सामंती समाज में औरत और पशु के साथ एक जैसा व्यवहार था। दोनों का दरजा समान होता था। औरत को पशु की तरह बेचा और खरीदा जा सकता था। जिस तरह कोई जानवर बिक जाने पर अपने खूँटे से बेदखल करके किसी दूसरे खूँटे पर बाँध लिया जाता है। तगडा मोल देकर खरीदी गई औरत भी एक घर से हटाई जाकर समाज से जटिल रीति-रिवाजों और राज्य के कानूनों की सख्त डोर से दूसरे घर की चौहद्दी के अंदर, किसी दूसरे मर्द की चौकसी में बाँध दी जाती थी। साहित्य में नारी आदर्श प्रायः सरलीकृत ढंग से चित्रित किया जाता है।

मेरे शोधकार्य का विषय है ***विद्यासागर नौटियाल के उपन्यसों का समाजशास्त्रीय अध्ययन।*** मैंने अपने शोध प्रबंध के लिए विद्यासागर नौटियाल द्वारा रचित पाँच उपन्यसों को लिया। उनके साहित्य के अनेक पहलुओं को मैंने अपने शोध-प्रबन्ध में प्रस्तुत करने की कोशिश की।

समकालीन हिन्दी साहित्य में विद्यासागर नौटियाल की अपनी अलग एवं विशिष्ट पहचान है। उनकी रचनाएँ यथार्थ से जूझती है। नौटियाल जी आज हिन्दी के एक मात्र ऐसे प्रतिष्ठित कथाकार है जिन्होंने पहाड को ही नहीं पहाडी जीवन के संघर्ष को भी गहरी ललक एवं आत्मीयता के साथ प्रस्तुत किया है।

अध्ययन की सुविधा के लिए मैंने अपने शोध-प्रबन्ध को पाँच अध्यायों में बाँटा हैं। प्रथम अध्याय ***साहित्य का साजशास्त्रीय अध्ययन - अवधारणा।***इस अध्याय के अंतर्गत साहित्य की परिभाषा और स्वरूप विवेचन,समाजशास्त्र का अन्यशास्त्रों से संबन्ध, साहित्य और समाजशास्त्र का स्वरूप, आदि विषयों का विवेचन किया गय।

द्वितीय अध्याय ***विद्यासागर नौटियाल - व्यक्ति और रचनाकार।*** इस अध्याय के अंतर्गत विद्यासागर नौटियाल जी के व्यक्तित्व निर्माण के अनेक पहलुओं को रेखांकित किया गया। इसमें उनके परिवारिक जीवन, राजनीतिक जीवन आदि पहलुओं पर प्रकाश डाला गया।

तृतीय अध्याय ***विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों का - कथ्य एवं शिल्प।*** इस अध्याय के अंतर्गत विद्यासागर नौटियाल जी के उपन्यास-सूरज सबका है, उत्तर बायाँ है, झुण्ड से विछुडा, यमुना के बागी बेटे, भीम अकेला आदि उपन्यासों के कथ्य एवं शिल्प का विवेचन किया गया।

चतुर्थ अध्याय ***विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन***। इस अध्याय के अंतर्गत लोकगीतों का वर्णन, प्रकृति वर्णन, विद्यासागर नौटियाल जी के उपन्यसों में सामाजिक, आर्थक एवं राजनीतिक परस्थितियों का विस्तार पूर्वक विश्लेषण किया गया है।

पंचम अध्याय ***विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में नारी।*** इस अध्याय के अंतर्गत विद्यासागर नौटियाल जी के उपन्यासों में नारी के विविध रापों का विस्तृत विवेचन करने का प्रयास किया गया।

मुझे ***डॉ.श्यामराव जी*** के निर्देशन में शोध-प्रबन्ध लिखने का अवसर मिला, उनके प्रति मैं अपना आभार व्यक्त करती हूँ। विषय चयन से लेकर समाप्त करने तक मुझे निर्देशक की प्रेरणा मिलती रही। विषय चयन में डॉ.गरिमा श्रीवास्तव जी का महत्वपूर्ण योगदान रहा। उनके प्रति मैं आभार व्यक्त करती हूँ। विद्यासागर नौटियाल जी को भी विशेष धन्यवाद देना चाहती हूँ। उन्होंने हर कदम पर मेरी मदद की। उनसे जो प्रेरणा मिली मैं कभी नहीं भूल पाऊँगी। उनके लिए धन्यवाद शब्द छोटा पड जाएगा। विभागाध्यक्ष प्रो.रविरंजन जी तथा अन्य गुरूजन प्रो.शशिमुदिराज जी, प्रो.नूरजहाँ बेगम जी, प्रो.सुवासकुमार जी, प्रो. कृष्ण जी प्रो.सर्राजु जी डॉ. चतुर्वेदी जी के प्रति मैं आभार व्यक्त करती हूँ।

मैं अपने माता-पिता, बहनों के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने मुझे हर कदम पर प्रोत्साहन दिया।

हबीब शेख़

(07HHPH02)

1.1. साहित्य - परिभाषा और स्वरूप विवेचन

" अंधकार है वहाँ, जहाँ आदित्य नहीं है।
मुर्दा है वह देश, जहाँ साहित्य नहीं है।।" [1]

आदित्य या प्रकाश *ज्ञान* का प्रतीक है। अंधकार अज्ञानता का और साहित्य व्यक्ति के ज्ञानराशी का संचित कोश माना जाता है।

भाषा के विकास के साथ-साथ मानव अपने भावों को आसानी से अभिव्यक्त करने लगा। अतः भाषा उसकी अभिव्यक्ति की माध्यम बनी, अपने भावों को दूसरों तक पहुँचाने के लिए कविता, कहानी और नाटक जैसे साहित्यक विधाओं का उसने आश्रय लिया।

मानव की संकल्पनात्मक अनुभूतियों के संचित भंडार का नाम *साहित्य* है। साहित्य *कल्पना* एवं *भवना* की सृष्टि है। मानव जन्म से ही निरंतर इस संसार के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने लगता है। इस जगत की अनेक वस्तुओं एवं क्रियाओं का उन पर प्रभाव पडता है। फलतः वह अपनी प्रतिक्रिया अवश्य व्यक्त करता है। ऐसा होने में सर्वप्रथम उसे वस्तु या क्रिया का ज्ञान होता है। तब उसके प्रति उसके मन में या तो खिंचाव पैदा होता या उससे दूर हटने या रहने की इच्छा होती है और इसके अनुकूल वह प्रयास करने लगता है, इस प्रकार की मनोवृत्तियाँ काम करती है। ज्ञान के साथ-साथ मनुष्य के भाव सुख, दुःख, हर्ष, आश्चर्य आदि से भी जुडे होते हैं। अतः इन मनोवृत्तियों को *ज्ञान, भावना* और *संकल्प* कहते हैं। इच्छा में ही *भावना* और *क्रिया* का मेल होता है इच्छा के बाद संकल्प आता है। जिससे क्रियाशीलता बढ जाती है।

उक्त मनोवृत्तियों के साथ ही मनुष्य की मूल प्रवृत्तियाँ भय, क्रोध आदि का भी संयोग होता ही है। ऐसे ही एक प्रवृत्ति विशेष होती है, जिसे आत्माभिव्यक्ति कहते है। यों तो अभिव्यक्ति के अनेक ढंग है, किन्तु उन ढंगों में शाब्दिक अभिव्यक्ति का अधिक महत्व है इसका कारण यह है कि शाब्दिक अभिव्यक्ति चिरकाल तक सुरक्षित रहती है, जिसका उसके सामाजिक जीवन में अधिक महत्व होता है। वस्तुतः साहित्य में इसी अभिव्यक्ति का सब से महत्वपूर्ण स्थान है।

साहित्य में मानवीय चेतना की प्रक्रिया और उसका धरातल दोनों परिलक्षित होते हैं। प्रकृति, अन्य मनुष्य और उसके समुदाय और अतींद्रिय जगत को मानव किस तरह देखता है इसका स्पष्ट आभास उसके साहित्य में मिलता है। मानव की एक स्पष्ट परिकल्पना साहित्य में अंतर्निहित होती है।"[2]

साहित्य व्यक्तिगत और कुछ अंशों में सामूहिक मनोरंजन का साधन है। साहित्य परंपराओं के प्रेषण का एक प्रमुख माध्यम है, उसके व्दारा परंपराएँ एक पीढी से दूसरी पीढी तक पहुँचती है। व्यक्ति समूह और समाज संबन्धी प्रतिमान और परिकल्पनाएँ दोनों साहित्य में अभिव्यक्त होते हैं।

1.1.1. साहित्य शब्द का उद्‌भव और विकास

संस्कृत की *धा* धातु से *क्त* प्रत्यय लगने पर *हित* शव्द बनता है और इसके पूर्ण *सह* (साथ) के स्थापन्न *स* का योग होने पर *सहित* शब्द बनता है। इसके भाववाचक व्यत प्रत्यय होने पर *साहित्य* शब्द की निष्पत्ति होती है। *साहित्य* शब्द का अर्थ बडा व्यापक है।

साहित्य शब्द इतने भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता है कि बहुधा यह प्रश्न उठता है कि क्या सचमुच ही साहित्य का कोई स्पष्ट स्वरूप निर्धारित किया जा सकता है - इस समस्या ने भारतीय और पाश्चात्य सभी विव्दानों को प्रभावित किया है। *हडसन* का कहना है कि- "*साहित्य उन सबका सजीव लेख है जो कुछ मानव ने अपने जीवन में देखा है, जो कुछ उसके बारे में अनुभव किया है और जो कुछ उन पहलुओं के बारे में सोचा है, जिसका हम सभी से तात्कालिक व स्थायी संबंध है। इस प्रकार वह भाषा के माध्यम से जीवन अभिव्यक्ति है।*"[3]

साहित्य को अंग्रेजी में *लिटरेचर* कहते हैं। लिटरेचर शब्द *लेटर* शब्द से बना हैं, जिसका अर्थ *अक्षरों* का संपूर्ण विस्तार है। *अरब* में साहित्य को *अदब* कहते हैं, जिसका अर्थ *आदर-शिक्षा* है। यहाँ शिष्टता पूर्ण होने के कारण ही साहित्य को *अदब* कहते हैं। इसी *लिटरेचर* का हिन्दी रूपांतरण *साहित्य* है। देखा जाए तो भारत में यह शब्द बहुत पहले से ही चला आ रहा है। *साहित्य* शब्द *सतत्* से बना है जैसे *सतत्* से *सातत्य* बना है। वैसे ही *सहित* से *साहित्य* शब्द बना है। भाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति साहित्य भावना से परिपूर्ण समग्र वाक्

संसार को वाङ्मय के अंतर्गत स्वीकारा जा सकता है। इसके अंतर्गत साहित्येतर के भी सम्मिलित होने की संभावनाएँ होने के कारण विद्वत समूह में काव्य शब्द अधिक प्रचलित हो गया। गद्य के विस्तार के साथ-साथ साहित्य शब्द अधिक प्रयोग में आ गया है।

साहित्य शब्द अपने सीमित और विशिष्ट अर्थ में उस ललित कला का द्योतक है, जिसका माध्यम शब्द है। इस में व्दनि और अर्थ का समावेश रहता है। साहित्य की सृष्टि मूलतः निर्माण और आत्म प्रकाशन की मानसिक प्रवृत्तियों से होती है। इन्हीं से प्रेरित होकर कलाकार जड पदार्थों में प्राण-प्रतिष्ठा तथा अनुरूप सौन्दर्य की सृष्टि करता है। *साहित्य* शब्द अपने सीमित अर्थ में *काव्य* का पर्यायवाची है। साहित्य शब्द लोक प्रचलित है, किन्तु उसका अर्थ स्पष्ट करना सरल नहीं है। विविध संदर्भों में साहित्य शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता है तथा विशेष समुदाय के लोगों को उससे विशिष्ट प्रकार की कृतियों का बोध होता है। साहित्य में शब्दों द्वारा अर्थ की अभिव्यक्ति होती है। साहित्य में सामाजिक अभिप्राय का सन्निवेश रहता है। एकांत में यदि कोई काव्य की दो-चार पंक्तियाँ रचता और गुन-गुनाता है तो साहित्य निर्माण का कार्य नहीं होता, क्योंकि यह प्रेषण और सहृदय अनिवार्य रूप से अपेक्षित है। साहित्य सदैव विचारों और भावों के वहन का कार्य करता है तथा वह आत्म निवेदन का साधन है। सामान्य अर्य में साहित्य से अभिप्राय लिखित अथवा प्रकाशित सामग्री से होता है।

साहित्य का स्वरूप स्पष्ट करने के प्रयास में अनेक भारतीय और पाश्चात्य आचार्यों ने साहित्य की विभिन्न परिभाषाएँ निश्चित की हैं, जिन में से कुछ यहाँ विचारणीय हैं -

पाणिनी का सूत्र है -*'अपस्पराः क्रिया सातये'* अर्थात् क्रिया का सातत्त्य बताना हो तो अपस्परा (एक के बाद एक लगातार बिनारो के) का प्रयोग करते हैं, अन्यथा शब्द तो अपस्पराः (एक फिर उसके बाद एक और भी) ही है। इस सूत्र में एक शब्द आया है *सातत्ये* सतत् होने का भाव।

आचार्य भामह - काव्यालंकार में *काव्य* की परिभाषा इस प्रकार निश्चित की है कि *'शब्दार्थौ सहितौ काव्यम।'*

इस प्रकार शब्द और अर्थ के मेल को *भामह* ने काव्य की संज्ञा दी। आचार्य भामह की यह काव्य परिभाषा अस्पष्ट है, इसलिए कि शब्द और अर्थ का मेल तो प्रत्येक व्यक्ति की भाषा में होता है, क्योंकि निरर्थक शब्दों का उच्चारण या तो कोई अबोध शिशु करता है या प्रलाप करने वाला पागल। क्या साहित्येतर रचनाओं में

शब्द और अर्थ का साहचर्य नहीं होगा ? साहित्य में शब्द और अर्थ अर्थात् भाषा का प्रयोग होता है बिना भाषा के कोई भी साहित्य रचा नहीं जाता।

आचार्य दण्डी के अनुसार - इष्ट अर्थ से विभूषित पद-समूह ही काव्य शरीर है। *'शरीरंतावगिष्टार्थ व्यवच्छिन्न पदावली'* इस में किसी भी व्यक्ति के लिए कोई भी शुभ समाचार इष्ट अर्थवाला हो सकता है, उसे साहित्य या काव्य की संज्ञा दी जा सके यह निश्चित नहीं है। हर प्रकार की रचना का अपना-अपना अभीष्ट होता है, परंतु उसकी रचना काव्य नहीं हो सकती।*कुन्तक* ने *वक्रोक्ति जीवितम्* में प्रतिपादित किया है – *' साहित्य मनयोः शोभाशालितां प्रति काव्य सौ।*

अन्यूनान विरिक्तत्वं मनोहारिण्य वस्थिनिः ।।'

अर्थात *शब्द* और *अर्थ* का मनोहर विन्यास साहित्य है, जिसमें शब्द और अर्थ परम्परा इतने संतुलित हो कि न तो कोई न्यून हो, न कोई अधिक हो, पाठकों के सामने एक पहेली प्रस्तुत कर दी है शब्द और अर्थ के इस संतुलित शब्दों का प्रयोग तो वैज्ञनिक एवं शास्त्र रचयिता भी करता है। अपितु साहित्यकार से अधिक संतुलित रूप में करता है, किन्तु उनकी रचनाओ को साहित्य की संज्ञा नहीं दी जा सकती।

मम्मट ने *काव्य प्रका*श में काव्य के सम्बन्ध में कहा – *"वह शब्द और अर्थ जों दोष से रहित हो, गुण से मंडित हो - भले ही कहीं अलंकार शून्य भी हो - काव्य है।"*[4]

रूद्र के मतानुसार *परस्पर सापेक्षण तुल्य रूपाणां युग पदेक क्रियान्विथित्वं साहित्यम्* कहा है। अर्थात् परस्पर सापेक्षित समाज कोटि की वस्तुओं को साहित्य कहते हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के साहित्य संबंधी उद्‌गार इस प्रकार हैं- "*साहित्य के अंतर्गत वह संपूर्ण वाङगमय लिया जा सकता है, जिसमें अर्थ - बोध के अतिरिक्त भावोन्मेष अथवा चमत्कारपूर्ण अनुरंजन हो तथा जिसमें ऐसे वाङ्‌गमय की विचारात्मक समीक्षा या व्याख्या हो।*" [5]

रामचंद्र शुक्ल का साहित्य संबंधी यह मंतव्य व्यापक है। उन्होंने संपूर्ण वाङगमय को साहित्य के अंतर्गत लेने की बात स्वीकारा है।

प्रगतिशील लेखक संघ के लखनऊ अधिवेशन में *प्रेमचंद* ने अपने भाषण में कहा -*"साहित्य उसी रचना को कहेंगे जिसमें कोई सच्चाई प्रकट की गई है*

जिसकी भाषा प्रौढ परिमर्जित और सुन्दर हो और जिसमें दिल और दिमाग पर असर डालने का गुण हो और साहित्य में यह गुण पूर्ण रूप से उसी अवस्थ में उत्पन्न होता है, जब उसमें जीवन की सच्चाइयाँ और अनुभूतियाँ व्यक्त की गई हों।"[6] *प्रेमचंद* दिलोदिमाग को प्रभावित करने वाली सुन्दर भाषा में अभिव्यक्त साहित्य को ही साहित्यिक रचना मानते हैं।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के मतानुसार **"***ज्ञान राशि के चिर संचित कोश का नाम ही साहित्य है।"*[7] साहित्य मनुष्य के अनुभव और ज्ञान का वह रूप है जो लिपिबध्द होकर हमारे सामने आता है या सुरक्षित रहता है।

जैनेन्द्र कुमार के मतानुसार **"***मानव जाती की इस अनंत निधि में जितना कुछ अनुभूति भंडार लिपिबध्द है, वही, साहित्य है।"*[8]

हजारी प्रसद व्दिवेदी जी का कहना है कि "*साहित्य का सबसे बडा गुण हे कि उससे हम मनुष्य को पहचान सके साहित्य के अलावा मनुष्य को पहचानने का और कोई साधन है भी नहीं। जो साहत्य अपने युग में मनष्य को उसकी सभी सबलताओं और दुर्बलताओं के साथ उसकी सभी आशा, अकंक्षाओं के साथ, हमारे सामने प्रत्यक्ष लाकर खडा कर देता है, वह निस्संदेह महान साहित्य है। साहित्य केलिए मनुष्य ही प्रमुख है, बाकी सब बातें गौण हैं।"* [9]

मैथ्यूआर्नाल्ड के अनुसार -*"संसार में जो कुछ अच्छा सोचा और कहा गया है वही साहित्य है।"*[10] *हडसन* के अनुसार -*"साहित्य युग की शक्ति का प्रवाह, जिसमें काल विशेष की स्पूर्ति अभिव्यक्ति पाकर उन्मुक्त होती है। यही स्पूर्ति राजनीतिक आन्दोलनों, धार्मिक विचार दर्शन और कला के रूप में होती है।"*[11]

Ency clopedia Britanica में लिखा गया है *कि -"साहित्य एक व्यापक शब्द है जो किसी परिभाषा के अभाव में सर्वोत्तम मानवीय विचारों की लिपिबध्द अभिव्यक्ति कहा जा सकता है।"*[12]

" *Literature includes forms of writing which deliberalety and creatively experiment with language in order to suggest images and ideas which engage the readers imagination the speaking of poetry on the page may suggest a shape, the rhyme and rhythm may create a mood .The narrators and characters of prose fiction (short stories and novels) allow readers to enter fictional words by identifying with other people perspectives and ideas. The dialogue and stage direction of dramatic texts represent a three dimensional story which readers can engage with and even perform all this work involves imagination and interpretation."* [13]

साहित्य - विवेक मूलतः जीवन विवेक होता है। जिस प्रकार जीवन की अनेक व्याख्याएँ की गयी और पिर भी अव्याख्यायित ही रहगया है, उसी प्रकार साहित्य भी प्रत्येक यूग में व्याख्यायित और परिभाषित किया जाता रहा है। मानव परिवर्तनशील होता है, उसी प्रकार साहित्य भी मानव कर्म होने के नाते सदा परिवर्तनशील होता है। इसलिए उसकी कोई ऐसी अंतिम व्याख्या नहीं हो सकती जिसे सदा के लिए स्वीकार कर लिया जाए यदि देखा जाए तो साहित्य के व्याख्याकारों का जीवन संबन्धी दृष्टिकोण ही उनकी व्याख्याओं में प्रतिबिम्बित होता है।

साहित्य स्वयं किसी विशिष्ट काल से प्रेरणा ग्रहण करके समसामयिक विचारों और आन्दोलनों को जन्म देता है।जीवन में क्य हो रहा है, कैसा होना चाहिए और किस प्रकार होना चाहिए साहित्य इसी का विवेचन करता है। एक ओर तो यथार्थवादी दृष्टि से साहित्य यह प्रस्तुत करता है कि वर्तमान जीवन कैसा है और दूसरी ओर वह आदर्शवादी दृष्टि से यह प्रस्तुत करता है कि जीवन में क्या होना चाहिए।

साहित्य जीवन की सौंदर्यमयी अभिव्यक्ति है, यद्यपि वास्तविकता का दर्शन कराने के लिए वह जीवन का वर्णन भी करता है और समाज तथा जीवन की गंदगी भी उस में आ सकती है। जीवन से ही साहित्य को पोषण मिलता है, साहित्य तो केवन मार्ग दिखा सकता है। साहित्यकार जो कुछ देखता है जो कुछ अनुभव करता है उसे पूरी ईमानदारी के साथ और पूर्णता के साथ अभिव्यक्त कर देता है। यही उसका कर्तव्य है।

साहित्य गहरी संस्कृतिक कल्पना को लेकर खडा होता है, विशेष कर सृजनात्मक कल्पना को, जिसका संबन्ध नैतिकता से है और जो वास्तविक कारणों एवं सिध्दान्तों पर आधारित है।साहित्य उसी का प्रतिपादन, समर्थन एवं प्रतिनिधित्व करता है। कथा साहित्य तो आज के युग को अभिव्यक्त करने के लिए सर्वोत्तम माध्यम के रूप में आज दुनिया भर में अपनी प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुका है। उसमें हम अपने युगीन संदर्भों का सजीव चित्र प्राप्त कर सकते हैं। आज के जीवन की व्यापकता तथा विविधता को लेखक और पाठक अपनी सफल अभिव्यक्ति के लिए उपन्यास - विधा जैसे माध्यम की ही अपेक्ष रखते हैं।

1.2. समाज - अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप

समाज से अभिप्राय सामुदायिक जीवन की ऐसी अनवरत एवं नियामक व्यवस्था से है, जिसका निर्माण व्यक्ति पारस्परिक हित तथा सुरक्षा के निमित्त जाने - अनजाने करलेते हैं। आरंभ में इस सामुदायिक व्यवस्था का स्वरूप सरल और व्यापक होता है, परंतु विकास के साथ वह क्रमशः जटिल होकर वर्ग-व्यवस्था में परिणत हो जाता है।

मनुष्य एक सानाजिक प्राणी है, अतः सामाजिक वातावरण से वह पृथक नहीं रह सकता। अपने व्यक्तित्व से चाहे वह कुछ सीमा तक समाज को भले ही प्रभावित करले किन्तु अंत में उसको समाज के वातावरण से प्रभावित अवश्य होना पडता है। समाज स्वतः मनुष्य विकास और संस्कृति की उपलब्धि है, जिस में मनुष्य अपने समस्त प्रयत्नों को अपनी पूर्णता की ओर प्रेरित करता है। समाज के बिना व्यक्ति की कल्पना नहीं की जा सकती और व्यक्ति की स्थिति स्वीकार किये बिना समाज की समग्रता खंडित होती है।

The term society refers both to a general aspect of the human condition- we are all necessarily 'social' creatures and therefore depend on society in order to live as humans-and to-specific groups of people living together in particular ways, different societies."[14]

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह सामूहिक जीवन व्यतीत करने का आदी है। आदिम मानव जंगलों एवं पहाडों में रहता था। पत्थर और लोहे के हतियार बनाकर पशुओं का शिकार करता था। श्रम शक्ति की खोज में उसने अपने जीवन को सुखी, आनंद एवं पूर्ण बनाने लगा था। साथ ही उसे इस बात का ज्ञात भी हुआ कि वस्तुओं का अर्जन और उत्पादन न तो वह अकेला कर सकता और न हीं किसी वस्तु को अकेले भोग सकता, इसीलिए उसने दूसरों की सहायता लेकर अपने कार्यों की शुरुवात की, इससे समाज का आविर्भाव हुआ।

"समाज मनुष्य का एक प्राकृतिक संगठन है। यह एक परिवर्तनशील व्यवस्था एवं गतिशील प्रक्रिया है। सामाजिक प्राणी होने के कारण मनुष्य अकेला नहीं रह सकता। वह आपस में मिलकर जीना पसंद करता है। इस उद्देश्य से मनुष्य ने जिस संस्था का निर्माण किया है, यह 'समाज' कहलाता है।"[15]

समाज से अभिप्राय मानवों के उस समूह से है जो जीवन यापन की विविध सुख सुविधाओं के लिए सतत् प्रयत्नशील रहता है, पारस्परिक राग-द्वेष से आबध्द होकर भी अपनी वैयत्तिक एवं सामूहिक प्रगति के लिए प्रयास करना पडता है। जो विविध प्रकार के ज्ञान विज्ञान से समृध्द होकर अपनी बैध्दिक एवं अध्यात्मिक उन्नति में संलग्न रहता है जो विविध प्रकार के साधन सामग्री जुटाकर प्रकृति से संघर्ष करता हुआ अपनी सत्ता की रक्षा करता है।

"एक -एक बूँद के सम्मिश्रण से सागर का निर्माण होता है, वैसा ही एक एक प्राणी से समाज निर्मित होता है और जिस तरह सागर बूँद समिष्टि का नाम है, उसी तरह व्यक्ति समिष्टि को समाज कहते है। अब तो समाज से अभिप्राय केवल व्यक्तियों के समूह से ही है अर्थात् जहाँ अधिकांश व्यक्ति एकत्र जीवन-यापन करते हैं, विविध प्रकार के जीवनोपयोगी कार्यों में संलग्न रहते हैं विविध प्रकार की उन्नति के लिए सामूहिक एवं वैयक्तिक रूप से प्रदान करते रहते हैं-तथा विविध प्रकार की राजनीतिक, धार्मिक, साहित्यिक, सामाजिक एवं आर्थिक प्रगति के लिए प्रयत्नशील रहते हैं, उसी को समाज कहते हैं।"[16]

मनुष्य स्वभाव से ही सामाजिक प्राणी है। परंपरागत संस्कारों की सहायता से वह सामाजिक विकास का प्रारंभ करता है। बहुत से परिवार अपने को एकता के सूत्र में बाँधना सीखते हैं और उनमें एक संगठित शक्ति उत्पन्न हो जाती है। आचार -विचार आदर्श आदि की एकता पर वह संगठन निर्भर करता है। इस

प्रकार के मानव समुदाय को ही समाज कहते हैं। समाज शब्द में ही संगठन शक्ति, सांस्कृतिक विकास आदि के भाव समाविष्ट है।

समाज अपने अंतिम स्वरूप में एक मानवीय शरीर की भाँति है जो विविध व्यक्ति रूपी घटकों से मिलकर बना है। न्यायाश्रितता व परस्पर सहयोग समाज के मुख्य तत्व है। इनके द्वारा ही सभ्य और सुसंगठित समाज का निर्माण हो सकता है। किसी भी समाज को समझने के लिए उसके विभिन्न अंगों व्यक्ति-परिवार, समूह, वर्ग, वर्ण, शहरी या ग्रामीण जीवन अथवा राज्य को देश-काल में परखना होगा। साथ ही सामाजिक अंतः क्रियाओं तथा उनमें व्याप्त विभिन्न आध्यात्मिक, आर्थिक नैतिक, धार्मिक, राजनीतिक चेतना का अनुशीलन भी आवश्यक है। समाज मानवीय संबंधो से बनता है और इन संबंधो के मूलभूत तत्व है प्रेम और सहयोगी भावना। समरूपता, विषमरूरता, चैतन्य ,सामान्य हित अथवा लक्ष्य अन्योन्यश्रिता आदि समाज के तत्व हैं, सामान्य रूप से समाज से अभिप्राय सामुदायिक जीवन को ऐसी अनवरत एवं नियमित व्यवस्थ से है, जिसका निर्माण व्यक्ति पारस्परिक हित तथा सुरक्षा के निमित्त जाने अनजाने कर लेते हैं।

समाज स्वतः मानव विकास और संस्कृति की उपलब्धि हैं, जिसमें मनुष्य अपने समस्त प्रयत्नों को अपनी पूर्णता की ओर प्रेरित करता है। समाज के बिना व्यक्ति की कल्पना नहीं की जा सकती और व्यक्ति की स्थिति स्वीकार किये बिना समाज की समग्रता खंडित होती है। समाज की प्रमुख विशिष्टताओं को ध्यान में रखते हुए समाज को पारिवारिक राजनीतिक आर्थिक और धार्मिक दृष्टि से संबंधित व्यक्तियों का समूह कहा जा सकता है।

समाज व्यक्तियों का समूह है। समाज में प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के धर्म, आर्थ, काम, मोक्ष आदि फलों की पृष्ठभूमि पर संबंधित है। समाजशास्त्र के अनुसार समाज मनष्यों का एक समूह है। कई समूहों का एक बहुत बडा समुदाय है। यह मनुष्य के आपसी संबंधों का पुंज है। अनेक मनुष्यों की जीवनावधी से सम्बन्धित होने के कारण उनके आपसी जटिल संबंधो के इस पुंज को समाज की संज्ञा दी जा सकती है। इसमें प्रत्येक मानव आत्मविस्तार, आत्म संरक्षण और आत्मोपलब्धि का प्रयास करता हुआ भी एक व्यवस्था में रहता है। यह सामाजिक लक्षण मानवीय जीवन का परिवर्तनशील रूप है।

समाज को पुरुष के रूप में मानकर *वैदिक ऋषि* ने कहा –

" ब्राह्मणोस्य मुकापसीद वाहं राज्यव्यकृतः।

अरुतदम्य अधेश्यः पदश्य शूद्रोऽजायतः ।। "[17]

समाज रूपी पुरूष के लिए ब्राह्मण मुख रूप से, क्षत्रीय बाहु रूप से, वैश्य उरू रूप से और शूद्र पाद रूप से विकसित हुए। *मनुस्मृति* में समाज शब्द से प्रदर्शनी का बोध होता है- *"सभा प्रणापूशला वेश्ययान विक्रियः ।*

चतुपपथर चैत्यवक्षाः समाजःप्रेक्षणानि च ।। "[18]

श्रीमद्भागवत् में समाज को सभा के साथ-साथ संबंध सूचक अर्थों में भी प्रयोग किया गया है।

समाजशास्त्र के विश्वकोश में समाज मनुष्य के अपने साथियों के साथ कई प्रकार के संबंधो का स्वरूप कहा गया है। वेदों में समाज को पुरुष के रूप में चित्रित किया गया है।

समाज की व्याख्या करते हुए *डॉ. नगेन्द्र* कहते हैं कि *"सामान्य रूप से समाज से अभिप्राय सामुदायिक जीवन की ऐसी अनवरत एवं नियोजन व्यवस्था से है जिसका निर्माण व्यक्ति पारस्परिक हित तथा सुरक्षा के निमित्त जाने अनजाने कर लेते हैं। आरंभ में इस समुदायिक व्यवस्था का स्वरूप सरल और व्यापक होता है। परंतु विकास के साथ वह क्रमशः जटिल होकर वर्ग व्यवस्था में परिणत हो जाता है।"*[19]

रवीन्द्रनाथ ठाकूर के मतानुसार *"मनुष्य के सर्वाधिक पूर्ण अंतर्मुखी अभिव्यंजना उसको अपनी काया द्वारा ही प्राप्त हुई है जो उसके लिए उन सब से महत्वपूर्ण है वह उस अंतर्मुखी अभिव्यंजना की प्रतीक है। जो उसकी इस शरीर व्यवस्था से बाहर के तत्व द्वारा दूर होती है। जब वह मात्र अपनी काया में निबध्द हो जाता है, तब वह स्वयं के अस्तितव को विसर्जित कर बैठता है। वह अपने स्वयं के अस्तित्व को मनुष्य के विराट और विस्तृत संबंधों में भी प्राप्त करता है। उसका बहु कोशीय शरीर जन्मता है और मृत्यु को प्राप्त करता है। किन्तु सूक्ष्म तत्व से अभयोन्नत उस में विराट अजर है, अमर है।"*[20]

प्लेटो के मंतव्य में - *"समाज एक शरीर की भाँति है और इतिहासर इसके विभिन्न अंग एक दूसरे से सम्बन्धित तथा एक दूसरे पर आधारित हैं। फिर भी शरीर के विभिम्म अंगों में भिन्नता और श्रम विभाजन होता है। केवल पेट या आँख या पैर से संपूर्ण शरीर की रचना बन नहीं सकती। न ही पेट, आँख या पैर का काम कर सकती है। यही हाल समाज का भी है। "*[21]

अरस्तु के अनुसार -*"समाज का निर्माण जीवन के लिए किया गया है।"*[22]

राइट के अनुसार -*"It is not group of people, it is the system of relationship that exists between the individuals of the group."* [23]
(मनुष्यों के समूह को समाज महीं कहा जाता अपितु समूह के अंतर्गत व्यक्तियों के संबंधो की व्याख्या का नाम समाज है)

गिडिंग का मानना है कि-"s*ociety is the union itself,the organization the some of formal relations in which associating individuals are bound together."* [24]

समाज एक संघ है, एक संगठन है, औपचारिक संबंधों का योग है, जिसमें सहयोगी व्यक्ति परस्पर संबध्द है।

1.3. साहित्य और समाज - परम्परागत दृष्टि कोण

विविध व्यक्तियों की समिष्टि का नाम समाज है, विविध विधाओं की समिष्टि का नाम साहित्य है। व्यक्ति और समाज के संबंध जिस प्रकार अन्योन्यश्रित होते है, वौसे ही साहित्य और समाज के परस्पर सम्बन्धों को भी महसूस किया जा सकता है। साहित्य को मंगलमय एवं श्रेयस्कर बनाने में समाज का ही योगदान रहा है, क्योंकि साहित्य समाज से उन मंगलकारी तत्वों को ग्रहण करके जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया करता है। "*समाज साहित्य की प्रारंभिक सामग्री है और साहित्य समाज की सामाग्री से निर्मित एक कलात्मक कृति है। समाज साहित्य का बीज है और साहित्य समाज रूपी बीज से विकसित वट वृक्ष है। समाज विविध प्रकार के जलकणों का बिखरा हुआ स्वरूप है और साहित्य उन जलकणों से निर्मित विशाल सागर है। यही कारण है कि साहित्य के निर्माण में समाज का सर्वाधक योगदान रहता है। "* [25]

साहित्य का सम्बन्द मानव जीवन से है। मुक्तिबोध के अनुसार साहित्य जीवन की पुनर्रचना है। साहित्य का कथ्य समाज की घटना है, जो कि स्वयं में बहुत विस्तृत है, जब साहित्य भाषा जैसे सामाजिक माध्यम को अपनाता है और समाज के पूर्वानुभवों से सम्बध्द रहता है तो अवश्य ही समाज वस्तु अथवा घटना उसके विषय का निर्धारण करता है। साहित्य का संपूर्ण कथ्य समाज की घटनाएँ हैं। समाज की सीमा और उपलब्धियों का यथार्थ चित्रण करना साहित्य का धर्म है।

साहित्य मनुष्य के अनुभव और ज्ञान का वह रूप है जो लिपिबध्द होकर हमारे सामने आता है। साहित्य परंपराओं का एक प्रमुख माध्यम है, उसके द्वारा परंपराएँ एक पीढी से दूसरी पीढी तक पहुँचती हैं। व्यक्ति समूह और समाज संबंधी प्रतिमान और परिकल्पनाएँ दोनों साहित्य में अभिव्यक्त होते हैं।

"साहित्य वह होता है जो अपनी सृष्टि के लिए समाज रूपी पुष्प की अपेक्षा रखता है, वह पुष्प जो समाज की डाल पर ही खिल पाता है। कपोल कल्पना के आकाश में ही दौडते रहने वाला सच्चा साधक नहीं समझा जा सकता। जीवन पलायन का विलास नहीं, संघर्ष की साधना है।" [26]

साहित्य द्वारा समाज को अद्वितीय शक्ति प्राप्त होती है और समाज द्वारा साहित्य का भण्डार सदैव अमूल्य रत्नों और मणियों से देदीप्यमान रहता है और उसका नित्य प्रति वृध्दि को प्राप्त होता जाता है। अच्छा या बुरा जैसा समाज होता है, वैसा ही अच्छा या बुरा साहित्य भी होता है। जिस प्रकार साहित्य के निर्माण में समाज का सर्वाधिक हाथ रहता है उसी प्रकार समाज के निर्माण में साहित्य का भी योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है।

साहित्य समाज का शिक्षक है, वह समाज के संपूर्ण अज्ञान को दूर करके उसे लौकिक, व्यावहारिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान से परिपूर्ण बनाता हुआ समाज की मंगलमय वृद्दि का प्रयास करता है। साहित्य समाज की प्रज्ञा है, वह समाज को सत् असत् पदार्थों से अवगत कराता हुआ उसे विवेक बुध्दि प्रदान करता है, जिसने समाज प्रेम-पथ का अनुगामी न होकर सदैव श्रेय-पेय की ओर अग्रसर होने में अपनी रुचि प्रदर्शित करता रहे और अघटित घटना प्रेयसी माया के प्रपंचों से मुक्त होकर परमधाम को प्राप्त करने में सर्वथा हो। इस प्रकार समाज के सर्वांगीन विकास में साहित्य का योगदान अत्यंत महत्व रखता है।

साहित्य समाज से सामग्री लेता है और समाज साहित्य से प्रेरणा ग्रहण करता है। दोनों का अन्योन्याश्रित संबंध है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। साहित्य हमेशा संबध्द समाज की बाहरी विशेषताओं की विवरणात्मकर जानकारी ही नहीं बल्कि साथ ही साथ उस समाज के जीवन दर्शन और सांस्कृतिक पहलुओं की मूर्त्त जानकारी भी देता है। साहित्य एवं समाज के संबंध के बारे में *जॉन रोक्वेल* अपना मत प्रकट करते हुए कहते हैं कि- *"साहित्य न केवल समाज को प्रतिबंबित करता है ,या समाज से उदित होता है, किन्तु वह समाज का एक अभिन्न अंग होता है।"*[27]

साहित्य अतीत में विकसित शाश्वत और पावन सत्यों में ही नहीं उलझा रहता, वह उन्हें नये संदर्भों के परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास करता है और सजग तार्किकता से उत्तम विश्लेषण भी। सामाजिक आलोचना साहित्य का एक मुख्य प्रयोजन और प्रकार्य है।

मार्क्सवादी चिन्तकों ने साहित्य के *'वर्गीय आधार'* और *'रचना-प्रक्रिया'* की चर्चा की है। उनके अनुसार साहित्य के वर्गिय आधार के बिना साहित्य और सामाजिक जीवन के मूलभूत संबंधों को समझ पाना कठिन है। रचना-प्रक्रिया द्वारा साहित्य तथा सामाजिक जीवन के बीच संबंधो को अच्छी तरह परखा तथा समझा जा सकता है। रचना-फ्रक्रिया से इस तथ्य का बोध हो जाता है कि रचनाकार को कृति की स्चना करने में किन-किन मानसिक परिस्थितियों के दौर से गुजरना पडा। रचनाकार को समाजिक जीवन के किन-किन आयामों ने किस-किस रूप में तथा कितने-कितने अंगो में प्रभावित किया है, उस बाध्य जगत को आत्मसात् कर रचनाकार ने किन घटनाओं, परिस्थितियों से गुजरते हुए अपनी रचना को रूप प्रदान किया है। इसी रचना-प्रक्रिया को मुक्तिबोध ने निम्नलिखित शब्दों में बाँधा है

"जब तक कि रचनाकार बाह्य अनुरोधों और आग्रहों को स्वीकार करके उनमें प्राप्त सत्यों के अनुसार जीवन का आभ्यांतरीकरण नहीं करता तब तक बह नवीन दृष्टि से अर्थात उन अनरोधों और आग्रहों को अंतर में स्थान देकर उनकी क्रियाशील शक्ति से अभ्यंतरीकरण जीवन को काव्य में कलात्मक रूप से प्रकट नहीं कर सकता और यदि वह इस प्रकार के आभ्यंतरीकरण के बिना रचना उपस्थित करता है तो निस्संदेह उसकी उस रचना में कलात्मक गुण उत्पन्न नहीं होंगे-ऐसे गुण जो प्रभावकारी हों दूसरे शब्दों में उन्हें वह सौंन्दर्य उत्पन्न नहीं होगा जो कलाकृति के लिए आवश्यक होता है।" [28]

समाज के साथ-साथ सामाजिक स्थितियाँ बदलती हैं। जिसके साथ साहित्य का प्रतिपाद्य भी बदलता है। परिवर्तन मनःस्थितियों के चित्रण हेतु नई भाषा शैली का आविष्कार करना रचनाकार का कर्तव्य है। वह पुरानी भाषा से नये भाव को उसके असली रंगों में प्रस्तुत नहीं कर सकता। जब तक नई विचारधारा और नये जीवन का रूप स्पष्ट न हो जाए तब तक न कोई रचनाकार हो सकता और न कोई नया उपकरण ही आविष्कृत करता है। *लेनिन* ने कहा है कि -*"कला*

की सर्जना में व्यक्ति चेतना का प्रमुख योगदान रहता है और कलाकार की यह व्यक्ति चेतना उस व्यापक जीवन दर्शन या जगदर्शन का अंग होता हैं। फिर भी कला मानव चेतना की सैध्दांतिक अभिव्यक्ति नहीं है। वास्तव में प्रत्येक महान् कलाकार अपने सिध्दांतों की परिधि को तोड़कर वैचारिक सीमाओं का अतिक्रमण करके ही जीवन -यथार्थ के किसी महत्तर सत्य का उद्‌घाटन करता है।"[29]

समाज में स्वभावतः सत्ता के लिए संघर्ष होता है। एक दूसरे के ऊपर प्रभुत्व जमाकर अन्य को कमजोर बनाने का प्रयत्न किया जाता है। कुछ ऐसा ही साहित्य में भी होता है। फलस्वरूप साहित्यिक संबंधों की विभिन्न स्थितियों का उदय होता है। साहित्य में जो भी आता है वह समाज से निरपेक्ष नहीं होता। वस्तुतः मनुष्य का सामाजिक अस्तित्व ही उसकी चेतना का निर्माण करता है। कोई भी बुध्दिजीवी समाज की परिस्थितियों से तटस्थ नहीं रह सकता उस पर समाज के कार्यकलापों की प्रतिक्रिया होती रहती है। *प्रेमचंद* कहते हैं कि -*"हमारी साहित्यिक रुचि बडी तेजी से बदल रही है, अब साहित्य केवल मन बहलाव की चीज नहीं है अब वह केवल नायक-नायिका के सिवा उसका और भी कुछ उद्देश्य है। अब वह केवल नायक-नायिका के संयोग- वियोग की कहानी नहीं सुनाता किन्तु जीवन की समस्याओं पर भी विचार करता है और उन्हें हल करता है। अब वह स्मृति या प्रेरणा के लिए अद्‌भुत आश्चर्य जनक धटनाएँ नहीं ढूँढता और न अनुप्रास का अन्वेषण करता है, किन्तु उसे उन प्रश्नों से दिलचस्पी है जिससे समाज या व्यक्ति प्रभावित होते हैं। उनकी उत्कृष्टता की वर्तमान कसौटी अनुभूति की वह तीव्रता है जिससे वह हमारे भावों और विचारों में गति पैदा करता है।"* [30]

साहित्य को खतरा उन नारों से होता है जो समय-समय पर लगाए जाते हैं जैसे धर्म, दर्शन तथा राजनीति में जीवन और समाज की दुहाई देते हुए धर्म प्रचारक दार्शनिक तथा राजनीतिक नेता साहित्य को भी एक बनी-बनाई रेखा के भीतर रखना चाहते हैं। *"साहित्य में मानुशीकण कई बार समाज में प्रचलित विभिन्न दार्शनिक अथना राजनीतिक सिध्दांतों से भी परिचालित होता है विचारधारा, दर्शन अथवा राजनीतिक मत इतने प्रभावशाली हो जाते हैं कि कभी कभी साहित्य उनका अनुगामी बनकर रह जाता है। साहित्य की यह भयावह स्थिति होती है।"*[31]

साहित्य कभी भी समाज के यथार्थ का प्रतिबिम्ब नहीं होता। ऐसी ही एक सूक्ति साहित्य में प्रचलित हैं- *'साहित्य समाज का दर्पण है।'*

कवि चारों ओर फैले हुए जीवन का अध्ययन करते हैं। अनुभूतियों को काव्य रीति से अभिव्यंजित करना चाहते हैं। मानव की निरंतर समस्याएँ साहित्य का स्थायी आधार बनती हैं। साहित्य भी उन प्रक्रियाओं से प्रभावित होता है जिनसे मानव और उसके समाज को अपने परिवेश को समझने और उसके बारे में विचार करने की दृष्टि मिलती है। साहित्य में मनुष्य की जीवन-यात्रा के मंतव्य का विवेचन होता है और उन ध्येयों और मूल्यों को प्राप्त करने के साधनों की ओर भी इंगित रहता है जो मानव जीवन को अर्थ और दिशा देते हैं। साहित्य में समाज की परम्परा, जीवन दृष्टि और दर्शन तथा समसामयिक यथार्थ और चिन्ताएँ तो अभिव्यक्ति पाती हैं, उसमें समाज की विकृतियों और विसंगतियों के चित्रण के साथ भविष्य का पूर्वाभास और दिशा का संकेत रहता है। समाज की वास्तविक स्थिति को जानने के लिए साहित्य से बढकर और कोई साधन नहीं है। रचनाकार जनता के हर वर्ग के बाह्य रूपों तथा आंतरिक भावों को उसकी विकासोन्मुख गतिविधि को व्यक्ति और वर्ग की प्रत्येक विचारधारा को बिना किसी संवरण के प्रतिपादित करने की क्षमता रखता है।

अतः हम कह सकते हैं कि हर साहित्यकार का अपने सामाजिक परिवेश के प्रति दायित्व है कि वह समाज के प्रति अपनी स्वच्छ दृष्टि रखें तथा इस प्रकार के साहित्य की रचना करे जिससे मानव-जीवन अधिक से अधिक समृध्द एवं सुख संपन्नता की ओर अग्रसर हो। साहित्यकार द्रष्टा भी है, स्त्रष्टा भी वह आँखें खोल कर समाज को देखता है और पुनः उसके शोधन का उपाय करता है, अपनी कल्पना की विलक्षण शक्ति से वह भविष्य का निर्माण करता है। वह अपनी कल्पना से समाज को आदर्श की ओर प्रेरित करता है समाज से साहित्य प्रेरणा और जीनव ग्रहण करता है। समाज मानव का पुंज रूप है। साहित्य मानव अनुभवों और विचारों का संग्रह है। अतः दोनो का आपस में अन्योन्याश्रित संबंध है। एक दूसरे के बिना अस्तित्वहीन हैं। एक का विकास दूसरे पर सृजन और एक का ह्रस दूसरे का मरण है।

1.4. समाज शास्त्रः अर्थ एवं परिभाषा

समाजशास्त्र शब्द अंग्रेजी के *सोश्योलॉजी* (sociology) शब्द का रूपान्तरण है। सोश्योलॉजी शब्द *सोश्यो* (socio) तथा *लॉजी* शब्द से मिलकर बना है। *सोश्यो समाज का सूचक है और लॉजी ज्ञान या शास्त्र का,* इस प्रकार समाजशास्त्र का अर्थ हुआ - *समाज का शात्र*।

समाज शास्त्र के जनक *आगस्त* काम्ते ने समाजशास्त्र को " science of human association अर्थात *मानवीय संबन्धों का विज्ञान* कहा है।"[32] *मैकाइवर* और *पेज* के अनुसार "*सनाजशासत्र सामाजिक सम्बम्धों के विषय में है और संबम्धों के जाल को हम समाज कहते हैं।*"[33]

सोरोकिन के अनुसार -*"sociology is a study, first of all of the relationship and corelation between various classes of phenomena, second the between the social and non social , third the study of general characteristics common to classes of social phenomena."* [34]

संक्षेप में सोरोकिन समाज शास्त्र को सामाजिक सांस्कृतिक घटनाओं के सामान्य स्वरूप, प्ररूपों और विभिन्न प्रकार के अंतः सम्बन्धों के सामान्य विज्ञान के रूप में परिभाषित करते हैं।

इमाइला दुर्खिम के अनुसार- "The aim of sociology is to treet social facts as things." [35] वे सामाजिक तथ्यों को वस्तुनिष्ठ तथ्यों पर केंद्रित करके देखने के पक्षधर हैं।

पामेल एब्बोट और *क्लैर वोल्तेस* ने समाजशास्त्र की समस्त परिभाषाओं की विशेषता को समेटते हुए उसे अनुशासन के रूप में प्रस्तुत किया हैं। *"Socialogy as a discipline is concerned with enabling us to understand the Social world we inhabit and our position with in it to grasep the sociological imagination. sociology is concerned to develope theories-frame works that help us ask questions, direct us to the information that needs to be collected and suggests how to interpret or explain this information in order to provide answers to 'how ' and ' why' quesions."36*

साहित्य का समाजशास्त्र अपने विषय संवृध्दी हेतु साहित्य की विविध विधाओं तथा उपन्यास, कहानी, नाटक, कविता, निबन्ध, रिपोर्ताज, संस्करण आदि का विश्लेषण करता है। इन विविध विधाओं में विशेषकर उपन्यास के महत्व को साहित्य के समाजशास्त्र केलिए विचारक स्वीकार करते रहे हैं।

उपन्यास समाज का गद्य है। उपन्यास में वर्णित समाज भी मानव समाज की तरह ही है। वह मानव जीवन की अभिव्यक्ति एवं व्याख्या है। एक ऐसा कथात्मक गद्य है जो जीवन की सम्पूर्ण गतिविधियों सामाजिक प्रक्रियाओं मानव जीवन के विभिन्न प्रारूपों, मानवीय अंतः क्रियाओं, सामाजिक संबंधों, संस्थाओं, सामाजिक परिवर्तन आदि के चित्रण में सक्षम है।

विचारकों की दृष्टि में -"*हम-प्रत्येक उपन्यास में समाजशास्त्र की सामाग्री और समाजशास्त्र के परिच्छेद में उपन्यास का अंकुर खोज निकाल सकते है।*"37

साहित्य के समाजशास्त्र को परिभाषित करते हुए *विलियम पी.स्कार* ने लिखा है कि -*"The sociological study of literature either to derive the insights of writers concerning society or to relate literature to the structure of society, in the manner of the 'sociology of knowledge' wih resprct of earlier liteature societies or to contemporary societies that have been or (for political reasons) can not be directly and comphrehensively studied literature enables us to learn something about the society on the basis of compative sociological analysis this if a society was (or is) presumably with out class districtions it would not take a sociologist long to apply many of his various subtle indication of stratification to be able to indicate the existance of this phenomenon and its specific nature."*[38]

उपरोक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि समाजशास्त्र मनुष्यों के सामुदायिक सम्बन्धों का वैज्ञानिक अध्ययन है, जो मानव तथा उसमें परिवेश को अपनी परिधि के अन्तर्गत समाहित कर लेता है। समाज चिंतकों का मानना है कि समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है, परंतु इसका कार्य समाज के किसि एक पक्ष का अध्ययन नहीं, बल्कि यह समाज के विभिन्न पक्षों पर विचार करता है एवं समाज पर चहुमुखी प्रकाश डालता है। इसका कार्य समाज की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, ऐतिहासिक और मनोवैज्ञानिक आदि सभी समस्याओं का अध्ययन प्रस्तुत करना है, अतएव इस सामान्य समाजिक विज्ञान को ही दूसरे शब्दों में समाजशास्त्र की संज्ञा से अभिहित किया गया है।

वस्तुतः समाज का निर्माण मानव की पारस्परिक क्रियाओं और सम्बन्धों के आधार पर होता है और इन सामाजिकर घटनाओं के कार्य और फलों का तर्कयुक्त ज्ञान प्राप्त करना वैज्ञानिक पध्दति है।

1.5. समाजशास्त्र - क्षेत्र एवं विषयवस्तु

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज के बिना अपना जीवन का निर्वाह कदापि नहीं कर सकता, क्यों कि सूक्ष्मतम आवश्यकताओं की पूर्ती हेतु उसे समाज पर निर्भर रहना पडता है। इसी लिए मानुष्य को विविध पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने पड़ते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि मानव का मानव के साथ सम्बन्धों के ताने-बाने रूपी जाल को वैज्ञानिक दृष्ट से विचार करने वाला शास्त्र ही समाजशास्त्र है।

जैसा कि हमें ज्ञात है कि मनुष्यों का सम्बन्ध विविध प्रकार का होता है तथा-किसी मनुष्य से किसी का संबंन्ध आर्थिक होता है, किसी का नैतिक एवं किसी का राजनैतिक। इन्ही सम्बन्धों पर प्रकाश डालने का कार्य समाजशास्त्र के अन्तर्गत किया जाता है। वैज्ञानिक दृष्टि से विवेचन करने वाला शास्त्र समाजशास्त्र है, जिसका क्षेत्र अन्य विज्ञानों से व्यापक है क्योंकि इसका समग्र कार्य मानव के सभी सामाजिक सम्बन्धों पर प्रकाश डालना है।

यह सर्वथा मान्य है कि समाजशास्त्र को सामाजिक विज्ञान की संज्ञा से अभिहित किया गया है। जिसका उध्देश्य मनुष्य के व्यवहार का सामाजिक दृष्टिकोण से अध्ययन करना है। यह सामाजिक सम्बन्धों एवं उनके विभिन्न स्वरूपों का क्रमबध्द ज्ञान हमें प्रदान करता है। अतः इसे अन्य सामाजिक विज्ञान जैसे अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, इतिहास आदि की श्रेणी में रखा जा सकता है।

तथ्यों, वस्तुओं एवं घटनाओं के किसि एक महत्वपूर्ण पक्ष का अध्ययन करने वाले विज्ञान को विशिष्ट विज्ञान की संज्ञा दी गई है। जबकि उनके सम्पूर्ण स्वरूप का अध्ययन करने वाले विज्ञान को सामान्य विज्ञान कहा गया है।

समाजशास्त्र विशिष्ट विज्ञान है या सामान्य विज्ञान इस बात को लेकर समाजशास्त्री एक मत नहीं है। रूपवादी विचारधारा को मानने वाले समाजशास्त्री समाजशास्त्र को विशिष्ट विज्ञान मानते हैं जिसका लक्ष्य अपनी मुख्य समस्या के अन्तर्गत वे सिध्दांत आते हैं, जिन पर इस शास्त्र की नींव रखी गई है या सिध्दांतों को प्रतिपादित किया गया है।

जार्ज-सिमल, टौकीज, वीनवीज तथा वीरकांत के मतानुसार समाजशास्त्र को अपनी समस्याओं तक ही सीमित रखना चाहिए क्योंकि अक्सर देखा गया है कि समस्त विज्ञानों के बारे में बातें करने से समाजशास्त्र का कोई निश्चित तथा विशेष रूप दिखाई नहीं देता। दूसरी तरफ *'समन्वयात्मक'* दृष्टिकोण को मानने वाले समाजशास्त्रीयों की मान्यता है कि समाजशास्त्र को अपने विषय क्षेत्र संकुचित, सीमित एवं परिचित न बनाकर व्यापक तथा विस्तृत बनाना चाहिए, जिससे इसे समाजशास्त्र कहने में सुगमता हो सकेगी। क्योंकि समाजशास्त्र अन्य विज्ञानों से अलग रह ही नहीं सकता, यह तो सभी विज्ञानों के मेल से बनता है।

समन्वयात्मक दृष्टिकोण वाले समाजशास्त्रीयों की धारणा इस बात को लेकर है कि समाजशास्त्र में सभी विज्ञान एकीकृत हैं जिससे समाजशास्त्र न सिर्फ विज्ञान ही है, बल्कि 'विज्ञानों का विज्ञान' है अतः समस्त विज्ञान इसमे विषय क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मिलित कर लिए जाते हैं।

फ्रांसीसी समजशास्त्री दुर्खिम 'समन्वयात्मक' दृष्टिकोण के मुख्य प्रशंसक माने जाते हैं। उन्हों ने समाजशास्त्र को तीन वर्गों सें विभक्त किया है, जैसे-

1. ***सामाजिक स्वरूप शास्त्र (social morphologh)***

इस शास्त्र में सभी विषयों को सम्मिलित किया गया है, जिनका आधार भौगोलिक है। किसी देश की जनसंख्या कितनी है इसका आकलन एवं विवरण आदि बातों की जानकारी सामाजिक स्वरूपशास्त्र के अन्तर्गत किया जाता है।

2. *सामाजिक शरीर शास्त्र* (*social psysiology)*

सामाजिक शरीरशास्त्र में सामाजिक विज्ञान कहे जाने वाले सभी विषय आते हैं, जिसके समाज से गूढ़ सम्बन्ध है जैसे धर्म, अर्थ, नीति आदि। धर्म का समाजशास्त्र तथा नीति का समाजशास्त्र आदि। इसे समाजशास्त्र का दार्शनिक पक्ष माना गया है। समाजशास्त्र के इस भाग की सफलता इसके विभिन्न भागों एवं विषयों के गहन अध्ययन पर निर्भर करती है।

3. *सामान्य समाजशास्त्र* (*general socilogy)*

इसके अन्तर्गत विभिन्न सामाजिक विज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि विविध प्रकार के सिध्दातों का अपने-अपने क्षेत्र में विवेचन करना है तथा इस बात की जानकारी भी हासिल करनी है जिसमें सामान्य नियम कार्य कर रहे हैं या नहीं।

समाजशास्त्र के क्षेत्र एवं विषय वस्तु से सम्बन्धित उपरोक्त बातों पर

विस्तारपूर्वक विवेचन किया जाय तो स्पष्ट होगा कि समाजशास्त्र में विशेषात्मकता एवं समन्वयात्मकता दोनों दृष्टियों एक साथ अग्रसारित होती हैं तभी वह पूर्ण शास्त्र कहा जा सकता है।

1.6. सामाजशास्त्र का अन्य शास्त्रों से संबंध

समाजशास्त्र का सभी समाजिक विज्ञानों से गूढ एवं व्यापक सम्बन्ध माना गया है। जिस शास्त्र के अन्तर्गत व्यक्ति के समाजिक सम्बन्धों के विविध पक्षों का समुचित रूप से अध्ययन किया जाता है,उसे सामाजिक विज्ञान की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। जैसा कि हम महसूस करते हैं कि अर्थशास्त्रज्ञ में केवल सामाजिक जीवन के आर्थिक पक्ष का अध्ययन होता है, राजनीतिशास्त्र में राजनीतिक दृष्टिकोण से तथा मनोविज्ञान के अन्तर्गत मानसिक स्थितियों एवं परिस्थितियों पर विचार किया जाता है। सामाजिक विज्ञान, सामाजि जीवन के किसी एक पक्ष का अध्ययन करता है तो दूसरा किसी अन्य पक्ष को, लेकिन इस बात को स्वीकारा गया है कि ये सभी विज्ञान मनुष्यों की क्रिया-प्रक्रियाओं से ही सम्बन्धित रहते है।

समाजशास्त्रीय अध्ययन हेतु राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, नृतत्वशास्त्र, मनोविज्ञान, भौतिकी, जैविकी, इतिहास से लेकर सम्स्कृति, धर्म, सभ्यता एवं दर्शन तक का निचोड अनिवार्य हो जाता है।

समाजशास्त्र और प्राणि शास्त्र

मनुष्य की प्रगति एवं विकास उसके शारीरिक तथा मानसिक गठन पर निर्भर करता है मानव का उद्‌भव और विकास किन परिस्थितियों में हुआ उसका पैतृक गुण से प्रजाति के अस्तित्व की रक्षा कैसे की जा सकती है आदि सभी तथ्यों की संपूर्ण और सही जानकारी हेतु समाजशास्त्री को प्राणिशास्त्र का सहारा लेना पडता है। मानव की व्यक्तिगत शारीरिक जाति की विभन्नताएँ उसके प्राणिशास्त्रीय गुण माने जाते हैं। इन समस्त गुणों का प्रभाव सामाजिक सम्बन्धों तथा संगठनों पर होता है। इसके अतिरिक्त सामाजिक व्यवहारों का प्रभाव भी प्रणीशास्त्रीय गुणों पर व्यापक रूप से पड़ता है।

वैसे तो समाजश्सत्र तथा प्राणिशास्त्र का सम्बन्ध काफी गहनतम माना गया है। फिर भी इन दोनों में पर्याप्त भिन्नता है, क्योंकि समाजशास्त्र का विवेच्य विषय जहाँ मानव-समाज है, वहाँ प्राणिशास्त्र का विवेच्य विषय प्राणी है।

समाजसास्त्र और राजनीती शास्त्र

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समाजशास्त्र और राजनीतिशास्त्र में सर्वाधिक गहन सम्बन्ध को स्वीकारा गया है। कुछ समय पूर्व तक समाजशास्त्र और राजनीतिशास्त्र में विशेष रूप से अन्तर स्वीकार नहीं किया गया था।

समाजसास्त्र में राज्य या सरकार अथवा शासन व्यवस्था का अध्ययन होता है। सत्ता का प्रभाव सभी सामाजिक क्षेत्रों पर पडता है। सामाजिक जीवन को राजनीतिपूर्ण रूपेण प्रभावित करती है। यही वजह है कि समाजशास्त्री को राजनीतिक संगठनें के सम्पूर्ण ज्ञन के निमित्त राजनीतिशास्त्र का सहारा लेना पडता है।

राजनीति शास्त्र हमारा आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, नैतिक एवं शिक्षा सम्बन्धी समस्त प्रकार के सम्बन्धों की चर्चा करता है इसी कारणवश राजनीतिशास्त्र से समाजशास्त्र को अलग करना अत्यन्त कठिन होता है।

समाज रीति प्रथा और मर्यादा की सीमा में बंधा हुआ है तथा राज्य के नियामक कानून, नियम एवं विधि-विधान हैं। रीतियों तथा प्रथाओं को कानून से अधिक महत्ता प्राप्त है इसीलिए समाज की परंपरागत प्रथाएँ राज्य के तथा विधि पर अपना प्रभाव डालती हैं। राज्य के अन्तर्गत निर्मित कानून समाज की प्रथाओं पर प्रभाव डालती हैं। राज्य के अन्तर्गत निर्मित कानून समाज की प्रथाओं पर पूप्रभाव डालता रहता है। जैसे हिन्दू विवाह अधिनियम में भारतीय सामाजिक प्रथाओं पर प्रभाव डालता रहता है। जैसे हिन्दू विवाह अधिनियम में भारतीय सामाजिक प्रथाओं को सामने रखकर उसमें पर्याप्त परिवर्तन किया गया।

समाजशास्त्र समाज के सभी रूपों का अध्ययन करता है, जबकि राजनीतिशास्त्र केवल राज्य अथवा शासन व्यवस्थ का अध्ययन करता है। समाजशास्त्र में समाज का अध्ययन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में होता है किन्तु राजनीतिशास्त्र समाज का अध्ययन उस समय प्रारंभ करता है जब वह राजनीतिक दृष्टि से संगठित हो जाता है।

राज्य तथा उससे सम्बन्धित कार्यों का अध्ययन राजनीतिशास्त्र का विषय है और राज्य समाजिक ढांचे का महत्वपूर्ण अंग है। यह कहना उचित होगा कि किसी समाज की परम्परायें, विश्वास आर्थिक अवस्था व विचारधारायें तथा उसके

स्वरूप और शक्ति को निश्चित कर परिवर्तित करती हैं। इसी प्रकार स्वयं राज्य अपने कार्यों और कानूनों से समाज के विभिन्न भागों में महत्वपूर्ण परिवर्तन कर सकता है।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर निःसंकोच रूप से हम कह सकते हैं कि समाजशास्त्र का राजनीतिशास्त्र पर प्रभाव परिलक्षित होना सहज है।

समाजशास्त्र और मनोविज्ञान

मनोविज्ञान के अन्तर्गत मानव के व्यवहार एवं आचरण का अध्ययन किया जाता है। इसमें व्यक्ति की सभी मानसिक प्रक्रियाओं का अध्यय होता है, जो सामाजिक संगठन, आदर्शों एवं संस्थाओं व मानव प्रकृति एवं व्यवहार को सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु जरूरी समझा जाता है।

यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि समाज अपने आप में एक मनोवैज्ञानिक संगठन है। फिर भी दृष्टिकोण तथा क्षेत्र की दृष्टि से दोनों में पर्याप्त अन्तर है। मनोवैज्ञान के तहत व्यक्ति के मानसिक सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है, परन्तु समाजशास्त्र में मानव के सम्पूर्ण सम्बन्धों का अध्ययन होता है। जहाँ मनोविज्ञान का सम्बन्ध व्यक्तिगत होता है, वहाँ समाजशास्त्र का सम्बन्ध सामाजिक होता है।

मनोविज्ञान अपने वैयक्तिक दृष्टिकोण के आधार पर व्यक्ति को इकाई मानता है, परन्तु समाजसास्त्र में सम्पूर्ण रूप से व्यक्तियों का अध्ययन किया जाता है।

समाजशास्त्र और मनोविज्ञान के पारस्परिक सम्बन्ध को पारिभाषित करते हुए आर.एस.उडवर्थ ने कहा है कि- *"मनोविज्ञान, शरीर विज्ञान तथा सामाजिक विज्ञान के बीच स्थित व्यक्ति की क्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन करता है।"*[39] यह तीनों विज्ञान मनुष्य की क्रियाओं का अध्ययन करते हैं, शरीर विज्ञान उन सभी अंगों का अध्ययन करता है जो व्यक्ति की रचना करते हैं, मनोविज्ञान व्यक्ति का तथी सामाजिक विज्ञान व्यक्तियों द्वारा संगठित समूहों पर विचार प्रस्तुत करता है।

निष्कर्षतः यह कहना उचित होगा कि मनोविज्ञान समाजसास्त्र को एवं समाजशास्त्र मनोविज्ञान को प्रभावित करते हैं।

समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र

इस शास्त्र के अन्तर्गत मानव के केवल आर्थिक पक्ष का अध्ययन किया जाता है। अर्थशास्त्र में धनोत्पत्ति, उपभोग एवं वितरण से सम्बन्धित सभी समस्याओं का चित्रण समुचित ढंग से किया जाता है। क्योंकि मनुष्य के विकास में अर्थ की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

समाज में परिव्याप्त गुण-दोष, रीति-रिवाज, परम्पराएँ आदि आर्थिक परिस्थितियों पर ही निर्भर करते हैं। आर्थिक समस्याओं के मूल तक पहुँचने हेतु अर्थशास्त्रीयों को समाज का सहारा लेना पडता है क्यों कि, आर्थिक समस्याओं के अध्ययन बिना समाजशास्त्रीय अध्ययन संपूर्ण नहीं माना जा सकता।

अर्थशास्त्र केवल व्यक्ति के आर्थिक पक्षों पर प्रकाश डालता है, जबकि समाजशास्त्र मनुष्य के आधारभूत सामाजिक सम्बन्धों पर।

समाजशास्त्र और इतिहास

इतिहास में मानव-जाति के क्रमबध्द एवं व्यवस्थित कार्यों का लेखा जोखा चित्रित किया जाता है। अर्थात घटित घटनाओं का क्रमबध्द तरीके से उल्लेख कर सामग्री को इतिहास संग्रहित करता है। किन्तु समाजशास्त्र मानव की उन सभी सामान्य प्रवृत्तियों को वर्णित करता है, जो अनेक आन्दोलनों के सूत्रपात से आबध्द हैं।

इतिहास हमेशा विवरणात्मक अध्ययन करता है,जबकि समाजशास्त्र विश्लेषणात्मक। अतः हम कह सकते हैं कि समाजशास्त्र और इतिहास में कुछ भिन्नता होते हुए भी वे एक दूसरे के करीब हैं क्योंकि समाजशास्त्र का सभी सामाजिक वीज्ञानों से गूढ़ सम्बन्ध है। समाजशास्त्र में विभिन्न सामाजिक विज्ञानों से सामग्री को संग्रहित किया जाता है,जबकि दूसरे विज्ञान भी सामग्री हेतु समाजशास्त्र पर निर्भर रहते हैं।

यह कहना उचित होगा कि समाजशास्त्र एक विषय के रूप में अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखता है।

समाजशास्त्र और नीतिशास्त्र

समाजशास्त्र और नीतिशास्त्र दोनों एक दूसरे से भिन्न नहीं है कारण नीतिशास्त्र समाज के नैतिक अनैतिक उचित अनुचित का बोध समयानुसार कराता रहता है। क्योंकि दोनों का सम्बन्ध मानव की सामाजिकता से ही है। नीतिशास्त्र मानव के आचरण पर अपना विशेष ध्यान रखता है। समाज द्वारा मान्यता प्राप्त सभी प्रकार के नैतिक मूल्यों की व्युत्पत्ति में सामूहिक चेतना के आधार बिन्दु को स्वीकार किया गया है। इसलिए नैतिक मूल्यों को समाज से अलग करके नहीं देखा जा सकता है।

जैसा कि हमें ज्ञात है कि नीतिशास्त्र मानव के आचरण, उसकी अच्छाई - बुराई, सही-गलत, गुण-अवगुण आदि बातों पर अपना महत्वपूर्ण फैसला करता है, जबकि समाजशास्त्र नीतिशास्त्र के सारांश को परिभाषित करने का प्रयास करता है। एक तरफ तो यह स्वीकारा गया है कि नैतिक-अनैतिक आचारणों का मानदण्ड नीतिशास्त्र कराता है तो दूसरी तरफ समाजशास्त्र की मान्यता है कि यह मानदण्ड समाज सापेक्ष है और इसके निर्धारण में सामाजिक परिवेश निर्णायक भूमिका निभाता है।

1.7. साहित्य के समाजशास्त्र का स्वरूप

साहित्य के समाजशास्त्र के स्वरूप को समझने के लिए उसके भीतर समाज से साहित्य के संबंध की व्याख्या में सक्रिय तीन प्रमुख दृष्टियाँ हैं –

1. साहित्य में समाज की खोज
2. समाज में साहित्यकार और साहित्य
3. साहित्य और पाठक के संबम्ध का विश्लेषण

इन तीन मुख्य दृष्टियों को ही लेकर भिन्न समाज शास्त्रियों ने अपने समाजशास्त्रीय अध्ययन के अलग-अलग नाम दिये -सभी ने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से साहित्य और समाज के संबम्धो को इन्ही तीनों के आधार पर विश्लेषित कर पध्दति के रूप में एक नया नाम दिया। डा.विश्वम्बर दयाल गुप्त ने अपनी पुस्तक में समाजशास्त्र की तीन पध्दतियों के बारें में विवेचन किया है –

1. ऐतिहासिक पध्दति (Historical method)
2. तुलनात्मक पध्दति (comparative method)
3. संरचनात्मक - प्रकार्यात्मक पध्दति (structural functional metod)

1. ऐतिहासिक पध्दति

"अतीत की महत्वपूर्ण घटनाओं, सामाजिक सम्बन्धो, समाज एवं संस्कृति के सूक्ष्म एवं विस्तृत अध्ययन हेतु जिस पध्दति का प्रयोग होता है उसे ऐतिहासिक पध्दति कहते हैं।"[40]

कारते, स्पेन्सर, हॉबहाउस, कार्ल मार्क्स एवं उनके अनुयायियों की विचारधारा में इस पध्दति को महत्व मिला है। साहित्य का समाजशास्त्री अतीत के आधार पर वर्तमान को समझने तथा भविष्य की दिशा-निर्धारण हेतु महत्वपूर्ण तथ्यों

की उपलब्धि कर सत्य की खोज में कार्यरत रह सकता है। साहित्यिक कृतियाँ प्रलेखीय स्त्रोत के रूप में दस्तावेज का कार्य करती है। *रेनेवेलेक* की मान्यता है कि- *"कलाकार सत्य का वाहक होता है, और अनिवार्य रूप से ऐतिहासिक और सामाजिक सत्यों का भी वाहक होता है। कलाकृतियाँ दस्तावेज का काम करती हैं, क्योंकि वे अपने आप में स्मारक हुआ करती हैं।"*[41]

मैक्सवेबर ने पूँजीवाद की उत्पत्ति और विकास आदि में ऐतिहासिक पध्दति का सार्थक प्रयोग किया है। संक्षेप में इस पध्दति का प्रयोग साहित्य का समाजशास्त्री निम्न उध्देश्यों की पूर्ती हेतु कर सकता है -

क. साहित्य के क्रमिक विकास को ऐतिहासिक दस्तावेज के रूप में ग्रहण कर साहित्य में वर्णित, उसकी उत्पत्ति एवं विकास तथा वर्तमान स्वरूप के निरूपण हेतु तथ्यात्मक अध्ययन।

ख. साहित्य संरचना की उत्पत्ति एवं विकास तथा उसके ऐतिहासिक परिवर्तनों का विश्लेषण।

ग. साहित्य संरचमा की निर्णायक इकायियों, उनके पारस्परिक सम्बन्धों, तथा उनके स्वरूपों व संबन्धों में होनेवाले परिवर्तनों एवं साहित्य सृजन में उनकी स्थिति एवं भूमिका का क्रमिक अध्ययन आदि।

2. तुलनात्मक पध्दति

समाजशास्त्रीय अध्ययन-पध्दति के रूप में तुलनात्नक पध्दति को काफी महत्व मिला है। बोरोनोर के अनूसार -*"19 वी सकाब्दी में इस पध्दति को सामान्य प्रयोग की पध्दति के रूप में स्वीकार कियागया।"*[42]

मानवशास्त्रियों व्दारा प्रयुक्त इस पध्दति का प्रयोग कॉम्ते, स्पेन्सर, दुर्खिम मैक्सवेबर, पारसन्स आदि के अध्ययनों में व्यापक रूप से हुआ है। मानवशास्त्री विड्स ने इस पध्दति की व्याख्या करते हुए कहा है कि- "*व्यक्तियों के मध्य पाये जानेवाले स्वरूपों की तुलना के द्वारा मानवीय संस्थाओं तथा विश्वासों के उद्वीकासीय क्रम को स्थापित किया जाता है।"*[43]

प्रमुख संस्थाओं के पारिवारिक समबन्ध, परिवर्तनों एवं उनके प्रभावों के व्यवस्थित अध्ययन में पध्दति उपयोगी होती है। हाबहाउस, त्व्हीलर तथा जिन्सबर्ग ने आदिम समाजों की प्रमुख संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया है। दुर्खिम

का आत्महत्य तथा वेबर का धर्म समबमधी अध्ययन तुलनात्मक अध्ययन का ही परिणाम है। इस पध्दति की सार्थकता इस प्रकार है।

क. मौखिक साहित्य में स्थापित विचारों तथा लिखित साहित्य में स्थापित विचारों का तुलनात्मक अध्ययन, ताकि साहित्यक निरन्तरताओं की खोज संभव हो सके।

ख. समकालीन विविध साहित्यक वीधाओं के स्त्रोत,पारस्परिक संबंध लोक प्रियता एवं प्रभाव के कारकों का अध्ययन।

ग. विभिन्न भाषायी क्षेत्रीय एवं युगीन साहित्य से तुलनात्मक अध्ययन द्वारा सामान्य प्रवृत्तियों की खोज।

घ. लेखक, प्रकाशक, पाठक, आलोचक की सामाजिक स्थिति,युगीन मान्यताएँ एवं उतार-चढाव, पारस्परिक सहयोग एवं संघर्ष का अध्ययन।

घ. साहित्यक मानदंडों व अंतर्वस्तु के आधार पर विश्व साहित्य के आधारों की खोज आदि।

3.संरचनात्मक प्रकार्यात्मक पध्दति

रसंरचनात्मक प्रकार्यात्मक पध्दति की दो आधारभूत अवधारणाएँ-संरचना एवं प्रकार्य है जो समाजशास्त्रीय अध्ययन को किसी भी सामाजिक इकाई की पारस्परिक अन्तः सम्बन्धों,उसकी स्थिति तथा भूमिका द्वारा समाज को दिये जानेवाले योगदान तथा उनके अंतः सम्बन्धित प्रतिमानों की क्रमबध्दता के अध्ययन पर केन्द्रित करती है। *जान्सन* के अनुसार - " *किसी भी वस्तु की संरचना उसके अंगो के मध्य विद्यमान अपेक्षाकृत स्थिर अंतः सम्बनधों से बनती है, अंग शब्द स्वयं ही किसी मात्रा तक स्थिरता का परिचय करता है। सामाजिक व्यवस्था का निर्माण व्यक्तियों की अंतःसम्बन्धित क्रियाओं से निर्मित होने के कारण उसकी संरचना के उन क्रियाओं का नियमितता या पुनरावृत कार्यों में खोजनी चाहिए।*"[44]

जान्सन संरचना के अंतर्गत विद्यमान प्रस्तुत तत्वों में निम्नलिखित बिन्दुओं को शामिल करते हैं।

1. नियमों से सम्बन्धित उपसमुहों
2. बृहद् तंत्र और उपसमूहों के मध्य पाये जानेवाले विविध प्रकार के कार्य
3. उपसमूहों एवं कार्यों को नियमित करनेवाले नियम
4. सांस्कृतिक मूल्य

रैडक्लिफ ब्राउन के शब्दों में-"*संरचना इकाईयों के मध्य संबंधो का प्रतिमान है।*"[45] प्रकार्य किसी विशिष्ट सामाजिक प्रचलन का वह योगदान है जो कि वह सामाजिक व्यवस्था की क्रियाशीलता के रूप में सामाजिक जीवन को प्रदान करता है।

मार्टन के अनुसार- "*प्रकार्य वे निरीक्षित परिणाम हैं जो किसी समाज के अनिकूलन या सामंजस्य में सहायक होते हैं।*"[46]

प्रकार्यवाद एक तटस्थ विचार, सिध्दान्त और पध्दति है जिसका प्रयोग सामाजिक संरचनाओं और उन्के स्थिति व भूमिका, परिणाम व कारण को समझने में सहायक होता है। साहित्य के समाज शास्त्रीयों का ध्यान आकर्षित हुआ है। साहित्य के समाजशास्त्रीय विश्लेषण हेतु *ए.डी.डंकन* ने सर्वप्रथम साहित्य रूपी संस्था की संरचनात्मक इकाइयों एवं उनकी अंतः क्रियाओं के अध्ययन का आधार प्रस्तुत किया। *लुसिए गोल्डमान* भी अपने *उत्पत्ति मूलक संरचनावाद* की अवधारणा को कृति की आन्तरिक संरचनाओं के विश्लेषण पर ही केंद्रित करते हैं। *एम.सी.अत्बख्त* अपने *आर्ट एज एन इन्स्टीट्युशन* निबन्ध में साहित्य की संरचना एवं प्रकार्य विश्लेषण का सैध्दान्तिक आधार प्रस्तुत कर संरचनात्मक-प्रकार्यवाद के अध्ययन की ओर प्रेरित करते है।

उपर्यक्त समाजशास्त्री पध्दतियाँ साहित्य को समग्र रूप में विश्लेषित करने में सक्षम प्रतीत होती हैं साहित्य अध्येता इन पध्दतियों की आधारभूत मान्यताओं के आधार पर वस्तुनिष्ठ निष्कर्षों की प्राप्ति तथा साहित्य सृजन की प्रक्रिया को समझने में सफल हो सकता है। साहित्य का समाजशास्त्र स्वयं अपने आप में एक पध्दति है। एक सार्वभौम पध्दति के रूप में यह अनुसन्धान कर्ता को प्रेरित करती है कि वह उन परंपराओं मूल्यों और आदर्शो, को खोजने का प्रयास करे जिनमें कि किसी कृति का सृजन हुअ है। साथ ही पाठक वर्ग की स्वीकृति-अस्वीकृति, आलोचक द्वारा निर्णायक भूमिका रही है? साहित्य में लेखक, पाठक, आलोचक, व प्रकाशक एवं उनकी अन्तःक्रियाएँ विशेष महत्व रखती है जिनका समाजशास्त्रीय पध्दति द्वारा विवेचन कृति के मूल्यांकन में साहायक होता है *मैनेजर पाण्डेय* ने लिखा है कि- " *आजकल साहित्य के समाजशासत्र के विकास की दो धाराएँ है एक धारा में साहित्य में समाज की अभिव्यक्ति की खोज होती है। उसे हम मीमांसवादी धारा कह सकते है। दूसरी में साहित्य की सामाजिक स्थिति का विवेचन होता है। वह अनुभववादी धारा है। मीमांसवादी धारा के अंतर्गत मार्क्सवादी आलोचनात्मक समाजशास्त्री और समरचनावादी दृष्टियाँ दिखाई देती* है।"[47]

साहित्य के समाजशास्त्र के विकास की धाराएँ

मैनेजर पाण्डेय के अनुसार साहित्य के समाजशास्त्र के विकास की धाराएँ एक मीमांसावादी और दूसरा अनुभववादी। मीमांसावादी के अंदर्गत मार्क्सवादी, आलोचनात्मक समाजशास्त्र, संरचनावादी आते हैं। अनुभववादी के अंदर्गत विधियवादी, संरचनात्मक कार्यात्मक आते हैं।

मीमांसावादी धारा

साहित्य के समाजशास्त्र की मीमांसावादीधारा के अंतर्गत कृति विवेचन के केन्द्र में होती है। मीमांसावादी साहित्यक कृति के विशिष्ट स्वरूप को महत्व देते हैं। इसलिए उनके सामने कृतियों के चुनाव की समस्या होती है। वे गंभीर और साथ ही साहित्य में फर्क करते हैं। मीमांसावादी समाजशास्त्री के सामने कृति में समाज की अभिव्यक्ति की विवेचना की समस्या होती है। कृति में समाज यथार्थ चित्रण के रूप में व्यक्त होता है और सामाजिक चेतना के विश्लेषण पर। सामाजिक चेतना विचारधारा या विश्व दृष्टि के रूप में व्यक्त होती है। यहाँ सवाल उटता है कि विश्व दृष्टि की अभिव्यक्ति किस रूप में और किस स्तर पर होती है। गोल्डमान साहित्यक कृति की संरचना में विश्व दृष्टि की खोज करते है। मीमांसावादी समाजशास्त्र के अंतर्गत साहित्यक कृतियों के पाठकीय अभिग्रहण और पाठकीय प्रतिक्रियाओं का भी विवेचन होता है लियो लावेंथल ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। इसके साथ मीमांसावादी प्रकृति, समाज और चेतना के विकासशील संबन्ध की व्याख्या के लिए सैध्दान्तिक ढाँचे का निर्माण आवश्यक मानते हैं।

अनुभववादी धारा

मीमांसावादियों के विपरीतर साहित्य के समाजशास्त्र के क्षेत्र में काम करने वाले अनुभववादी विचारक सिध्दान्त निर्माण के प्रयत्न के आवश्यक मानते हैं।वे प्रतीत और अनुभव से प्राप्त तथ्यों को महत्व देते हैं। अनुभववादी इन्द्रियबोध, प्रतीत और अनुभव पर जोर देते हैं। जिससे व्याख्यात्मक समझदारी की उपेक्षा होती है, ऐसी स्थिति में यथार्थ का अधूरा बोध होता है। इस संबन्ध में मार्क्स ने लिखा है कि- *"अगर वस्तुओं की प्रतीत और यधार्थ में हमेशा तात्कालिक समरूपता होती तो विज्ञान अनावश्यक होगा।"*[48]

पक्का अनुभववादी दृष्टिकोण अपनी मुल्यमूढ़ता के कारण समाज में मौजूदपीडा, गुलामी, मूल्यों के परस्पर विरोधि विचारधाराओं की टकराहट और वर्गों के संघर्ष में तटस्थता की वकालत करता है। कुछ लोग विधेयवाद और अनुभववाद को एक समझेते हैं। इस संबन्ध में *डा.मैनेजर पाण्डेय* का कहना है कि

-"*आजकल कुछ लोग साहित्य के समाजशास्त्र को विधेयवादी अनुभववदी साहित्य के समाजशास्त्र का पर्याय मानलेते हैं। यह अर्द सत्य है। इसके साथ यह ध्यान देने की बात है कि आज अनुभववादी साहित्य के समजशास्त्र का जो रूप और प्रयोजन बन गया है। वही रूप और प्रयोजन आरंभिक दौर में विधेयवाद का न था।*"[49] वे आगे लिखते हैं कि- " *विधेयवादी समाजशास्त्र में कृति की अंतर्वस्तु पर ध्यान दिया जाता था, लेकिन आज के अनुभववादी कृति की उपेक्षा करते हैं। वे कृति की रचना से पहले की परिस्थितियों की विवेचना करते हैं और रचना के बाद की स्थितियों का भी लेकिन रचना का निजी स्वरूप उनके विवेचन से छूट जाता है। जब कि अनुभववादी कृति के निर्माण से अधिक उसके उपभोग में दिलचस्पी रखते हैं।*"[50]

इन दो धाराओं के सम्पूर्ण विवेचन से यह बात स्पष्ट होती है कि मीमांसावाद में आलोचनात्नक समाजशास्त्री जैसे, लियोलावेंथल और संरचनावादी गोल्डमान है जबकि विधेयवाद और अनुभववाद एक दूसरे से भिन्न है। इस कारण विधेयवाद एक भिन्न निकाय है। साहित्य के समाजशास्त्र की सब से प्राचीन पध्दति विधेयवाद है। जिसके संस्थापक तेन है। इसके बाद मार्क्सवाद आता है। इसके मुख्य प्रवर्तक कार्लमार्क्स एवं फेडरिक ऐंगल्स हैं।

19 वी सदी के मध्य से मार्क्सवाद के समानान्तर समाजशास्त्र का विकास हुआ। मार्क्सवादी साहित्य चिन्तकों में लेनिन, जी.वी प्लेखनोव, एके लूनार्चस्की, मैक्सिम गोर्की, हवार्ड फास्ट, जार्ज लुकाज लूसिए गोल्डमान आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है। मार्क्सवाद एक विस्तृत अवधारणा है। इसमें समाज के हर क्षेत्र को अपने अध्ययन में सम्मिलित किया है। चाहे वह धर्म, गर्शन, राजनीति, अर्थनीति, संस्कृति कोई भी हों।

मार्क्स की मान्यता है कि-*"जीवन के भौतिक साधनों के उत्पादन के तरीके सामाजिक, राजनीतिक, बौध्दिक जीवन की समूची प्रक्रिया को निर्धारित करते हैं। लोगों की चेतना उनके अस्तित्व को विर्धारित नहीं करती है। बल्कि इसके प्रतिकूल उनका सामाजिक अस्तित्व ही उनकी चेतना को विर्धारित करता है।"*[51]

यद्यरि मार्कसवादी विचारधारा से आगे आनेवाले सभी विद्वान प्रभावित हुए और उन्हों ने अपने समज शास्त्रीय अध्ययन हेतु मार्कसवादी सूत्रों को अपनाया परन्तु यह भी सत्य है कि इन विद्वानों ने अपने चिन्तन से ऐसे नये सूत्रों की खोज की जिससे नए दृष्टिकोणों की स्थापना हुई। बीसवी सदी में साहित्य का सनाजशास्त्र ज्ञान की एक पृथक शाखा के रूप में अस्तित्व ग्रहण कर अपने स्वरूप एवं प्रकृति निर्धारण हेतु प्रयत्नशील हुआ। इसमें प्रमुख विचारकों के योगदान एवं अध्ययन के आधार पर साहित्य के समाजशास्त्र के वर्तमान एवं भावीस्वरूप को अधिक बोधगम्य बनाया गया।

लुसिए गोल्डमान(1913-1972) का *द सोश्योलॉजी ऑफ लितेरेचर स्टेट्स एण्ड प्राबलम्स आफ मेथड* निबन्ध साहित्य के समाजशास्त्र में अब तक की महत्वपूर्ण उपलब्दि कही जा सकती है। गोल्डमान ने साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन के कृति और प्रतिबिम्बित संरचनाओं के विश्लेषण पर केन्द्रित करते हुए 'उत्पत्ति मूलक समरचनावाद' की अवधारणा को प्रस्तुत किया। इसके फलस्वरूप संरचनावाद को ठोस आधार प्राप्त हुआ बाद में रेमण्ड विलियम्स ने भी उपन्यासर के समाजशास्त्री अध्ययन हेतु अनुभूति की संरचना की अवधारणा को प्रस्तुत किया।

20 वी शताब्दी में समाजशास्त्रियों के सामने अनेक दृण्टियाँ-जैसे दर्शन के क्षेत्र में मार्क्सवाद और अस्तित्ववाद, फ्रायड और पिजे की मनोवैज्ञानिकता से जुडी मान्यताएँ समाजशासत्र में अनुभववाद, आलोचनात्मक सिध्दान्त, संरचनावाद आदि की चर्चा चल रही थी। इसी समय गोल्डमान जैसे विचारक ने मध्यम मार्ग अपनाते हुए एक नया मार्ग बनाया। जिसे उत्पत्तिमूलक संरचनावाद के नाम से अभिहित किया गया।

विधेयवाद

18 वी शती के प्रथमचरण में, साहित्य, दर्शन, कला और अन्य क्षेत्रों में जो आलोचना दृण्टि अपनायी गयी और जो आलोचना सिध्दान्त रूपाथित किए गए वे सरासर प्राकृतिक विज्ञानों के कारण-कार्य सिध्दान्त के अनुसार निर्मित थे। यह

नयी आलोचना दृण्टि थी - विधेयवाद जिसने लगभग दो शताब्दियों तक पाश्चात्य आलोचना जगत में निर्विवाद रूप से शासन करता रहा। साहित्य के समाजशास्त्र का व्यवस्थित रूपायन समीक्षक इप्पो लाइत तेन ने 19 वी सती कें प्रधमार्ध्द में किया। तेन से पूर्व जोहान गाटप्रेड हुर्ड आदि ने इस क्षेत्र में कार्य किया था।

हार्डन जर्मन के निवासी और प्रख्यात विचारक हैमेन के शिष्य थे। हैमेन पूर्ण तथा आस्तिक भाषा एवं कलाओं के दैवी उत्पत्ति के सिध्दान्त के विश्वासी थे। हर्डन ने अपने गुरू की स्थापनाओं के विरोध में तर्क यह दिया कि साहित्य की हर कृति एक विशेष सामाजिक और भौगोलिक परिवेश से उत्पन्न होती है उनके अनुसार *"The most indispensable explanation especially of a poet is the explanation of the customs of his age and nation."*[52]

हार्डन ने साहित्य के इतिहास को संस्कृति का इतिहास माना और अपने आप से प्रश्न किया कि क्यों एक विशेष प्रकार की साहित्यक कृतियाँ एक विशेष प्रकार के परिवेश में ही उत्पन्न होती हैं, और दुसरें परिवेश में टिक नहीं सकती- उत्तर खोज ने के क्रम में बदलती जलवायु, भू दृश्य, वंश रीतिरिवाज और राजनीतिक स्थितियाँ आदि तत्वों को निर्धारक माना और इस क्रम में कुछ सरलीकृत निष्कर्ष दिये।

साहित्य के समाज शास्त्रीय आधार के निर्माण में हर्डन से अधिक उत्साह का परिचय दिया फ्रांस की विदूषी और प्रथम महिला आलोचिका मैडम डिस्टेल। डिस्टेल के चिन्तन का ठोस रूप उनकी पुस्तक *डिलालिटरेचर* में मिलता है। उनका उध्देश्य है- *"धर्म, रीति, रिवाजों और कानून के साहित्य पर पडने वाले प्रभावों और साहित्य के इन पर पडने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।"*[53]

मैडम डिस्टेल ने जलवायु, भौगोलिक स्थितियां और तदनुसार सामजिक मनोवैज्ञानिक स्थितियों के साथ साहित्य रचना का संबन्ध जोडा और निर्णय किया कि *"Melancholy, that fertile sentiment in works of genius, seems to belong almost exclusively to northen claimates."*[54]

अर्थात विषद जो कि प्रतिभाप्रसूत कृतियों में उर्वरक का कार्य करताहै। उत्तर देशीय जलवायु की ही उपज है। इसके विपरीत, मैडम डिस्टेल के अनुसार

दक्षिण के प्रांत ठंडे घने जंगलों से युक्त होने के कारण प्रसन्न होते हैं। साहित्यक कृति के विवेचन में जलवायु और भौगोलिक स्तितियों को निर्धारक मानकर मैडम डिस्टेल ने पूर्णतया विधेयवादी दृष्टि का अनुकरण किया। विधेयवाद को प्रत्ययवाद भी कहते हैं। अर्थात जिस केलिए प्रत्यक्ष प्रमाण व साक्ष्य की जरूरत हो, जैसे कि प्राकृतिक अर्थात सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में किसी मुद्दे पर बात-चीत करते समय प्राकृति विज्ञानों के सूत्रों का उपयोग किया जना विधेयवादी पध्दति है। विधेयवादी पध्दति ने साहित्य को सामाजिक और भौगोलिक परिस्थितियों से जोडने के लिए प्रजाति (रेस) परिवेश (मिल्यु) और युग (मोमेण्ट) का त्रिक-सिध्दान्त दिया। वे प्रजाती के अन्तर्गत व्यक्ति की सहज तथा वंशानुगत मानसिक बनावट और शारीरिक संरचना आदि की चर्चा करते हैं। उन्हों ने आर्यो का उदाहरण देते हुए लिखा है कि- *"एक प्रजाति यद्यपि देश काल की दृष्टि से दूर-दूर तक फैल जाती है। फिर भी उसमें कुछ समान विशेषताएँ मिलती हैं। फांतेन पर आपने निबन्ध में डन्होंने लिखा है कि किसी प्रजाती की चित्रगत विशेषताएँ जलवायु, मिट्टी और इतिहास की महान घटनाओं की उपज होती है... 17 वी सदी के फ्रांस में फांतेम, पुनर्जागरण करलीन इंग्लैंड में शेक्सपीयर और हमारे समय के जर्मनी में गेटे इसी प्रक्रिया के देन हैं।"*[55]

परिवेश से तेन का तात्पर्य मुख्यतः प्राकृतिक परिवेश से है लेकिन उसके अन्तर्गत वे सामाजिक परिवेश को भी शामिल करते हैं। उन्होंने लिखा है कि-" *दुनिया में मनुष्य अकेला नहीं होता उसके चारों ओर प्रकृति होती है, समाज होता है। उसकी आदिम प्रवृत्तियाँ तथा प्रजातिगत विशेषताएँ भौतिक सामाजिक परिस्थितियों, घटनाओं आदि से प्रभावित होती है कभी पुष्ट होती है कभी बदलती।"*[56]

इस प्रकार वे मानव स्वभाव और प्रकृति परिवेश के बीच कार्य-कारण संबंध बिठाने की कोशिश करते हैं और इसके आधार पर साहित्य की विशेषताओं की व्याख्या करते हैं। उदाहरण स्वरूप-यूनान तथा रोम के विशिष्ट प्राकृतिक परिवेश से वहाँ के निवासियों का स्वाभाव बना है और उसकी अभिव्यक्ति उनकी संस्कृति कला तथा साहित्य में हुई है। तेन के अनुसार एक युग में कुछ प्रधान विचार होते हैं। उनका एक बौध्दिक ढांचा होता है जो पूरे समाज के चिन्तन को प्रभावित करता है। *"युग के प्रधान विचार का प्रसार जीवन के सभी क्षेत्रों में होता है,*

व्यवहार में चिन्तन में, एक लंबे समय के बाद ऐसे विचार का धीरे धीरे ह्रस होता है और कोई नया विचार विकसित होकर प्रधान विचार बनजाता है। यह दूसरा विचार पहले से जुडा होता है। साथ ही वह राष्ट्रीय प्रतिमा और समकालीन परिवेश से जुडकर नये प्रकार के चिन्तन और सृजन के प्रेरणा देता है।"[57]

उदाहरण के लिए-माध्यकालीन यूरोप में वीर और प्रजाती तथा आधुनिक काल में दरबारी और वाकपटु। इस प्रकार भौगोलिक कारणों के साथ मानवीय स्वभाव और रचनात्मकता का यह कार्य-कारण संबंध तेन के ही नहीं समूचे विधेयवादी दृष्टिकोण की सीमा को स्पष्ट करता है।

आलोचनात्मक समाजशास्त्र

साहित्य के समाजशास्त्र के विकास में आलोचनात्मक समाजशास्त्रियों का महत्वपूर्ण योगदान है। फैंकफुर्त विश्वविद्यालय में 1923 में एक सामाजिक शोध संस्थान की स्थापना हुई थी। उसी से जुडे हुए विचारकों के समाजशास्त्रीय चिंतन से आलोचनात्मक समाजशास्त्र का विकास हुआ। पूँजीवादी समाज व्यवस्था में मनुष्य की दशा और उसकी चेतना को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों पर विचार ही आलोचनात्मकर समाजशास्त्र का मुख्य उद्देश्य था। इसके लिए उसमें विचारधारा और उसकी अभिव्यक्ति के विभिन्न रूपों का गंभीर विश्लेषण हुआ।

आलोचनात्मक समाजशास्त्रियों की मुख्य देन है संस्कृति के समाजशास्त्र का विकास। यह काम मुख्य रूप से अडोर्नो, हवर्ट मारकुस, और लियोलावेंथल ने किया। परन्तु इस समुदाय में केवल लावेंथल ने ही सचेत और व्यवस्थित रूप में साहित्य के समाजशास्त्र का विकास किया। उन्हों ने निरंतर साहित्य के समाजशास्त्र की सैध्दान्तिक समस्याओं को सुलझाते हुए व्यावहारिक विवेचन में समाजशास्त्रीय दृष्टि को विकसित करने का प्रयास किया। लावेंथल के लेखन का लक्ष्य है साहित्य की सामाजिकता का विश्लेषण। लेकिन वे सामाजिकता की खोज साहित्य के विशिष्ट स्वरूप की पहचान के साथ करते है। उन्हों ने लिखा है कि-" *समाज से साहित्य के सम्बन्ध की खोज के लिए सामूहिक चोतना और व्यक्ति चेतना के बीच संबंधों की समझ जरूरी है। ऐसी समझ मनोविज्ञान से मिलती है, इसलिए मनोविज्ञान साहित्य का सहायक है।"*[58]

लावेंथल ने साहित्य में सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति के विश्लेषण के लिए विचारधारा की मार्क्सवादी धारणा का उपयोग किया है। उन्होंने लिखा है कि

"भौतिकवादी दृष्ट से ही साहित्य की सच्ची व्याख्या हो सकती हैं और सच्ची आलोचना विचारधारा की मीमांसा है।"[59]आलोचनात्मक समाजशास्त्र के अनुसार *"विचार धारा अनिवार्यतः छद्म सामाजिक चेतना या सामाजिक दृष्टि से अनिवार्य भ्रम है।"*[60]

लावेंथल विचारधारा का यही अर्थ मानते हैं इसे अपने साहित्य विश्लेषण में लागू करते हुए लिखते हैं कि - विचारधारा सामाजिक यथार्थ को रहस्य के आवरण में ढकती है-उसको रूपान्तरिक करती है, जिससे पूँजीवादी समाज के अंतर्विरोधों को समझना कठिन हो जाता है- *"विचारधारा की मीमांसा का लक्ष्य है सामाजिक अंतर्विरोधों और वास्तविकताओं पर पडे रहस्य के परदों को हटाकर उसके यथार्थ रूप को सामने लाना और रचना में व्यक्त सामाजिक चेतना के वास्तिविक रूप की पहचान कराना।"*[61]

साहित्य के समाजशास्त्र के अध्ययन में' *रूप'* और *'अंतर्वस्तु'* का संबंध महत्वपूर्ण है। लावेंथल अंर्तवस्तु का ही अधिक विश्लेषण करते हैं, लेकिन रूप की भी उपेक्षा नहीं करते। साहित्य के पाठकीय अभिग्रहण के संबंध में अन्य समाजशास्त्रीयों की तुलना में उनका अध्ययन अधिक गंभीर और व्यवस्थित है। इसकेलिए उन्होंने दास्तोवस्की और हमसून की रचनाओं के पाठकों पर विचारधारात्मक प्रभाव का विस्तार से विश्लेषण किया है। इस पध्दति से रूढिवादी और प्रगतिशील रचनाओं का अंतर स्पष्ट किया जा सकता है। नावेंथल लोकप्रिय साहित्य को आधुनिक समाज में मनुष्य की चेतना और सामाजिकर मूल्य व्यवस्था को जानने तक महत्वपूर्ण स्त्रोत समझते हैं और उसके अंतर्गत सस्ते उपन्यास, जीवनियाँ, समाचार पत्र, परिवारिक पत्रिकाए औप पुस्तक समीक्षाओं का अध्ययन करते हैं। उनके यहाँ लोकप्रिय संस्कृति मुख्य रूप से लोकप्रिय साहित्य तक सीमित है। उनके अनुसार-" *लोकप्रिय संस्कृति की वस्तुपरक स्थिति का तथ्यात्मक ज्ञान जरूरी है जो अनुभववादी पध्दति से प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन उसके मूल्यांकन के लिए एक नैतिक और सौंदर्य बोधीय दृष्टि भी आवश्यक हैं।"*[62]

इसके साथ वे ऐतिहासिक संदर्भ को भी आवश्यक मानते हैं। कोई भी विचारधारा अपने आपमें पूर्ण नहीं होती। सभी में कुछ कमियाँ अवश्य रहजाची है। इस संदर्भ

में एलेनस्विंगवुड ने लिखा है कि- " *फैंकफुती समुदाय के समाजशास्त्रियों ने भीड को एक सर्वव्यापी मिथक बनादिया और उसके आधार पर समाज, संस्कृति, कला और मनुष्य की दिशा की व्याख्या कर दी।*"[63]

यद्यपि "*तेन के बाद और गोल्डमान से पहले के काल में लावेंथल सर्वाधिक महत्वपूर्ण साहित्य के समाजशास्त्री है उनके चिन्तन की एक बडी विशेषता है कि उसमें साहित्य के इतिहास और समाजशास्त्र की वह एक एकता है जो तेन के यहाँ भी मिलती है। उनके चिन्तन में जो समग्रता है वह बाद के समाजशास्त्रियों में नहीं मिलती...पूँजीवादी उपभोक्ता समाज में संस्कृति और कला की दुर्गति को पहचानने में आज भी उनकी दृष्टि दिशा दे सकती है।*"[64]

संरचनावाद

संरचनावाद का अध्ययन हम दो स्तरों पर कर सकते है। एक लुसिए गोल्डमान का उत्पत्तिमूलक संरचनावाद और दूसरा है रेमण्ड विलियम्स का अनुभूति की संरचनाएँ। 20 वी सदी के समाजशास्त्रियों में लुसिए गोल्डमान (1913-71) का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है। साहित्य के समाजशास्त्री के रूप में उनको विशेष, ख्याति फ्रांसीसी भाषा में प्रकाशित मुख्यतः दो कृतियों से मिली *'अव्यक्त ईश्वर'* (1956) और उपन्यास के समाजशास्त्र की एक दिशा गोल्डमान की मान्यताओं के तीन स्त्रोत हैं - जार्ज लूकाच का आरंभिक चिन्तन, पिजे का मनोवैज्ञानिक और संरचनावाद लुकाज के चिन्तन से समग्रता विश्व दृष्टि, रूप, पराव्यैक्तिक चेतना, संभावित चेतना, और वस्तुपरक संभावना आदि धारणाएँ ली। पिजे के चिन्तन से उन्होंने संरचना, प्रकार्य, संरचनाओं के विकास और ह्रास की प्रक्रिया चेतना और वस्तु के बीच संबन्ध तथा संतुलन आदि धारणाओं को अपनाया। उनकी समानधार्मिकता की धारणा पर संरचनावाद का प्रभाव है। इन सब विशेषताओं के कारण उनकी पध्दति को उत्पत्तिमूलक संरचनावाद कहसकते है। उनकी पध्दति जितनी नयी है उतनी जटिल भी है। गोल्डमान साहित्य के समाजशास्त्र के सामाजिक उद्‌गम की खोज करते हैं। इसके लिए वे कृति की विश्वदृष्टि और वर्ग की विश्वदृष्टि की संरचनाओं के बीच समानधर्मिता को ढूँढते है। जिसमें उनकी उत्पत्ति मूलक संरचनावाद पध्दति उपयोगी सिध्द होती है।

विश्वदृष्टि की धारणा गोल्डमान के साहित्य के समाजशास्त्र की बुनियाद है। उनके अनुसार *The social character of the work resides above all in the fact that an individual can never establish by himself a concrete mental structure corresponding to what is called a 'worldview', such a structure can be elaborated only by a group. The individual being capable only of carrying it to a very high degree of coherence and transposing it on the level of imaginary creation, conceptual thought etc.*[65]

उनके आनुसार एक वर्ग या समूह की जीवन जगत् के बारे में सुसंगत दृष्टि ही विश्व दृष्टि है चूँकि व्यक्ति के विचारों से प्रायः संगति और एकन्वित नहीं होती इसलिए विश्वदृष्टि व्यक्ति के विचारों का वास्तविक रूप नहीं है। उसका विकास कोई समूह या वर्ग ही सामाजिक, ऐतिहासिक प्रक्रिया में करता है इसकी अभिव्यक्ति रचना के स्तर पर धारणा और कल्पना के माध्यम से होती है। उनके समाजशास्त्र का लक्ष्य है कृति की आंतरिक एकता में उसकी विश्वदृष्टि की खोज और उस विश्वदृष्टि से उसके मूलभूत सामाजिक समूह की विश्वदृष्टि के संबन्ध का विवेचन।

गोल्डमान के अनुसार-" *किसी वर्ग की विश्वदृष्टि की संरचनाओ से कृति के भीतर रचित संसार की संरचनाओं की समान धर्मिता होती है। समाज शास्त्री उसी समाज धर्मिता की खोज करता हैं।*"[66] वे यह भी मानते रहे कि परस्पर भिन्न अन्तर्वस्तु वाली रचनाओं में भी चेतना की संरचना के स्तर पर समान धार्मिता हो सकती है। उदाहरण स्वरूपर हम हिन्दी साहित्य की तीन महत्वपूर्ण कृतियों की चेतना की संरचनाओं की समानता देख सकते हैं- गोदान, कामायनी, राम की शक्ति पूजा। कामायनी महाकाव्य है और राम की शक्तिपूजा लंबी कविता। गोदान उपन्यास है। विषय और अंतर्वस्तु के स्तर पर तीनों अलग हैं। लेकिन तीनों में संघर्ष, पराजय, निराशा के माध्यम से जो विश्वदृष्टि उभरती है वही पाठको को प्रभावित करती है। गोल्डमान की पध्दति समग्रता की धारणा से अनुशासित होती है। समग्रता के दो पक्ष है संरचनात्मक और ऐतिहासिक, संरचनात्मक स्तर पर समग्रता के अंश की जगह पूर्ण के बोध पर जोर होता है। उसका अर्थ यह है कि किसी एक पक्ष के बोध से उसकी संपूर्णता का बोध अधिक महत्वपूर्ण है। साहित्य में आलोचना और कट्टर पंथ नामक निबन्ध में उन्होंने अपनी विश्लेषण पध्दति की अनेक सीमाओं को भी स्वीकार किया है। लेकिन अपनी सीमाओं की उनकी स्वीकारोक्ति ही उन्हें अपने व्यक्तित्व से ऊँचा उटाती है।

टेरी इगलटन ने लिखा है कि-"*रेमण्ड विलियम्स के लेखन को परंपरागत रूप से प्रचलित का नाम देना कठिन है। उनको समाजशास्त्री राजनीतिक सिध्दान्तकार, सामाजिक-दार्शनिक और सांस्कृतिक भाष्यकार आदि नामों में से कोई एक नाम देकर उनके लेखन के साथ न्याय नहीं किया जा सकता।*"[67]

क्योंकि साथ ही वे उपन्यासकार, कहानीकार, नाटककार, निबन्धकार भी है। उनके चिन्तन और प्रभाव की व्यापकता को ध्यान में रखकर ही कई बार उनकी तुलना जार्ज लुकाच और सार्त्र से की जाती है।

रेमण्ड विलियम्स के लेखन में समाज से संस्कृति के जीवंत और सर्जनात्मक संबन्ध की व्याख्या में मदद करनेवाली, केन्द्रिय धारणा है-'*अनुभूति की संरचना*' 1954 के अपने एक लेख *'प्रिफेस टू फि एण्ड ड्रामेटिक ट्रेडिशंस*' में पहली बार उन्होंने इस धारणा को रखा था। उन्होंने लिखा था कि-" *हम एक काल के अध्ययन में उस काल के भौतिक जीवन, सामाजिक संगठन और एक सीमा तक प्रधान विचारों को भी कमोबेश सही ढंग से पुनः निर्मित कर सकते हैं। इन तत्वों से निर्मित समग्रता के किसी एक हिस्से से किसी कलाकृति को जोडकर देखना उपयोगी हो सकता है। लेकिन अनुभव यही बताता है कि विश्लेषण के दौरान इस समग्रता के सभी तत्वों से कला का संबन्ध खोज लेने पर भी उसमें ऐसा कुछ बच जाता है जिसका बाहर की किसी चीज़ से संबन्ध जोड पाना मुश्किल होता है। उसी को मैं एक काल की अनुभूति की संरचना कहता हूँ जिसे किसी कलाकृति को समग्रता में अनुभव करके ही जाना जा सकता है।*"[68]

यहाँ अनुभूति की संरचना के सहारे वे काल विशेष की जानी-पहचानी विचारधारा से वास्तविक जीवन के अनुभवों में उस विचारधारा की परणतियों को अलग करना चाहते है। रेमाण्ड विलियम्स अनुभूति की संरचना के वैयक्तिक जीवन और आत्मपरक पक्षों की ओर संकेत करते हैं। यहाँ यह प्रसंग महत्वपूर्ण है कि किसी रचना में अनुभव और अनुभूति के स्तर पर ही वैयक्तिकता अधिक प्रकट होती है, विचार के स्तर पर नहीं। इसलिए वे विचार से आधिक अनुभूति की बात करते हैं। मार्क्सवादी आलोचना में रचना के आत्मपरक और वैयक्तिक पक्षों की उपेक्षा की, प्रवृति की भी उन्होंने आलोचना की है। उन्होने लिखा है कि-"*जब विश्वदृष्टि, विचारधारा अधवा वर्ग दृष्टि की बात की जाती है। तब रचना के जीवंत*

अनुभव पक्ष की उपेक्षा हो जीती है। कहीं-कहीं रचना में सचेत विचारधारा और नये अनुभवों के बीच तनाव भी मिलता है। अनुभूति की संरचना के सहारे इस तनाव की व्याख्या की जा सकती है।"[69]

रेमण्ड विलियम्स कल्पना को मानवीय अनुभव में सहायक और रचना में उस अनुभव को संगठित रूपाकार देनेवाली शक्ति मानते हैं। उनकी इस धारणा (अनुभूति की संरचना) के मूल स्त्रोतों की खोज के प्रयास में एफ.आर.लिविस और स्क्रूटनी समुदाय को बार-बार याद किया गया है। वे मानते हैं कि उनके साहित्य चिन्तन में और इस धारणा में भी स्क्रूटनी समुदाय के विचारों के तत्व है। अनुभूति की संरचना की अवधारणा का व्यावहारिक रूप उनके उपन्यास के समाज शास्त्रीय विश्लेषण में मिलता है।

संस्कृति और समाज नाम की पुस्तक में उन्होंने उन्नीसवी सदी के कुछ उपन्यासों का विश्लेषण करते हुए औद्योगिक क्रान्ति के परिणाम स्वरूप बदलते ब्रिटन के समाज और उसकी चेतना का स्वरूप स्पष्ट किया है। *मेरी नर्टन* नामक उपन्यास के विश्लेषण के दौरान उन्हों ने कहा है कि -"*इस उपन्यास की अनुभूति की संरचना के संवेदनशील निरीक्षण और कल्पनाशील पहचान से बनी है।"*[70]

उपन्यास की आलोचना में उनहोंने यथार्थवाद की धारणा का भी उपयोग किया है। इस संदर्भ में उन्होंने *वार एण्ड पीस*, *मिडिल मार्च* और *दि रैनबो* जैसे उपन्यासों में यथार्थवादी विशेषता को रेखांकित किया है। उन्होंने यथार्थवादी परंपरा के उपन्यास को दो वर्गों में बाँटा है - सामाजिक उपन्यास और व्यक्तिगत उपन्यास। उनके अनुसारर सामाजिक उपन्यास के भी दो रूप हैं - दस्तावेजी सामाजिक उपन्यास और विचारधारात्मक उपन्यास। रेमण्ड विलियम्स ने बाद के दिनों में यथार्थवाद संबन्धी इस मान्यताओं में कुछ सुधार किया है और यथार्थवादी उपन्यासों में समाज की व्याख्या और आलोचना संबन्धी दृष्टि की आवश्यकता स्वीकार की है।

1.8. साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन की प्रासंगिकता

साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन से तात्पर्य है कि जीवन सम्बन्धों के माध्यम से साहित्य का अध्ययन सुचारू तथा सुव्यवस्थित ढंग से करना। यह

सर्वमान्य है कि साहित्यकार जिस वातावरण में साहित्य का सृजन करता है, वही वातावरण उसकी रचना में पूर्णतः परिलक्षित होता है। इसीलिए कृतियों के सामाजिकर वातावरण के विवेचन को ही साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन के नाम से पुकारा जा सकता है।

जीवन के ठोस अनुभवों की प्रेरणा और व्यक्तिगत दृष्टिकोण से प्रभावित रचनाकार लेखकीय चेतना को गतिशील कर सृजन कार्य में रत होता है तब जीवन के यथार्थ की कटु पर्तों के ऊपर मानवीयता अपनी सारी दुर्बलता सबलता, कुरूपता और सौन्दर्यशीलता के साथ-साथ आत्मबल के नयेपन के लिए मूर्त रूप में साकार होकर चित्रित हो जात है फलतः साहित्य मानव के संबंधों की व्याख्या को जनमानस की गतिशीलता में नवीन मूल्यों और मान्यताओं को स्थापित करता हुआ यथार्थ का समग्र रूप पलटकर रख देता है।

मानवीय संवेदनाएँ काल और परिवेश के अनुसार बदलती रहती हैं। साहित्यकार अपनी कृति के माध्यम से युगीन परिस्थितियों के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर युगीन रूढियों को तोड ने की कोशिश करता है। बदलते समाज का स्पष्ट रूप साहित्य में पाया जाता है, जो साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व का समर्थन करता है।

साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन के अन्तर्गत सामाजिक संस्थाओं एवं सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन बैज्ञानिक तथा सुव्यवस्थित ढंग से किया जाता है, जो सामाजिक जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों जैसे - अर्थ व्यवस्था, राजनीति व्यवस्था, शिक्षा, साहित्य कला-वाणिज्य एवं विधि आदि से सम्बन्धित है। साहित्यकार अपनी सामाजिक व्यवस्था से सदा प्रभावित होता है। वह किसी भी कृति की पृष्ठभूमि में अपने सामाजिक वातावरण को रखता है। यह मान्य है कि साहित्य ही एक ऐसा मंच है जिसमें अनुभूतियों को यथार्थपूर्ण एवं सुव्यवस्थित ढंग से परिभाषित किया जाता है।

समाज की रूढिग्रस्त मान्यताओं की जगह पर नई मान्यताओं को स्थापित कर बदलते हुए समाज का एवं परिवर्तन की अपेक्षा रखने वाले साहित्य संरचना का चित्र प्रस्तुत करने वाले साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन की प्रासंगिकता सर्वविदित है।

आधुनिक युग में मानव जीवन के काफी परिवर्तन दिखाई दे रहे हैं और इन्हीं परिवर्तनों के फलस्वरूप साहित्य में भी परिवर्तन परिलक्षित हो रहे हैं आज का साहित्य केवल साहित्यकार के खुद के अनुभवों तक सीमित नहीं है। समकालीन साहित्य में सामाजिक दृष्टि ज्यादा देखने को मिलती है। साहित्य अपने आप सामाजिक जीवन के उत्थान में तथा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास में योगदान का यत्न कर रहा है। आज ऐसी स्थिति बन गयी है कि जिस रचना में सामाजिक तथ्यों को अधिक महत्व प्राप्त होता है वही रचना पाठकों के लिए सर्वप्रिय बन रही है। इसके ठीक विपरीत अगर किसी रचना में सामाजिक पक्ष पर प्रकाश नहीं डाला गया तो वह रचना समकालीन समाज के लिए अनुपयोगी लग रही है। युग की मांग के कारण समाजशास्त्रीय अध्ययन को आज विशेष महत्व दिया गया है, जो अपनी समग्रता एवं सामाजिकता को समेट कर साहित्यिक वृध्दि में सहायक बनता जा रहा है।

साहित्य का समाजशास्त्र लोकमंगल की भावना प्रदान करता है। इसलिए समाजशास्त्री साहित्य की विभिम्म परिस्थितियों के विवेचन में अपना सम्पूर्ण योगदान दे रहे है।

इस सम्बन्ध में शिवकुमार मिश्र का निम्न कथन द्रष्टव्य है-*'साहित्य विश्लेषण की यह समाजशास्त्रीय दृष्टि आज एक भरे-पूरे सौन्दर्यशास्त्र में रूपायित हो चुकी है, जो परम्परागत तथा समकालीन दूसरी सौन्दर्यशास्त्रीय अवधारणाओं से इस माने में विशिष्ट है कि उसमें इतिहास बोध तथा समाज वोध के साथ जिसे साहित्य की कलात्मक सत्ता कहते है। उसकी भी यही पहचान है और इन दृष्टियों की संश्लिष्ट संस्थिति के बल पर ही जो रचना, आस्वाद और मूल्यांकन तीनों धरातलों पर साहित्य विश्लेषण के सन्दर्भ में अपनी अपरिहार्यता सिध्द करती है और जिसकी सबसे अहम उपलब्धि यह है कि उसमें जीवन मूल्यों के वीच की खाई को पाट दिया गया है। "*[71]

वस्तुतः साहित्य के माध्यम से समाज या सामाजिक जन-जीवन को प्रतिबिम्बित करने की कोशिश की जाती है, क्योंकि साहित्य में शब्दों से ही जीवन को नया रूप, नया आयाम एवं नई दिशा दी जाती है।

युगीन परिस्थितियों को साहित्य अपने में समेटलेता है। कृतिकार समसामयिक वातावरण से बहुत ज्यादा प्रभावित हो कर इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि संवेदनशीलता के कारण वह देश में उठी किसी भी लहर से अविचलित नहीं

हो सकता क्योंकि उसके विशाल हृदय अपने देश या देशवासियों के कष्टों, दुःखों एवं पीडाओं को असहनीय मानता है। समाज में राजनीति का प्रयोग प्रशासन करने तथा सत्ता हासिल करने के उद्देश्य से किया जाता है, क्योंकि इसमें राजनीतिक दल अनेकों संगठनों, सिध्दांतों, उद्देश्यों एवं पध्दतियों को महत्त्व देते हैं। आम जनता शासन से प्रभावित होती है तथा शासक को ही अपना सर्वस्व हितैषी, कल्याणकारी समझने लगती है। शासन एवं सत्ता के बीच स्थापित पारस्परिक सम्बन्ध, सहयोग एवं संघर्ष के परिणाम स्वरूप व्यक्ति एक दूसरे के निकट आ जाते हैं। क्यों कि शासन के द्वारा ही मानव सामुदायिक जीवन की रक्षा करता है। इसलिए राजनीति सामाजिक वातावरण को सदैव प्रभावित करती ही है।

समाजशास्त्र के अन्तर्गत अर्थव्यवस्था को समाज का मुख्य आधार माना गया है। जिसका प्रभाव प्रत्येक समाज को पूर्णतः प्रभावित किये बिना नही छोडता। सामाजिक जीवन की महत्वपूर्ण परिस्थिति संस्कृति को माना गया है, जिसमें मानव के विश्वास, रहन-सहन, आचर-विचार आदि को समाहित किया गया है। साहित्यकार को भौगोलिक परिवेश समयानुसार प्रभावित करता है, जिसके फलस्वरूप पाठक की मनोवृत्ति पर साहित्य की अमित छाप अंकित हो जाती है। भौगोलिक परिवेश को ठीक ढंग से जब तक विश्लेषित नहीं किया जाता, तब तक साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन पूर्ण नहीं होगा।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन के अन्तर्गत साहित्य तथा कला की पहचान सामाजिक सन्दर्भों के परिप्रेक्ष्य में किया जाता है क्योंकि समाज का क्षेत्र जितना विस्तृत, व्यापक एवं समग्र होगा। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सांस्कृतिक पक्षों आदि के आधार पर सामाजिक पक्ष का अध्ययन उतना ही सफल एवं उचित हो सकेगा।

1.9. उपन्यास की व्युत्पत्ति

नॉवेल शब्द की व्युत्पत्ति *इटालियन* शब्द *नावेला* से हुई है। जिसका अर्थ है - *वृत्तांत, किस्सा और अब वह व्यापक अर्थ में प्रयुक्त हो रहा है। यह गद्य का विस्तृत किस्सा है।*[72] उपन्यास के संदर्भ में और एक परिभाषा है -*"एक ऐसी कहानी जिसका स्वरूप व्यापक होता है जिसमें आए हुए पात्र और घटनाएँ काल्पनिक होते है, नया रूचिकर और कभी अद्‌भुत।"*[73]

अंग्रजी के *नॉवल* शब्द केलिए हिन्दी तथा बंगाली में *उपन्यास* शब्द का प्रयोग होता है यद्यपि प्राचीन संस्कृत साहित्य में इस शब्द का प्रयोग पाया जाता है। किन्तु *नॉवेल* के अर्थ में इसका प्रमुख प्रयोग प्रतिमुख संधि के एक उपभेद के लिए हुआ है और किसी बात को उससे युक्ति-युक्त अर्थ में प्रस्तुत करने को उपन्यास कहा गया है। भामह ने अपने काव्यालंकार में विन्यास एवं स्थापना, साहित्य दर्पणकार ने साहित्य दर्पण में स्थापना एवं ज्ञापन अर्थों में उपन्यास शब्द का प्रयोग किया है। अभिज्ञानशाकुंतलम् में इसका एक प्रयोग वक्तव्य के अर्थ में हुआ है। अमरकोश में उपन्यास का अर्थ वाङ्मुख अर्थ व कथन दिया हुआ है। अमरुक शतक में भी इस शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में हुआ है। इस प्रकार उपन्यास शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में किया गया।

उपन्यास शब्द *उप* उपसर्ग तथा *न्यास* पद के संयोग से बना है। *उप* शब्द से समीप, निकट तथा *न्यास* शब्द से रखना, स्थापित करने का अर्थ बोध होता है। इस प्रकार उपन्यास शब्द अर्थात् वह वस्तु अथवा कृति है जिसे पढकर ऐसा लगे कि यह हमारी ही है। इसमें हमारे ही जीवन का प्रतिबिम्ब है।

"उपन्यास शब्द का प्रयोग साहित्य के लिए सर्वप्रथम बंगला से ही होकर यह हिन्दी में प्रयुक्त होने लगा। बंगला में उपन्यास शब्द के दो अर्थ है। प्राचीन अर्थ में उपन्यास शब्द का व्यवहार तथा दान के लिए होता है। इस अर्थ की संगति संस्कृति - परंरा से बैठती है। नवीन अर्थों में उपन्यास कथा साहित्य का रूपविशेष है जो अंग्रेजी के संपर्क का प्रासंगिक फल है इस अर्थ में उपन्यास शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग किया।"[74]

संस्कृत में उपन्यासर शब्द *उप* नामक निकटवाले उपसर्ग के साथ *अस्* धातु तथा *नि* उपसर्ग के योग से बना है। अर्थात, उपन्यास *उप + नि + अस* का योग है। सामान्यतः उपन्यास से आशय आख्यायिका, कथा, गल्प, उपकथा, आदि साहित्यांग है जो मनोरंजन के लिए लिखेजाते है। संस्कृत साहित्य में कहा गया है *उपन्यासः प्रसादनम्*। प्रसादनम् का अर्थ है प्रसन्न करना। यानि प्रसन्न करनेवाली कृति को उपन्यास कहा जाता है।

विश्व साहित्य में आज उपन्यास सर्वाधिक लोकप्रिय साहित्य विधा के रूप में समाहित है। साहित्य के आधुनिक प्रचलित रूपों में वह अपेक्षाकृत नवीन विधा

है। इस का वर्तमान स्वरूप यद्यपि पूर्वतः आधुनिक युग में ही प्रारंभ हुआ है। कथा का परम्परागत विकसित स्वरूप ही आज का उपन्यास है। उपन्यास के वास्तविक जीवन की कहानी तथा मानव के क्रिया व्यापारों का अध्ययन माना गया है।

उपन्यास को लेकर भारतीय विव्दानों का मत

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मानना है कि "*वर्तमान जगत में उपन्यासों की वडी शक्ति है। समाज जो रूप पकड रहा है, उसके भिन्न-भिन्न वर्गों में जो प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हो रही है। उपन्यास उनका प्रत्यक्षीकरण ही नहीं करता वल्कि आवश्यकता के अनुसार उनके ठीक विन्यास, सुधार अथवा निराकरण की प्रवृत्ति भी उत्पन्न करता है।*"[75]

हजारीप्रसाद द्विवेदी का मत है कि -"*यह गलत धारणा है कि उपन्यास और कहानियाँ सिंस्कृत की कधा और कथाख्यायिकाओं की सीधी संतान है। कथा और आख्यायिका नाम मात्र के गद्य है। उनमें वह झंकार है जो छंद का प्राण है। उपन्यास तथ्य जगत से आधिक संपृक्त है। उनमे विशुध्द गद्य युग की उपज है, उसकी प्रकृति में गद्य का सहज प्रभाव है। उपन्यास में दुनिया जैसी है उसे वैसी ही चित्रित करने का प्रयास प्रधान होता है। उपन्यास तथ्य प्रधान जगत के पास रहता है।*"[76]

रामविलास शर्मा का विचार है कि-"*उपन्यास में जितने विस्तार से समाज की गतिविधि का चित्रण किया जाता है उतने विस्तार से न कविता में संभव है न नाटक में यही कारण है कि साहित्य में यथार्तवाद के विकास के साथ-साथ उपन्यास ही उसका मुख्य रूप बन गया।*"[77]

उपन्यास शब्द को लेकर हीन्दी के आलोचकों में विभिन्न मत दिखाई देते हैं।

बाबू गुलाबराय उपन्यास के संदर्भ में कहते हैं कि -" *उपन्यास कार्याकरण श्रृंखला में बाँधा हुआ वह गद्य कथानक है जिसमें अपेक्षाकृत अधिक विस्तार तथा वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों से संबन्धित वास्तविक घटनाओं व्दारा मानव जीवन के सत्य का रचनात्मकरूप से उद्‌घाटन किया जा सकता है।*"[78]

डॉ.श्यामसुन्दर दास - मनुष्य के वास्तविक जीवन की कल्पना कथा को उपन्यास मानते है। *दशरथ ओझा* का कहना है कि –"*किसी अर्थ को युक्ता - युक्ति रूप में उपस्थित करना उपन्यास कहलाता है। इसका तात्पर्य है कि*

उपन्यास दो संयुक्त शब्दों से बना है। उप उपसर्ग को न्यास शब्द से जोडागया है। उसका अर्थ हुआ उपपतिकृतः का अर्थ है हेतु व्दारा स्थितियों का निश्चित करना उपन्यास का धर्म है।"[79]

शिवदान सिंह चौहान का मानना है कि-" *उपन्यास का क्षेत्र अपरिसीमित है। वह साहित्य का एक नया और संश्लिष्ट रूप विधान है।"*[80]

नंददुलारे वाजपेई ने उपन्यास को एक ऐसी काल्पनिक कृति मानी जो गद्य के माद्यम से आख्यान विशेष की सहायता लेकर सामाजिक जीवन के किसी स्वरूप का यथार्थ आभास देती हुई जीवन की मार्मिक व्याख्या करती है।

भारतीय विद्वानों के मतों के साथ हम उपन्यास को लेकर पाश्चात्य विद्वानों का मत भी देख सकते हैं -*W.H Hudson* उपन्यास को सर्वाधिक सशक्त काव्यरूप कहते है।

The Novel has, largely displaced the drama, as it has displaced other venicles for the expression of our common interest in human life and has established it self as the principle literary form of our complex and many sided modern world.[81]

हेनरी जोन्स के विचार से *"उपन्यास जीवन का एक वैयक्तिक तथा प्रत्यक्ष अंकन है जो प्रथमतः उसके मूल्य की स्थापना करता है। यह जीवन मूल्य प्रभाव की तीव्रता के अनुसार कम या अधिक होता है। किन्तु यदि उपन्यासकार अनुभव करने तथा कहने के लिए स्वतंत्र्य नहीं है तो तीव्रता का सर्वथा अभाव रहेगा, फलतः उसका कोई मूल्य नहीं।"*[82]

गोर्की के विचार से "*अपने देश की दुर्दशा में जनता के ह्रदय को जलाकर उसमें वीरता का आवेग करना उपन्यास का कर्तव्य है।*"[83]

एलेन प्राइस जोन्स की मान्यता है कि "*उपन्यास केवल काल्पनिक परिस्थितियों से प्रभावित होने के लिए नहीं पढा जाता अपितु आत्मान्वेषण के लिए पढा जाता है।"*[84] अर्नाल्ड केटिल के अनुसार- "*उपन्यास गद्य में लिखी हुई यथार्थ जगत की कल्पित गाथा है। जो सामान्य स्तर से युक्त और आपस में पूर्ण होती है।"*[85]

लार्ड डेविड सेसिल ने *"उपन्यास को एक कलाकृति माना है जो जीवन की वास्तविकता को यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत करता है।"*[86]

हरबर्ट जे मूलर ने उपन्यास की व्याख्या करते हुए लिखा है कि-*"उपन्यास मूलतः मानवीय अनुभव का निरूपण है चाहे वह यथार्थ का हो या आदर्श का इस प्रकार उसमें अनिवार्य रूप से जीवन की आलोचना रहती है।"*[87]

उपन्यास - सैध्दान्तिक मान्यताएँ

उपन्यास जीवन का सबसे निकट साहित्यक रूप है। वह भूत का स्पष्टीकरण, वर्तमान का विश्लेषण और भविष्य के निर्माण में मार्गदर्शन कर मनुष्य का सबसे बडा सहायक बन सकता है।

उपन्यास जीवन की पुनर्रचना और व्याख्या की आकांक्षा से जुडी साहित्यिक विधा है। युग के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक अंतर्विरोधों पर टिप्पणी की कल्पना मुश्किल है। लेकिन इससे पहले उससे बहुत सामान्य सी अपेक्षा यह की जा सकती है कि जिस जीवन को वह अपनी रचनावस्तु के रूप में चुनता है उसे बहुत विश्वसनीय और अंतरंग ढंग से हमारे सामने उपस्थित कर सके। एक रचना के रूप में उपन्यास में सर्जित संसार की विश्वसनीयता लेखक से जीवन की गहरी समझ और निष्ठापूर्ण समर्पण की माँग करती है। इस अतिसामान्य सी अपेक्षा के अभाव में उपन्यास से किसी सुगंभीर तकाजे को पूरा करने की बात ही अलग है, उसे शुरू से आखिर तक पढपाना भी मुश्किल होता है।

उपन्यास मानव जीवन का विराट *कैनवास* है तथा इसमें जीवन की भीतरी और बाहरी घटनाओं का वैचारिक अन्तर्लोक अपने समस्त सौंदर्यानुभवों से गुजरता है। अधुनिक मनुष्य की अपनी ही आत्मकथा है। अतः उपन्यास के अस्तित्व का मूल आधार जीवन का प्रस्तुतीकरण है। इस प्रकार वह मानवजीवन की अभिव्यक्ति एवं व्याख्या है।

"समाज सापेक्ष होने के कारण उपन्यास का समाजशास्त्रीय महत्व है। उपन्यास के काव्य शास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक सामाजिस, दार्शनिक, ऐतिहासिक विवेचन के साथ साथ आज आलोचकों का दृष्टिकोण उसके समाजशास्त्रीय अद्ययन की ओर उन्मुख है।"[88]

उपन्यासकार, कहानीकार, कवि चाहे आलोचक सभी पहले व्यक्ति हैं और व्यक्ति समाज में रहता है और समाजिक प्राणी है। इसलिए समाज से हटकर सोच नहीं सकता। उपन्यास मानव सभ्यता की महान लोक कला है, मानव जीवन का गद्य है, वह पहली कला है जो संपूर्ण मानव को लेकर उसे अभिव्यक्ति प्रदान करने की चेष्टा करती है। परिस्थितियों से संघर्षरत मानव को और उसकी उपलब्धियों को जितनी पूर्णता और सफलता के साथ उपन्यासकार हमारे सामने रख सकता है, उतना अन्य कोई नहीं रख सकते। उपन्यास घटनाओं की श्रृंखलामात्र नहीं वह एक संपूर्म चित्र है। उपन्यासकार जीवन दृष्टि के प्रति ईमानदार हो जगत् का अंकन करता है। उसका कार्य सुधारक का भी नहीं होता। वह समस्या को प्रस्तुत करता है उसका समाधान नहीं देता।

उपन्यास और समाज

उपन्यास समसामयिक समाज की समस्याओं को दर्शाने की सशक्त सर्वाधिक महत्वपूर्ण साहित्यक विधा मानी जाती है, मेरियन ने ठीक ही कहा है - पाठक उपन्यास को जेब में डालकर कही भी ले जा सकता है। रेल में, यात्रा में ,प्रतीक्षा में, वह उपन्यास -थियेटर को खोलकर दृश्य देखने में निमग्न हो सकता है। उपन्यास तत्कालीन समाज, युग की परिस्थितियों तथा जनजीवन के चित्रण का सर्वश्रेष्ठ साधन तथा माध्यम है। साहित्य के सारे विधाओ में उपन्यास सबसे लचीला है। इसमें लेखक आवश्यकतानुसार प्रथम पुरुष में लिख सकता है और उत्तम पुरूष में भी कथा कह सकता है और अपने डायरी के पन्नों की भाँति भी उपन्यास का रूप विधान कर सकता है। समाज का तटस्थ रूप में वर्णन कर सकता है और इच्छा होते ही बीच-बीच में अपने विचार भी प्रकट कर सकता है। इसमें जो लचीलापन है, बन्धन हीनता है, वह कभी कोई भी रूप धारण कर सकता है।

समाज में घटित कोई भी प्रभावशाली घटना सामान्यतः उपन्यास का वर्ण-विषय बने बिना नहीं रहती। हिन्दी उपन्यास ही ले लीजिए, समाज के दर्शन सर्वत्र होंगे। प्रेमचन्द युग की राजनैतिक और सत्याग्रहों का वर्णन मिलता है। समाज-सुधार के सभी प्रयत्नों का अंकन मिलता है। प्रेमचंदोत्तर युग में भी दूसरे महायुध्द भारत छोडो आन्दोलन, बंगाल का अकाल, भारत विभाजन, कश्मीर युध्द आदि

सभी घटनाएँ उपन्यासों में यत्र-तत्र बिखरी मिल जाएगी। अतः उपन्यास में समाज का सशक्तचित्रण किया जाता है।

उपन्यास में समज का अध्ययन करते समय इससे समाज के अन्य सभी साहित्य रूपों से अधिक स्पष्ट चित्र मिल सकता है। इसमें व्यक्ति का व्यक्ति से व्यक्ति के परिवार से और व्यक्ति के समाज से आदि संबन्धों का चित्रण मिलता है। बोलने, उठने, बैठने, खाने-पीने, पहनने-सोचने कार्य करने के ढंगों का वर्णन भी उपलब्ध होते हैं। इसलिए इन सब बातों के माध्यम से उपन्यास का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया जा सकता है।

उपन्यास की समाज सापेक्षिता पर प्रकाश डालते हुए डॉ.सुरेश सिन्हा लिखते हैं-" *उपन्यास यथार्थ की प्रतिच्छाया है। वह इस दृष्टि का यथार्थ चित्र है, जिसमें कलाकार, उसका सामाजिक रूप-विधान, उसका वर्ग सभी कुछ व्यापक अर्थों में आ जाते हैं।"*[89]

उपन्यास जीवन का फोटोग्राफिक प्रतिनिधित्व न कर एक ऐसी दृष्टि की अभिव्यंजना करता है, जो यथार्थ की अपेक्षा पूर्ण है, विस्तृत एवं व्यापक है तथा अधिक सत्यसंघ है।

उपन्यास की, समसामयिक जीवन को प्रतिबिम्बित करने की साधारण क्षमता को स्पष्ट करते हुए *स्टेंचल* ने इसे *गली में घूमता आइना* कहा है, मैकेल सोराफ के शब्दों में -"*उपन्यास अस्पष्ट वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन को सुस्पष्ट रूप देकर चित्रित करनेवाला साहित्यांग होता है।"*[90]

इसमें समाज का इतिहास प्रतिबिम्बित होता है और इतिहास उपन्यास के माध्यम् से ही समाज में प्रवेश कर सकते हैं। उपन्यास सर्वाधिक समाज-सापेक्षित साहित्य रूप होता है। इसलिए इसका अनुशीलन निश्चय ही संबध्द समाजों के अध्ययन में बहुत अधिक लाभ दायक रहेगा। *जार्ज मुर* का कथन है कि- *"उपन्यास समकालीन इतिहास के अतिरिक्त और कुछ नहीं। वह, जिस युग में हम जी रहे हैं, उसके सामाजिक परिवेश का बिलकुल पूर्ण और सही-सही पुनर्निमाण है।"*[91]

साहित्य और समाज के बीच अंतः संबन्ध को देखे तो भावाभिव्यक्ति का माध्यम साहित्य है। साहित्य का प्रतिबिम्ब समाज और समाज को समग्रता पूर्वक अभिव्यक्त करने वाली साहित्यक विधा उपन्यास है।

समय के साथ-साथ जीवनानुभव बदले, नए विधाओं का विकास के दौर में सब से सफल विधा उपन्यास हमारे सामने आयी। आज की मांग के मुताबिक इसी विधा में सामाजिक यथार्थ के वर्णन की क्षमता है। उपन्यास एवं समाज के निकटतम संबन्ध के कारण ही उपन्यास के समाजशास्त्र जैसे एक अलग विषय का अध्ययन क्षेत्र में अविर्भाव हुआ है। उपन्यास के समाजशास्त्र नामक विषय के विकास के बाद सामाजिक विषयों पर विस्तृत विवेचन के योग्य कोई और विधा या विषय सामने नहीं आपाया है।

हिन्दी उपन्यास

समाजशास्त्र में मनुष्य को सबसे अधिक एक समाजिक प्राणी के रूप में अर्थात् उसके सामाजिक जीवन को ही केन्द्र में रखा जाता है। जब मनुष्य का यही जीवन साहित्य के विशेष कर उपन्यास जैसी विधा से होकर गुजरता है तो उसके जीवन का प्रत्येक पक्ष एक खुली किताब के समान स्पष्ट रूप से सामने आजाता है। *"प्रेमचंद शताब्दियों से पद दलित, अपमानित और उपेक्षित कृषकों की आवाज थे। पर्दे में कैद, पद-पद पर लांछित और असहाय महिला के पक्ष लेनेवाले वकील थे। गरीबों और बेकारी के महत्व के प्रचारक थे। अगर आप उत्तर भारत की समस्त जनता के आचार विचार, भाषा-भाव, रहन-सहन, आशा-आकांक्षा, दुःख - सुख और सुझबूझ जानना चाहते हैं तो प्रेमचन्द से उत्तम परिचायक आपको नहीं मिल सकता। झोंपडियों से लेकर महलों, खेमचेवाले से लेकर बैकों। गाँव से लेकर शहर तक, आपकों इतने कौशल पूर्वक और प्रामाणिक भाव से कोई नहीं ले जा सकता।"*[92]

हिन्दी उपन्यासों के विकास में बंगला उपन्यासर विशेषकर बंकिमचन्द्र के विधेयवादी दृष्टि का ही सीधा-साधा प्रयोग सबसे अधिक है। अपने समय और समाज के निरीक्षण परीक्षण और अन्वेषण की आधुनिक दृष्टि का एकरूप उपन्यास में मिलता है और दूसरा समाज शास्त्र में, रिचर्ड होगार्ट के शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि-*"उपन्यास में साहित्यक -कल्पना और समाजशास्त्रीय कल्पना की जो रचनात्मक एकता मिलती है। उसी की खोज और पहचान उपन्यास के समाजशास्त्र का मुख्य लक्ष्य है।"*[93]

उपन्यास किसी स्थिति के केवल नकारात्मक पक्ष को लेकर नहीं चलता है। वह सिर्फ स्थिता का ब्योरा प्रस्तुत नहीं करता है बल्कि वह ऐसे अनगिनत जीवन मूल्यों को हमारे सामने रखता है ताकि हम विकट सामाजिक मूल्यों में भी सही जीवन मूल्य का चुनाव कर सके।

उपन्यास और समाज के संबन्ध के अनगिमत स्तर और रूप हैं। जिनके बलबूते पर उपन्यास के समाजशास्त्र की नींव खडी है। इन दोनों के बीच उतना घनिष्ठ संबन्ध होते हुए भी एक विचित्र बात यह है कि उपन्यास का सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति मात्र से सारे उपन्यास कलात्मक कृति होने का दर्जा नहीं पा सकते। उपन्यास के समाजशास्त्र में उपन्यासकार की वर्गचेतना, विचारधारा या विश्व दृष्टि के सहारे उपन्यास का सामाजिक अभिप्रय जानने का प्रयत्न किया जाता है। पर यहाँ एक मुख्य बात ध्यान देने योग्य है कि यह जरूरी नहीं कि उपन्यास कार केवल अपने ही वर्ग का ही वर्णन सफलता से कर सकता है। प्रेमचन्द मध्यवर्गीय होकर भी किसानों का वर्णन करते है। यह वर्गीय अतिक्रमण का उदाहरण है।

नए उपन्यासकारों के संबन्ध में डॉ.देवीशंकर अवस्थी का मत अधिक समीचीन लगता है- *"इस शताब्दी के उपन्यासकारों का मुख्य कार्य यह पहचानना रहा है कि जिस दुनिया में वह चलता- फिरता है उस की जडें भयानक रूप से खिसक रही है और हमलोग उव्देग परिवर्तन में रहे हैं। यह नहीं कहा जा सकतार है कि कब और किस प्रकार का स्थायी साँचा सामने आएगा। यह भी हो सकता है कि इस समय हम उन परिस्थितियों की आकांक्षा भी कर सके जो कि महान साहित्य का जन्म देती हैं और यह भी हो सकता है कि वर्तमान और निकट भविष्य के लिए सर्वाधिक समीचीन वर्णनात्मक साहित्यक रूप उपन्यास के अतिरिक्त कुछ और हो।"*[94] अधिकांश विव्दानों ने उपन्यास के महत्व को स्वीकार करते हुए उसे मानव जीवन का जित्रण करने वाला महाकाव्य कहा है।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि अब साहित्य केवल मन-बहलाने की चीज नहीं है। मनोरंजन के सिवाय उसका और भी कुछ उद्देश्य है, जैसे जीवन की समस्याओं पर भी विचार करना है, उन्हे हल करना है। समाज को प्रभावित करनेवाले प्रश्नों में दिलचस्पी लेकर वर्तमान की कसौटी पर उसे कसने वाली अनुभूति की तीव्रता और सूक्ष्म दृष्टि साहित्य में होनी चाहिए।

साहित्य जो हमारे जीवन के भावबोध से जुडा है, जो समाज से संबंधित है और समाज में जो कुछ घटनाचक्र चल रहा है, उसकी अभिव्यक्ति साहित्य में भावों और विचारों की अभिव्यक्ति के रूप में नित नए विचार और जीवन का सार उससे जूझने की प्रेरणा, क्रान्ति और समाज कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है। क्योंकि साहित्य अपने समय का प्रतिबिम्ब होता है। जो भाव और विचार लोगों के हृदय को स्पंदित करते हैं, वे ही साहित्य पर अपनी छवि छोडते हैं। जिसका व्यापक रूप हमें साहित्य के कई विधाओं में देखने को मिलता है।

साहित्य का समाजशास्त्र अपने विषय संवर्ध्दन हेतु साहित्य की विविध विधाओं -उपन्यास, कहानी, कविता, निबन्ध, रिपोर्ताज, संस्मरण आदि का विश्लेषण करता है। इन विविध विधाओं में विशेषकर उपन्यास के महत्व को साहित्य के समाजशास्त्र के लिए विचारक स्वीकार करते रहे हैं। साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा उपन्यास समाजशास्त्रीयों के लिए सबसे अधिक अनुकूल है क्योंकि *"अपने समय, समाज और इतिहास की प्रक्रिया से परिभाषित मनुष्य ही उपन्यास रचना का लक्ष्य है और समज शास्त्री अन्वेषण का भी।"*[95]

उपन्यास समाज का गद्य है। उपन्यास वर्णित समाज भी मानव समाज की तरह ही है। वह मानव जीवन की अभिव्यक्ति एवं व्याख्या है। एक ऐसा कथात्मक गद्य है जो जीवन की संपूर्ण गतिविधियों, सामाजिक प्रक्रियाओं, मानव जीवन के विभिन्न प्रारूपों, मानवीय अंतःक्रियाओं, सामाजिक संबंधों, सामाजिक परिवर्तन आदि के चित्रण में सक्षम है। विचारकों की दृष्टि में हम-प्रत्येक उपन्यास का अंकुर खोज निकाल सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. श्रेष्ठ हिन्दी निब्ध, सं.श्रीशरण पृ.1
2. परंपरा इतिहासबोध और संस्कृति, श्यामचरण दिबे, पृ.161
3. साहित्य का समाजशास्त्र ःअवधारणा, विश्वम्भरदयाल गुप्त, पृ. 41
   सिध्दान्त एवं पध्दति
4. मम्मट , डॉ.गणपतिचन्द्र गुप्त-साहीत्य पकाशन, पृ. 24
5. श्रेष्ठ हिन्दी निबंध, श्रीशरण, पृ. 41
6. साहित्य का उध्देश्य, प्रेमचंद, पृ. 7
7 भाषा (पत्रिका) , अंक जून 2000, पृ. 21
8. साहित्य के रूप, रामअवध व्दिवेदी, पृ. 2-3
9. साहित्यके रूप, रामअवध व्दिवेदी ,पृ.3
10. साहित्य के रूप, रामअवध व्दिवेदी, पृ. 2
11. साहित्य के रूप, रामअवध व्दिवेदी, पृ. 3
12. साहित्यके रूप, रामअवध व्दिवेदी, पृ.3
13. Literature and Gender Edited , Elizibeth Goodman
14. Encycolopedia of social and cultural Anthropology, पृ. 514
15. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में सामाजिक चेतना,सोफिया मैथ्य,पृ.29
16. साहित्यिक निबंध, गोविन्दलाल छाबडा ,पृ. 422
17. ऋग्वेद, पंकज व्दिवेदी शर्मा (भाष्यकार), पृ.1090-12
18. मनुस्मृति, हरगोविन्दशास्त्री, पृ .373
19. रहीम काव्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन, डॉ.मंजुशर्मा,पृ.29
20. सामाजिक विचार धारा, रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, पृ. 342
21. सामाजिक विचार धारा, रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, पृ. 342
22. सामाजिक विचार धारा, रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, पृ. 342
23. सामाजिक विचार धारा ,रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, पृ. 342
24. सामाजिक विचार धारा, रवीन्द्रनाथ मुखर्जी पृ. 342
25. साहित्यक निबंध गोविन्दलाल छाबडा ,पृ. 425
26. निबंध सोपान,डॉ.श्रीहरी दामोदर, पृ. 34
27.भारतीय मध्यवर्ग और सामाजिक विकास, डॉ.पि.एस.थॉमस, पृ. 16

28. नए साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, गजान नमाधव मुक्तिबोध, पृ. 9
29. लेनिन संपूर्ण वाङग्मय, दलसंगठन और दलीय साहित्य, पृ.10
30. सृजन और समीक्षा, डॉ.रविरंजन, पृ. 27
31. साहित्य चिन्तन, आचार्य कपिल,पृ. 9
32. An introduction to sociology , p.m.Balasundaram , पृ. 2
33. साहित्य का समाजशास्त्र अवधारणा, सिध्दांएवंपध्दति
डॉ.विश्म्भरदयालगुप्त ,पृ. 41
34. An introduction to sociology p.m.Balasundaram, पृ. 2
35. An introduction to sociology p.m.Balasundaram , पृ. 2
36. An introduction to sociology feminist perspectives, पृ. 50
37. हिन्दी उपन्यास का शास्त्रीय विवेचन, डॉ.नारायण अग्निहोत्री, पृ.136
38. Dictionary of sociology ,पृ. 404
39. फणीश्वरनाथ रेणु का कथा साहित्य
समाजशास्त्रीय विश्लेषण, जोगेन्द्र वर्मा, पृ. 39
40. साहित्य का समाजशास्त्र
अवधारणा-सिध्दांत एवं पध्दति, विश्वम्भर दयाल गुप्त, पृ. 69
41. साहित्य का समाजशास्त्र
अवधारणा-सिध्दांत एवं पध्दति, विश्म्भर दयाल गुप्त, पृ. 70
42. साहित्य का समाजशास्त्र
अवधारणा-सिध्दांत एवं पध्दति, विश्म्भर दयाल गुप्त, पृ. 70
43. साहित्य का समाजशास्त्र
अवधारणा-सिध्दांत एवं पध्दति, विश्म्भर दयाल गुप्त, पृ. 71
44. साहित्य का समाजशास्त्र
अवधारणा-सिध्दांत एवं पध्दति, विश्म्भर दयाल गुप्त, पृ. 71
45. साहित्य का समाजशास्त्र
अवधारणा-सिध्दांत एवं पध्दति, विश्म्भर दयाल गुप्त, पृ. 73
46. साहित्य का समाजशास्त्र
अवधारणा-सिध्दांत एवं पध्दति, विश्म्भर दयाल गुप्त, पृ. 74
47. साहित्य का समाजशास्त्र
अवधारणा-सिध्दांत एवं पध्दति,विश्म्भर दयाल गुप्त,पृ. 74

48. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका , मैनेजर पाण्डेय, पृ. 32
49. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका,मैनेजर पाण्डेय, पृ. 33
50. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका,मैनेजर पाण्डेय, पृ. 43
51. उपन्यास और लोक जीवन, रैल्फ फॉक्स, पृ.19
52. छायावाद का समाजशास्त्र, डॉ.शशिमुदिराज, पृ. 20
53. छायावाद का समाजशास्त्र, डॉ.शशिमुदिराज, पृ. 21
54. छायावाद का सममाजशास्त्र, डॉ.शशिमुदिराज, पृ. 21
55. साहित्य के समाजशात्र की भूमिका, मैनेजर पाण्डेय,पृ. 124
56. साहित्य के समाजशास्त्र, मैनेजर पाण्डेय, पृ. 125
57. साहित्य के समाजशास्त्र, मैनेजर पाण्डेय, पृ. 132
58. साहित्य के समाजशास्त्र, मैनेजर पाण्डेय, पृ. 136
59. साहित्य के समाजशास्त्र, मैनेजर पाण्डेय, पृ. 136
60. साहित्य के समाजशास्त्र, मैनेजर पाण्डेय, पृ. 136-137
61. साहित्य के समाजशास्त्र, मैनेजर पाण्डेय , पृ. 142
62. साहित्य के समाजशास्त्र, मैनेजर पाण्डेय, पृ.143
63. साहित्य के समाजशास्त्र ,मैनेजर पाण्डेय, पृ. 144
64. साहित्य के समाजशास्त्र, मैनेजर पाण्डेय, पृ. 145
65. Towards the sociology of novel Luicen Goldman, पृ. 9
66. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका, मैनेजर पाण्डेय, पृ. 150
67. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका, मैनेजर पाण्डेय, पृ. 161-62
68. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका मैनेजर पाण्डेय, पृ. 171
69. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका मैनेजर पाण्डेय, पृ. 181
70. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका मैनेजर पाण्डेय, पृ. 174
71. साहित्य और सामाजिक संदर्भ , डॉ.शिवकुमार मिश्र, पृ. 27-28
72. A Dictionary of literary Terms, J.A.cuddon, पृ. 421
73. A dvanced learnersoxfordDictionary पृ. 728
74. भारतीय उपन्यासों में वर्णन कला का
तुलनात्मक अध्ययन, इंदिरा जौशी, पृ. 58
75. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्रशुक्ल, पृ. 192
76. हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास , हजारी प्रसाद व्दिवेदी, पृ. 460

77. आचार्य रामचन्द्रशुक्ल और उनकी आलोचना, रामविलासशर्म, पृ. 221
78. समीक्षा शास्त्र, कृष्णलाल हंस, पृ. 101
79. समीक्षा शास्त्रःभारतीय और पाश्यात्य , दशरथओझा, पृ. 151
80. हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष, शिवदानसिंह चौहान, पृ.14
81. हिन्दी उपन्यास एक अंतर्यात्रा, रामदरश मिश्र, पृ. 4
82. हिन्दी उपन्यास एक अंतर्यात्रा, रामदरश मिश्र, पृ. 15
83. हिन्दी उपन्यास एक अंतर्यात्रा, रामदरश मिश्र, पृ. 15
84. हिन्दी उपन्यास एक अंतर्यात्रा, रामदरश मिश्र, पृ. 4
85. हिन्दी उपन्यास-स्वरूप सिध्दान्त तथा शिल्प, शान्तिस्वरूपगुप्त, पृ. 14
86. हिन्दी उपन्यास-स्वरूप सिध्दान्त तथा शिल्प, शान्तिस्वरूपगुप्त, पृ. 15
87. हिन्दी उपन्यास-स्वरूप सिध्दान्त तथा शिल्प, शान्तिस्वरूपगुप्त, पृ. 15
88. उपन्यास का समाजशास्त्र डॉ.विश्म्बरदयाल गुप्त, पृ. 37
89. भारतीय मध्यवर्ग और सामाजिक उपन्यास, पी.एस.थॉमस, पृ. 89
90. भारतीय मध्यवर्ग और सामाजिक उपन्यास ,पी.एस.थॉमस, पृ. 18
91. भारतीय मध्यवर्ग और सामाजिक उपन्यास, पी.एस.थॉमस, पृ. 19
92. हजारीप्रसाद व्दिवेदी-हिन्दीसाहित्य युग और प्रवृत्तियों से उदृत, पृ. 228
93. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका, मैनेजरपाण्डे, पृ. 113
94. आलोचना और आलोचना, इन्द्रनाय मादान, पृ. 227
95. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका, मैनेजरपाण्डे, पृ. 227

2.1. प्रस्तावना

हिन्दी के प्रतिष्ठित उपन्यासकार विद्यासागर नौटियाल जी कलम से भी उसी गहराई से जुडे रहे हैं जिस तरह राजनीती से। वस्तुत:वे मात्र कलम के योध्दा नहीं हैं, राजनीतिक अधिकारों के लिए लडनेवाले योध्दा भी।

नौटियाल जी का बचपन जंगल में बीतने के कारण उनका प्रकृति से अनोखा संबंध है, यह उनके रचनाओं में झलकती है। प्राथमिक शिक्षा माता-पिता से, रियासत के विद्यालय विहीन सुंदर जंगलों में अपने घर पर हुई। बाद में टिहरी, देहरादून तथा काशी में पढाई का सिलसिला चलता रहा। काशी हिन्दू विश्वलिद्यालय से अंग्रजी साहित्य में एम. ए. की पढाई की।

भारत की आजादी के दिन सामन्ती शासन व्दारा भारत में विलीन होने के बजाय अपने को एक अलग, सार्वभौम राज्य की घोषणा कर देने के बाद प्रजामण्डल के सामंत विरोधी, स्वतंत्रा आंदोलन में सक्रिय भाग लिये। पहली गिरफ्तारी 18 अगस्त 1947 को टिहरी में हुई। पचास से अधिक वर्षों में फैला हुआ रचना-कर्म और जन-आंदोलनों में सक्रिय भागीदार रहे। सन् 1952 में काशी हिन्दू विश्वविद्यलय में दाखिला लेने के बाद विश्वविद्यालय छात्र संसद में सर्वोच्च पदों पर निर्वाचित हुए। 1958 में आल इंडिया स्टूडेन्ट्स फेडरेशन के उदयपुर अधिवेशन में राष्ट्रीय अध्यक्ष से लेकर उत्तर प्रदेश विधान सभा के सदस्य रहे।

सन् 1960 से कम्युनिस्ट पार्टी के कुलवर्ती कार्यकर्ता के रूप में लगातार टिहरी में निवास, टिहरी बाँध से विस्थापित होने के बाद देहरादून में स्थायी निवास। पहाडों में चिपको ऑंदोलन के शुरूआती कार्यकर्ता, 1980 में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के प्रत्याशी के रूप में टिहरी गढवाल मोटर मजदूर संघ, सार्वजनिक निर्माण विभाग मजदूर संघ, वन विभाग मजदूर संघ आदि अनेक ट्रेड युनियनों के जन्मदाता कार्यकर्ता। जिन्दगी के अनेक वर्ष जेलों में बिताए, तीस वर्षों तक वकालत किये। शासन व्दारा कोर्ट को टिहरी से जबर्दस्ती नई टिहरी ले गए, जाने के बाद वकालत छोड कर पूर्णकालिक लेखक बनगए।

सन् 1949 से लेखन कार्य प्रारंभ हुआ। लेखन के क्षेत्र में 1954 में *कल्पना* में प्रकाशित पहली कहानी *भौंस का कट्या* से अपनी पहचान बनाने वाले नौटियाल की अब तक प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिकाओं में पचास से अधिक

कहानियाँ *फट जा पंचधार, फुलियारी*, कथा संग्रहों के अलावा छः उपन्यास, *आत्मकथा मोहन गाता जाएगा, देश भक्तों की कैद में,* और निबंध *बागी टिहरी! गाए जा*, प्रकाशित हो चुके हैं।

सोना कहानी पर दूरदर्शन ने एक टेलीफिल्म बनाई, जो दर्शकों के बीच *नथ* के नाम से भी जानी जाती है। उपन्यास *सूरज सबका है* के लिए मध्यप्रदेश साहित्य परिषद 1997 में *अखिल भारतीय वीरसिंहदेव* पुरस्कार से सम्मानित किया और 1999 के *पहल* सम्मान से पुरस्कृत हुये।

2.2. टिहरी गढ़वाल की सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ

विद्यासागर नौटियाल का जन्म एक देशी राज्य टिहरी-गढवाल रियासत में हुआ। वहाँ एक सामंत का वंशपरंपरानुगत राज था। वह राजा अंग्रेज अधिकारों के अधीन था और हर प्रकार से उसकी खुशामदी करने में लगा रहता थ। अपनी मातहती को कबुल न करने वाले राजा-नवाबों को अंग्रेज सत्ता से बेदखल कर देते थे और उनके राज्य को अपने साम्राज्य का हिस्सा बना देते थे। टिहरी लोग दुहरी गुलामी में जीने को मजबूर थे। सामंती समाजों में सभी जगह लोग अपने लिए नहीं जीते थे। वे अपने राजा के लिए जीवित रहते थे राजा की रक्षा में उसकी सेवा करते हुए मर-मिट जाना जीवन का आदर्श होता थ।

प्राचीन काल से यही भाव समाज में सर्वोत्तम माना जाता रहा। इस बात को यों भी समझा जा सकता है कि प्राचीन काल में औरत अपने लिए नहीं, सिर्फ अपने पति के लिए जीवित रहती थी। पति के बगैर उसका कोई अस्तित्व नहीं होता था। लेकिन वह पति के सुखों में बराबरी की भागीदार नहीं हो सकती थी। पति के सुखों में और उसकी औरत के सुखों में पर्याप्त अंतर होता था। सामाजिक तौर पर मान्यताप्राप्त अंतर। वह एक साथ कई स्त्रियों को पत्नी बनाकर रख सकता था। उसे वैसा करने में किसी को कोई बुराई नजर नहीं आती थी। विरोध करने का तो सवाल ही नहीं। बहुत दिनों तक एक से अधिक औरतें अपने घर पर रखने को बडप्पन की निशानी माना जाता था। लेकिन औरत का किसी परपुरूष की ओर देखना भी उसे परिवार से निष्कासित करने के लिए पर्याप्त कारण होता था।पति की बदचलनी के बावजूद। पति के दुःख में उसकी औरत को न सिर्फ सॉझीदार बन कर रहना होता था, बल्कि औरतें अपने पति के सुख को लौटाने के लिए अपने को सदैव न्यौछावर करने को तैयार रहती थीं। पति के अलावा उसका कोई अपना जीवन नहीं हो सकता था।

उसी तरह सामंती समाज की प्रजा का कोई निजी जीवन नहीं हो सकता था। वे अपने राजा के लिए जीते और मरते थे। राजा का उनके सुख-दुखों से कोई वास्ता नहीं होता था। राजा स्वेच्छाचारी होता था। उसके हर ऐब की तारीफें की जाती थीं। राजा में कोई दोष होता ही नहीं था और उतना सब कुछ के बावजूद टिहरी नरेश को प्रजा परंपरागत तौर पर *बोलॉदा बदरी* मानते थे - बोलता हुआ बदरीनाथ।

जाहिर है कि कोई भी राजा अकेले प्रजा पर शासन नही चला सकता था। उसका राज छोट-छोटे सामंतों के व्दारा संचालित होता था। वे प्रजा की खून-पसीने की कमाई की लूट-खसोट कर उसकी कीमत पर ठाठ करते थे और ऐश में डूबे रहते थे। उनके जुल्मों का विरोध करने को सामंती मूल्यों को उलट देने की कुचेष्ठा माना जाता था और वैसा करने वाले पर राजद्रोह का अभियोग लग जाता थ। इसलिए आम जनता घर के अंदर रोते थे। अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों के खिलाफ सार्वजनिक तौर पर कुछ भी कहने का उन्हें कभी साहस नहीं हो पाता था।

उस समाज के साहित्य और संस्कृति पर भी सामंती संस्कारों की जकड कायम रहती थी। साहित्य, नाटक व लोक-गीतों में विद्रोह का स्तर नही उठाया जा सकता था। इसलिए बहुत मुश्किल से राजा हरिश्चंद्र जैसे नाटकों का मंचन किया जा सकता था। लेकिन उनका मंचन करने के लिए भी दरबार से इजाजत लेनी होती थी।

रामलीला के मंचन पर रियासत में पाबंदी लगती थी। उसका कारण यह था कि कुछ समय पहले टिहरी में रामलीला चल रही थी और राजा की दो रानियों में एक की मृत्यु हो गई। सामंती रीति-रिवाजों के अनुसार त्यौहार के दौरान राजा ने परिवार के किसी सदस्य की मौत हो जाने पर उस त्यौहार पर हाड पड जाता था। भविष्य के लिए उस त्यौहार के मनाए जाने पर स्तायी रोक लग जाती थी। त्यौहार की वह पाबंदी तभी खुल सकती थी जब उस त्यौहार के दिन उस कुल में कोई नया जन्म हो जाय। मनुष्य के बेटा-बेटी का गाय के बछडे-बछिया का। रानी की मौत हो जाने पर रियासती प्रजा जन के समस्त घरों में रामलीला के मनाए जाने पर पाबंदी लगती थी। वह पाबंदी प्रजामंडल व्दारा राजाशाही का तख्ता उलट कर सत्ता का अपने हाथों में लेने के बाद खत्म कर दी गई थी।

1.3. टिहरी गढ़वाल की साहित्यक परिस्थितियाँ

राजा की प्रशंसा करते हुए कुछ पंडित लोग कविताएँ करते थे। उस परंपरा को तोडते हुए तोताकृष्ण गैरोला ने गढवाली भाषा में एक काव्य *प्रेमी पथिक* की रचना की। उसके प्रकाशन से रियासत में साहित्य के क्षेत्र में एक नए युग की शुरुआत हो गई। उस प्रकाशन को टिहरी दरबार ने आदर नहीं किया था। कवि उसके बाद अपने जन्म स्थान बडियारगढ को छोड कर आजीवन रियासत से बाहर ही निवास करता रहा। गढवाली भाषा में उस काव्य की तुलना में आज तक कोई अन्य काव्य प्रकाश में नहीं आया। इस काव्य में एक गरीब घर का बेटा अपने धनी रिश्तेदार अफसर के परिवार में उपेक्षा और त्रास का शिकार होते हुए एक लडकी के प्रेम में उलझ जाता है। परिवार के लोगों की दृष्टि में वह इस योग्य नहीं माना जाता कि उस लडकी का वरण कर सके।

मास्टर सत्यप्रसाद रतूडी मे *पॉख्व* नाटक गढवाली में लिखा था। उसमें भी आम आदमी को ही प्रमुख पात्र बनाया गया था। भगवती प्रसाद पॉथरी ने भी एक नाटक प्रकाशित करवाया था। नाटक में एक आदमी अपनी गरीबी से मजबूर होकर किसी दुकान से एक कपडे का थान चुरा लेता है। इस प्रकार साहित्य का एक नया बदलाव आ रहा था।

नौटियाल के अपने तमाम समकालीन रचनाकार हिंदी कविता और कहानी के क्षेत्र में ख्याति अर्जित कर रहे थे, उस समय तीन कवि-मंगलेशडबराल, लीलाधर जगूडी और विरेन डँगवाल को साहित्य अकादमी ने सम्मानित किया है। गढवाल और कुमाऊँ का समावेश करते हुए जिस उत्तराखांड का गठन किया गया है, वहाँ के अनेक रचनाकार बहुत पहले से ही हिंदी लेखन में अपनी सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं।

1.4. टिहरी गढ़वाल की राजनीतिक परिस्थितियाँ

टिहरी गढ़वाल जिसका शासक अपने को अंग्रेजों का पुशतैनी सेवक मानते हुए लंदन को सलाम करता रहता था। भारत में पांच सौ से अधिक देशी रजवाडे थे। उन सबको यकीन रहता था कि भारत पर अंग्रेजों की सत्ता को सूरज-चांद की तरह अमर रहना है और अंग्रेज महाप्रभु का वरदहस्त रहते हुए उन्हें कोई सत्तामुक्त नहीं कर सकेगा। रानी लक्ष्मीबाई की तरह अंग्रेजों का मुकाबला करने का उनके पुरखों में दम नहीं था। सबने अपने सर झुका कर अपने छोटे-छोटे

राज्यों के भीतर अपनी सत्ता सुरक्षित कर ली थी। राजा टिहरी-गढवाल ने 1857 के दौरान देहरादून तक पहुँच पाने वाले भगौडे अंग्रेजों की सुरक्षा के लिए राजपुर में अपनी सेना तैयार कर दी थी। मुगल हुकूमत के हाथ से दिल्ली निकल जाने के बाद की यह वास्तविकता भी उजागर होने लगी कि किसी एक देशी राजवाडे की विद्रोही प्रजा की हर्गिज यह सामर्थ्य नहीं हो सकता था कि वह अंग्रजों के सर झुका ने वाले अपने सामंत की हुकूमत का तख्ता उलट कर अपने को एक आजाद देश घोषित कर सके। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि भारत की आजादी के दिन कई देशी रजवाडों ने महाप्रभु के चले जाने के कारण अपने को भारत-पाकिस्तान से अलग स्वतंत्र घोषित कर दिया था। हैदाराबाद, कश्मीर के साथ ही टिहरी के राजा ने भी एक आम दरबार लगा कर ऐसी ही घोषण कर डाली थी। साथ ही आजादी के लिए जूझ रहे प्रजामंडल कार्यकर्ताओं, उनके समर्थ ग्रामवासियों का दमन शुरू कर दिया।

विदेश दास्ता के खिलाफ आम भारतवासी के मन में विद्रोह के स्वर उठने लगे। अंग्रेजी हुकूमत के आदेश के खिलाफ फौज के हवलदार चंद्रसिंह गढवाली ने सन् 1930 में पेशावर में गोली चलाने से इनकार कर दिया। पलटन की ओर से वह बगावत की शुरूआत था। टिहरी रियासत की जनता ने उसी साल 1930 में तिलाडी के मैदान में यमुना तट पर अपने वन-टुकूक के लिए राजा की फौज की गोलियों का मुकाबला किया था और बलिदान दिए थे। बाद में रियासत के अंदर प्रजामंडल कार गठन करने वाले श्रीदेव सुमन ने राजा की जेल में चौरासी दिनों तक उपवास पर रह कर अपना बलिदान दिया। 1948 जनवरी में कम्युनिस्ट नेता नागेंद्र सकलानी और मोलू भरदारी कीर्ति नगर में सामंती हाकिमान की गोलियाँ खाकर शहीद हुए। रियासत के आम जनता ने प्रजा आंदोलन में योगदान किया और आजादी हासिल की ।

1.5. विद्यासागर नौटियाल का पारिवारिक जीवन

विद्यासागर नौटियाल जी का जन्म भागीरथी तट पर बसे मालीदेवल गाँव में 29 सितम्बर 1933 को हुआ। पिता नारायणदत्त नौटियाल टिहरी गढवाल रियासत के वन अधिकारी थे। माता रतना, विवाह के बाद पिता ने उन्हें घर पर ही पढना-लिखना सिखाया था। नौटियाल जी माता से प्रारंभिक शिक्षा हासिल की। बचपन टिहरी गढवाल रियासत के आराकोट बंगाण से पोखार भिलंग तक के घने जंगलों में बीता जहाँ पिता अपनी सेवा के दौरान रहते थे।

दस वर्ष की आयु में सौ मील पैदल चलकर कसेंडी बंगाण से टिहरी पहुँच कर सन् 1942 में प्रताप इन्टर कॉलेज में कक्षा छः में प्रवेश किया। पिता से घर में अंग्रेजी सीखी थी। हिन्दी बोलने में कठिनाई होती थी। कॉलेज में अंग्रेजी वाद-विवाद प्रतियोगिता हुई जिसमें इन्टर कक्षाओं के छात्रों की तुलना में फर्राटे से बोलने पर प्रथम स्थान प्राप्त कर धाक जमा दी। 1949 में प्रताप कॉलेज से इंटर टिहरी में किया।डी.ए.वी कॉलेज देहरादून से इंटर 1952 और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से एम.ए (अंग्रेजी) 1957 की शिक्षा प्राप्त की। 1967 में डी.ए.वी देहरादून से एल.एल.बी करके 1967 से 1980 तक वकालत की। टिहरी में कम्युनिस्ट पार्टी के कुलवर्ती कार्यकर्ता के रूप में काम किया। सन् 1980-85 के दौरान देवप्रयाग टिहरी-गढवाल से उत्तर प्रद्श विधान सभा वन सदस्य रहे। सन् 1985 के बाद उन्हें वकालत करने का मौका नहीं मिला क्योंकि वे अपने आपको पूरी तरह से विनाशकारी टिहरी बाँध के विरोध में चलनेवाले जन आँदोलन को समर्पित कर दिया था। सन् 1990 में देहरादून चले अने के बाद से वे पूर्ण कालिक लेखक के रूप में काम करने लगे।

नौटियाल का विवाह 1953 में हुआ था। तब वे बी.ए के छात्र थे। पत्नी बच्चीदेवी रतूडी (जो विवाह के बाद देवेश्वरी नौटियाल बनगई) को विवाह के करीब दस वर्षों तक गाँव में ही रहना पडा। गाँव के अन्य किसान औरतों की तरह खेती का काम करती रही। अपने पिता की सेवानिवृत्ति के बाद सरकार की ओर से मिलनेवाली बहुत कम पेंशन के आधार पर उनके लिए पाँच बहनों और दो भाइयों के, जो कि उस दौरान भारत के विभिन्न नगरों में शिक्षा प्राप्तकर रहे थे, उनको पैसा भेजना एक विकट समस्या हो गई। इसके अलावा घर के खर्चे भी चलाना था। संयुक्त परिवार होने के कारण पिता अपनी कमाई से कुछ चाचा के घर भेजना पडता था। नौटिया के पिता का कोई अलग बैंक एकाऊंट नहीं था। चाचा अन पैसों से अपनी तबीयत के अनुसार संयुक्त परिवार यानी अपनी और गाँव में रहने वाली ताई व चाचियों की देख-भाल करते थे।

ऐसी हालात में अपने को विश्वविद्यालय में कायम रखने के लिए नौकरी की तालाश करना पडा। राजनीति शास्त्र के डॉ.गणेशप्रसाद उनियाल लंदन से डाक्टरेट लेकर आए थे। उन्होंने राजनीति विज्ञान पर अंग्रेजी में एक पुस्तक लिखी। उस पुस्तक का हिंदी अनुवाद करवाना चाहते थे। विश्विद्यालय के कुछ प्रोफेसरों ने उस काम के लिए नौटियाल का नाम सुझाया। विचार विमर्श के

उपरान्त यह निश्चित किया गया कि अनुवाद डॉ.गणेश स्वयं कर लें और नौटियाल उसकी हिंदी को ठीक कर दे। डॉ.साहब ने उस काम को दो महीने की गर्मियों की छुट्टीयों में निपटा लेने का निश्चय कर दिया।

पुस्तक के प्रकाशित होते ही शिक्षा जगत में उसका जबर्दस्त स्वागत हुआ। विश्वविद्यालय स्तर के छात्रों के लिए उससे बेहतर हिंदी में लिखी हुई कोई उस तरह की पुस्तक नहीं थी। उसकी प्रतियाँ धाडाधड बकने लगीं। उत्तरप्रदेश सरकार ने उनके लेखन के लिए डॉ.गणेश प्रसाद उनियाल को एक हजार रूपए की धनराशि प्रदान कर उन्हें सम्मानित किया। घर से मिलने वाले खर्चे के आधा हो जाने के कारण उनके जीवन में करीब-करीब फाकामस्ती शुरू हो गई थी। लेखन से मिलने वाले पारिश्रमिक से उसकी भरपाई नहीं हो सकती थ। उसके बाद दूसरे साल उनकी आर्थिक स्थिति से बखूबी परिचित जगत शंखधर ने कलकत्ते मे रहनेवाले डॉ.महादेव साहा से नौटियाल के बारे में बात की जगत शंखधर हिंदी, अंग्रेजी वा बाँगला साहित्य के एक धुरंधर, जागरूक पाठक थे। वे प्रेमचंद के सरस्वती प्रेस , बनारस में रहते थे। डॉ.महादेव साहा ने जगत जी के अनुरोध पर एक अंग्रेजी विज्ञान उपन्यास के अनुवाद का काम भेज दिया। वह पुस्तक सोवियत संघ से प्रकाशित हुई थी। कलकत्के के एक प्रकाशक ईस्टर्नट्रेडिंग कंपनी ने उसका बाँगला अनुवाद प्रकाशित किया था और वह काम नौटियाल जी ने शुरू कर दिया। कई पुस्तकों का अनुवाद करते रहै। उसके बाद वे काशी हिंदू विश्वविद्यालय के खिलाफ छात्र आंदोलन में पूरी तरह भाग लेने लगे।

आँदोलन में सम्मिलित होने के फल स्वरूप नौटियाल को विश्वविद्यालय से जीवन भर के लिए निकाल दिया गया। कई दिनों तक बनारस की जेलों में रहे। बनारस से टिहरी लौट आने के बाद भी वे ग्रामीण क्षेत्रों में घूमते रहे। साधन हीन होने के कारण टिहरी में अपने परिवार सहित रहने की व्यवस्था नहीं कर पाये। खुद पार्टी दफ्तर में रहते थे जिसे नौटियाल जी ने ही खोला था। बाद में सन् 1962 से 1964 तक भारत सुरक्षा अधिनियम के अंतर्गत जेलों में बंद रहे। 1967 के बाद टिहरी से अंतिम विदाई लेने तक अपने परिवार को टिहरी में अपने साथ रखा। फिल हाल अपने बिगडते स्वास्थ्य के कारण अपने परिवार के सदस्यों के साथ ही अपना जीवन व्यापन कर रहे हैं।

किशोरावस्था से ही आजादी के आंदोलन में कूद पडे विद्यासागर के पास जीवंत स्मृतियों का ऐसा खजाना है जो सक्रिय सार्वजनिक जीवन के जरिए ही जुट करता है। अपने जीवन में ही नहीं, जन्म से पहले के पारिवारिक सम्बन्द और स्थितियों की जानकारी हासिल करने की जिज्ञासा, गाँव में बनी व्यावस्था। गढवाल पर गोरखों का शासन, विजेता का संहार और इस सबके बीच पिता से मिली संज्ञा दर्वासा में विद्यासागर का बचपन इन संस्मरणों की शुरूआत में खुलता है। इसी में ग्राम्य जीवन की वे स्मृतियाँ हैं जहाँ जमादारनी और उसका बेटा, गाय का उलाज, बोल-बोल कर पढने की आदत और पिता का दुरुस्त करना, पेडों से गिरकर बेहोश हो जाना, यह सब यादे मन में बैट जाती हैं।

"सामंती लूट-खसोट के कारण हमारी रियासत के लोगों को सदियों से भयानक पिछडेपन में रहते हुए असहनीय व अकथनीय गरीबी झेलनी पडती थी। अपने बचपन में पिता के साथ रियासत के विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों में घूमते हुए अपने लोगों को देखने - समझने के अवसर मिलते रहे। प्रजा की लूट-खसोट करने में मस्त रहने वाले उस शासन के अत्याचारों के खिलाफ आम आदमी के दिल से निकलते उच्छ्वास उनके हृदय पर गहरा आघात करते रहते थे। आम आदमी की वह असहनीय पीडा थी जो मेरे हृदय में परतों में जमा होती रही और वहाँ एक साहित्यकार के अंकुर उपजने लगे।"[1]

दरअसल यह व्यक्ति के बहाने एक समाज को देखना भी है। फिर चाहे बेगाण में गाँव वालों व्दारा गर्म पानी से मकानों को धोना हो या जीवन के ताप में खुद ब खुद बनती भाषा। यह तभी समृध्द होती चलती है जब लेखक के मन में विश्वास हो कि जिंदगी रूपी किताब की पढाई शायद कभी पूरी नहीं हो सकेगी।

डायरी, संस्मरण, इतिहास आंदोलन की डाक्यूमेंट्री और आत्मकथा की लय में बंधी यह कथा भूगोल के बदल जाने से भी आत्मा में वैसे ही रहती हैं। इसका प्रवाह ऐसा है कि यह कब पीछे से आगे और आगे से पीछो हो गई, कुछ खबर ही नहीं होती। चेतना की एक अवश्य लय है जो हरदम कथा की अंडरटोन को साधे रहती है। बनारस का मार्शल कब लौट कर टिहरी आता है, किस इरादे से आता है। यह तो है लेकिन उसमें कहीं आत्ममुग्धता लेश मात्र भी नहीं है, है तो काशी छोडने का दुख। मदमस्त सत्ता के हाथों ज्ञान मंदिर से निष्काषित किए जाने की परंपरा का दुख जिसमे इस शिष्य के बाद गुरूओ का नंबर भी आ ही गया। ऐसे में

अगर बरसों बाद भी बंशीधर पंडा की लिखी पंक्तियां स्मृतियों में बसी रह जाए तो उचरज कैसा? *" हम अनुशासनहीन तुम्हारा शासन जींदाबाद*

हम नास्तिक बेदीन तुम्हारा ईश्वर जिंदाबाद..."[2]

इलाहाबाद छात्र आंदोलन में ये पंक्तियां समूह गान बन गई थी। यही क्यों अपनी हैंक नाम से हयात साइकिल और उसके बहाने बी.एच.यू कल्वर भी। पार्टी आफिस के लिए हिमालय विद्यापीठ के भवन का लिया जाना, भवन के बहाने सामंती गुलामी की चक्की में पिस रहे आम जनता की गरीबी और पिछडेपन का खाका नौटियाल जी ने पूरी संलग्नता से प्रस्तुत किया है। सच पूछों तो यह कई बडे उपन्यासों से बडे आत्मकथांश हैं। यह गढवाली से हिंदी में आते शब्द है तो बोलचाल में तैयार होते नए मुहावरे भी। चिदरू मियां का जीवन है तो उसकी विडंबनाएँ भी। उनकी हवेली का पहले हिमालय विद्यापीठ में तब्दील होना और फिर पार्टी आफिस में, एक दिलचस्प दास्ता है।

विभाजन का देश, याद रह गई पढी कहानियां, उर्दू सीखना और रियासत के जुल्मों की कहानी के साथ भाई-बहन के बीच भी आत्मीय लडाई को अपनी तमाम न समझियों को हम समझ सकते हैं। जगह-जगह उसका खिलंदड अंदाज अद्‌भुत है जो अध्यापकों को उनके खास अंदाज में पेश कर दिया जाता है।

आत्मवृत्त की सबसे बडी विशेषता है उन स्थारित किए गए विश्वासों की कलाई खोलना जो आजादी के बाद भी कम्युनिस्टों के खिलाफ सत्ता के बल पर जबरन स्थापित कराए गए। दरअसल, यह ऐसा संस्मरण है जिस में बहुत खामोश संजीदगी के साथ जन इतिहास भी प्रवेश कर गया है। विद्रोह की कथा भी यहां है और शहीद सुमन को श्रध्दांजलि भी, डांगचौरा आंदोलन भी है और प्रजामंडल की गाथा भी। सबसे महत्वपूर्ण अंश है इसमें दिया गया टिहरी कम्युनिस्ट पार्टी का हू-ब-हू अनुवाद। यह टिहरी क्रांति का सर्वाधिक प्रामाणिक दस्तावेज है। जिला कमेटी के मंत्री की हैसियत से विद्यासागर नौटियाल का यह कथन इसका आधार सत्य है कि *"जनता के खून से सींचा गया वह प्रजामंडल समाप्त हो गया। आज कांग्रेस को पुराने रक्तपिपासु सोने बैठे हैं। ऐसे समय पर जरूरत है कि जनता की आवाज उठाने वाली कम्युनिस्ट पार्टी को मजबूत किया जाए। आजादी के बाद भी सामंती लूट का सिलसिला थमा नहीं। राजशाही के खत्म होने के 14 बरस बाद भी रोज-रोज टैक्स लगाते जा रहे हैं। आजादी नाम की कोई चीज नहीं रह गई है। यह वह आजादी नहीं, जिसके लिए जनता ने लंबे समय तक राजशाही के खिलाफ संघर्ष किया।"*[3]

कथा के साथ वृत्त के इतिहास और वर्तमान में आवाज ही लगी रहती है। नौटियाल जी बराबर यह रेखांकित करते चले हैं कि वह कम्युनिस्ट पार्टी के जिला मंत्री की हैसियात से भारत पर चीनी हमले के सैध्दांतिक तौर पर कट्टर विरोधीहैं।

बार-बार गिरफ्तारियां हैं, रिहाइया हैं और जेल के भीतर व बाहर के साथियों की रोमांचक स्मृतिया हैं। बस एक चीज है जो हरदम साथ रहती है, और वह है लेखकीय चेतना। बौध्दिक भूख। जो लिखने और पढने से पूरी होती है। मार्कंडेय, नामवर, विष्णुचंद्र शर्मा, रामजी की यादें हैं और खलती हुई उनकी कमी भी। अच्छी बात यह है कि अपने इस मार्शल का चरित्र पूरी गाथा में निर्भीक बना रहा है। लेकिन उसे आप कहीं सेल्फ ग्लोरिफिकेशन का शिकार नहीं कर सकते वह जब-जब, जहाँ-जहाँ, जैसा-जैसा रहा है, उसी रूप में वर्णित है। अनकिए का श्रेय लेने की हवस उसमें बिल्कुल नहीं।

नौटियाल जी की जेल डायरी के कुछ अंश अचानक पाठकों में चेतना का संचार कर जाते हैं। नई पीढी के करोडों पाठकों के लिए इस आत्मवृत्त का महत्व यह है कि वे अपने निकट अतीत का प्रामाणित लेखा जोखा पा सकेंगे। यह इतिहास ग्रथों में नहीं मिलेगा। यहाँ स्मृति कोष के एक-एक पन्ने में इतिहास के कई ऐसे पहलू झांकते हैं जो इसके बगैर शायद अंधेरे में ही रह जाते।

सन् 1952 में विद्यासागर ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में दाखिला लेकर बनारस में कम्युनिस्ट पार्टी का काम करना शुरू किया। कहानियाँ टिहरी में रहते हुए लिखने लगे थे। काशी में डॉ.हजारी प्रसाद व्दिवेदी, त्रिलोचन शास्त्री जैसे विव्दानों के संपर्क में आने पर साहित्य के प्रति अभिरुचि बढी। कल्पना (हैदराबादसे) 1953 में *भैंस का कट्या* कहानी के प्रकाशित होने पर हिन्दी जगत का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर दिया। काशीवास आठ वर्ष का रहा। टिहरी में फिर से कम्युनिस्ट पार्टी का कुलवर्ती कार्यकर्ता के रूप में कार्य प्रारंभ किया। टिहरी गढवाल मोटर मजदूर संघ, सार्वजनिक निर्माण विभाग मजदूर संघ, वन विभाग श्रमिक संघ आदि श्रमिक संघों के जरिये उपेक्षित मजदूरों के भ्रष्टाचार के खिलाफ भी आवाज उठानी शुरु कर दी। चीनी हमले का बहाना बनाकर कांग्रेस सरकार ने सुन् 62 में बगैर मुकदमा चलाए बाईस महीनों तक भारत की विभिन्न जेलों में बंद रखा।

जेल से छूटने के बाद विद्यासागर ने करीब पच्चीस वर्ष तक वकालत का काम भी किया। सन् 1980 में देवप्रयाग विधान सभा सदस्य के रूप में निर्वाचित हुए। 1998 से स्वतंत्र लेखन शुरू किया। टिहरी बांध के विस्थापितों की ओर से युगों तक संघर्ष किया। अपनी रचनाओं की शुरूआत को लेकर नौटियाल जी कहते हैं कि-*"मेरे जो पिछली कहानियाँ थी वे मेरे पास नहीं थी। मेरी ६२ की गिरफतारी के वक्त जो कुछ भी रचनायें थी उन्हें कम्यूनिष्ट पार्टी में विभाजन होने के बाद मेरे जेल में रहते हुए सी.पी. एम. के साथी लोग पार्टी की अन्य सामग्री के साथ अपने पास ले गए और उनका आज तक अता-पता नहीं है। तब मेरा निवास भी पार्टी दफ्तर में रहता था। डॉ.नामवर सिंह ने अनेक वर्षों के बाद पुरानी पत्रिकाओं में खोज -खोज कर मेरी कहानियाँ नए सिरे से एकत्र की और उनके संग्रह की पाण्डुलिपि तैयार की वह संग्रह टिहरी की कहानियाँ के रूप में राजकमल ने प्रकाशित किया था।एक समीक्षक ने संग्रह के प्रकाशन के बाद यह डंक मारा था कि हिन्दी में ऐसी स्थिति कभी नहीं रही जब किसी लेखक की किताब के प्रकाशित होने में तीस बरस का समय लग जाए। मैं इस पूरे दौरान टिहरी एवं उत्तरकाशी जिलों का,जो कि भूतपूर्ण टिहरी गढवाल के अंग थे, लगातार गाँव-गाँव दौरा करतार रहा। मैं ने अनुभव हासिल किए और आदमी नामक जानवर के अध्ययन में लगा रहा और आदमियों की भीड में मनुष्य की तलाश करता रहा।"*[4]

1.6. राजनैतिक कार्यकर्ता के रूप में नौटियाल जी

मार्क्सवाद एक दर्शन है। एक ऐसा दर्शन, जिसने मानवता को इतिहास में पहली बार एक नई दृष्टि प्रदान की कि हमारा समाज शोषकों और शोषितों, परस्पर विरोधी इन दो वर्गो के संघर्ष का इतिहास रहा है। अपनी इस स्थापना के कारण मार्क्सवाद ने पूरी दुनिया के अंदर एक अभूतपूर्व वैचारिक आँदोलन की शुरूआत कर दी। एक सक्रिय आँदोलन। मार्क्सवादी चिंतक मात्र विचारक नहीं होते, वे अपने चिंतन के माध्यम से समाज को बदल डालने के आंदोलनों का संचालन करते रहते हैं।

अंग्रेजों के भारत से जाने पर टिहरी की सामन्तशाही ने हैदराबाद, काश्मीर व अनेक दूसरी रियासतों की तरह अपने को भारत से स्वतंत्र घोषित कर दिया। प्रजामण्डल ने इस धमकी के जवाब में रियासत के अन्दर पूर्ण स्वतंत्रता की लडाई छेड दी। 1947 आगस्त 18 को प्रजामण्डल के नेताओं-कार्यकर्ताओं रामचन्द्र उनियाल, प्रेमलाल वैद्य, शंकर दत्त डोभाल, बुध्दिसागर नौटियाल, जीत सिंह

जरधारी, चतरसिंह नकोजी, नागेन्द्र उनयाल के साथ चौदह वर्षीय विद्यासागर को भी गिरफ्तार कर दिया गया। थाने में इन सभी को लाठी चार्ज कर घायल कर दिया गया। जेल में एक मुकदमें का नाटक रचकर रियासती शासन ने वहाँ उपस्थित समस्त बन्दियों और फरार घोषित विद्यासागर के विभिन्न शासन की जडें उखाड रही थी, विद्यासागर टिहरी शहर में प्रजामण्डल कार्यकर्ताओं के साथ अपना फर्ज अदा कर रहे थे। घरों के अन्दर दबके बैठे तथा नदी के घाटों में जा छुपे सामन्ती अहलकारों को खोज-खोजकर जेल पहुँचाकर वहाँ बंद करने के काम से लेकर महाराजा को टिहरी में भागीरथी पुल पर अन्दर प्रवेश न कर देने की भूमिका तक में विद्यासागर भी शामिल रहे।

" मेरी पार्टी का उत्तराखण्ड राज्य निर्मण के बारे में और उसके विकास के बारे में जो कार्यक्रम है, मैं उसे एक साहित्यकार के रूप में पूरी तरह स्वीकार करता हुँ। हम लोग एक माफिया विहीन पर्वतीय राज्य का निर्माण करना चाहते हैं जो कि पर्वतीय क्षेत्र के पर्यावरण की रक्षा करते हुए पर्वतीय क्षेत्र में उपलब्ध संसाधनों का शोषण न करे। साथ ही एक छोटा राज्य बनने के बाद गढवाली एवं कुमाऊँनी संस्कृतियाँ हावी न हों बल्कि इस पूरे पर्वतीय क्षेत्र में निवास करने वाली अनेक छोटी कौमें और उपजातियाँ अपनी कला, साहित्य और संस्कृति को जो कि ऐतिहासिक तौर पर सदियों से उनकी चेतना में सुरक्षित है,विकसित कर सकें।"[5]

अपने क्षेत्र के लिए नौटियाल जी नदी-नालों के ऊपर प्रलव पुलियाएँ वनवा कर आम आदमी को दैनिक आवागमन की समस्याओं से निजीत दिलाना चाहते थ। हेंवल घाजी से भालाखूँटी तक और अपर कडा कोट से हिंदाव व नैलचामी तक मेरे कार्यकाल में जितने छोटे-बडे पुलों का निर्माण हुआ और भविष्य की योजनाएँ तैयार की गई, उतनी शायद उससे पहले कभी नहीं बनी थीं। सब की संख्या करीब बत्तीस थी। लोगों के अंदर शिक्षा की प्रबल चाह थी। लेकिन राजा की गुलामी के दौरान लोग अपनी मर्जी से न तो स्कुल खुलवा सकते थे, न अपने बच्चों को कहीं बाहर पढने को भेज सकते थे,दरबार की अनुमति के बगैर से छुटकारा मिलते ही रियासती जनता ने अपने साधनों से विद्यालय खोलने शुरू कर दिये थे।

नौटियाल जी शिक्षा समिति के अध्यक्ष बनने पर एक ही साल में दस प्रथमिक विद्यालय खुलवा दी। तब जिलाधिकारी के पास शिकायत गयी थी कि जिले में ब.टी. सी विद्यालय बंद न किया जाय।अपनी क्षेज्ञ की जनता नौटियाल

जी के कामों की सराहना करती थी। जनताके जीवन के हर क्षेत्र में विकास की राहें सुगन बनाने में नौटियाल जी अपनी पूरी शक्ति लगा दी थी।

"हमारे यहाँ गुर्जर हैं जो सदियों से पहाड में हैं। वे किसी मतदान में भाग नहीं लेते। किसी मतगणना सूची में उनका नाम नहीं होता। गुर्जरों की भी अपनी एक संक्कृति है और अब तो लोग उनके नाम पर भी तिजारत करने लगे हैं। उनके जीवन का समुचित विकास कर पाना कम्युनिष्ट पार्टी के हिसाब से उत्तराखण्ड राज्य के शासन का एक महत्वपूर्ण दायित्व होगा।"[6]

2.7. विद्यासागर नौटियाल - रचना मानस

साहित्य का उद्देश्य मनुष्य को परिष्कृत करना भी होता है। उसकी चेतना को जागृत करने, ताकि समाज में क्राँतिकारी परिवर्तन लाए जा सकें। समाज नें ऐसे परिवर्तन लाने के लिए आँदोलन अनिवार्य होते हैं। साहित्यकर्म इन आँदोलनों का अंग होता है। नौटियाल जी अपने बाल्यकाल में ही टिहरी-गढवाल रियासत में प्रजामंडल व्दारा संचालित सामंतविरोधी आंदोलनों में पूरी तरह शामिल हो गये थे। कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ता उन संघर्षों में मुख्य भूमिका अदा करते थे। उस दौरान कम्युनिस्ट कार्यकर्ता नागेन्द्र सकलानी के संपर्क में आये। अपने वातावरण में व्याप्त हो रही परिवर्तन की हवाओं से प्रभावित होकर राजनीति में शामिल हो गये थे। राजनीति में आने का लाभ लेखन को वैचारिक तौर पर मिला। नौटियाल जी के शब्दों में- " *मैं किसी को खुश या नाखुश करने के लिए लिखने के बजाय अपनी रचनाओं को गरीब लोगों की जिंदगी के वास्तविक चित्रों को उजागर करने के लिए लिखने लगा। मैं अपनी राजनीतिक विचारधारा के तहत लेखन कार्य करता हूँ। लेकिन वैसी कोई घोषणा करने की जरूरत नहीं होती। मैं दुनिया को जिस दृश्टि से देखता हूँ उसका प्रतिबिंब रचनाओं में अपने आप उभर आता है। राजनीति ने मेरे लेखन को सीमित करने के बजाय उसे व्यापक बना ने में मेरी सहायता की है। अपने पहाडी गाँव के बारे में लिखते वक्त मेरे दिमाग में समूचे भारत और पूरी दुनिया का खाका मौजूद रहता है।"*[7]

विद्यासागर नौटियाल जी आजीवन भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के सक्रिय सदस्य रहे। उनका लेखन कार्य राजशाही के अत्याचारों के दौरान 1949 में शुरू हो गया था। टिहरी की आजादी के बाद एक कहानी *मूक बलिदान* लिखी, जो

1951 में प्रताप इंटर कॉलेज की मैग्जीन में छपी थी। अपनी संपूर्ण कहानियों के संग्रह *मेरी कथा-यात्रा* में सम्मिलित कर दिया है। त्रिलोचन शास्त्री, अमृतराय, नामवरसिंह, विष्णुचन्द्रशर्मा, जगत शंखधर, केदारनाथ सिंह, ठाकुर प्रसाद सिंह, विजयमोहन सिंह, बिजेन्द्र, शेखर जोशी, कमलेश्वर मार्कण्डेय, अमरकान्त जैसे अनेक विध्वान और प्रगतिशील लेखकों के घनिष्ट संपर्क में थे। 1952 से 1959 तक उन्होंने काशी प्रवास के दौरान एक दर्जन से अधिक कहानियाँ लिखी है। काशी से टिहरी वापस आने के बाद दो कहानियाँ *भैंस का कट्या* और *सोना* को रूसी विध्वान ई.चेर्लिशोव ने रूसी में अनुदित कर दिया था। *सोना* कहानी को मनहर चौहन ने गुजराती में अनुदित किया हैं।

"भैंस का कट्या विद्यासागर नौटियाल की पहली कहानी है। इससे बेहतर याद रहजाने वाली कहानी है। बिना किसी भाषाई चमत्कार या शिलज की कसरत के नौटियाल का यह कहानी बताती है कि भोले-भोले पर्वतीय मन में विपरीत परिस्थितियों में जीते हुये भी कितनी करूणा छिपी होती है.."[8]

नौटियाल जी के लेखन को प्रभावित करने वाले लेखक

नौटियाल जी शहीद नागेंद्र सकलानी, श्रीदेवसुमन और कम्युनिस्ट नेता पी.सी. जोशि से बेहद प्रभावित हुए। आरंभिक लेखन में प्रेमचंद, तोलस्तोय, विक्टर ह्यूगो और मैक्सिम गोर्कि का प्रभाव था।

विदेशी लेखतों में हेमिंग्वे के बाद गोर्की, हावर्ड फास्ट,गोगोल,टॉमस हार्डी आदि कई लेखकों ने नौटियाल जी को प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से प्रभावित किया है। हार्डी को भी वे बहुत लम्बे समय तक कई-कई बार पढते रहे। सलमान रश्दी के *मिडनाईट्स चिल्ड्रेन* ने उन पर बहुत प्रभाव डाला। टॉलस्टाय और तुर्गनेव से भी प्रेरणा मली। लेकिन वे कभी किसी की शैली को अपनाया नहीं। भाषा के मामले में हमिंग्वे का प्रभाव उन रक बहुत रहा। वे सोचते थे कि कम से कम शब्दो में अपने आपको व्यक्ति करना ही समर्थ लेखन कहलाता है। वे यशपाल, विष्णु प्रभाकर, मरकान्त, भीष्मसहानी, करतारसिंह दुग्गल आदि अनेक लेखकों से प्रभावित हुए।वृन्दावन लाल वर्मा ने और पंजाबी के गुरदयाल सिंह, बंगाल के ताराशंकर एवं मणिक बनधोपाध्याय, तकषी शिव शंकर पिल्लै और शिवराम कारन्त से भी बहुत अधिक प्रभावित हुए है।

नौटियाल जी के लेखन की शुरूआत कविता से हुई थी। यह कविता से ज्यादा तुकबन्दी लगती थी। अपनी उन तुकबन्दियों में किसी अन्य की वेदना को स्वर देने के प्रयास करते रहे थे। बनारस पहुँच जाने के बाद पूरी तरह से कहानियों की रचना में जुटगए और कविता को अलविदा कह दिये।

नौटियाल जी के लेखन काल को मोटे तौर पर तीन भागों में बाँटा जा सकता है। काशी में लिखी गई, प्रकाशित और अर्धलिखित रचनाएँ, 1959-1990 तक और 1990 से आज कत। काशी से टिहरी लौट आने के बाद अपने भूतपूर्व रियासती जनता के बीच कम्युनिस्ट पार्टी का काम करने लगे। रियासत को जबर्दस्ती संयुक्त प्रान्त में विलीन कर दिए जाने के बाद सामंती अत्याचारों के विरूध्द जन संघर्षों का नेतृत्व करने वाले प्रजामंडम को भंग कर दिया गया था। कांग्रेस पर पुराने सामंती तत्व हावी हो चुके थे। कांग्रेस नेता लाइसेंस परमिट ठेकेदारी की राजनीति में लिप्त हो गए थे। आम आदमी के दुःख - दर्द को मुखरित कर सकने बाला कोई सर्वमान्य विरोधी दल अस्तित्व में नहीं रहा। उस कमी को 1960 में टिहरी - उत्तर काशी में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी का पुनर्गठन कर देने की नए सिरे से कोशिश की गई।

विद्यासागर नौटियाल का कथासंग्रह *दस प्रतिनिधि कहानियाँ* 2006, किताब घर प्रकाशन की महत्वपूर्ण एवं महत्वाकांक्षी कथा योजना के अन्तर्गत प्रकाशित कथा संग्रह है जिसमें हिन्दी कथा जगत के शीर्षस्य कथाकारों को प्रस्तुत किया जाता रहा है। नौटियाल जी का यह कथा संग्रह इस योजना की एक महत्वपूर्ण कडी है। विद्यासागर नौटियाल की कहानियों की पृष्ठभुमि मूलतः उत्तराखण्ड राज्य का टिहरी क्षेत्र रहा है जो राजशाही के अधीन होने केर कारण दीर्घकाल तक सामन्तवादी शोषण का शिकार रहा। इस कथा संग्रह की सारी कहानियाँ टिहरी गढवाल के ग्रामीण अंचल के निरीह, असहाय, अनपढ लोगों की कहानियाँ हैं जो सामंतवादी व्यवस्था के दुष्प्रभावों को भोगने के लिए अभिशप्त है। नौटियाल जी का यह कथा संग्रह विशेष महत्व रखता है क्योंकि यह पहाडी अंचल के उपेक्षित, पीडित वर्ग को साहित्य की मुख्यधारा की विषय वस्तु बनाता है। नौटियाल जी की कहानियों की यह विशेषता है कि यह काल्पनिक धरातल पर रची बसी कहानियाँ नहीं अपितु यथार्थ की कठोर, खुरदरी धरती पर उगी कैक्टसी कहानियाँ हैं। इन्हे पढकर पाठक दावे के साथ कह सकता है कि सबाल्टर्न,

सर्वहारा वर्ग आवाज उठा सकता है क्योंकि आवाज मात्र शब्द नहीं, आवाज एक अनुभूति, एक अहसास है। कभी-कभई शब्दों की तुलना में चुप्पी कहीं अधिक प्रभावशाली होती है।

लेखक को उनके पाठक एक ऐसे क्रान्तिकारी लेखक के रूप नें जानते हैं जिसने मनसा, वाचा, कर्मणा सामंतवादी शोषणकारी व्यवस्था का आजीवन विरोध किया। लेखक के शब्दों में- *"मैं ने साहित्य के गुप्त, सजे-धजे, सुवासित, शांत बैठक खाने में ढीले, मोटे कुर्ते के ऊपर की जेब में एक कलम लटकाकर खरामा-खरामा चलते हुए प्रवेश नहीं किया। खतरनाक राजनीति के खुले मैदानों को पार करता और तंग गलियारों से बच-बचकर निकलता हुआ बहाँ तक पहुँच पाया था।"*[9]

नौटियाल जी ने अनकी आत्मकथात्मक रूपी पुस्तक *बोलंदा बदरी* में इतिहास का एक स्वर्णिम अध्याय पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। विद्यासागर जी ने टिहरी के मुक्ति के प्रसंग में एक बहुत ही सारगर्भितर टिप्पणी इन शब्दों में की है," *हिंदुस्तान में पाच सौ से ज्यादा रियासतें थी, उनमें सिर्फ टिहरी ही एक ऐसी रियासत थी, जहां जनता ने खुद अपने हाथ से राजा का तखता उलट दिया।*" [10]

नौटियाल जी के समकालीन रचनाकार दुष्यंत कुमार ने 1955 में कल्पना में प्रकाशित अपने लेख नई कहानी - परंपरा और प्रयोग में नौटियाल जी की कहानियों की प्रकृति पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि-*"विद्यासागर नौटियाल की कहानियाँ एक सात पहाडी जीवन और मनुष्य की खोखली प्रवृत्तियों का चित्रण करती हैं। किंतु कथा-त्तव अत्यंत सूक्ष्म और कुशाग्र बुध्दि की पकड है, जो कि वास्तविकता की ही प्रतिच्छाया हैती है।*"[11]

नौटियाल जी पहाड को हमेशा आदमी से जोड कर दखते हैं। विकट पहाड पर जीने कीर कोशिश में घोर संघर्षों में जुटे हुए लोग, उन संघर्षों में सोच-विचार कर उस तरह शामिल होने की किसी को फुरसत नहीं होती जैसी योजना बना कर कोई राजनेता या उच्च अधिकारी फोटोग्राफरों के सामने दिखावटी वृक्षारोपण करने के लिए पहले से खोदे गए गड्डों के अंदर अपने कर-कमल ले जाने का ढोंग करते फिरते हैं।

वस्तुत:हम देखते हैं कि नौटियाल जी के रचनाएँ पहडों के कठिन भूगोल में विकसित हुई कृषि और पशुपालन की संस्कृतियों के सरलतम जीवन मूल्यों की झांकियों से सज्जित यावज्जीवन आजीविका के असह्य संकटों को कर्म सौंदर्य में बदलते जीवन की ये रचनाएँ हैं और उनकी रचनावस्तुओं के साथ तदरूप हो चुके उपन्यासकार की गहन संवेदनाओं की अभिव्यक्तियाँ भी हैं। ऐसी अभिव्यक्तियाँ जो कथ्य के माध्यम से वहाँ की स्त्री की जिम्मेदारी, जोखिम, हादसों व नैतिकता के बोध से तो हिन्दी की कहानी के पाठकों को परिचित कराती ही है, जमीनी यथार्थ से सत्यापित, विश्रांति विहीन श्रम व अपार सहनशक्ति की दुनिया का रास्ता भी दिखाती है। वह रास्ता जो बुजुर्ग औरतों की पीढियों से चली आती हुई तंगख्याली भुक्खडपन और पीडन के बियाबानों से होकर गुजरता है। वे आँखों देखी, कानों सुनी से ज्यादा झेली भोगी हुई भी हैं। महाराज काफूशाह का आत्मघात, सन्निपात और फट जा पंचधार तो कहानियों में कहानियाँ हैं। उन्हें उत्तराखाण्ड की महाकथाएँ भी कह सकते हैं। उनमें वहाँ की सामाजिकता, ऐतिहासिक संचेतना और औरत के सींचे हुए परवार-वृक्ष के पत्तों पर पहचाने गए रोग की जड में जाने की कोशिश है। व्यवस्था, अर्थतंत्र और नरवाद की आकाश-बेल में लिपटा हुआ है वृक्ष। दूसरे रूपक के कहीरे कही जाय तो सामंती-राजशाही,उपनिवेशवाद विकृत जनतंत्र के काले बाजार के कलपुर्जो से चल रही घडी जैसा समाज है जिस पर समाज वादी उम्मीदों का पेंडुलम लगा हुआ है। कहानियाँ, उसी की टिक-टिक में पचास वर्ष पीछे छूट गए समय-साक्ष्य को संसूचित कर रही है परन्तु कहानियों के कहानीपन में पचास वर्ष पूर्व की ही ताजगी बनी हुई है।

नौटियाल जी की उपन्यास कला अनुमान में से शुरू नहीं होती।उनमें *शहर* भी कम ही आता है। उनकी कहानियाँ *व्यक्ति व व्यक्तित्व* को उभारने के बजाय यथास्थिति के विरुध्द अपील करती है। वर्ग, श्रेणी, बौध्दिक विमर्श को छोड मौलिक यथार्थ व विश्वसनीय एवं जाने पहचाने चरित्रों के लिए अपनी रचनाओं में टिहरी जाते रहे है। टिहरी, जो अब भौतिक रूप से कहीं नहीं है।

"व्यक्ति की पीडा, दुःख-दर्द,व्यक्ति का मनोविज्ञान पूरी दुनिया में एक जैसा होता है। सामन्त कहने से मेरे में जो नक्श उभरता है वह सिर्फ भारत में सामन्तों का नहीं पाकिस्तान के सामन्तों का भी मैं वही रूप देखता हूँ और उससे बाहर ईरान या दुनिया के किसी भी देश के सामन्तों की मनोवृतितियों का सहज आन्दाज लगा सकता हुँ, क्योंकि मैं सामन्ती दमनचक्र का सिर्फ गवाह नहीं, एक लगातार शिकार रहा हूँ।"[12]

अतीत कालीन विवशताएँ समझ, जिन्हे हम त्याग चुकें हैं। अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियाँ उन में अपना भविष्य खोज रही है। अभी रीठे व आँवले तक ही उनके हाथ पहुँचे हैं। ऐसी ही अनुपलब्धताओं ने कहीनियों में जीणा के बुख्णे, मडवे की रोटी, अमवाणी के रस और गुठलियों के चुसन्तों में अमृतोपम स्वाद भरे हैं। बीडी-तम्बाकू माँगती घसियारिनों की फूहडता की हद को छूती सरलता में, चिडियों की बोली, भाषा के मानवीय अर्थों में छिपी करूणा, दया और लोकोक्तियों के सच और पुराकथाओं की फेंटेसी में, मुहावरों के सूत्रों में पिरोए गए जीवनानुभवों के तानों-बानों में नौटियाल जी कहानियों की चादर के डिजैन रचते गए हैं। संस्कृति की खूबसूरती प्रकृति की मनोहारिता और खेती-किसानी के आनंद के साथ स्त्रियों के व्यवहार भी खुलते जाते हैं। उनमें, घास-चारे और चुगानों के जंगलों के ऋतुचक्र, उनके उत्पादों के हकों की माँग करती जनता, ग्रीष्मों के दावानल, मौसमों के चक्रमणों में घूमते विशूत्सव, लुणाई त्योहार व घर-परिवार से बाहर गए हुए सदरूप के लिए उसके हिस्से का भोजन को ठाट में रखने की ममतालू सांस्कृतिक स्मृतियाँ आई हैं।

संस्कृति से जाति प्रतीकों की खूबियों का रचनात्म उपयोग करनेवालों में विद्यासागर अकेले और अव्दितीय है। उसकी मदद से वे आर्थिक - सामाजिक पर्यवेक्ष करते और रचनाओं के लिए धर्म संस्कृति के बिंब खोजते हैं। अतीत में पहाडों में होती रही, खाकी की खेती और तीसरे चौथे वर्ष गौवाड-कोदाड, के रूप में प्रयोग किए जाते रहे एकल फसल-चक्रीय खेतों तक अपनी रचनाओं की कथावस्तु फैलाई है।

नौटियाल जी अपनी स्मृतियों में बसी हुई, संस्कृति के मोहक चित्रों को कहीनी में लाते है तो प्रसंगवश, लुप्त होती जा रही ऐतिहासिकता और तकाजों को भी सन्दर्भित करते जाने से नहीं चुकते जो निश्चित ही सिर्फ विद्यासागर नौटियाल के कथा- साहित्य में ही पढने को बचे रह जाने वाले है।

विद्यासागर नौटियाल जी पहाडी जीवन का सम्बन्ध अपनी रचनाओं से जोडते हुए कहते हैं कि- *"पहाड दरसल वैसा नहीं है जैसा वह दो घडियों के अपने जीवन को पहाड पर बितानेवाले सैलानियों को दिखाई देता है। सूरज,नदियाँ,घाटियाँ और इन पहाडों में बसनेवाले लोग।ये सब शक्ति देते है।उच्च शिखरों पर बुग्यालों की रंगीन कालीन के ऊपर बैठ कर एक क्षण के लिए सूर्य की*

किरणों के दर्शन जीवन को सार्थक करते लगते हैं।लेकिन इन पहाडों में मानव जीवन विकट है। याद रखा जाना चाहिए कि इस हिमालय में पांडव भी गलने आए थे।मैं इस विकट पहाड में रम-बस गया।इसे छोडकर कहीं भाग जाने की बात नहीं सोचता।अपनी रचनाओं में मैं इस पहाड की सीमाओं के अन्दर घिरा रहा।टिहरी से बाहर नहीं निकला। निकलूँगा भी नहीं।"[13]

अपने लोगों की दर्दभरी जिंदगी के अंतहीन सिलसिले, उनके प्रति बालक मन में जागती संवेदनाएँ। अपने लोगों के साथ उनके पालतू पशु भी शामिल हैं, जिनके जीवन के बगैर गढवालियों का जीवन अपूर्ण है। पचास वर्ष के अंतराल के बाद नौटियाल *भौंस का कट्या* के प्रारंभिक पैरा को संशोधित कर अपनी इस धारणा को स्पष्ट करने की कोशिश की है कि *"गढवाली किसान सदा से अपने प्राकृतिक परिवेश से और अपने पशुओं से अभिन्न रूप से एकाकार होकर रहता आया हैं। देव-मंदिरों में अनावश्यक तौर पर भौसों की गर्दनों के काटे जाने के दृश्य के मौके पर किसानों को मुफ्त में उनकी बेगार करनी पडती थी। लोगों की गरीबी और उन पर हाकिमान व कर्मचारियों के अत्याचारों की कोई सीमा नहीं होती थी। अपनी रोटी कमाने के लिए मेरे लोगों की हाडतोड मेहनत और उसके बावजूद उनमें से कइयों की ओखलियों पर छोड दिए गए भूसे के बीच दानों की तलाश में जुटे रहने की मजबूरी -ये कुछ ऐसी घटनाएँ होती थीं ,जिनके बारे में कुछ लिखने की प्रबल इच्छा मन के अंदर होती थी।"*[14]

नौटियाल अपने रचनाओं में टिहरी इतिहास के बावजूद अतीत से गुजरकर वर्तमान तक आता है।इतिहास यहां सिर्फ पात्र की पहचान बनाने का काम करता है। क्षेत्रीय विशिष्टता, भाषा, पात्र और संस्कृति की रंगत के बावजूद वह नए सांस्कृतिक उत्थान के रचनाकार हैं। साहित्य और संस्कृति के सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि-*"एक सुसंस्कृत समाज में साहित्य उसके निवासियों के जीनव की एक जरूरत बन जाता है।साहित्य में किसी हद तक समाज की संस्कृति की झलक भी मिल सकती है। लेकिन पूरी झलक नहीं। यों मेरा यह मानना है कि संस्कृति के निर्माण आदिकाल से दो वर्गों में विभाजित रहे हैं। ऐसे में सामर्थ्यवान (आर्थिक तौर पर) वर्ग की संस्कृति को ही साहित्य में स्थान मिल पाया है। उन लोगो की संस्कृति को उजागर करने वाले साहित्य की रचना कम ही हो पायी यह जानकारी न्यूनतम है।"*[15]

नौटियाल जी के समग्र रचना संसार के लिए सन् 1999 का *पहल* सम्मान देहरादून में 4 जून 2000 को मिला। *सूरज सबका है* उपन्यास के लिए मध्य प्रदेश साहित्य परिषद का 1997 का *अखिल भारतीय बीरसिंह देव* पुरस्कार 20 मार्च 2002 को भोपाल से मिला।

सही रचनाओं की भाषा न तो क्षेत्रीय होती है और न एकदेशीय, यह हमेशा ही सार्वभौम होती है और उसे दुनिया के किसी भी कोने में सुनने मात्र से समझा जाता है। सार्वदेशिक बनने के लिए सही समझ और सही रचनाशक्ति की जरूरत होती है। नौटियाल की कहानियों में वह समझ भी है और रचनाश्क्ति का अद्‌भुत आदाहरण भी। वे एकदेशीय नहीं, सार्वभौमिक सच्चाई का अहसास देती हैं।

"आपको जब भी पढता हूँ मेरे भीतर पूरा पहाड जाग उठतै है। परिवेश पर अपनी पकड दुर्लभ है। मिझे नहीं पतर दुनिया में कोई दूसरी लेखक है क्या जो पहाड को आपसे बेहतर जानता हो... प्रेमचंद गाँधी।"[16]

हिंदुस्तान में कई कम्युनिस्टों ने अपनी आत्मकथाएं लिखी है। लेकिन नौटियाल एक ऐसे कम्युनिस्ट है जो केवल अपने समय के चंद संघर्षों में जीवित रहने वाले मनुष्यों की कहानी हमें धीर-धीरे सुनाते हैं। इन की रचनाओं में बहुत सी शैलियां हैं। कहीं पत्र हैं, कहीं डायरी के अंश है। कहीं एक गांव की लडाई का सजीव ब्यौरा है, कहीं मृत्यु कथा है और कहीं विधानसभा में दिए गए भाषण। लेखक पहाड का रोमानी लेखक या सैलानी नहीं है। वह पहाडी जीवन की पक्षधरता का हिस्सा बन जाता है। इसलिए नौटियाल जी की आत्मकथा के अंश, उपन्यास, कहानी उनकी जिंदगी की ही एक स्वरूप बनकर हमारे सामने आते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. साक्षात्कार:महावीर के प्रश्नों का उत्तर, पृ.3
2. आर्यकल्प, सं. अवधेश नारायाण मिश्र, पृ. 80
3. आर्यकल्प, सं. अवधेश नारायण मिश्र, पृ. 80
4. मोहन गाता जाएगा , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 139-140
5. आर्यकल्प, सं. अवधेश नारायण मिश्र, पृ. 93
7. आर्यकल्प, सं. अवधेश नारायण मिश्र, पृ. 115
8. बीस्वी शताब्दी की हिन्दी कहानियाँ, महेशदर्पण, पृ.9
9. आर्यकल्प, सं. अवधेश नारायण मिश्र, पृ. 103-104
10. अन्यथा - अप्रैल-जून – 2007, पृ. 2
11. यमुना के बागीबेटे, विद्यासागर नौटियाल ,पृ. 8
12. दसवे पहल सम्मान के अवसर पर जून 2000 को देहरादून के टाउन हॉल में दिए गए विद्यासागर नौटियाल के कुछ वक्तव्य
13. आर्यकल्प, सं. अवधेश नारायण मिश्र, पृ. 115
14. साक्षात्कार:महावीर के प्रश्नों का उत्तर, पृ. 2
15. साक्षात्कार:महावीर के प्रश्नों का उत्तर, पृ. 4
16. आर्यकल्प, सं. अवधेश नारायण मिश्र, पृ. 2

3.1. कथ्य एवं शिल्प - अर्थ और परिभाषा

विद्यासागर नौटियाल एक कथाकार एवं उपन्यासकार है। उनकी रचनाएँ केवल पर्वतीय जीवन तक सीमित नहीं है। उसके प्रभाव क्षेत्र समग्र विश्व में और विशेष कर भारत में उपलब्ध है। उनमें गरीबी, अन्याय, शोषण, जातिवादी संकीर्णता, प्रभुवर्ग की प्रताडना, दस्यु-व्यापारियों से राजनीतिज्ञों की मिली भगत से उभरने वाले षडयंत्रों के रूप में मानव विरोधी हरकतें सारे विश्व में फैली हुई है। विद्यासागर नौटियाल ने इस तरह समूची मनुष्य जाति के प्रति मानव-विरोधी दृष्टि के फैलाव में व्यक्त किया है और मनुष्य को आगाह किया है कि इसे रोकना। अब जीवित लोगों का दायित्व है।

विद्यासागर नौटियाल एक ऐसे विरल रचनाकार हैं जिनमें परंपरा और आधुनिकता का अद्‌भुत रसायन मिलता है। वे एक जिम्मेदार नागरिक के रूप में व्यवस्थाओं द्वारा प्रचारित और समर्पित मानव विरोधी पक्ष को हर कीमत पर वाणी की स्वतंत्रता के जिस्मेदार उपयोग के रूप में सामने लाते हैं। नौटियाल जी का अधिकांश लेखन जातीय स्मृति का दस्तावेज है। टिहरी गढवाल के विभिन्न क्षेत्रों की छवियाँ उनके साहित्य में अपनी संपूर्ण अंतरेगता के साथ उपस्थिति है। जितना महत्वपूर्ण इनका राजनैतिक कार्य कर्ता का रूप रहा उतनाही एक लेखक
का रूप भी। नौटियाल जी आज हिन्दी के एक मात्र ऐसे प्रतिष्ठित कथाकार हैं जिन्होंने पहाड को ही नहीं, पहाडी जीवन के संघर्ष को भी गहरी ललक एवं आत्मीयता के साथ प्रस्तुत किया है।

इस शोध कार्य के लिए मैंने नौटियाल जी के पाँच उपन्यास लिया है।

1. सूरज सबका है (1970)
2. उत्तर बायां है (2003)
3. झुण्ड से बिछुडा (2005)
4. यमुना के बागी बेटे (2006)
5. भीम अकेला (1994) पुनर्लिखित (2008)

कथ्य

साहित्य के मर्म को पकड़ने के लिए उसके बोध और संवेदना से साक्षात्कार करने के लिए प्रायः समीक्षाओं और अध्येताओं ने उसे दो दृष्टियों से देखना और परखना चाहा है। कभी उसे भाव और कला की कसौटी पर कसा

गया तो कभी अनुभूति और अभिव्यक्ति की पडताल की गई। आज की समीक्षा मे वस्तु और रूप, कथ्य और शिल्प की दृष्टि से साहित्य के मूल्यांकन का प्रचलन है। इस प्रकार कथ्य समीक्षा में उसी अर्थ में प्रयुक्त होता है जिस अर्थ में वस्तु का प्रयोग किया जाता है। अंग्रेजी में इसका पर्याय कन्टेंट है।

"हिन्दी शब्द सागर में कथ्य के जो विभिन्न अर्थ दिए गए है उनमें एक है "कहने योग्य या कथनीया।"[1] *"साहित्यकार अपने विशाल अनुभव से जगत में से चुनकर जो कुछ किसी रचना में प्रस्तुत करता है दूसरे शब्दों में जिस में कथनीय समता है वहीं कथ्य है।साहित्य के कथ्य की सीमा बहुत व्यापक है। साहित्य की वस्तु के अंतर्गत भाव,विभाव,चरित्र,विचार,इतिवृत,प्रकृति आदि यह सब समाविष्टि हो सकता है या होता है,जो कलात्मक रूप ग्रहण करने के लिए साहित्य की सूक्ष्म या स्थूल सामाग्री बन सकती है।"*[2]

भारतीय काव्यशास्त्र में कथ्य की आधुनिक आर्थ में चर्चा नहीं हुई है।वस्तु के उद्‌गम स्त्रोत और उसकी विषय सीमा के बारेमें यत्र-तत्र जो कुछ कहागया है, उसमें राजशेखर और भामह की धारणाएँ इस प्रकार है।राजशेखर काव्य मींमास के आठवे अध्याय में काव्य के विषय या अर्थ-प्राप्ति के स्त्रोतो की चर्चा की है। आचार्य भामह ने साहित्य क वस्तु की व्यापकता को रेखांकित करते हुए लिखा है कि*"ऐसा ने कोई शब्द है, न अर्थ न न्याय,न कला, जो काव्य का अंग न बन सकें।"*[3]

राजशेखर और भामह के विचारों से लगता है कि उन्हों ने कथ्य की चर्चा न करके विषय के स्त्रोतों की ओर संकेत किया है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि विषय और वस्तु में अंतर है। तीसरा सप्तक की भूमिका में अज्ञेय ने इस अंतर को बहुत स्पष्ट कर दिया है।

कथ्य को समीक्षकों ने सुविधानुसार वस्तु वर्ण्य, तथ्य, तत्व, कथा तत्व, उद्देश्य, भाव, अंतर्वस्तु, विषय वस्तु आदि संज्ञाओं से अभिहित किया है। *डॉ.रामेश्वर लाल खण्डेवाल ने वस्तु शब्द का प्रयोग करते हुए वर्ण्य, तथ्य और चेतना को उसके समानार्थी स्वीकार किया है।*[4]

" ब्यूरेक की कृति उपन्यास लेखन शिल्प *में कथ्य को कथा तत्व के रूप में स्वीकार किया है। मुक्तिबोध अपनी एक आलोचना कृति के निबन्धों में कथ्य या वस्तु के लिए तत्व शब्द का प्रयोग करते है।"*[5]

इस प्रकार हिन्दी साहित्य में कथ्य को लेकर असंमंजस्य है। चेतना कथ्य को वस्तु का पर्याय मानना असंगत है। चेतना एक व्यापक और अस्पष्ट शब्द है जो तथ्य कथ्य के निकट होते हुए भी वही नहीं है।

प्रो.जगदीश पाण्डेय ने इन दोनों को अलगाते हुए लिखा है कि *"तथ्य अनुभूत पदार्थ होता है,कथ्य अन्वेषिता कथ्य में जिज्ञासा की पैठ और तर्क परक व्यंग्य की पैनी धार की तेजी रहती है।"*[6]

" वास्तव में तथ्य में सब कछ प्रत्यक्ष होता है जब कि कथ्य में बहुत कुछ अनकहा और गूढ़ होता है। वर्ण्य शब्द भी कथ्य के संपूर्ण अर्थ की अभिव्यक्ति नहीं कर पाता, क्यों कि कथ्य में बहुत कुछ सांकेतिक होता है। कथातत्व की संज्ञा बहुत स्थूल और सतही है। इसमें कहानी के सारांश का बोध होता है। कुछ लोग कथ्य को उद्देशय मानने की भूल कर बैठते हैं।"[7]

जो कथ्य को उद्देश्य मानने का सरलीकरण प्राध्यापकीय समीक्षा दृष्टि की देन है। भाव बहुत ही मित शब्द है जिसका अर्थ अभिप्राय सा लगता है। कथा-साहित्य के संदर्भ में कथ्य अधिक उपयुक्त है।

हम निष्कर्ष रूप से कह सकते है कि कथ्य एक विशेष रूप से कहागया तथ्य मात्र होता है। जिसको कुछ विद्वान कहानी का सारांश मात्र या उद्देश्य मानने लगते हैं। कथ्य अंग्रेजी के plot, content, subject आदि की परिसीमा में होता है।

"A Dictionary of modern critical terms के अनुसार plot in criticism is a term of highly varied status, it can mean just the paraphrasable story of a work- the simple narrative line which we can then flesh out by considering character and description ,tone and texture ,pattern and myth;Forsters 'low', 'atavistic 'story-telling." [8]

आर्थात वस्तु कथित सामाग्री है।जिसका संबन्ध वर्णन बुनावट संरचना, मिथक आदि से संबध्द होता है। कथ्य से संबंधित सभी अंग मिल करकेएक रूप संतरित करते हैं। इस प्रकार कथ्य साहित्यक रचना का मुख्य आधार बनता है। लोक साहित्य में यह जन सामान्य के साथ जुड़ कर और प्रभावशाली बनता है।

मनुष्य का मानस जीवन उसके लक्ष्य के द्वारा निर्धारित होता है।यह लक्ष्य अपनी हीनता पर विजय प्राप्त करना है।इससे भी अधिक मनुष्य महत्व और सत्ता की प्राप्ति के लिए निरंतर चेष्टावान रहता है।यह लक्ष्य हमारे जीवन में एक शत्रुत्व और लडने की प्रवृत्ति का आविर्भाव करता है।ये आधारभूत तत्व व्यक्ति के बाल्य जीवन से ही निर्धारित किया जाता है।उस पर ढाँचे का निर्माण उसकी बढ़ती उम्र के साथ होता रहता है।

मनुष्य बाह्य परिस्थितियों के कारण या समाज के गठन के कारण तो दूसरों के कष्टों से कष्ट उठाकर उसे सुखी बनाने का प्रयास करता ही है। नौटियाल जी के उपन्यासों में कई ऐसे पात्र है जिसमें मनुष्य की आंतरिक वृत्तियाँ उसकी भावनाएँ उसको दूसरों के लिए कष्ठ उठाने को प्रेरित करती रहती है। मनुष्य रूपसे यह वृत्ति है-पारम्परिक प्रेम भाव इसी प्रेम के कारण कभी कष्ट पहुँचाने वाला व्यक्ति स्वयं पश्चाताप भी करता है।

मानव जाति का यथार्थ समाज या परवेश के आधार पर आगे-पीछे जरूर हो सकता है मगर हालतों और परिणाम से भिन्न नहीं हो सकता। नौटियाल जी के उपन्यासों में हमको इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं।

नौटियाल जी की रचनाओं की भाषा चुस्त और संयत है।जैसे पात्र है,जैसे उनका जीवन है, वैसे ही उनकी भाषा है। संभवतः नौटियाल आज हिन्दी के एक मात्र ऐसे प्रतिष्ठित रचनाकार है जिन्होंने पहाड को ही नहीं, पहाडी जीवन के संघर्ष को भी गहरी ललक एवं आत्मीयता के साथ देखते हुए एक बेहद उल्लेखनीय मार्मिक औपन्यासिक आख्यान बनाया है। नौटियाल जी के लेखन में पारंपरिक किस्सागोई तो है ही, दिलचस्प बात यह है कि आज हिन्दी पाठकों के बीच से तेजी से खिसकती पठनीयता की जमीन को बचाने का भी पर्याप्त साक्ष्य अपलब्ध है।

शिल्प

किसी भी कला में उसके शिल्प का विषय से अनिवार्य और घनिष्ठ संबन्ध होता है। शिल्प की विशिष्टता के चलते ही विषय-विशेष को वैशिष्टय प्राप्त होता है और शिल्प का तो अस्तित्व ही विषय सापेक्ष है।विषय से अलग शिल्प की कल्पना असंभव है।ईश्वर निर्मित वस्तुओं के संबंध में कुछ कहना तो कदाचित संभव नहीं,पर मानव रचित पदार्दों के आकार या रूप पर उसके मूल उद्देश्य अर्थात विषय का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता।उपन्यास के रूप पर विषय का प्रभाव

पडे बिना नहीं रह सकता।उपन्यास का रूप,सुन्दरता सार्थकता उसके शिल्प पर आधारित रहती है।शिल्प उपन्यास की आत्मा माना जाता है।

आधुनिक हिन्दी आलोचक तथा लेखक शिल्प, शिल्प विधि, शिल्प विधान आदि शब्दों का प्रयोग अंग्रेजी भाषा के आर्ट एक्सप्रशन, टेकनिक आदि किसी न किसी शब्द के पर्याय हिन्दी में कला शब्द माना गया है। कला शब्द का प्रयोग दो दृष्टियो से किया जाता है-व्यापक एवं संकुचित। व्यापक अर्थ में कला मानव हृदय की विभिन्न अभिष्यक्तियों का पर्याय है।जिसके अंतर्गत काव्य, संगीत, नृत्य चित्र कारिता आदि सभी कलाएं आजाती है।संकुचित अर्थ में कला का संबन्ध कौशल से है जिसके द्वारा कवि अथवा कलाकार अपने भाव या विचार को रूपाकार देता है। इस दृष्टि से यह शिल्प का वाचक है।

प्रायः हिन्दी आलोचक तथा लेखक शिल्प शब्द के साथ विधि अथवा विधान शब्द जोड़ देते हैं।लेकिन उसके अर्थ में कोई भेद नहीं करते। विधि का अर्थ नियम सिध्दान्त, कानून आदि से है और विधान शब्द का अर्थ नियोजन, संयोजन, अन्विति, प्रबन्ध व्यवस्था आदि से है।

शिल्पविधि अंग्रेजी के *टेकनिक* शब्द का हिन्दी रूपान्तर है। शिल्प शब्द का अर्थ है *कारीगिरी* और विधि का अर्थ है *प्रणाली*। अतएव किसी भी रचना को प्रस्तुत करने की प्रणाली ही शिल्पविधि है। "*`किसी वस्तु के निर्माण की जो विधियाँ या प्रक्रियाएं होती है,उनका समुच्चय को ही शिल्प विधि के नाम से पुकारा जा सकता है।*"[8]

According to Mendlow A.A " Indeed one should not talk of the technique of the novel but techniques of novels, The time has long passed when techniques could be taken simply to mean the ways in which given body of experience may be organised and manipulated to the best advantage."[9]

देवेश ठाकुर के अनुसार "*रचना पध्दति का अपना कोई निश्चित, रूढ़ या परंपरागत रूप नहीं होता यह तो एक ऐसी गतिशील प्रक्रिया है, जो युग और समय की मांग तथा लेखकीय रूचि के अनुरूप परिवर्तित होती रहती है। साहित्य की आत्मा भले ही एक और निरन्तर रहे उसका रूप समयानुसार बदलता रहता है।*"[10]

रचनाकार अपनी अनुभूतियों की विषयगत व्यापकता और विविध रूपता के कारण शिल्प -विधान की नयी से नयी पध्दतियों को जन्म देता है। वग स्वानु भूतियों को उपयुक्त ढंग से अभिव्यक्त करने के प्रयास में शिल्प संबन्धी नए नए प्रयोग करता है। जैनेंद्र के अनुसार *"शिल्प से तात्पर्य किसी बस्तू को गढ़ना या रूपायित करना है। किन्तु यह नितान्त बाह्य ढांचा या तकनीक नहीं होताहै, न बाह्य ढाँचे के तकनीक के नियम।"*[11]

शिल्पी वस्तुतः समूची कृति के अन्तः भाव का बाह्य रूपकार है वह वस्तु की नाटकीय ढंग से संपूर्ण उपस्थिति है। किसी एक आलोचक के मत के अनुसार जीवन कविता के पीछे रताहै, लेकिन कहानी के आगे रहता है। जिस दिन कहानी जीवन को आगे करके नहीं चलेगी, उस दिन वह मर जाएगी।

उद्देश्य का अर्थ मात्र उपदेशात्मकता ही नहीं है उसके सात्यता, सार्थकता और नैतिकता जैसे विविध आयाम भी होती है। उद्देश्य पूर्ती यदि आरोपित न हो कर स्वाभाविक रूप से विकसित हो कथा संकलित हो तो उसकी प्रभावोत्पादकता कलात्मक होते हैं। सचेष्ट नैतिक अनैतिक धारणाओं से परे जीवन चित्रण स्वयं नैतिकता के उद्देश्यता का तात्पर्य पर्याप्त विस्तृत है। जिस तरह अनेक विद्वान आलोचकों एवं साहित्यकारों के मत के अनुसार शिल्प न बल्कि कहानी का अस्तितव का निरूपण करता है। कथ्य और शिल्प का समावेश ही कहानी का रूप धारण करता है।

रचना का आधार वास्तविक जीवन है। वास्तविक जीवन देश काल और देश की सत्-असत् परिस्थितियों से निर्मित होताहै। अतएव इन तथ्यों का एक स्थान संचयन और चित्रण करना रचना में वातावरण उपस्थित करना है। रचना की कथावस्तु और उसका संचालक पात्रों का संबंन्ध उक्त स्थितियों से होता है। अर्थात उनका उद्‌गम सूत्र और सम्बन्ध किसी काल विशेष से होगा। इसके उपरांत इन दोनों का संबन्ध जीवन की किन्हीं परिस्थितियों की सीमा में समस्त मानवीय राग-द्वेष अनुभूतियाँ और हर प्रकार के संघर्ष आ सकते हैं। वस्तुतः इन सबके सामूहिक संकलन से वातावरण की सृष्टि होती है। जो बदलते पाठकों की रूचि बदलती शैली आदि की भी सूचना प्राप्त होती है।

जिस तरह बदलते समय एवं पाठकों की रूचि के साथ साथ शिल्प में भी बदलाव आते रहते हैं। शिल्प के बदलने से कथाकार की दृष्टि एवं आलोचना से रचना की कथावस्तु भी बदल जाती है। वस्तुतः अधिक से अधिक रोचकता, आकर्षण और प्रभाविष्णुता लाने के लिए ही रचनाकार विविध रूप विधानों की योजना करता है। नौटियाल जी अपने साहित्य में पहाडी लोगों की समस्याएं एवं समाज पर शोषण के परिणाम आदि पर विचार किया है। यथार्थवादी शिल्प को प्रयोग करते हुए जिन्दगी के कटु यथार्थ को हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं।

नौटियाल जी के साहित्य में किसी कल्पना के लिए जगह नहीं है , उनके उपन्यासों में उन्होंने जो भी वर्णन किया जिसका भी चरित्र-चित्रण किया वे सब कोई कल्पना के पात्र नहीं पहाडों में जीवन बिताने वाले भैंसवाले, खडवाले, पालसी एवं गूजरों की कथा है।इनके उपन्यास तो जीते जागते व्यक्ति की दास्तान कहा जाता है। आगर हम गढ़वाल जाएं तो आज भी हमको एक करणू,एक दुश्मन, एक देवीदत्त, एक आयशा एक बाधासिंह, एक श्रीधर प्रसाद जैसे लोग मिल ही जाते हैं। अनपढ़ और भोले भाले पनता आज भी पटवारी एवं हाकिमों के आगे अपना गर्दन झुकाकर चलते हैं।

यथार्थवादी शिल्प साहित्य की अनुरूप निधि है जीस में सभ्यता एवं समाज की अनमोल अनुभवों को सशब्द रूप देने का अवसर एवं अवकाश प्राप्त होता है। धन्य ऐसे रचनाकार है जो सत्य में जीते है और सत्य के पथ प्रदर्शक बन कर रह जाते हैं। उस कोटी के सर्वोच्छ कथाकार है नौटियाल जी जो यथार्थ रूप को अपने साथ लेकर चलते हैं। शिल्प में गत्यात्मकता और परिवर्तन शीलता का गुण होना आवश्यक है।दीर्घ काल तक अनेक कवियों द्वारा किसी शिल्प विधि के निरंतर प्रयुक्त होने से शिल्प की भी रूढ़िया बनजाती है। जो कृति की सजीवता को नष्ट कर देती है। अतः प्रतिभा संपन्न कवि अपनी नूतन भावानुभूतियों को संक्षिप्त रूप में अभिव्यक्त करने के लिए इन रूढ़ियों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी कर देते हैं।

डॉ शिव कुमार मिश्र ने कहा है- *"वस्तुतः कोई भी काव्य चेतना अपने साथ नवीनता को लाती है तो वह नवीन अपने लिए नूतन उपकरणों,परिधान,अथवा शिल्प-सज्ज का भी आग्रह करता है,बल्कि सत्य तो यह है कि वह उन से मण्डित हो कर ही अपनी अभिव्यक्ति करता है - उस की वाहक काव्य चेतना न केवल भावों अथवा विचारों को वरन् कला और शिल्प को भी साथ ही जन्म देती है।"*[12]

3.1.1. सूरज सबका है

सूरज सबका है उपन्यास ऐतिहासिक कथाभूमि के बाद भी एक ऐतिहासिक उपन्यास नहीं है। यह उपन्यास लग भग दो सौ वर्ष के गढवाल की कथा कहता है।इतिहास के संबंध में नौटियाल जी की दृष्टि साफ है।उपन्यास में कई स्थलों पर लेखक की इतिहास दृष्टि व्यक्त हुई है-जनता का इतिहास तो अभी लिखा जाना बाकि हैं।

इस उपन्यास का कथारंभ 1814-1815 से होता है,जब गढवाल में गोरख्र्याणी मची थी। गढवाल और नेपाल के बीच जंग छिडि थी। उपन्यास कई छोटे-छोटे शीर्षकों और अध्यायों में विभक्त हैं- छुन्ना का पैणा, भडों का देश, जब गोरखे आए, देहली का इतिहास, हमले की तैयारी, निर्माता कौन थे, माधोसिंह भंडारी, डंका बजगया, पहाडों की बर्फ आगरा पहुँच गई, विजय अभियान, सूरज सूरज है, हमें मोहलत दे तों राहे बंद है, सब की भूख एक है, सूरज घाग है, मोहलत के बाद, बडी दादी, रोटी एक सपना, बाघसिंग, हमें लडने दी, फजीती, सिक्के वोलने लगे, बँटवारा विजय आभियान, नाक काट दो गोरखे हारगए, हरदेव जोशी सिख्के का दूसरा पहलू, *सुरज सबका है*।

"इस उपन्यास की ऐतिहासिक सामाग्री के लिए लेखक ने शिवप्रसाद डबराल की पुस्तक उत्तराखंड का इतिहास, डॉ.होनहार रघुवंशी की डायरी से सामाग्री ली है। इतिहास यहाँ शरीर मात्र है, उसकी आत्मा और धडकनें इतिहास से बाहर फेंक दिए या कर दिये लोगों की है। प्रायोजित चर्चाओं में पिछले वर्षों में हिन्दी के जिन उपन्यासों की धूम मची थी,उनके साथ इस उपन्यास को रखकर देखने से यह स्पष्ट होता है कि जो जीवन धर्मी रचनाएँ है, संघर्ष, प्रतिरोध और आस्था की कथा-कृतियाँ है, हिन्दी समीक्षा में उनकी उपेक्षा की जा रही है। सूरज को रोका जा रहा है, सबका होने नहीं दिया जा रहा है।"[13]

इस उपन्यास में छूटे हुए लोग है, हाशिए पर रखे गए लोग है,जीवन से जुडे सामान्य लोग है और इस अर्थ में यह उपन्यास टिहरी गढवाल का होते हुए भी पूरे देश का है, जन समुदाय का है।यहाँ इतिहास की उपस्थिति इतिहास-निर्माण के लिए है। अतीत का कथानक भविष्य-निर्माण के लिए है। *सूरज सबका है* उपन्यास आजादी के सूरज को मक्ति करने के लिए किए गए संघर्ष की कथा है। लेखक ने इसे शहीदों और ज्ञान की ज्योति से जगमगाते चेहरे की स्मृति को सादर समर्पित किया है।

इस उपन्यास को *ऐतिहासिक* कृति के बजाय *लोकमानस की कृति* कहा गया है।लोक मानस की कृति की उपेक्षा लोकमानस की उपेक्षा है,लोक की उपेक्षा है।लोक और लोक मानस की उपेक्षा राजनीतिज्ञ कर रहे हैं और लेखक का एक समुदाय भी कर रहा है।विद्यासागर नौटियाल लोक और लोक मानस के कथाकार है।

उपन्यास के आरंभ में एक घोषणा पत्र है "*समूची धरती पर मुट्ठी भर सामर्थ्यवान लोगों ने कब्जा कर लिया है।उस पर भी निजी स्वामित्व स्थापित करने की होड लगी है। समस्त ग्रहों, नक्षत्रों, अंतरिक्ष,बाह्याकाश पर कब्जा करने की कोशिशें लगातार जारी हैं। मुनाफाखोंरों की हवस की कोई सीमा नहीं।*"[14]

उपन्यास के आरंभ में यह घोषणा पत्र एक विशेष उद्दश्य के तहत है। यह उपन्यास से ही छन कर आया है। विद्यासागर नौटियाल *निजी स्वामित्व* और *मुनाफाखोरों* के खिलाफ है। 140 पृष्ठों का यह उपन्यास 31 खंडों में विभक्त है। इस उपन्यास में वीरपराक्रमी भढ है। साहसी और पराक्रमी सपूत। यह उपन्यास समर्थ-संपन्न और प्रभुत्व शाली वर्ग के खिलाफ है।यह संघर्ष का उपन्यास है।एक विशिष्ठ समाज का दर्शन कराता है यह उपन्यास।

समाज को देखने के अलग- अलग दृष्टिकोण होते हैं। किसी समाज को एक व्याक्ति राजनीतिक दृष्टि से देखता है तो दूसरी आर्थिक दृष्टिकोण से और तीसरा समाज की परंपराओं और रीतिरिवाजों को देखता है। रचनाकार ही एक ऐसा सहृदय व्यक्ति होता है जो किसी समाज को सर्वांगीण दृष्टि से देखने की कोशिश करता है। हिन्दि साहित्य के इतिहास में विद्यासागर नौटियाल एक ऐसे ही सहृदय उपन्यासकार है जिम्होंने पहाडी प्रांत के प्रभावी चित्रण को ही अपनी रचना की सार्थकता मानते हैं।

सूरज सबका है उपन्यास का आरंभ गोरखों के आक्रमण से होता है - *नियम यह था, नेपाल सरकार का नियाम,कि जिस किसान के ऊपर राजकीय कर का बकाया हो वह देखते मिछे(सिपाहियों द्वारा उसकी माँग किए जाने पर तत्काल)अदायगी नहीं कर सकतार तो उसे गिरफ्तार कर लिया जाए।हरिध्वा में गुलामों की मंडी लगती थी।हरिद्वार में एक गोरखाली थाना भीमगडे में विशेष तौर पर इसी कार्य के लिए खोला गया था।*"[15]

यहाँ एक और नियम भी था कि अगर कोई व्यक्ति उस बकायादा की अदायगी कर देता है तो उस बकायादा के हाथों में बँधी रस्सी का दूसरा छोर उस व्यक्ति के हाथ में थमा दिया जए।रकम अदा करने वाला व्यक्ति का उस बकायादार की जिंदगी पर वही अधिकार हो जाएँगे जो हरिद्वार की मंडी में बोली बोलकर और कीमत चुकाकर दासों के सरदार को हासिल होते हैं।

कहा जाता है कि हरिद्वार की मंडी में गोरखों ने कुल दो लाख गढवाली दासों की बिक्री की थी। गोरखों का नाम सुनते ही गढवाली किसान काप जाते थे।कही छुप जाने की कोशिश करते।उनके मन में यह डर रहता था कि गोरख के दास बनने के बाद पता नहीं कहाँ पर भेज देंगे।यहाँ रहेंगे तो यहाँ अपने जंगल - खेतों नदी नलों के किनारों पर,पहाडी की चोटियों पर घूम सकेंगे।जो दास बनकर जाता शायद वह वापस कभी अपनी जगह पहुँच नहीं पाता। यह उपन्यास स्वतंत्र भारत की स्थितियों से समाप्त होता है।

यह गढवाल की कथा है जो फैल कर पूरे देश की कथा हो जाती है। गढवाल के भढ वीर और पराक्रमी थे। जो राज करते थे,पर ऐश नहीं करते थे। इस उपन्यास में उप्पू गढ का काफू भड है,जो सर नहीं झुकाता। जो समझौता करले, वह भड कैसा?

एक ओर राजा अजयपाल हैं और दूसरी ओर काफू जौहान है। राजा अजयपाल से काफू चौहान कहता है -"*शेर किसी और के द्वारा किए गए शिकार की जूठन नहीं खाता। तुम मझ से ताकत से नहीं जीते, करट करके जीते हो। मैं साफ दिल का भड हूँ, काले दिल का राजा नहीं हिम्मत है तो आ जाओं हो जाएँ दो-दो हाथ ?*" [16]

राजा जब काफूभड को मौत की सजा देता है तो उस भड के चेहरे पर चिंता की झलक भी दिखाई नहीं देती। काफू चौहान को पीछे से तलवार लेकर धड से सर को अलग किया गया। किसी में हिम्मत कहाँ थी कि काफू चौहान के आगे खडे होकर उस पर तलवार उठा सके।

एक ओर नजावत खाँ है और दूसरी ओर माधोसिंह भंडारी जैसा भड है। आक्रमणकारी और उनके विरूद्द लडनेवाला योध्दा। नजावतखाँ ने श्रीनगर राजा के एक भड माधोसिंह भंडारी की वीरगाथा कई-कई साल पहले सुनी थी।गढवाल में एक ऐसा भड है जिसने पूरा पहाड ही खोद गला। शोरगढ पर आक्रमण करने के

बाद नजावतखाँ मन ही मन अपनी तूलना माधोसिंह भंडारी से करने लगा। माधोसिंह भंडारी की वीरता के किस्से उसे याद आने लगे।

भड कभी शत्रू के सामने सर झुकाते नहीं।एक भड काफी है, हजारों सैनिकों को भगाने के लिए। नौटियाल के अनुसाल गढवाल के लोग योध्दा है, पराक्रमी है, वीर हैं। यह अपने क्षेत्र के गौरवशाली और संघर्षमय अतीत की याद दिलाता है, जिससे प्रेरण पाकर ही हम नए आक्रमणकारियों का मुकाबला कर सकते हैं।

मुगल बादशाहों ने गढवाल को तरसती नजरों से देखा था, लेकिन वे शासन नहीं कर सके। नजावतखाँ हारकर जब वापस आगरा पहुँचता है तों, शाहंशाह बहुत गुस्सा हुए। इस पराजय के बाद उत्तर भारत की ओर पाँव बढाने की हिम्मत शहजहाँ में नहीं थी,वह दक्षिण भारत की ओर बढगया।

गोरखों से गढवलियों ने लंबी लडाई लडी और उन्हें वापस किया। गढवाल भारत का मुकुट है और तिब्बत की देहली है। लेखक ने उसे पूरी तरह तन्मयावस्था में लिशा है,जहाँ भाषा कविता और संगीत की सरहदों को छूति है।

उपन्यास में महाराणी कर्णावति का चरित्र प्रेरणापद है।रानी कर्णावती की बुध्दिमत्ता हैरत में डालती है।उनकी चाल, उनका संधि प्रस्ताव,15 दिन का समय लेना,उनके द्वारा जारी कोये गए निर्देश, दुश्मन के सैनिकों की नाक कटवाना-सब कुछ उनके व्यक्तित्व की चमक से भरा हडा है।

रानी कर्णावती कहती है -" *यह फैसला हम तूम्हारे सिपाहियों पर छोड रहे हैं। कोई अपना सर कटवा ले या नाक कटवाले हमने तजबीज किया है कि सरदारों की नाकें इसी शमशीर से कलम कटवाई जाएँ जिसे तुमने अभी जमीन पर रखा है।बाद में यह शामशीर तुम्हें सौंप दी जाएगी।*"[17]

लेखक ने निकोलस मनूची को उद्धृत किया है इस रानी का शासन इतना कठोर था कि जिसे सजा देती थी,उसी नाक कटवा देती थी।

गढवालियों ने मुगल हुकूमत के सामने कभी समर्पण नहीं किया। पहली बार अंग्रेजों ने वह काम बडी आसानी से कर दिया, जिसे न मुगल बागशाह कर सके थे और न गोरखे अंग्रजों ने गढवाल के टिकडे किए और असे एक देश से राज्य बना कर रख दिया-टिहरी गढवाल रियासत। *सूरज सबका हैं* उपन्यास गढवालियों के स्वाभिमान की कथा है, गढवाल के अंदर जो प्रतिरोधि शक्ति है उसका इस उपन्यास में सुन्दर वर्णन है।

राजा कुमयूँ के प्रमुख आधिकारी दीवान हरदेव जोशी को अंग्रेजों ने वचन दिया कि कमायूँ से नेपालियों को भगाने के बाद कुमायूँ काशासन उसके राजा को लौटा दिया जाए गा। जीतने के बाद उस वायदे से अंग्रेज पूरी तरह मुखर गये सब से बडा हिस्सा अपने पास रख कर आधा गढवाल लौटाया। इस सदमें को हरदेव जोशी वर्दाशत नहीं कर सका।

"उसने दीवान हरदेव जोशी ने चिताई में गुरीलके सामने तीन बार उत्तारित किया -

अंग्रज तेरा नाश हो
अंग्रेज तेरा नाश हो
अंग्रेज तेरा नाश हो
और उसने वही पर प्राण त्याग दिए।"[18]

अंग्रेज की चालबाजियों के खिलाफ कुमायूँ के आम आदमी का गुस्सा हर्षदेव जोशी के सीने से फूटकर बाहर निकल आया था। विद्यासागर नौटियाल के यहाँ ऐतिहालिक घटनाएँ, प्रसंग और पात्र वर्तमान को समझने और से गति देने के लिए है।1857 में गढवाल के राजा ने अंग्रेजों की मदद की थी।

इस उपन्यास में सोनी गाँव, इस गाँव का बाघा परिवार, बडीदादी, छुन्ना, देविदत्त, रानी कर्णावतीं कई अविस्मरणीय चरित्र है। इस उपन्यास में लेखक ने सही बताया है कि अतीत और वर्तमान में को फर्क नहीं है। जब छुन्ना पोटली पकडकर सीढियँ चढने वाली थी देहली की ऊँचाई रोक लेती है।छुन्ना देहली को पार नहीं कर पाती।देहली पार करने से वह कमरे में पहुँच सकती थी।लेकिन देहली रूपी परंपरा जो है वह भरिष्य की तस्वीर छुन्ना को रोक लेती है।

लेखक ने जीवन के यथार्थ को दिखाने में मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाया है। उस समाज में सब समान है वह राजा हो या प्रजा। सबकी मानसिक सोच अलग होते हुए भी एक स्तर पर सभी समान हो जाते हैं, जहाँ इन्सान इन्सान के रूप में देखने को मिलते हैं। सिपाही करीम तीन दिन से भूखा रहता है वह सोचता है कि मनुष्य क्यो अपनी कमायी से संतुष्ट नहीं होता। वह हमेशा पैसों के लिए ऐश आराम के लिए अपना जीवन व्यर्थ करता है।

यह सिपाही करीमका ही नहीं वल्कि आज के समाज के प्रति लेखक की संवेदना है जो उनको मानवतावादी के रूप में खडा कर देती है।

नौटियाल की सबसे बडी शक्ति उनका अभिव्यक्ति पक्ष है।उनके पात्र और स्थितियाँ न तो बनी बनायी है और न ही काल्पनिक। उन्हों ने समाज को जिस

यथार्थ के धरातल पर देखा है वह शतशः सच साबित होता है। अपने अपने स्वार्थ केलिए सभी एक ही है,वह चाहे ब्राह्मण हो या कोई और इस उपन्यास में सोनीगाँव का कठिन अनुशासक बाघासिंह जब अपनी माँ की गतिक्रिया करने ब्राह्मण सदानंद को बुलाता है तो सदानंद को न आते देखकर स्वयं उसके पास पहुँचता है। सदानंद गतिक्रिया करने वाले के लिए तैयार हो जाता है लेकिन बदले में बडी दादी का जमीन माँगता है। बाघा उस जमीन को दान में दे देता है सरकारी रिपोर्ट में लिख वाता है कि बडी दादी मर चुकी है।इस कडुवे सच को गाँव का हर कोई जानता है लेकिन मौनधार कर रह जाते हैं। इस प्रकार का यथार्थ चित्रण प्रेमचंद के गोदान को याद दिलाता है। जहाँ प्रेमचंद ने किसानी जीवन के यथार्थ चित्रण प्रेमचंद के गोदान को याद दिलाता है, जहाँ प्रेमचंद ने किसानी जीवन के यथार्थ को अपना विषय वनाया वहीं नौटियाल ने गढवाल जीवन को। एक तरह से यह उपन्यास गढवाली जीवन का फोटोग्रफ है।

इस उपन्यास में परंपरा केर इतिहास के साथ-साथ वर्तमान की चोतना की ओर भी इशारा किया गया कि समाज की चोतना कैसे वनती है और कैसे वदलती है। भारत स्वतंत्र हो जाने के बाद भी चाँदी गाँव जैसे वहुत सारे गाँव जैसे के तैसे हैं जिनमें सदियों की दासता अभी तक सुनाई देती है.....सिर्फ लोग बदले। बडी दादी को परम वीर माहिला मानने वाला देवीदत्त रास्ते में फैले दुर्गंध को लेकर कहता है कि *"दोष गाँव के उन लोगों का है, जिन्होंने धरती पर उस दुर्गंध के कारण को उस दशा में रख छोडा।उस वक्त देवीदत्त को महसूस हुआ कि यह समूचा देश एक गुजार बन गया है।वह समृध्द ,सूखी, स्वच्छ भारत कहीं गायब हो गया है,जिसके उसने कभी सपने देखे थे।"*[19]

इस तरह लेखक हमें अपने गाँव और देश के प्रति सचेत करते हैं। इतना ही नहीं इस उपन्यास में प्रयुक्त स्थानीय शब्द और लोक गीत गढवालों की सहज और वहाँ की संस्कृति से परिचित कराते हैं।

इस उपन्यास का कथानक, भाषा, वर्णन शैली, जीवन-दृष्टि सभी दृष्टियों से गहरे विवेचन की माँग करता है। सूक्तियाँ मोतियों की माला की तरह उपन्यास में बिखरी हुई है। किवाड, रोटी आदि के संबंध में उपन्यास कार ने जो लिखा है, वह इन विषयों पर लिखी गई कई समकाली कहानियों से बेहत्तर है। *सूरज सबका है* विद्यासागर नौटियाल की अविस्मरणीय कृति है। *सूरज सबका है* उपन्यास सच को साबित करता है। इन तमाम बहुरंगी आयामों से स्पष्ट होता है कि इस

उपन्यास में जिस समाज का चित्रण हुआ है वह सजीव और यथार्थ परक है। अधिकतर साहित्यकारों के लिए महानगरीय जीवन ही समाज है, लेकिन यह नौटियाल ही की विशेषता है कि पहाडी समाज को अपने उपन्यास का विषय बनाया।समतावादी दृष्टिकोण को अपनाकर *सूरज सबका है* कहते हुए समसमाज की स्थापना करना ही लेखक का चरम लक्ष्य है।

समाज और परंपराओं, रीती-रिवाजों के बीच फँसा हुआ व्यक्ति अपनी स्वतंत्रता और जीवन की सार्थकता को खोजता है।इस उपन्यास में बडी दादी का चित्रण ऐसा ही है।जब बडी दादी छोटी थी तब किसी त्यौहार के दिन अपने खानदान में किसी की मृत्यु हुई थी। जब से उस त्यौहार मनाना बंद करदिया। रीती के अनुसार अगर उसी त्यौहार के दिन किसी का जन्म होता तो,उस त्यौहार को मनासकते है। लेकिन बडीदादी के घर मेंउस त्यौहार के दिन कभी न मनुष्य का जन्म हुआ न जानवर का। बहुत त्यौहार आये और गये मगर बडी दादी कभी त्यौहान नहीं मनायी।

बडी दादी एक संघर्ष है,जो जिन्दगी भर करती रहती है।अंत तक वह अपनी जिजीविषा को बनाए रखना चाहती है।वह अपनी जिन्दगी से नफ्रत करती है।हमेशा वह यमराज को बुलाती है कि उसको ले जाएँ। फिर भी वह एक आस्था बनकर रह जाती है।अंत में वह पूरे गाँव वालों को गुड की गोलियाँ बाँटकर कहती है- *"तूम लोग उसे अपने मुँह में मेरे सामने रख देंगे तो मेरी आत्मा को शांति मिल जाएगी यह मेरी ओर से पैंणा भी है और मेरे श्राद् का भोजन भी।"*[20]

पूरे गाँव वाले कहते हैं बडी दादी मरी नहीं जीवित हो गई है।उसे नया जीवन मिला है।बडी दादी सबके लिए बडी दादी है जो किसी की कुछ नही होती और उसके घर कोई आता जाता तक नहीं था अब वही बडी दादी गाँव वालों के कंधों पर बडी शान के साथ जा रही है।जहाँ एक ओर बडी दादी संघर्ष और जिजीविषा का प्रतीक बनजाती तो दूसरी ओर बाघा की माँ अपने पति को अपने ही बहू के सास देखकर आत्महत्या कर लेती है।एक ओर बडी दादी की असीम जिजीविषा का चित्रण और दुसरी ओर बाघा की माँ का क्षणिक दुःख में आत्म हत्या करलेने का चित्रण लेखक के नारी वादी संबंधी बहु आयामी चिंतन का सूचक है।

स्वतंत्रता के बाद की स्थिति का भी उपन्यास में वर्णन है। परगनाधिकारी देवी दत्त को अपना विद्यार्थी जीवन याद आता है, जब इलहाबाद विश्वविद्यालय की कक्षा में नए भारत के विकास की सही दिशा पर बहसें होती थी।

3.2.2. उत्तर बायां है - कथावस्तु

उत्तर बायां है हिमाच्छादित बुग्यालों और ऊँचे विस्तृत चरागाहों में बरसात के दौरान बर्फ के पिघलने के बाद उग आने वाली मखमली घास और असंख्य खूब सूरत फूलों की खुशबू के बीच अपने पशुओं के साथ विचरण करने वाली घुमन्तु जीति गूजर और पर्वतीय क्षेत्र के भेड पालकों ओर भैंसवालों के समूहों के आपसी सबन्धों और परिधि पर बसर कर रहे लोगों के जीवन का साक्षात्कार है।विद्यासागर नौटियाल जी कहते है कि-*"अपने लोगों की यह कथा जिसे अनेक वर्षों तक मैं ने अपने भीतर जिया है..."*[21]

पर्वत श्रृंग पर बसे भेड पालकों के गाँव चाँदी और उसकी घाटी में बसे रैमासी के निवासियों के पेशों, रीतियों और प्रथाओं में पर्याप्त भिन्नता दिखाई देती है जाती है। चाँद के आकाश में चाँद खुलकर प्रकट हो कर कभी अपनी आभा नहीं फैला पाता। चाँदीवासियों का आदिकाल से यह विश्वास चला आया है कि कुछ दुष्ट ग्रह,जो उनके आकाश में विचरण करते हैं, उनके चाँद को हमेशा अपने दबाव में रखते आए है, जैसे राहुपूर्ण मासी के चाँद को हमेशा अपने दबाव में रखतेआया है। उन दुष्ट ग्रहों के संचालक रैमासी में निवास करते हैं। दिन रात अधिक परिश्रम करने वाले चंदवालों की कमाई को सदियों से निठल्ले रैमासीवाले हडपते आए हैं। सदरू, करणू, हुकुम के जीवन में सी जी, कन्हैया, देवीप्रसाद, घनसिंह और इन निरीह चंदवालों की कीमत पर राजकीय कर्मचारियों, अधिकारियों की मौजमस्ती, बेकसूर लोगों पर सत्ता के अत्याचार, न्यायालयों की हास्यास्पद भूमिका, भेड पालकों, ग्रामवासियों गूजरों के पशुवत, जीवन की झलकियाँ, आयशा सकीना और हसीना के बेबस जिन्दगी के चित्र हाशिए पर पडे लोगों के अनवरत संघर्ष, गरीबी, उनके सपने, सभ्य तथाकथित विकसित समुदायों द्वारा उनका बाहरी-भीतरी विनाश।

उत्तर बायां है में अपने मर्मांतक वर्णन से विद्यासागर नौटियाल इन घुमन्तू और सीमांत लोगों के जीवन का प्रामाणिक तथा जिन्दगी से भर पूर संयम करते हैं। लेखक अपने उपन्यासो के माध्यम से बेचैन करने वाली यथार्थ और जमीनी

सच्चाइयों आपसी रिश्तों को मानवीय गरिमा देने के बीच एक संयत भाषा में आन्दोलित करता है और इन उपेक्षितों की पीडा से मुख्यधारा को अत्यंन्त मार्मिकता से साक्षात्कार कराता है।

उपन्यास की शुरूआत सदरू के धुंधले सपने से होता है। सदरू पल्लीधार की ऊँचाई पर भेड-बकरियां चराता है। बुग्याल के आखिरी छोर पर वह रहता है। मालिकाल उसके गूहज हैं जिनका वह पालसी है। आरंभ में ही पालसी और गूजरों का भेद बताया गया।पालसी को सबसे ज्यादा चिन्ता अपने भेडों की सुरक्षा की रहती है। लिहाजा वह धार के ऊपर यानी पर्वतों के सब से ऊँचे सिखर के ऊपर रहने का आदी हो जाता है। पहाडों के निचले इलाकों के मुकाबले धार पर खूब-खूब तेज हवाएं चलती है। वहां कोई ओट नहीं होती। पर हवाएं चलती तो चले, हवा का मुकाबला कर लिया जाएगा।वहाँ बाघ तो नहीं आएगा। आराम से पांव पसार कर सो तो सकते हैं।

गूजर पालसी से एकदम भिन्न होता है, बनावट में भी और स्वभाव में भी। वह बाघ-भालू से नहीं घबराता। वह हट्टा-कट्टा इन्सान होता है। गूजर के बेटे के हाथ में एक लाठी होनी चाहिए, वह बाघ को मार गिराएगा। उसमें साहस और बल किसी का भी अभाव नहीं होता गूजर की भैंसों पर बाघ हमला नहीं कर सकता। वे भैंसे रहती भी झुण्ड में हैं। रात को सोते वक्त वे खुद ही एक गोल घेरा बना लेती हैं और अपने नवजात और कम उम्र के बच्चों को उस घेरे के बीच में रख लेती हैं। उस मजबूत घेरे को तोडकर बाघ उन बच्चों तक पहुंच ही नहीं सकता गूजर कहीं भी घर पर नहीं रहता। वह पहाड की ओट लेकर रहता है।घर से बहुत नीचे,झोपडी बनाकर रहता है। गूजर की झोंपडी एक पूरा भवन। ऊँचा, हवादार सुरक्षित।घने वृक्षों से भरे वन के आन्दर एक खूब सूरत, साफ-सुथरा आवास।

टिहरी-गढवाल रियासत की आजादी से पहले गूजरों को रियासत की बुग्यालो,वनों चरागाहों के अन्दर पशु चराने के अनुमति पत्र बहुत कंजूसी के साथ,बेहद सतर्क होकर दिये जाते थे।स्थानीय ग्राम वासियों के अलग-अलग गांवों के अलग-अलग वन-क्षेत्रों में चरान-चुगान के हक-हकूक सरकारी कागजात में दर्ज किये जाते थे। उस दौरान बहुत थोडे, सीमित गूजर परिवारों को चरान-चुगान के परमिट जारी किये जाते थे। 15 आगस्त,1947 को टिहरी शहर के पोलोग्राउण्ड

में एक विशेष दरबार आयोजित किया गया। उस दरबार में घोषणा की गई कि मुल्क हिन्दुस्तान से अंग्रेज के चले जाने के बाद टिहरी-गढवाल रियासत पूरी तरह स्वाधीन हो गई है। मतलब कि रियासत अब भारत का भाग नहीं,उससे एक दम अलग, एक स्वाधीन देश है।

भोटिये कुत्ते सच्चे रक्षक होते हैं। दुनिया का कोई भी हिंसक जानवर इनके इस स्वभाव से टकरा नहीं सकता वे जीते ही इसलिए हैं कि दूसरों की रक्षा करे। भेड पालक अपने कुत्तों को प्यार करते हैं। कुत्तों के जीते जी उनकी भेडों की कोई हानि नहीं हो सकती। रात में मालिक सोता है,कुत्ता जागता है। भोटिया कुत्ता। भेडवालों का एक सच्चा जीवन साथी। एक अकेला भोटिया कुत्ता बाघों के जोट से भिड-जाने की क्षमता रखता है और उसमें क्षमता हो, न हो, अपने साहस के बल पर वह उनका मुकाबला कर सकता है। बडी चीज शक्ति नहीं,साहस है।भोटिये कुत्ते के स्वभाव और उसकी हिम्मत का दूसरी नस्ल का कोई और कुत्ता मुकाबला नहीं कर सकता।

पालसी बुग्यालों के विस्तृत इलाकों में आराम से घूमता रहता है।ऊँचाई के बातावरण के दबाव के कारण उसे सिरदर्द नहीं होता। तेज वर्षा हो जाने पर पालसी यह नहीं सोचता कि अब मेरे शरीर के कपडे कैसे सूखेंगे। उसके गीले कपडे उसके तन पर सूखते हैं। अन्दर से शरीर की गर्मी और बाहर की तेज हवाएं मिलकर उन्हें सुखाती हैं। बर्फ गिरती है तो वह उसका भी मुकाबला करता चलता है।

अपने घर से दूर किसी पहाडों पर भेड-बकरियों की रखवाली करने वाले पालसी लोगों का जीवन चित्रण नौटियाल जी बहुत मार्मिक ढंग से किए है।अकेला पालसी अपनी मलिकों के जानवरों की रक्षा के लिए घर से मीलों दूर आकर यहां बस जाते हैं।अपने जान की परवाह न कर हमेशा जानवरों की रक्षा के लिए मजबूर होते हैं।मन,मन है।कभी कभी ऐसा भी होता है कि वह उचट जाता है और तब अपने वश में नहीं रह पाता।ऐसे समय जब आदमी का मन उसके वश में नहीं पह जाता तब ऐसा महसूस होता है कि आदमी और उसके मन का, दोनों का स्वतंत्र, अलग अलग अस्तित्व है।आदमी का तन और चीज है मन और चीज। आदमी पर उसका मन हावी होने लगता है। उसके खयालों को कोई रोक नहीं पाता। पालसी अपनों के बारे में सोचता रह जाता।

आकाश को छूती ऊँचाइयों पर हरे-भरे बुग्यालों में अपने पशुओ के साथ एकाकी जीवन बिताने वाले गूजर हो अथवा घाटी में संघर्ष शील जीवन व्यतीत करनेवाले ग्रामीण, सभी अपनी विशिष्ट मुद्राओ में हमें अपनी जिजीविषा से चमत्कृत कर देते हैं।उनके जीवन प्रसंगों में काठिन्य, करूणा, गैन्य के अतिरिक्त प्रेम,माधुर्य और विनोद भी है। ऐसी विडम्बनापूर्ण स्थितियाँ भी है जिन्हें पढकर किसी संवेदनशील पाठक को होठों पर मुस्कान उतर आए, आँखें छल-छला जाएँ,बिना बोहनी हुए उधार चाय न देने वाले दुकानदार के उधारी ग्राहक नकद चाय पीने वाले ग्राहक के आँगन में सुबह सवेरे बैठे प्रतीक्षा कर रहे हैं कि वह सब सोकर उठे और दुकान की ओर चले।अधीर प्रतीक्षा के बीच वे उसे बीच-बीच में पुकार भी रहे हैं 'अब उठ जा यार।

इस उपन्यास में प्रेम कथाएं पढने के लिए मिलती है।वहीद और आयशा ऐसे प्रेमी जो हमेशा एक दूसरे से मिलने के लिए या बस एक झलक एक दूसरे को देखने के लिए हमेशा तडपते रहते।

वहीद के बाप रफीक ने एक आध बार आयशा के बाप सुल्तान से वहीद और आयाशा के रिश्ते की बात छेड दी। सुल्तान को रिश्ता मंजूर था पर वह कहता था कि आयशा जैसी हसीन लडकी कहीं मिल नहीं सकती। उसे अपने घर ले जाना है तो आधा दर्जन भैंसे और दो हजार रूपए नकद देने पडेंगे।रफीक के पास इतनी दौलती नहीं थी।रफीक का बेटा वहीद बाप के गरीबी के कारण कुंवारा रह गया था।

इधर आयशा भी वहीद से मिलने के लिए बेसर्बी से इन्तजार कर रही थी। आयशा अपने मन में वहीद पर फिदा थी। पर अपने बाप की शर्तों के आडे आकर यों ही उसके साथ भाग जाने की वह हिम्मत नहीं कर सकती थी। वहीद आयशा से कहता है कि कल अगर मैं जिन्दा रहूँगा तो तुम्हे अपने साथ ले जाऊँगा। आयशा भी किसी बूढे से शादी करना नहीं चाहती,वह जानती थी कि पैसों के लालच में उसका पिता बूढें के साथ उसका निखा कर देगा। वह तो मन ही मन यही सोचती रहती थी कि वह जिन्दा रहेंगी तो वहीद के साथ अगर वह मरजाएगी तो भी वहीद के साथ। उन दिनों गूजरों पर हमले होते थे। एक जगह से दूसरी जगह पर जा रहे गूजरों पर वार किया जाता था उनके जनवरों को लूट लिया जाता था और उनको जान से मार दिया जाता था। उस लडाई में वहीद और आयशा दोनों मारे जाते हैं।

पालसी तो बुग्यालों में अकेला रह लेता है। गूजर अपने परिवार और पशु को साथ लेकर चलता है। गूजर कही एक जगह बस जाए कुछ महीनों के लिए पशुओं को छोड देते हैं। जब उस जगह से दूसरी जगह पहुँचता है तब अपने पशु को ढूंढ के वापस ले आते और दूसरी जगह चले जाते। गूजर को उस जगह को छोडकर जाने में तकलीफ होती है।वह ङर बुग्याल को, भरपूर फसलों, खूबसूरत पहाडों की चोटियों को बार बार देखलेते हीं मन में यही सोचते कि अगर अगले साल यहीं आयेंगे तो क्या यह जगह इतना ही सुन्दर रहेगी ? "*आदमी खुश होता है तो उसकी जुबान खुल जाती है। जिसका दिल भारी हो जाता है उसकी जुबान खुद ही मन्द पड जाती है।*"[22]

वहीद आयशा से कहता है कि कल अगर मैं जिन्दा रहूँगा तो तुम्हे अपने साथ ले जाऊँगा। आयशा भी किसी बूढे से शादी करना नहीं चाहती, वह जानती थी कि पैसों के लालच में उसका पिता बूढें के साथ उसका निखा कर देगा। वह तो मन ही मन यही सोचती रहती थी कि वह जिन्दा रहेंगी तो वहीद के साथ अगर वह मरजाएगी तो भी वहीद के साथ। उन दिनों गूजरों पर हमले होते थे। एक जगह से दूसरी जगह पर जा रहे गूजरों पर वार किया जाता था उनके जनवरों को लूट लिया जाता था और उनको जान से मार दिया जाता था। वहीद ने अपना वादा पूरा नहीं कर पाया था क्यों कि उसी रात गूजरों पर वार किया जाता है, कुल नौ गूजर मारे दिए जाते हैं। उनमें वहीद और आयशा भी थे।

उपन्यास का हर पन्ना पढते हुए बहुत अच्छा लगता है, कही रूकावट ही नहीं लगती। इस उपन्यास में तो गूजरों और पालसी लोगों का चित्रण किया गया है। बेवजह जब करणू पर केस दर्ज किया जाता है। करणू को ही खुद पता नहीं था कि लोग उस पर क्यों इल्जाम लगा रहे हैं,क्या इल्जाम लगा है। उस बात का पता करने के लिए उसको तो दो तीन दिन चल कर टिहरी जाना पडता है वहाँ जाने के बाद करणू को पता चलता है कि उस पर ऐसा केस दर्ज किया गया है कि उसके वारे में वह कुछ जानता नहीं था। अनपढ लोगों का वकील लोग किस तरह लूट पाट करते हैं इसको हम इस उपम्यास में देख सकते हैं। करणू जैसे बहुत सारे लोग होते है, उन पर केस दर्ज किया जाता है, पर उसके बारे में वे लोग नहीं जानते।

चपरासी जब करणू के घर आता है और कहता कि करणू को गिरफतार करना है वह कहाँ है, करणू के पिता कहते है कि वह बुग्यालों पर है आने में तीन दिन लगेगा। चपरासी को मनाने पर भी मानता नहीं। पैसे देने पर वह मान जाता है।

इस तरह गरीब लोगों का शोषण चपरासी से लेकर वकील तक करते रहते हैं। इस चक्कर में उनके अपना घर, जमीन, जंगल तक खोना पडता है। साल भर अदालत में केस चलने पर इन लोगों को इतना भी पता नहीं चलता कि वे लोग केस जीतेंगे या हारेंगे जो वकील कहता है,उनको अदालत में वही कहना पडता है। यहाँ तक कि उस केस के बारे में वे खुद नहीं जानते। करणू के साथ भी ऐसी ना इनसाफी होती है। एक साल वह टिहरी अदालत का चक्कर काटते हुए पैसा लगाने पर भी वह केस जीत नहीं पाता। आखिर करणू यह फैसला लेता कि अब तक घर वाले बहुत सारा पैसा खर्च किया और अपना जंगल, जमीन खो गये और आगे इन्हें तकलीफ देने से अच्छा कि वह जेल चले जाए। करणू आखिर एक साल के लिए जेल चला जाता है। नौटियाल जी इन लोगों का दुख-दर्द और उनके रिश्तों को पूर्ण रूप से हमारे सामने ले आते हैं।

करणू के पिता नत्यू ने करणू को टिहरी भेजने के लिए पाँच सौ रूपए देवी प्रसाद से खर्च के लिए मांगता है। बिक्रीनामा लिखकर उसने नत्यू का अंगूठे का छाप लेने के बाद देवी प्रसाद साढे तीन सौ रूपए देता है। बाकी सूद के लिए काटता है।

नत्यू जैसे बहुत सारे लोग है गाँव में जो अपनों के लिए अपना पैसा खो बैठे। चपरासी से लेकर वकील तक कुछ न कुछ वजह बता के इनसे पैसा लूटते है, जेल जाने के डर से उनकी मुँह मांगे रकम देनी पडती।

इस उपन्यास में करणू की पत्नी करणू का ही दोस्त धनीसिंह के साथ भाग जाती है और उसी के घर में रहने लगती है। जब करणू धनीसिंह के घर में अपने पत्नी को देखता है वह कुछ कहता नहीं। उसको वही बाते याद आने लगते कि करणू हमेशा धनीसिंह से कहता कि तेरे माँ को कब तक कष्ट देगा, जल्दी से शादी करले, कुंआरी लडकी मतला, कही से कोई छुटैल उठा ला या बाप के घर पर बैठी किसी विधवा को पटाले। बस वह यही सोचता रहा कि उसके घर में उसके पत्नी को क्या कमी लगी कि वह घर छोड के धनीसिंह जैसे दुष्ट के पास आगई। एक तरफ करणू की पत्नी है जो घर से भाग आती है, दूसरी तरफ सदरू

जो करणू का भाई गांव से दूर बुग्यालों में रहता है,उसके पास खूब सूरत मुसलमान लडकी सकीना पास आने पर भी उस रात वह सकीना से यही कहता कि मैं अपनी पत्नी से बहुत प्यार करता हूँ।

जिसकी शादी होकर दस साल होने पर भी बच्चे नहीं होते।वह अपने पति जीतू से बहुत प्यार करती है।वह आखिर अपने मन में खोच लेती है कि वह जोल के पास जाएगी और उससे कहेगी कि उसे एक बच्चा चाहिए वह अपने पति से वहुत प्यार करती है। जोल अपने घर में अकेला ही रहता है।जोल किसला को समझाता है और उसको अपने पति के पास भेज देता है।

नौटियाल जी जोल के चरित्र को एकदम साफ दिखाते है।उसके पास आने वाली औरत को समझा कर अपने पति के पास भेजने में जोल सफल हो जाता है।जोल का सच्चरित्र का चित्रण नौटियाल जी बहुत ही संयामिन ढंग से किये है।इस उपन्यास में हर पात्र अपना अपना दायित्व निभाता है।उपन्यास को पढते हुए ऐसा नहीं लगता कि हम कुछ किताब पढ रहे हैं,ऐसा लगता कि हम उन बुग्यालों में, उस पहाडों पर, झरनों के पास उन गूजरों और पालसी लोगों के साथ रह रहे हैं, उनके दर्द को हम भी महसूस कर रहे हैं।

इस उपन्यास में आजादी के पश्चात्य गूजरों की स्थिति का वर्णन किया गया। चंदगाँव,और रैमासी का वर्णन तो था ही। रामदत्त हाकिमान तो करणू को फसता है, जिसकी वजह से करणू सालों तक हजारों रूपया उडादिया। फिर भी वह केस जीत नहीं पाया। आखिर वह फैसला लेकर जेल चला आता है। उसी जेल में रामदत्त को भी आना पडता है। हुकम जो करणू का चचेरा भाई है उसको भी जेल आना पडता है।वहाँ करणू और हुकम मिलते हैं। जब हुकम को पता चलता है कि रामदत्त उसी जेल में आया है,तो वह ऐसा बदला लेता है कि रामदत्त को आखिर डिप्टी के पास जाकर कहना पडता है कि उसे किसी दूसरी जेल में भेज दे। वहाँ का डिप्टी उसकी बात नहीं मानता है।वह जानता था कि करणू को बेवजह फसाया गया है। हुकम और करणू गाँव के मामूली आदमियों के समान रहना रामदत्त को मुश्किल रहता है। भोले भाले किसानों को सडी-गली खाद-बीज बँटवाने वाला, सरकारी कागजात पर जरूरतमन्द, बेबस किसानों के जाली ठप्पे लगवाने और दस्तखत करवाने वाला रामदत्त आज बेबस होकर जेल के अन्दर आया है। रामदत्त को एहसास होता है कि उसके पापों का फल उसको इस जनम में ही भोगने को मिलता है।

3.2.3. झुण्ड से बिछुडा

हिन्दी के प्रतिष्ठित कथाकार विद्यासागर नौटियाल अपने कथा लेखन में बार-बार पहाड पर ही लौटते हैं, लेकिन अपने कथा-विन्यास में समकालीन किसी दूसरे पहाड़ी लेखक की तरह नहीं।उनके कथा लेखन की एक बड़ी विशेषता यह है कि पहाड़ के भीतर वे किसी देशी या विदेशी पर्यटक की तरह प्रवेश नहीं करते बल्कि पहाड़ी जीवन के संघर्ष को,उसकी उदास जिजीविषा को,तमाम प्रचलित मिथकों, किंवदंतियों, रूढ़ियों, अंधविश्वासों को बेनकाब करते हुए वहाँ से हरबार एक नई कथा शैली और प्रविधि के साथ चुपचाप पहाड़ और पहाडी लोगों के संघर्ष को उनके अकेलेपन और एकांत में जीवंतता के साथ मार्मिकता से उठाते हैं।

प्रस्तुत उपन्यास के आरंभ में एक छोटी सी टिप्पणी दी गई है जिसमें बघ्वा के प्रचलित अर्थ के साथ यह भी संकेत दिया गया है।लोग ऐसे किस्से भी सुनाते हैं कि कई बार ऐसा भी हुआ कि बघ्वा प्रभावित आदमी बाघ की और खींचता चला गया।मस्त चाल से चल रहे बाघ के पीछे-पीछे उसे खुद ही दौड लगाते देखा गया।यदि इसे उपन्यास का रूपक मानलें तो इसी के सहारे कहानी आगे बढ़ती है। उपन्यास का केंद्रीय चरित्र शतरू है जिसके पिता तोपची थे और जिन के पास एक साइकिल थी। चूँकि शतरू के जन्म के बाद ही उसके पिता की मृत्यु हो गई इसलिए उसकी माँ ने इसका नाम शत्रु रखा जो घिस कर शतरू बन गया। उसकी माँ तो शकती को दुश्मन बुलाया करती। गाँव वाले कभी शतरु कभी दुश्मन कभी दुश्मन शतरू बुलालेते। शतरू को पशु मनोविज्ञान की भरपूर जानकारी है। उसके अपने कायदे हैं जिस पर बाकायदा वह अमल करती है। इसलिए कभी वह डार (झुण्ड) पर गोली नहीं चलाता।

इससे बंदूक के रूठ जाने का खतरा है। उसका पूरा जीवन दर्शन है। लेकिन पहाड़ी गाँव के लोगों के संबन्धो का अपना इतिहास भूगोल ही नहीं राजनीति भी है।

उपन्यास में शान्ति की गाय का मारा जाना केवल एक पशू की मौत न होकर पहाड़ की कठिन जिन्दगी पर मृत्यु की काली छाया का आ जाना है। नौटियाल जी पहाड़ी जन-जीवन की सांस्कृतिक झलक के बीच से बाघ के आतंक को उठाते हैं। यहाँ बध्वा शब्द आतंक का पर्याय है पहाडी जीवन के लिए जिसका अर्थ बहुत व्यापक है। बाघ का आतंक सरकारी तन्त्र और सेठ के आतंक से भी बड़ा महसूस होता है।

मरगदना-यानी एक भरा हुआ नाला। इस नाम का उच्चारण सुनकर नाम सुननेवाला ऐसा ही समझेगा। लेकिन इस मृतक लग रहेनाम से किसी को कोई मुग़ालता नहीं होना चाहिए।वैसा एक दम मरा हुआ नहीं है,मारक है।मारने वाला। अपार शक्ति का धारक, परम शक्ति शाली। सभी प्रकार की शक्तियों का श्रोत है मरगदना। तमाम हाकिमान और कर्मचारियों, आर-पार के गाँव के निवासियों की शक्तियों का उद्‌गम मरगदना से होता है।उसे देख कर मिलती है संबन्धित लोगों की शक्ति। इस पार या उस पार उसे देख कर उठती हैं, मन में, कुछ कर बैठने की हिलोरें। मरगदना सिर्फ जमीन पर नहीं बहता उसकी विभिन्न मौसमी स्थितियों से परिचित अनगिनत लोगों के दिमागों में, सरकारी कागजात में, आलमारियों में बन्द कर दिये गये नक्सों पर भी उसका पानी लगातार बहता रहता है। मरगदना बताता है कौन इस ओर का हाकिम, कौन उस ओर का। किस तरह के हकूक हासिल हैं। कोई संशय की बात बाकी नहीं रह जाती। कोई तकरार हो ही नहीं सकती। मरगदना बीच में वह रहा है तो जंगलों की सीमाएँ धरती पर मज़बूरी से गड़ी हुई हैं। सीमा को निर्धारित करने के लिए वहाँ अलग से कोई सीमा-पत्थर लगाने की कभी जरूरत नहीं पड़ती।

सरकार काग़ाज़ात में हर गाँव के वन सम्बन्धी हकूग, आजादी से भी पहले से, राजाओं के जमाने से ही पूर्व निर्धारित है। सरकारी काग़जात में मरगदना के इस ओर और मरगदना के उस ओर रहने वालों के जंगल आपस में बाकायदा बँटे हुए है। उनके घास के रकबे, काश्त की लकड़ी के क्षेत्र, पठालखानें, माटाखानें सब कुछ आलग-अलग दर्ज हैं।किस गाँव के लोग कहाँ-कहाँ तक, लम्बाई चौड़ाई में कहाँ से कहाँ तक घास लकडी काटने, अपने मवेशियों से चरान-युगान करवाने के कानूनी तौर पर हकदार है, किस वन से सम्बन्धित अधिकारों से लैस है-इस बात को जानने के लिए किसी और को पूछ लेने की कोई जरूरत नहीं पड़ती। फैले हुए नक्शे पर बहता हुआ मरगदना सब कुछ खुद ही खलासा कर देता है।

बाघ ने गाँव के अन्दर खेत के किनारे पर चर रही एक गाय को दिन के उजाले के कायम रहते ही मार गिराया था। शाम ढ़ल रही थी, लेकिन अभी रात नहीं हुई थी। अकेली गाय, जो गाँव के अन्य पशुओं के साथ वन में नहीं भेजी जाती थी। वन में रहने वाले बाघ के डर के मारे शान्ति बुढ़िया उसे कभी पशुओं के झुण्ड में शामिल नहीं करती थी। पूरा पारवा गाँव उसे पहचानता था। शान्ति बुढ़िया की भोली गाय। नाटे कदकी एक छोटी सी, काले रंग की गाय। ऊँचाई में

बिलकुल शान्ति के ही बराबर। उस दिन सीधे गाँव के अन्दर चला आया था वह बाघ उस दिन अपने भोजन की तलाश में वह जंगल से बाहर निकल कर इन्सानी बस्ती की ओर चला आया था। किसी अकेले में पाये जा सकने वाले शिकार की तलाश में। पता नहीं सामने के पहाड़ से,कितनी दूर से,कितनी देर से वह उस गाय को देखता रहा होगा। नज़रें उसी गाय पर गड़ा दी होंगी उसने।

उस गाय के साथ और कोई नहीं। अकेली मजे में घास चर रही है। बहुतदूर से उसे देखलिया था बाघ ने। उसकी नजरों को कोई धोखा नहीं हो सकता। गाय एक दम अकेली थी। उस दूरी से उस पर लगातार चौकसी रखता हुआ वह अकेली गाय की ओर बढ़ चला। निश्चिन्त हो कर घास चर रही गाय को उसने वहाँ होने के आभास न हो सके, ऐसी शान्त शब्द विहीन चाल।उस वक़्त वह चल नहीं रहा था, बहुत आहिस्ता आहिस्ता आगे की ओर सरकता जा रहा था। खेत के किनारे एक पेड़ के पीछे उसने अपने लम्बे तन को छुपा लिया और फिर ललचाई नजरों से गाय को ताकने लगा। ऐसा सुन्दर ऐसा रसीला, ऐसा शक्तिदायी,इतना स्वादिष्ट भोजन! कई दिनों का काम चल जाएगा। कोई कमी न रहे। कोई बेशी भी न हो जाय। तीसरी छलांग सही ठिकाने पर। अंतिम छलांग। गाय के तन के ऊपर। ज़रा सा भी आगे नहीं रत्ती भर पीछे नहीं।

इतनी बड़ी दुनिया में शान्ति का उस गाय के अलावा और अब कोई सगा बाकी नहीं बचा था। शान्ति अपने गाय को गोदान करना चाहती थी। पंडित जी से बात भी करलिया उसने। गरीबी की वजह से वह कुछ दिन और रोकने की बात कर रही थ। अब तो उस गाय भोली ही न रही तो गोदान क्या करे। बाघ ने शान्ति की सारी आशाओं पर पानी फेर दिया। भोली तो इस दुनिया से चली गई।

दुश्मन का बाप गोबरसिंह, जिसे लोग जग्गू कहते थे,बेटे के जन्म लेते ही मर गया था। बिरादरी को पातक और सूतक एक साथ मनाने पड़े थे। पुत्र के जन्म लेते ही पति के अचानक चले जाने के बाद प्रसूत विधवा अपने होश में नहीं थी।जन्म से ही बाप की मौत को आमंत्रित कर देने वाले नन्हें बेटे को वह दुश्मन कहकर पुकारने लगी थी और उसका वही नाम चल निकला। ताज्जुब की बात यह कि उस नाम का जो दूसरा पर्याय होता है शत्रृ वह भी पूरे गाँव की जुबान पर चढ़ गया। कुछ लोग उसे दुश्मन कहते है कई शतरू कहकर पुकारते है।कुछ ऐसे भी है जो दुश्मन शतरु करते हैं।

दुश्मन जब छोटा था। गाँव वालों से अपने पिता के बारे में कहे बातों को सुनता रहता था, जग्गू तोपची था। बूढ़ा शिवसिंह एक बार बालक दुश्मन से अपने पिता जग्गू किस तरह भालू से अपनी छोटी बहू को बचाया और भालू के साथ किस तरह लडा सारे किस्से सुनाया था। दुश्मन यह सारी बातें ध्यान से सुनता था,आखिर उसमे भी तोपची का खून बह रहा है। दुश्मन की माँ नहीं चाहती थी कि दुश्मन तोपची बने। लेकिन दुश्मन तोपचा बन ही गया।

अपने बाप के किस्से सुनते हुए वह कल्पना करने लगता कि उसने खुद भी बन्दूक हाथ में थाम ली है और बाघ अपनी मारी हुई मड़ी पर आ गया है और अब शतरू उस बाग पर निशाना साधने लगा है। उसने घोड़ा दबा दिया है। उसकी बन्दूक से निकली गोली ने बाघ को वहीं पर, मड़ी के पास ही चित्त कर दिया है। दोनों मारे गये हैं। शिकारी और शिकार, अब बे दोनों एक साथ लेटे हैं। चिर निद्रा में मग्न होगए हैं।सगे भाइयों की तरह। एक दम आस पास। रात में सोतेहुए भी दुश्मन ऐसी ही कल्पनाओं में खो देता। उसे ऐसे ही सपने आने लगते, उसकेलोग उसे बेहद प्यार और असीम आदर की दृष्टि से देखने लगेहैं। अपने लोगो के बीच उसकी खुद भ वैसी ही छवि, अपने पिता की जैसी छवि उभरने लगी है। दुश्मन कोदेख कर लोगों के मन में उसके पिता की याद ताजा होने लगी है। शहर में पलटन की भर्ती खुली है। लेकिन पल्टन में भर्ती होने की बात,हरी वर्दी पहनने की बात, अपनी एड़ियाँ बजाते हुए, अपनी आजादी को खत्म कर, बदन को बे वजह तान कर, हाकिमान को सलामी बजातेरहने की बात शतरू को लुभावनी नहीं लगती थी। वह हमेशा अपनी मर्जी के मुताबिक रहने का स्व्वाइशगार रहा है।

एक दिन एस. एस. बी. के जवान बस में आते हैं और किसी कम्युनिष्ट का तलाशी लेने लगते हैं। वे सच मुच किसी को पकडने, गिरफ्तार करने नहीं आये थे। असल में वे अपने प्रशिक्षण के दौरान कम्युनिस्ट-कम्युनिस्ट खेल रहे थे। जवानें के बीच एक जवान कमयुनिस्ट बन गया था। और वह छुप गयाता। बस पर यात्रियों के बीच, भोली-भाल जनता केबीच छुप गया था।इस खोल की खास बात यह थी कि जो कम्यनिष्ट बना था वह गिड़गिड़ा कर कहता जा रहा था कि वह कम्युनिष्ट नीहीं है। उस खेल के द्वारा बस के अन्दर बैठे, उनके आतंक के साए में आ गये समस्त श्रोताओं के मन में यह भाव भरा जा रहा था कि कम्युनिष्ट होना कोई बहुत बुरी बात होती है।देश द्रोही की बात।

पर्वतीय प्रद्श के सीमान्त क्षेत्रों में कम्युनिष्ट विचारधारा की गहराई में गये बगैर कम्युनिस्टों का उन्मूलन नहीं किया जा सकता।आम जनता केबीच कम्युनिष्टों के बढ़ते प्रभाव को रोकना, उसका उन्मूलन करना उनका मुख्य लक्ष्य है। पिछले कुछ सम. सेइस सीमावर्ती इलाके में कम्युनिस्ट विचार धारा बहुत तेजी से आम जनताके बीच फैलने लगी है। कम्युनिष्टों द्वारा लगाये जाने वाले नारेबहुत लोक प्रिय होने लगे हैं। वे नारे गाँव - गाँव के बच्चों और नौजवानों की जुबान पर बैठ गये हैं। नौटियाल जी ने कम्युनिस्टों का जिक्र एक ही जगह किया है फिर भी पूरे उपन्यास में यह अपना जगह को कायम रखता है, बात समझ में आजाती है।

गाय के मार दिये जाने के कुछ ही देर बाद शाम का धुंधल का रात में बदल गया था। आकाश मेंऔर गाँव के वातावरण में घना अंधकार अपनी काली चादर फैल चुका था, और उसके साथ - शात गाँव के श्रीमान लोगों के दिलों में भी भीतर -बाहर फैले अंधकार में डूबने लगे थे और दिनों की तरह रात के मौके पर शिल - खिल जाने वालीउनकेअन्दर की हँसी - खुसी गायब हो चुकीथी। उन्हें नहीं सेभी आशा की कोई किरणआती नहीं दिखाई देरही थी। किसी भी ओर से नहीं।

पूरे गाँव में दुश्मन के अलावा और कोई नहीं था बाघ को मारने वाला। व्कराल वाघों का सामनेवाले शतरू पर अपनी जीन्दगी में कभी स तरह का हमला नहं हुआ था। किसी विकराल बाघों का सामना करने वाले शतरू पर अपनी जिन्दगी में कभी स तरह का हमला नहीं हुआ था। किसी विकराल बाघों का सामना करने वाले शतरू पर अपनी जिन्दगी में कभी स तरह का हमला नहं हुआ था। किसी विकराल, आदमखोर बाघ के हमले से भी ज्यादा जबर्दस्त हमलागोली की मार से भीज्यादा तेज मार, ऐसी पटतनी कि वह जमीन से उठे तक न सके। उसे पटवारी के पास अपनी बन्दूक जमा करनी है। उस हुक्म की फिलहाल गाँव के अंदर कोई अपील नहीं हो सकती थी। कहीं कोई निगरानी नहीं हो सकती थी वह सेठ श्रीधर प्रसाद से पाफी माँगले था। राजीनामा करलेतब भीकुछ नहीं हो सकता। अदालत में उसे जानाही पड़ेगा और वहाँ जाने पर पता नहीं क्या होता है। पटवारी केनुह से उस आदेश को सुन लेने के बाद और उसके मतलब का कसैला निचोड़ निगल लेने के बाद अपना मुँह लटकाए वह फौरन अपने घर की ओर चल दिया।

एक तोपची ही जानता है कि बन्दूक से दूर रहने से कितना दुःख लगता है। बन्दूक तो तोपची का हम सफर है। दुश्मन की हालात को नौटियाल जी ने

मार्मिक ढंग से वर्णन किया।दुश्मन नेबहुत उदास मन सेबन्दूक दीवार के ऊपर रख कर पटवारी के हवाले कर दी। यह बात उसे अच्छी तरह उसके समझ में आगई थी कि बन्दूक को अपने पास रख सकनेके लिए सिर्फ लाइसेंस नहीं चाहिए। श्रीधरप्रसाद की मंजूरी भी चाहिए। श्रीधर प्रसाद अपने चचेरे भाई के मौत होने पर जश्न मनाता है। पूरा गाँव भीधर प्रसाद के हरकतों सेनाराज था, पर किसी को कुछ कहने की हिम्मत न थी। श्रीधर प्रसाद या उसके परिवार का कोई सदस्य शव यात्रा में शामिल नहीं हआ था।

दुश्मन इन तमाम बातों पर विचार करने लगा था और उसे सेठ की बातें बहुत बुरी तरह अखरने लगी थी। श्रीधर प्रसाद की हरकतों से उसे अपने मन में बेहद अफसोस होने लगा था।अफसोस भी और घृणा भी। ऐश्वर्य आदमी को कितना अंधा बना सकता है? सेठ के कुल में शोक में ऐसे मौके पर उसके हैवानी मनोरंजन केलिए शतरू ने जंगली जानवर का शिकार करने से साफ मना किया।

शतरू के व्यवहार से श्रीधर प्रसाद ने अपने को बहुत आहत महसूस किया था। उसी दिन से (उसी रात से) वह दुश्मन को अपना व्यक्तिगत दुश्मन मानने लगा। वह शतरू को बेबस कर देना चाहता था। ऐसा बेबस कि वह जंगल जा ही न पाये। जंगल जाने का काबिल ही न रहे। वह किसी तरह शतरू की बन्दूक को जब्त करवाने की धुन में रहता था और आखिर श्रीधर प्रसाद शतरू की बन्दूक जब्त करवाने में कामयाब हो गया। बाघ जहाँ पर शान्ति बुढ़िया की गाय को मार दिया बह जगह श्रीधर प्रसाद के घर के पास ही था। वह बेहद ड़र गया था।वह जानता था कि अकेला दुश्मन ही तो है पूरे गाँव में जो बाघ का सामना कर सके, अब उसने दुश्मन का बन्दूक जब्द करवाया, अब क्या करना है बस वह सोच में पड गया। पूरीरात श्रीधर प्रसाद सो नहीं पाया। आखिर उसने पटवारी सेर मिलकर दुश्मन के घर जा कर दुश्मन से बात करता है और दुश्मन का बन्दूक उसको वापस मिल जाता है।

सुबेदार साहव को साथ में लेकर निकला था। दुश्मन बाघ को मारने के लिए। दुश्मन बाघ को मारने के लिए। दुश्मन को अपनी क्षमता पर कोई शंका नहीं थी। अब तक वह अपनी जिन्दगी में वह तीन बाघों को मार चुका था।

"गोली लपकते हुए बाघ के सर पर लगी है। सर पर लगी अकेली गोली ने बाघ को जमीन पर लुढ़का दिया है।गोली से भी ज्यादा तेजी से शतरू वहाँ से

पीछे की और घूमा। ज़मीन पर लोट रहे बाघ के बदन पर ठॉय-ठॉय दो फायर और तब रायफल को, उस पर लगे फीते के सहारे, उसने कन्धे पर लटका दिया। अपनी बन्दूक हाथ में थामे किसी बन्दर की तरह लपकता हुआ मयान के ऊपर जा पहुँचा।"[23]

हिम्मत सिंह बेहोश होगया था। दुश्मन ने बाघ को मार दिया। उस दिन के बाद शतरू जब भी शिकार पर जाता है, अकेला जाता है और किसी को अपने सात नहीं ले जाता।

3.2.4.यमुना के बागी बेटे

नौटियाल जी अपने लेखन में अब तक (कहानी,उपन्यास या फिर अपने संस्मरणों में) टिहरी - गढ़वाल को अनेक रूपों, अनेक छवियों, अनेक बिम्बों में प्रस्तुत किया है। यही कारण है कि दूर का पहाड़ बिलकुल खिसक कर पाठकों के सामने साक्षात खड़ा हो जाता है और जिस तरह टिहरी बाँध के कारण आज पूरा शहर डूब गया, उसी तरह पहाड़ के दुख से पाठक।

यमुना के बागी बेटे का मूल स्त्रोत है 1930 के आस-पास टिहरी गढ़वाल रियासत में जनविद्रोह की आग की घटनाएँ। उपन्यास छोटा है लेकिन इसका फलक बड़ा है। भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के इतिहास का यह दुःखद अध्याय-तिलागी काँड-ओझल ही रहजाता,यदि नौटियाल इस ओर हमारा ध्यान आकृष्ट नहीं करते पुराख्यस से उठते इस आख्यान का वृतांत यदि मार्मिक है तो इसलिए भी कि यह एक ऐसी सामंती क्रूरता की कहानी है जिस के नीचे दबा पहाड़ का जन-जीवन कराह रहा था। इतिहास की घटनाओं को कोई लेखक अपनी कल्पना शक्ति से कितना रोमांचक और दिलचस्प बना सकता है इसका अप्रतिम उदाहरण है यह उपन्यास।

यमुना के बागी बेटें पहले शब्द से आखरी शब्द तक एक बेचैनी से लडाता हुआ उपन्यास है,पर यह लड़ाई महज पचहत्तर बरस पहले टिहरी गढ़वाल रियासत के खिलाफ लड़ी गई जनता या *मुल्क* की नहीं, एक ऐसी लड़ाई है जिसकी जड़े एक और पौराणिक काल की शांतनू कथा और ऋषि पत्नी रेणुका के मानसिक द्वन्द् तक जाती है,तो दूसरी ओर समूचे आज को अपनी जद में लेती जान पड़ती है,जहाँ एक बड़ा *युध्द* हर घडी हमारी आँखो के सामने हो रहा है। *यमुना के बागी बेटे* सन् 1930 ई के आस पास घटित कुछ ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है, जिन को इतिहास की पुस्तकों ने कभी दर्ज ही नहीं किया।

भारत में अंग्रेजी राज के दौरान मध्य हिमालय के काफी बड़े भूभाग में फैली एक देशी रियासत - टिहरी गढ़वाल। भागीरथी और यमुना दोनों नदियों का उद्‌गम-स्थल। पुराणों के अनुसार देव-भूमि। वहाँ के शासक ने दरबारियों, चाटुकारों के माध्यम से अपने को बोलांदा बदरी (बोलता हुआ बदरी नाथ) घोषित करवा दिया था। उस देव-भूमि के एक भाग यमुना घाटी (खाई) में रहने वाले साधारण मनुष्यों-रवाल्टों-को पशुवत, नारकीय जीवन बिताना पड़ता था।जल,जंगल और जमीन पर मालकाना हक दरबार का होता था। लोग दरबारियों की इजाजत के बगैर उन जंगलों में प्रवेश तक नहीं कर सकते थे। ऊँचे, हिम मंडित शिखरों व घाटियों के निवासी जंगलों, चरागाहों में सदियो से पशुपालन कर किसी तरह अपना गुजारा करते आते थे।वे न्यूनतम आवश्यकताओं की अपूर्ति हो जाने पर संतुष्ट हो जाने वाले लोग थे।बहुत अच्छे जीवन की उनकी कल्पना की उड़ान पहाडों जंगलों नदियों के घेरे से बाहर-घाटी से चोरी तक की परिधि से बाहर नहीं जा सकती थी। उनके सपने भी इसी तरह के होते थे कि वे अपने पशुधन को लेकर मुक्ती(ढेरसारी)पत्तियों से लदे किसी घने जंगल में या कहीं हरे-भरे, लंबे चौड़े चरागाह में बेरोकटोक घूम रहे हैं।उससे ज्यादा-अपने जंगलों और चारगाहों में स्वच्छन्द होकर घूमते रहने से ज्यादा वे रवांल्टे और किसी चीज की कामना या याचना नहीं कर सकते थे।

उपन्यास दो स्तरों पर चलता है।एक तरफ टिहरी गढ़वाल स्टेट फोर्सेज के सेनापति सरदार सुन्दर सिंह को पंडित भुवन चंद्र जोशी शानतनू से लेकर महाभारत की कथा सुनाते हैं, जिसका एक हिस्सा यमुना घाटी में समाहित होते जान पड़ता है। दूसरी ओर टिहरी रियासत और रवाल्टों को द्वन्द्व है।राजा नरेंद्रशाह से अधिक रियासत के दिवान राय बहादूर चक्रधर जुयाल और फारेस्ट सेटलमेंट आफिसर पद्‌मदत्त रतूडी का नाम सुनते ही रवाई जौनपुर के वनवासियों में उत्तेजना फैलने लगती है। रवाई राजधानी नरेन्द्र नगर से सात-आठ दिन के पैदलरास्ते पर है।

सत्यवती जो भीष्म की विमाता थी वो अपनी कहानी सुनाती है,सत्यवती के कोख से जन्में दोनों बेटे मरगए।उनके असमय विदा हो जाने के बाद राजगद्दी का कोई वारिस बाकी नहीं बचा।अपनी विमाता के मुह से कही जा रही कहानी सुनने वाला भीष्म जो कम उम्र लगता था,लेकिन उससे बड़ा था।

सरदार सुंदरसिंह ने पिछली कई सालों से टिहरी में रहते हुए गढ़देश के इतिहास के बारे में और उसके विभाजन के उपरान्त टिहरी गढ़वाल रियासत के अस्तित्व में आने के बाद की कुछ मुख्य घटनाओं के बारे में काफी कुछ जानकारी हासिल करली थी।एक दिन उसने विद्वान, पंडित के सामने जिज्ञासा प्रकट करते हुए भड और गढ के बारे मे बताते हैं, उनमें अनेक प्रसंग मिते हैं, वर्तमान के साथ साथ बीच में महाभारत का प्रसंग भी आ जाता है।

जेठ महीने के शुरू होते-होते यमुना घाटी की चोटियों पर बस गांवो के निवासी अपनी भेड़ों को लेकर बुग्यलों में जान की तैयारी करने लगते है। ऊँचे डंडो पर बर्फ पिघलने के साथ यमुना और उसकी सहायक नदियों में पानी को मात्रा बढ़ने लगती है तब लगता है,जडों में असाई घरती अंगडाई लेने लगी है।टिहरी रियासत में यमुना और उसकी सहायक कमल नदी के बीच की घाटी में एक अजीब, अपनी ही किस्म की धरती फैली है। धान ती ऐसी बहुतायत में पैदावार मुल्क हिन्दुस्तान में और कहीं नहीं दिखाई दे सकती। अपने इस धान की उपज पर यहां के बाशिदें रवांल्टे गर्व करते आए है।

ऋषि मुनि उस युग में विशेषाधिकार-प्राप्त अति विशिष्ट व्यक्ति होते थे। उस तरह के कांड से समाज में किसी भी तरह की हलचल नहीं होती थी। जो युवती अपने को किसी मुनि की जबर्दस्ती से न बचा सके वह जीवन भर उसके बच्चे को ढोती फिरे। समाज में ऋषि मुनियों की किसी भी नारी के गर्भ से उत्पन्नत संतान को परम आदर की दृष्टि से देखा जाता था।

नरेन्द्र शाह नए युग का राजा है। पुराने राजाओ की तरह प्रजा से गलकंठ हो कर रहना उसे पसंद नहीं। उसके हिसाब से राजा और प्रजा के बीच पर्याप्त फासला कायम रहना चाहिए। नरेंद्रनगर में सभी भवन सीमेंट के बनाये गये। सीमेंट के साथ मिलाये जाने के लिए मिट्टी व बजरी उस पहाड़ पर ही मौजूद थी। नरेन्द्रशाह को अपने राज्य से बाहर निकलकर यूरोप और दीगर देशों में घूमते रहने का चख्का था। वह जिस देश में भी जाता, वहाँ के निर्माण कार्यों का बहुत बारीकी से, गंभीरता से अध्ययन, जानकारी करते रहने की उसकी प्रवृत्ति थि। वह नरेंद्रनगर में कुछ ऐसा करके दिखाना चाहता था जैसा कहीं और न दिखाई दे सके-कुछ निराला, जिस देख कर लोग दांतों-तले उंगली दबाने लगें। वह अपने को एक महान निर्माता, अभियंताओं का अभियंता साबित करना चाहता था।

नरेन्द्रनगर से दूसरी दिशा में, पश्चिम की ओर,नजर डालते ही विस्तृत दून घाटी। शिवालिक पर्वत माला। हिमालय के ऊंचे, अगम्य, गगन चुंबी पर्तों से भिन्न, बनाच्छिदित पहाड़ों की एक मनोरम श्रृंखला। लुभावने दृश्य। ऊंचे पहाड़े पर बसे हुए नरेंद्रनगर के राजमहल से दूनी घाटी के आकाश में डूबते हुए सूरज का लाल गोला यों दिखाई देता है जैसे वह किसी समुद्र में गिरने लगा हो। नरेन्द्रनगर और दून के बीच विस्तृत, नील आकाश में कही हलके,कहीं घने रूप में छितराए-छाये बादलों पर पड़ने वाले उसके बहुरंगी, बहुरूपी अक्स देखने वाला सपनें की दुनिया में उड़ने खो ने-सा लगता है। पूरे भारत में ऐसे बहुत कम स्थान होंगे जहां से सूर्यास्त के ऐसे विरल दृश्य दिखाई देते होंगे। धरती से ऊपर, अपने ऊँचे, गगनचुम्बी राजमहल में बैठे शासक की नजरें अपने राज्य के उस मायावी सूर्योदय देखने के बजाय वह सूर्यस्त देखने को लालायित रहता है। दुनिया पर हुकूमत करने वाले अंग्रेज के पूरी दुनिया को अनुशासन में रखने का राज यही है कि वे अपने को एक लौह अनुशासन में बांधे रखने की समता रखते हैं। अंग्रेज एक अजीब कौम है।

राजशाही के फरमानों का अंदाज इसी से लगाया जा सकता है कि राजा नरेंद्रशाह अपनी राजदानी को पुराने शहर टिहरी से नरेंद्र नगर ले आया है।वहां किसी को जिनी भवन बनाने की इजाजत नहीं है। राजधानी से ऋषिकेश तक मोटार रोड़ बनाई जानी है।उसकी खुदाई केलिए प्रत्येक गाँव के आदमियों को पंद्रह दिन का राशन साथ लेकर ऋषिकेश हाजिर होना है।

गवर्नर के स्वागत के लिए दूर-दूर इलाकों से लोगों को नरेंद्रनगर पहुँचने का हुक्म भेजा गया। सुदूर खाई से भी सैकडों लोगों को बुलाया गया।हुकूमत के नियम कानूनों के खिलाफ बगावत करते रहने वाले बुद्दू रवांलटें भी अपनी आँखों से देखले,महाराजा साहब ने कैसी चमचमाती आलीशान राजधानी बनाई है। गवर्नर साहब वाले जश्न को देखकर शायद उसकी मति कुछ ठीक हो जाए।

अब राजा को ऐसे लोगों की तलाश है जो प्रजा को ठीक तरह से दबाकर शासन को चुस्त -दुरूस्त हालत में रख सकें। इस खोज में चक्रधर जुलाय होम मेंबर बना दिए गए हैं।राजा को संतोष मिला कि उसके वन-नीतियों के खिलाफ बगावत पर तारू रावाल्टों को दबाने-कचलने के लिए योग्य आदमी की नियुक्ति कर दी गई है। अपने चिन्तन-मनन में चक्रधर जुयाल इस नतीजे पर पहुँचा है कि रियासत के पास वनों के रूप में बेश कीमती खजाना मौजूद है। लेकिन हमारे

शासन के अब तक के अधिकारी उस दौलत को कभी सही इस्तमाल नहीं कर पाये। रियासत की असली समस्या यही है। यही से चक्रधर जुयाल और पद्मदत्त रतूडी की अत्याचारी जोडी का उदय होता है। पद्मदत्त बता रहा है-हमारे पुराने हाकिमान लोग कहते हैं कि वनों की हरियाली हमारी प्रजा की खुश हाली है। पर यह बात चक्रधर जुयाल को पसंद नहीं आती। उसे हर हालत पर जंगलों से बनवासियों को बेदखल कर वनों से रियासत की आय बढ़ाती है। इसकेलिए पद्मदत्त रतूडी को वन बंदोवस्त अधिकारी के पद पर बैठा दिया है। असल में रवाल्टों जैसे वनवासियों को आसे किसी प्रकार के षडयंत्र की खबर नहीं है। उन्हें पूरी तरह विश्वास भी नहीं है कि उन्हे वनों से वाकई अलग कर दिया जाएगा। यह हाकिमों की क्रूरता और जनता के भोले पन का प्रतीक है।

अंग्रेज परस्त राजा नरेंद्रशाह की तमन्न थी कि राजधानी बसा लेने के बाद एक बार एक रूतबेदार अंग्रेज हारिम को अपने वैभव की झांकी दिखा ली जाए। असल में यह सुझाव चक्रधर जुयाल का था जिसे रियासत का दीवान बना दिया गया था। अंग्रेज गवर्नर के स्वागत के लिए लोगों को नरेंद्र नगर आने का हुक्म भेजा गया। रवाल्टो को भी बुलाया गया ता कि बुद्दु रवाल्टें भी अपनी आँखों से देख ले,महाराज साहब ने कैसी चमचमाती, आलीशान राजधानी बनाई है। गवर्नर साहब वाले जश्न को देखकर शायद उनकी मति कुछ ठीक हो जाए।

यह एक ऐसा प्रसंग है जो रेंगटे खड़े कर देता है।सात आठ दिन के पैदल रास्ते से आए रवाल्टे राजा की ऐसी छवी देखकर ही प्रसन्न है।सत्ता का मद अदने से कर्मचारी को भी ताकत का ऐसा अहसास कराता है कि वह जनता को जैसे चाहे वैसे हाँक सकता है। रवाल्टों को आदेश दे दिया जाता है कि सड़क से काफी दूर रहें। भूखे-प्यासे रावल्टें जब तक कुछ समझ पाते,वे घन घोर कर्षा की चपेट में आगए। खुले आस मान के नीचे वर्षा और ठंड में दो रवालटों की मौत हो जाती है।सत्ता के कारिन्दे कार्यक्रम समाप्त होने तक मृतकों को दाह-संस्कार के लिए ले जाने की सख्त मनाही कर देते हैं। यह राजशाही और जनता के संबन्धों का भी द्योतक है। पवाल्टों का आक्रोश सिवाय अपने भीतर की नाराजगी को उपने तक ही सीमित कर पाने के और कुछ नहीं कर पाता।

पद्मदत्त खाई जाकर कहता है कि उन्हें जंगल में घुसनेकी मना है।यह एक ऐसा आदेश है जो रवाल्टे के लिए जीवन-मरण का प्रश्न है।बहुत अनुरोध के बाद भी जब पद्मदत्त टस से मस नहीं हुआ तो रावल्टों को अपने भविष्य केबारे में

खुद ही निर्णय लेना था। चक्रधर के गुप्त चार बगावत की जोड़ खवरें लारहे थे उससे वह विचलित था।रवाल्टें अपने को मुल्क मानने लगे थे और रियासती सरकार को *दरबार* पर रवाल्टों के विद्रोह में एक निश्छलता है। वे दरबार को सम्मान देते हुए अपने जरूरतों और अधिकारों के लिए एक जुट हैं। दरबार विद्रोह को किसी भी कीमत पर कुचलना चाहता है। बात करने के बहाने पद्मदत्त चार रवाल्टों को गिरफ्तार कर टिहरी जेल ले जा रहा है।जैसे ही यह खबर रवाई पहँचती हहै, वहां एक उत्तेजना फैली जाती है वे एकत्रित होकर उन्हें छुड़ाने के लिए चल पडते है, वहाँ पद्मदत्त की गोलियों से जो कांड हुआ वह उसकी जिद और क्रूरता का द्योतक तो है ही, रवाल्टों के भोलेपन और घयल सरकारी कर्मचारि की सहायता करने की भली मनासिकत को भी बताता है। उनका आक्रोश उनकी एक जुटना को बढ़ाता है।

अपने गिरफतार साथियों को छुडा लाने में उन्हे अपने दो साथियों की पद्मदत्त की गोलियों से जान गांवानी पडी। यह एक ऐसी घटना थी जिसने सत्ता को बौखला दिया। सत्ता घटनाओं और तथ्यों को अपने हिसाब से सोचती है और सब किझ को अपने पक्ष में कर लेने की तरकीब सोचने लगती है। जब सत्ता सामंतवादी हो तो उसका चरित्र जनता के प्रति किसी भी तरह की सहानभूति का नहीं होता। सारी कवायद राजा था। दरबार के हित को ध्यान में रखकर की जाती है। राजा नरेंद्रशाह इंग्लैण्ड गए हुए हैं तो उनके प्रति निधि के रूप में दीवान चक्रधर जुयाल को सबकुछ दरबार के पक्ष और हित में करना है। उसमें मानवीय संवेदनाओं के लिए कोई जगह नहीं है।उसके सामने दरबार का फायदा ही सर्वोपरि है। इसलिए चक्रधर जुयाल और पद्मदत्त रतूड़ी विद्रोह के खिलाफ भयंकर तरीकों पर विचार करने लगे हैं। इस तरह चक्रधर जुयाल रवाल्टें पर अत्याचार करता रहता है।

चक्रधर जयाल पावल्टों के विरूध्द सेना को तैयार कर लेता है। उपन्यास का चरम भी यही है। रवाल्टों का फैसला है कि वन-संबन्धी नए कानूनों को नहीं माना जाएगा। वे तिलाडी के मैदान में एकत्रित हो कर विचार विमर्श कर रहे है। चक्रधर जुयाल उन निहत्य लोगों पर जलियांवाला बाग की तरह गोलियाँ चलवा देता है। बचे लोगों को सजा कर दी जाती है।जब उनसे माफी माँग ने के लिए कहा गया तो वे हँसने लगे।

1930 में घटी इस घटना को उपन्यास के रूप में लाना आसान काम नहीं था।इतिहास जो तथ्थों और घटनाओं का विवरण होता है, उसे उपन्यास की

रोचकता देने में विद्यासागर नौटियाल काफी मेहनत की है। एक अच्छे उपन्यासकार की सूझ-बूझ ही इसे संभव कर सकती है।

3.2.5. भीम अकेला

भीम अकेला एक आत्मकथात्मक यात्रा वृत्त का उपन्यास है।जिस में ऐतिहासिक पात्रो के माध्यम से वर्तमान स्थिति को हमारे सामने रखते है।जहाँ विद्यासागर नौटियाल का कथाकार अपने समय का जीवंत रिपोर्तज प्रस्तुत करते हुए ऐसी पत्रकारिता का अनुपम उदाहरण सामने रखते है जो स्वातंत्र्योत्तर भारत में साँसें तोड़ती नज़र आ रही है।

कथा के बीच कथा और समय की सत्य कथा का ऐसा जोड जो इधर के तीनों दशकों की किसी कृति में शायद ही देखने को मिला हो। यह एक एम.एल.ए का ज़िम्मेदार बयान है। जिसमें व्यवस्था की कलाई कदम-कदम पर खुलती है। दिखावटी विकास की सरकारी नीतियाँ कितनी खोखली है और सूरमा भरदारी ने मुख्यमंत्री को पत्र क्यों लिखा था। कैसी है वह जगह आज, जहाँ पाँडव अपने पापों का प्रायश्चित करने आए थे।

भीम अकेला उपन्यास पढ़ने के बाद हम अकेले नहीं रह सकते। क्योंकि तब हमारे साथ तेजसिंह, भीम की कथा, बुधसिंह का किस्सा, नौटियाल जी के बचपन के यादें, सूरमा भरदारी, रम्य प्रकृति के बीच का उदास जीवन, कॉमरेड सआदती बाबक, लोकरंग और गाँधी के सैनिक भी होंगे और सबसे ऊपर होगी वह दृष्टि जो व्यक्ति को समाज से जोड़ती है। इस कृति की विशेषता है कि यह कई विधाओं को जोड़ती है।

भीम अकेला उपन्यास को जब हम पड़ना शुरू करते हैं तो लगता है कि यात्रा अकेले नौटियाल जी नहीं कर रहे हैं, हम भी उनके साथ है। हम भी उस प्रकृति का रसास्वादन करने की कोशिश कर रहे हैं। हम भी उस जगह के हिस्सा है, हम वहाँ से लौटना नहीं चाहते। अगर ईमानदारी से कहें तो हमारे मन में वहाँ पहुँचने के बाद यह विचार आता है इन लोगों की कुछ भलाई करके यहाँ से वापस चलें। *भीम अकेला* का शुरुआत किया जाता है *सूरमा भरदारी* अमर शहीद श्री मोलूराम की पत्नी उत्तर प्रदेश के शिक्षा मंत्री को लिखी हुई पत्र से उस पत्र में इस तरह लिखा था।

"मेरे *पति स्व.मोलाराम जी टिहरी स्वतंत्रता संग्राम में शहीद हो गए थे। तत्कालीन सरकार ने मुझे नकद दो हज़ार रुपये आर्थिक अनुदान दिया था। मैंने वह धनराशि जूनियर हाईस्कूल कविलाख़ाल की रचापना में दान देदी। इसलिए मैं वर्तमान सरकार से विनम्र निवेदन करती हूँ कि श.इ. कॉलेज, कविलाख़ाल भरदार का नाम अमर शहीद श्री मोलूराम स्मारक शय इ. कॉलेज किया जाए और मेरी पेंशन बहाल की जाए।मेरी अवस्था बासठ वर्ष की है और मैं अंधीहूँ।" 21-4-1992,*

श्रीमती सूरमा देवी।"[24]

इस पत्र को पेश करने के बाद नौटियाल जी का भरदार यात्रा शुरू होता है। 1984 फरवरी 1 तारीख़ को नौटियाल जी यात्रा पर चले थे। यात्रा में नौटियाल जी के साथी अपने मित्र पट्टी भरदार आने का वादा किया था, पर वे जा नहीं पाए। नौटियाल जी को अकेले ही यात्रा पर चलना पड़ा। कलियासौड़ में नौटियाल जी को उतरना पड़ा। गाड़ी आगे बढ़ गई, नौटियाल जी कुशालसिंह की दुकान पर चाय पी लिया और उनसे रोटियाँ बनवाने के लिए कहा। पहले भी नौटियाल जी यहाँ पर आए थे। इसलिए कुशाल सिंह नौटियाल जी को देखते ही पहचान लिया। जब भोजन के लिए नौटियाल जी वहाँ रुके तो एक व्यक्ति अपना कथा सुनाता है और विनती करता है कि सरकारी बैंक मैनेजर का ट्रांसफर करवाने के लिए कहता है। नौटियाल जी को इस बात का भी पता चलता है कि वहाँ करीब दो किलोमीटिर से पानी लाया जाता था। वहाँ के लोग बहुत मुश्किल में थे। इस पानी के लिए सभी मैत्री, राजनेता, ऑफ़िसर वादा कर जाते हैं। पर योजना बनती नज़र नहीं आती। नौटियाल जी की स्थांरी भरदार यात्रा में प्रकृति वर्णन ख़ूब मिलता है। अलकनंदा नदी की ख़ूब वर्णन किया गया। "*अलकनंदा एक विशाल जलराशि की नदी है। भागीरथी से अधिक वेगवती। उसकी धारा से कतई आवाज़ नहीं निकलती कोई शोरगुल नहीं सुनाई देता। किसी भी प्रकार का कोई शब्द नहीं। लोक मानस की कल्पनाओं को विस्तार प्रदान करती यह बहू, हिमालय की घाटियों - वादियों में बेहद शान्त भाव से आगे बढ़ती जाती है। यौवन मद में चूर किसी गदराई सुंदरी की मानिंद नज़रें नीची किए चलती है।"*[25]

देव प्रयाग के लोग भगीरथी नदी को सास और अलकनंदा को बहू कहते हैं। देव प्रयाग में ही सास बहू का मिलन होता है। भागीरथी बड़बड़ाती रहती है।

धारी गाँव पहुँचते ही नौटियाल जी वहाँ की स्थिति को पहचान लिया। वहाँ का आबादी घटने लगा। खेत सारे खेत सूखए हुए नज़र आ रहे थे। मिलों तक

फैली हुई इस धरती को सिंचाई करने के लिए पानी की व्यवस्था चाहिए। पानी की व्यवस्था की जा सकती तो कितना कुछ बदल सकते थे यही सोचते हुए नौटियाल जी आगे बढ़े। थोडी दूर जाने पर मैदान में फसल ठीक था लेकिन उस फसल का अधिक भाग सुअर ने रौंद लिया। वहाँ पर कुछ भी फसल उगाया जाता है सुअरों की टोली आकर रौंद जाते है।

रास्ते में जो भी नौटियाल जी भी मिलता वह मदद की विनती करता था, स्कूल मास्टर जिस भवन के बाहर बच्चों को पाठ पढ़ाते है वह भवन बहुत पुराना है, गाँव वाले चाहते हैं कि नया भवन बनाए, शिक्षा मंत्री उसके लिए इनकार करदी। गाँव के लोग बहुत प्यार से बात करने लगे। कुछ लोग अपनी बच्चों को नौकरी में लगाने की बात की कुछ युवक यूनिवर्सिटी में पढ़ने की इच्छा ज़ाहिर की। गाँव का एक बुज़ुर्ग नौटियाल जी से कहता है -*" मैं राजनीतिक वालों से तंग आगया हूँ नौटियाल जी।सैकड़ों घूमते हैं। राजनीति वालों की मैं सूरत तक नहीं देखना चाहता। इसीलिए मैंने आपकी उपेक्षा की थी।"*[27]

जब कोई ईमानदार इन्सान राजनीति में जाता है, वहाँ की अविनीति को देखकर छटपटा जाता है। लोगों को भलाई करने का वादा करके विधायक बनते हैं, लेकिन वहाँ के स्थितियों से तिल मिला जाते हैं।

विधायक चुने जाने के बाद नौटियाल जी कभी वकालत नहीं किए थे। एक दिन नौटियाल जी अपने वकील दोस्त से मिलने गए। वहाँ एक आदमी विद्यासागर नौटियाल जी को बुत डाँटा। नौटियाल जी चुप रहे, अंत में उन्हों ने कहा कि मैने आप को चिट्ठी भेजा था, शायद आप को मिला नहीं। मित्र ने नौटियाल जी से कहा कि तुम क्यों चुप हो वह कोई तुम्हारा अफ़सर है क्या ?नौटियाल जी ने जवाब दिया -" *हाँ, विधायक घर - घर जाकर, जुड़े हाथों से वोटों की याचना करने वाला दयनीय जीव होता है। वोट मांगते वक्त जिसका मुँह देखने को जी नहीं करता, उसका पिछवाड़ा देखना पड़ता है। अपने मतदाताओं से वह सिर्फ़ निवेदन कर सकता है, कभी आदेश नहीं दे सकता।"*[28]

इससे नौटियाल जी का निराडंबरता का पता चलता है। वे जिस गाँव में भी ठहरते वहाँ की स्थितियों को समझने की कोशिश करते थे। नवजवानों जो नौकरी के बिना बेकार है, उन्हें देखकर कुछ करने का मन करता था, पानी के गागरें

लेकर मीलों दूर तक चलने वाली औरतों को देखकर मन तड़प उठता था, पानी के बिना सूख रहे खेतों को देखकर मन विचलित होता था।

नौटियाल जी स्यांरी पहुँच कर वहाँ के पोस्ट मास्टर से मिलने पर वहाँ की स्थिति को जानना चाहा। सौंरा वाली डाक लंबे रास्ते से घूमती हुई आती थी और उसमें काफी समय लगता था। नौटियाल जी भी सेरा के प्रधान जी को पत्र भेजा था, वह भी काफी समय के बाद पहुँचा।

इस यात्रा में एक तरफ़ नौटियाल जी प्रकृति का वर्णन करते हुए, वहाँ की लोगों की आत्मीयता का ज़िक्र करते हुए आगे बढ़ते है तो दूसरी तरफ़ उनकी मुलाक़ात शहीद से होता है। वह जीवित था और उसने अपनी पैंतीस साल पुरानी खोई स्मृतियों को याद करता है। तेजसिंह की बयान नौटियाल जी अपनी डायरी में लिखने लगे। कम्युनिष्ट नेता देवीदत्त तिवाड़ी, नगेंद्र सकलानी के बारे में भी बताया था।

तेजसिंह फूट-फूट कर रोने लगा। आर्थिक स्थिति ने उसे पस्त कर दिया है। स्वतंत्रता सेनानियों के नाम पर शोहदौं ने क्या-क्या फ़ायदे नहीं उठाए ? लेकिन तेजसिंह जैसा का तैसा है। आज़ाद हिंदुस्तान पर शासन कर रहे राजनेताओं ने उसके एक भी बेटे को नौकरी पर लगाना तक ज़रूरी नहीं समझा। उस समय नौटियाल को तेजसिंह भीम के जैसा दिखाई देता है। जो राक्षस का वध करके अकेला लौट आया।

इस यात्रा में हम को पंडित जी द्वारा कहे गये भीम कथा भी सुनने को मिलता है। इस कथा के अंतर्गत पांडव हिमालय के ओर चलना घाटी गाँव के पास एक राक्षस यात्रियों को आगे नहीं जाने देता, यात्रियों का दल तब तक आगे नहीं बढ़ सकता जब तक राक्षस को बलि के लिए एक आदमी सौंप दिया जाए। यह उस नियम है। बलवान राक्षस है पाँडव सोच में पड़ गए। उन लगों को कैलाश यात्रा करना था, इसलिए पांडव चारों ने तय किया कि भीम को राक्षस का हवाले कर देंगे। भीम से कुछ पूछा नहीं था।भीम को कुछ पता भी नहीं था।धारी गाँव पहुँचते ही पांडवों ने भीम को राक्षस के हवाले कर दिया। पांडवों को विश्वास था कि भीम उस राक्षस का सफ़ाया कर देगा। पांडव आगे बढ़े और धारी गाँव में डेरा डाला।

बारह दिन लौटने पर भी भीम नहीं लौटा तो युधिष्ठर ने कहा कि " *भीम की तेरहवीं करनी है जाओ गाँव से चावल मांगकर लाओं। पांडवों को अपने -*

अपने मन में यह बात ज़्यादा बुरी लग रही थी कि उन्होंने अकेले भीम को राक्षस के हवाले क्यों किया। उसके नियम के आगे हमने अपने सर क्यों झुका लिया? हम सब भाई राक्षस से मिलकर क्यों नहीं लड़ लिए ? हमारी अक्ल मारी गई ! पांडव ने बारम्बार आफसोस किया।"[28]

भीम के तेरहवीं के लिए अन्न का दाना तक नहीं मिला। वे वहाँ से लौटे। कुन्ती को बार बार भीम का याद आने लगा। धारी गाँव से एक जोगी उनका साथ ले लिया था। कुन्ती को बहुत प्यास लगी वह रोने लगी कि अगर भीम वहाँ होता तो उसके लिए पानी ला देता। जोगी ने पहाड़ के सीने में चिमटा मारा था। वहाँ से पानी का धार बहने लगा। उसी को उपण धारी बोलते है। एक दिन कुन्ती पहचान लिया कि भीम ही वह जोगी है। सभी भाई गले मिले। भीम ने राक्षस को हरा दिया। राक्षस को मार कर भीम उस स्थान पर पानी पैदा किया उस स्थान को भिऊंपाणी कहते हैं। भीम का पानी।

यह कथा सुनने पर नौटियाल जी के स्मृति में अनेक क्षेत्र फैलने लगे। भिऊँपाणी, पनसौड,उपणधारी। भीम को जोगी बनना सुन कर नौटियाल ज की स्मृति में अपने भाई की याद आई। *"सन् 1941 में मेरे बड़े भाई फौज में भर्ती होगए जर्मन-जापान के साथ अंग्रेज का लड़ाई लगी है। शास्त्र ने भारतीय सेना में अपना नाम लिखा लिया है। यह समाचार मैं अपने पिता के मुँह से सुन रहा हूँ। मेरे पिता किसी से ऐसा कह रहे हैं। शास्त्री की चिट्ठी आई है। उसने पढ़ाई छोड़ दी है। वह काशी में संस्कृत का अद्यायन कर रहा था। इस साल परीक्षा दे देता तो उसे आचार्य की डिग्री मिल जाती। फौज में बहुत से लोग भर्ती हो रहे हैं।"*[29]

नौटियाल जी के पिता को पत्र मिला कि शास्त्री जी फौज से भाग गए और रियासती पुलिस उनकी तलाश में है। एक दिन शास्त्री जोगी के वेश में नौटियाल जी के ताई यानी अपनी माँ के घर गए और भीख माँगा। ताई ने भीख देदिया। गाँव के सब लोगों ने ताई से कहा कि वह आपका बेटा है जब घर से भीख मांगलिया तो इसका मतलब है कि वह कभी वापस नहीं आएगा। पर ताई मानने को तैयार नहीं थी ।

इस में हम को बुध सिंह की कहानी सुनने का मौक़ा भी मिलता है। वह हर दिन एक ही कहानी सुनाता था। एक बार बुधसिंह की बैग किसी अंग्रेजी ने उठा ले गया तो बुधसिंह जाकर उसके अफसर से शिकायत किया और अपना बैग

वापस ले लिया। यह कहानी नौटियाल जी उनकी दीदी हर दिन सुनते ही रहते थे।

नौटियाल जब काशी हिन्दु विश्वविद्यालय में थे तब दुनिया भर के नौजवानों के बीच एक नई अलरव जगाने वाला, विश्व नौजवान सभा का अधिकारी बाबक एक ही रानी कॉमरेड से मुलाक़ात हयी। उस समय ईरान में कम्युनिष्ट को भयंकर यातनाएँ तेने लगे हैं।बाबक को पकड़ने की कोशिश भी कर रहे हैं। बाबक की माँ सात सालों से अपने बेटे का चेहरा नहीं देखा। वह ईरान में रहती है। फ्रांस की पुलिस ने पेरिस के हवाई अड्डे पर अपने बेटे से मिलने आई और वहां बाबक को दिखा कर पुलिस ने कहा कि वह तुम्हारा बेटा है वह बुढ़िया ने कहा कि वह मेरा बेटा नहीं है। नौटियाल जी यज्ञ में भाग लेना चाहते थे, उन्होंने रात में वहाँ के जोशी के घर में ठहरे। जोशी जी 13 दिसंबर 1983 में उनकी घर पर हुई हद से के बारे में बताया। उनकी पचीस हज़ार रुपयों का नुकसान हुआ। नौटियाल जी ने कहा सरकार को लिखा है, तो जोशी ने कहाँ कि हाँ, लिखी भी है और एस.डी.एम. को खुद भी मिला हूँ। लेकिन अभी तक कोई सहायता नहीं मिली है। मैंने आपको भी पत्र लिखा था। नौटियाल जी ने कहा तभी तो मैं आपके पास आया हूँ। आपका वही पत्र निमंत्रण पत्र भी था।

यह एक प्रधान के व्यक्तिगत नुकसान की नहीं, एक क्षेत्र में निवास करने वाली उपेक्षित आम जनता की पीड़ाओं की दासता है।

जोशी यह भी सुनाते हैं कि उस गाँव में मोटर सड़क नहीं है। चलने के लिए ठीक से रास्ता भी नहीं है। सेरा इस गाँव तक आने के लिए बहुत पैसा लगाना पड़ता है। स्यारी में नौटियाल जी उद्यान प्रभारी नेगी से मुलाकात हुई। इस गाँव में भी पानी का अभाव है। वहाँ से नौटियाल जी यज्ञ के स्थल पर पहुँचे। वहाँ के सब ग्राम वासिओं अपनी अपनी समस्याओं का ज़िक्र किया। सब लोग मुख्यतया मार्ग के बारे में ही बात कर रहे थे। मार्ग के अलावा बिजली, पानी, स्कूल के उच्चीकरण आदि सामान्य विकास की मांगे भी प्रस्तुत हुई। सभी के निवेदन पत्रों को नौटियाल जी ने अपने हाथ में ले लिया। नौटियाल जी वहाँ के हर जगह की वर्णन कर रहे थे हमें लगता है कि हम भी उनके साथ पहाड़ी में घूम रहे है। वहीं का पौधशाला का भी दर्शन कर आए। उस पौध शाला के लिए पर्याप्त पानी नहीं मिल रहा था। फिर भी वहाँ का कर्मचारी ने वहीं एक हौज़ में पानी जमा कर के पौधों को दे रहे हैं। पौध शाला के अंदर कई चीड़ के पेड़ थे। उनको हटाने के लिए वन संशोधन अधिनियम आड़े आ गया है। अगर उन चीड़ के पेड़ों को हटाया

जाता तो वहाँ अच्छी साग -सब्जी के अच्छे बीज और फलों के उन्नत किस्म की पौध तैयार की जा सकता है।

इस प्रदेश में ऐसी समस्याएँ है जिसका हल किया जा सकता है, लेकिन कोई राजनीतिज्ञ इसके लिए तैयार नहीं।

यज्ञ में शामिल होने के लिए बहुत दुर से लोग आ रहे थे। ख़ास कर युवक और बच्चे, जो अपने जीवन में पहली मर्तबा इन राहों पर आ रहे होंगे। पहाड़ से बाहर, भारत के विभिन्न शहरों में जन्में लोग। अपने जड़ों को तलाश कर नौजवान। अपने माता-पिता से मिली जानकारी के आधार पर वे सिर्फ़ इतना जानते हैं कि टिहरी -गढ़वाल में एक पट्टी भरदार है। हम लोग उस भरदार पट्टी के एक गाँव स्यंरी के निवासी है।

उपणधारा के पास मूर्ति का भी वर्णन मिलता है। वह मूर्ति खुले जगह में बैठी थी। बहुत लोग वहाँ आकर मन्नतें माँगते हैं। शायद वह देवता अन्य देवी - देवताओं की तरह भोग विलास में डूबना नहीं चाहती। अंत में नौटियाल जी मोलूभरदारी की पत्नी सूरमा भरदारी के बारे में बताते है। सूरमा भरदारी चौदह वर्ष के उम्र में विधवा हो गई। शहीद की विधवा को देखने के लिए किसी को फुर्सत नहीं मिली। सूरमा भरदारी को पेंशन मिलता था, उस पेंशन को इस लिए रोक दिया गया कि उसने अपने देवर के द्वारा बच्चे को जन्म दे देया।

तेजसिंह, गोविन्द सिंह, धूमसिंह और धीलू धनाई ने जो करना था, वह उन्होंने कर दिया। दादा दौलत राम एक आंदोलन के अंग थे। देवी दत्त तिवाडी अपना जीवन कठिनतम परस्थितियों में गुज़ारा। उनके परिवार को भी कोई पेंशन नहीं मिलती। ये सब लोग आजीवन टिहरी की आज़ादी के लिए संघर्ष करने की कीमत चकाते रहे। *"शहीदों का अनादार करने वाला समाज का नेतृत्व लाज़मी तौर पर उन्हीं लोगों के हाथ में जाएगा, जो आज़ादी के आंदोलन का अपनी पूरी ताक़त से विरोध करते थे और अब तथाकथित पवित्र परंपराओं को जीवित रखने के नाम पर सतीप्रथा को पुनर्जीवित करना चाहते हैं।"*[30]

नौटियाल जी लौटते समय रास्ते में गंडासू गाँव आता है, इसका मतलब गंडासा होता है। पनसौड की ओर बढ़ते हुए पांडवों ने अपने हाथों में गंडा से उठा लिए थे। गँड़ासा उठा लेने के बाद पांडवों ने उनका उपयोग क्यों नहीं किया और वे समस्त शक्तियाँ, जो कंगाली को स्थाइत्व प्रदान करने वाले विकराल पूँजीवादी,

प्रतिक्रियावाद राक्षस से मुकाबला कर रही हैं आज भी एक क्यों नहीं हो पा रही हैं? उनके हाथों के गँड़ासे कहाँ चले गए ?

इस उपन्यास में हर पन्ना व्यक्ति से समाज को जोड़ता है।

3.2. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों के प्रमुख पात्र

3.2.1. सूरज सब का है उपन्यास के पात्र

काफू चौहान

मध्य हिमालय में फैले एक सौ चार गढों में काफू चौहान उप्पुगढ़ का भड़ था। भड़ गढ़वाली में पराक्रमी, वीर और अनेक दूसरे अर्थों के लिए समप्रयुक्त शब्द है। भारी-भरकम काम जो किसी के वश का न हो जो उसे कर दिखाये-वह पराक्रमी भड़ है। जो खूँख्वार दुश्मनों को गाजर-मूली की तरह काटने लगे, जिसे तेखकर दुश्मन के छक्के छूट जाएँ-वह वीर भड़ है। एक सौ चार गढ़ों के भड़ों को परास्त किया गया। उन्हें वश में करने, परास्त करने के लिए षड्यंत्रों का, छल-कपट का सहारा लेना पड़ा।

राजा अजयपाल ने काफू चौहान को संदेश भेजा था कि वह हार मानले, उनके अधीन में रहकर राज करता रहे, काफू चौहान राजा गडवाल के संदेश के इनकार करदिया और कहा-*"जो सर झुक जाता है वह राज नहीं कर सकता।"*[31]

राजा काफू चौहान का उत्तर सुनकर अपनी सेना को गढ़ पर कब्जा करने के लिए भेजा। काफू चौहान मुकाबला किया था उप्पू के खुले खेतों में दोनें ओर के रणबाँकुरों ने अपनी अपनी शक्ति का रक्त रंजित प्रदर्शन किया था। लंबे चौडि खेतों में योध्दाओं के लहू की नदियाँ बहने लगी थी। काफू की साहस को देखकर राजा दंग होगया।

काफू चौहान के प्रहार से राजा की सेना डर कर भागने लगी। राज को पता चलाकि काफू चौहान को हराना बहुत मुश्किल है, राजा अपने निकटतम अधिकारियों से पता लगाया कि पंडितों के अनुसार, काफू को देवी का वरदान प्राप्त है कि जब तक उसके सर पर जदूली रहेगी काफू कोई परास्त नहीं कर सकेगा। कोई ऐसा उपाय किया जाना जरूरी है कि काफू अपनी जटवा कटा ले।

राजा को षडयंत्र रचने में ज्यादा समय नहीं लगा,एक ऐसे पागल आदमी को भेजा और वह पागल कहने लगा कि काफू को राजा ने मरवा दिया,वह कुछ न

कुछ बोलता जा रहा था।उसका विलाप सुनकर स्त्रियाँ भी रोने लगी।काफू के कुल की सारी स्त्रियाँ को लगा कि काफू चौहान के बिना जीवित रहना बेकार है।उन्हों ने चौहान की चिता लगाकर अपना प्राण त्याग दिया काफू उन सब की याद में अपनी जटा कटवा लिया।बाल उतरते ही काफू की ताकत खत्म हो गई।

राजा के सैनिकों ने काफू को राजा के सामने पेश किया।काफू ने राजा से कहा कि-"*शेर किसी और के द्वारा किए गए शिकार की जूठन नहीं खाता। तुम मुझ से ताकत से नहीं जीते, कपट करके जीते हो। मैं साफ दिल का भड़ हूँ। काले दिल का राजा नहीं। हिम्मत है तो आ जाओ, हो जाएँ दो-दो हाथ?*"[32]

राजा के आगे सर झुकाना या क्षमा याचन करना काफू चौहान जानता तक नहीं। राजा ने हुक्म दिया कि काफू चौहान का गर्दन इस तरह काट दी जाए कि उसका सर राजा के चरणों में जा गिरे। यह सुनकर काफू हँस पडा।

"*काफू ने दो मुट्ठी रेत उठाई और उसे अपने मुह में भर लिया काफू की गर्दन पर पीछे से तलवार चलाकर उसे धड़ से जुदा किया गया। उस वीर योध्दा ने अपने गर्वीले सर को ऐसा झटका दिया कि उसका सर उस ओर नहीं गिरा जिधर राजा बैठा था। वह उछल कर उल्टी दिशा में जा गिरा।*"[33]

ऐसा वीर था काफू चौहान। जब भी उस भड़ की याद की जाती सब लोगों के दिल में काफू की वीरता का जिक्र गौरव से किया जाता।

पुलमा

इस उपन्यास में पुलमा एक ऐसी औरत है जो अपने पति को बचाने के लिए खुद को बेचती है। गढ़वाल की धरती पर गोरखें आयें। गढ़वालों को दास-दासी बना कर बेचने लगे। गोरखों ने पुलमा के पति शिव्वा को बाँध दिया था और उसे हरिद्वार ले जाकर मंडी में बोली लगाने की तैयारिया की जा रही थी। पुलमा जानती थी कि उन सैनिकों को रकम देने से शिव्वा को छोड देंग। लेकिन उसके पास पैसा नहीं था। पुलमा पाती राम के पास गई। पुलमा अच्छी तरह जानती थी कि पातीराम सेठ उसे किस दृष्ठि से देखता है और पुलमा यह भी जानती थी कि भिव्वा के जाने के बाद सेठ उसके साथ क्या करने वाला है। पुलमा शिव्वा से प्यार करती थी। वह उसे अपने तन-बदन से ज्यादा चाहती थी। वह चाहती थी शिव्वा आजाद रहे, अपने घर पर रहे, अपने गढ़वाल में रहे।

फुलमा सेठ से कहती है "*शेठ जी तुम उनकी रस्सी खुलवा दो। उसकी रस्सी खुलवा दूँ पर मुझे क्या मिलेगा? तुम मुझे रखलो।*"[34]

पातीराम शिव्वा को छुडाकर लाया। शिव्वा पुलमा से अपने घर जाने को कहा,पुलमा वही खडी थी। सेठ ने कहा वह अब यही रहेगी। तूझे मुक्त कराने के लिए उसने अपने को बेचदिया। वह पराया माल है, अब तेरे घर नहीं जा सकती।पुलमा को पातीराम खरीदा। अब पुलमा पर सर्वाधिकार पातीराम का है। वह जैसा चाहे वैसा व्यवहार कर सकता है। उसको मंडी में न बेच कर खुद ही रख लेता है।" *पुलमा जहाँ भी रहे, वह एक बिका हुआ माल है। गढ़वाल में रहेगी तो कम से कम अपने लोगों के बीच तो रहेगी,अपनी परिचित भूमि में अपने जंगलों-खेतों में, नदी-नालों के किनारों पर।पहाडों की चोटियों पर घूम-फिर सकेगी।"*[35]

पुलमा मन में सोचने लगी शिव्वा क्या इतना रकम जमा करके मुझे यहाँ से ले जाएगा। कभी आएगा ऐसा दिन? हमारे गढ़वाल की भूमि से कभी गोरखों को भगाया जा सकेगा?

यह तो बिकी हुई औरत का दर्दभरा जीवन है। अपने पति के पास वापस जाने की आशा है।

माधोसिंह भंडारी

राजा महिपतशाह के सेनानायक माधोसिंह भंडारी एक भड़ था। उसके पास कई जागीरें थी। माधोसिंह भंडारि एक ऐसा वीर जिससे राजा महिपतशाह हमेशा प्रसन्न रहता था। माधोसिंह भंडारी के शौर्य त्याग और बलिदान की कहानियाँ देश देशान्तर में प्रचलित थी।

माधोसिंह अपने लोगों के लिए वह अपना जान देने तक तैयार रहता था। माधोसिंह का नाम मलेथा की गूल के ऐतिहासिक निर्माता के रूप में जीवित है। मलेथा गाँव श्रीगर के पास है। मलेथा गाँव में अलकनंदा नदी बहती है। नदी नीचे बहती है और गाँव ऊपर है नदी के पानी को किसी भी तरह गाँव की खेती की सिंचाई के लिए इस्तमाल किया जा सकता था। इस बात को लेकर माधोसिंह हमेशा चिंतित रहता था। माधोसिंह सोचता था कि-*"मेरे गाँव में किसी तकह पानी लाया जा सके तो गाँव में हरियाली चमक उठेगी। गाँव मालामाल हो जाएगा। गाँव वासियों की आँखें खुशी से चमकने लगेंगी। लेकिन पानी आए कैसे? अलकनंद नदी जो गाँव से बहुत नीचे है। मलेथा की प्यासी धरती पर सदियों से मोटे अनाज उगाए जाते रहे हैं। वहाँ सिर्फ कोदा, झँगोरा उगता है। बे-पानी का गेहूँ जितना भी पैदा हो जाए। एक बार इस विस्तृत खेती की प्यास बुझाई जा सके तो गाँव भर में धान की बालियां झूमने लगेंगी।"*[37]

माधोसिंह कल्पना करता था कि उसके गाँव में खेतों के किनारे पानी से छुलबुल भरी हुई गूल बह रही है। गाँव के लोग पानी को देखकर बेहद खुश होने लगे। माधोसिंह अपने समने को साकार बनाने का बिचार करता रहता था। मलेया गाँव के बीच में एक पहाड़ीहै, छोटी सी पहाड़ी। पहाड़ी न होती तो जल स्वाभाविक तौरपर मलेया गाँव में पहुँच जाता पर गाँव के और नदी के जल के बीच में एक बहुत बड़ी बाधा थी - एक छोटा सा पर्वत।

माधोसिंह भंडारी गाँव के लोगों से कहा कि इस पहाड़ को काटना पडेगा। पहाड को काटो और गाड के पानी का रूख मलेया की ओर मोड़ दो। पश्चिम से पूर्व की ओर। गाड़ उत्तर से दक्षिण की ओर बहती है।माधोसिंह किसी भी हाल में गाँव में पानी लाना चाहता है।

माधोसिंह भंड़ारी भड़ों का भड़, उस गाड के पानी का रूख पश्चिम से पूर्वकी ओर बदल देने की बात कहा। पहाड के तल पर छेद करने की बात। एक सुरंग बनाना चाहता था। माधोसिंह। कुछ लोग कहने लगे कि माधोसिंह पागल बन गाया है। उस पर पागलपन हावी हो गया है।

"बगैर पागल पन की पुट के कोई महान कार्य होही नहीं सकता। माधोसिंह सचमुच बावरा बन गाया था। वह बहते पानी को अपने गाँव की सीमा। में लाने के लिए पागल हो गाया था।"[38]

माधोसिंह पहाड़ की खुदाई शुरू की। माधोसिंह पहाड़ी के तल को खोदता रहा। सुरंग इतनी भर ऊँची कि उसके गाँव के पश्चिमी भाग में बहनेवाली गाड के पानी की दिशा बदलकर उसे पूर्व की ओर बहाने पर उतारू हो गया था। कदम-कदम चलता माधोसिंह पहाड़ के तल को खोदता जा रहा है। माधोसिंह का सपना जल्द ही पूरा होने वाला था।

बहुत सालों तक माधोसिंह पहाडी की खुदाई करता रहा। मजदूरों से करवाता रहा। एक दिन माधोसिंह निर्माणाधीन छेंडे के अंदर से गुजरता हुआ अपने साथियों समेत अपने गाँव की दिशा में बाहर निकल आया। सारा गाँव खुशियाँ मानाने लगे।सबके मन में यह उम्मीद था कि जल्द ही गाँव के खेतों में पानी आएगा।

माधोसिंह ने चंदभाग के उत्तर-दक्षिण बहते पानी पर बाँध बनाकर उसके प्रवाह की दिशा को पश्चिम-पूरब में बदलने की चेष्टा की। पर पानी की एक बूँद

भी छेंडे के अंदर नहीं गई। थक कर माधोसिंह घर चलागया। रात में देवी माँ ने सपने में आकर कहा कि अगर वह अपने बनाए छेंडे के अंदर पानी बहाना चाहता है तो उसे अपने बेटे की बलि देनी पडेगी। लोकगीतों में कहा जाता है कि "*अगले दिन माधोसिंह भड़ अपने बेटे को लेकर छेंड पर पहुँचा।वहाँ बेटे का बलिदान हुआ।आगे-आगे माधो के रक्त की धारचली,उसके पीछे पीछे छेंडे के अंदर चंद्रभागा का जल पश्चिम से पूरब की ओर बह चला।*"[39]

माधोसिंह सिर्फ एक वीर ही नहीं थी, गाँव के लिए उसने अपने बेटे की बलि तक देदी। एक ऐसा वीर भड़ था माथोसिंह, जिसने पहाड़ को ही खोद डाला।

नजावत खाँ

नजावत खाँ शाहंशाह शाहजहाँ का फौजीदार था। शाहंशाह ने मिर्जा शुजअ को नजावतखाँ का दर्जा दिया। फौजदार बनने के बाद शुजअ का साहस और पराक्रम बुलंदियों को छूने लगा। लाल किले में शहंशाह का राजपाठ चलता था, शहंशाह ने नजावतखाँ को आदेश दिया कि श्रीनगर पर हमला करदे श्रीनगर को आजादी मुल्क के रूप में नहीं हिन्दूस्तान में ही रहना चाहिए। श्रीनगर पर हमला करने के लिए नजावतखाँ तैयार था।

"*मिर्जा शुजअ फौजदार नजावतखाँ ने आगरे के दरबार में सर झुका कर बादशाह का हुक्म सुना था। वह खुशी से फूला जा रहा था। उसे पान का बीड़ा पेश किया गया।खास बनरासी पान ,नजावतखाँ ने पान का बीड़ा हाथ में उठाया। बादशाह ने घोडे की पीठ थपथपाई। नजावतखाँ को एक तलवार सौंफी।.....नजावतखाँ झुकता-झुकता, फर्शी सलाम बजाता-बजाता आगरे के लाल किले से बाहर निकला थ।*"[40]

नजावत खाँ श्रीनगर की स्थितियों को बारे में पूरी जानकारी पाई। श्रीनगर का राजा महापतिशाह चल बसे चार साल हो चुके। उनका बेटा राजकुँवर बना। पूरा राज काज महापतिशाह की पत्नी राणी कर्णावती देखबाल कर रही थी।

नजावतखाँ संतूर गढ़ पर अपना कब्जा जमा लिया।वहाँ पहाडी पर ज माहुआ बर्फ को देखकर नजावखॉ के आँखे चमकने लगी।पहाड़ों की चोटी से लाई गई ताजा,चमकीली (इनसान के गर्म लहू को सर्द कर देनेवाली) बर्फ के उस ढेर के पास खड़े होकर नजावतखॉ अपने भविष्य के ताने-बाने बुनते लगा था। नजावतखँ ने फैसला करलिया था कि बर्फ शाहंशाह के पास भेज दिया जाय। नजावतखँ बर्फ को शाहंशा के पास भेज ही दिया।

संतूरगढ़ को फतह कर वह ऋषिकेश पहुँचा।ऋषिकेश के पास उसने गढ़वालियों से लडकर ननोर दुर्ग को बकायदा लड़कर उसे जीत लिया। गंगा किनारे पर गढ़वाली फौज ने मुकाबला किया,उस में भी नजावतखँ ही जीत गया।तीस कोस पार कर श्रीनगर में दाखिल हो जाना नजावतखाँ केलिए कोई मुश्किल काम नहीं था। दुश्मन को अपनी देहली के पास खाड़ा देख कर्णावती सकपका गई।उसने नजावतखाँ के पास अपना दूत भेजा। नजावतखॉ राणी के दूत से मिला। नजावतखाँ राणी का प्रस्ताव सुनकर हैरत में पड़ गया। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह सो रहा था जाग रहा हैं। वह राणी जिसका नाम सुनकर दुश्मन खौफ खाते थे,इतनी आसानी से,बगैर लड़े आत्मसमर्पण करदेगी इस की तो उसने कभी कल्पना ही नहीं की थी।राणी के प्रस्ताव से खुश होकर नजावतखॉ उनके बारे में सहयोगी राजाओं और सरदारों की सलाह लेना इतना जरूरी नहीं समझा, वह विजय मद में एकदम डूबा गाया था।

राणी कर्णावती को पंद्रह दिन की मोहलत देकर नजावतखॉ बहुत बडी गलती की। राणी नेउसका फायदा उठाया। नजावतखाँ की फौज में ही झगडा होना शुरू हुआ, सिपाहियों को भरपेट खाना नहीं मिल रहा था।सिपाहियों को चारों तरफ बंट जाने के लिए नजावतखॉ कहा।कर्णावती की सिपाई फौज बहुत बडी थी नजावतखाँ की फौज को भूखा रख कर उन लोगों को अधमरा कर दिया। यह सब जानते तक नजावतखॉ के सामने सच्चाई आगई। तब तक सारी सेनाएँ विच्छिन्न हो गई, एक तरह से कहा जाए तो उनके पास लडने के लिए ताकत नहीं थी।

राणी ने सिपाहियों को हुकम दिया कि शाहजहाँ फौजी को बन्दी बनाकर ले आए और उनकी नाक काट दी जाए। सब को दरबार में लाने की जरूरत नहीं जहाँ पर उनके सैनिक दिखाई दें वहीं पर नाक काट दी जाय। नाजावतखॉ मुट्ठी भर सैनिकों के साथ अपरिचित इलाके में मारा-मारा फिरता रहा।

"जब उसे कहीं दूर या नजदीक कोई स्थानीय किसान दिखाई देता तो वह डर जाता। पकड़ लिए जाने पर अपनी नाक के काटे जाने का खतरा उसके सर पर मँडराने लगता। मिर्जा शुजअ के साथ थोडे-से लोग अपने चेहरों पर अपनी नाकें बचाकर निकल भागने में सफल हो गये थे, पर उन्होंने पूरी फौज की और मुगल हुकूमत की नाक कटवा दी थी।"[41]

यह सब होने के बाद शाहजहाँ मिर्जा शुजअ का मनसब छीनलिया। उनकी जागीर भी छीन लिया। राजा जिस पर खफा होते थे उसे वे जमींदोज कर देते थे।

राणी कर्णावती

राणी कर्णावती श्रीनगर के राजा महिपतशाह की पत्नी थी। ससुर श्यमशाह की तरह महिपतशाह को भी औरत बाजी का लत थी। रानी का कुछ खयाल नहीं करता था। चार साल पहले राजा महिपतशाह की मृत्यू हुई। चार साल से कर्णावती राज चला रही थी। प्रत्यबीपतिशाह उसका बेटा। उसके एवज में श्रीनगर में बैठकर गढ़वाल देश के राज का संचालन कर्णावती करती थी। शाहंशाह की नजर अब श्रीनगर पर थी, शाहंशाह श्रीनगर और आस पास मुल्कों पर हमला करने के लिए अपने फौजीदार नजावतखॉ को भेजा। आस पास के मुल्कों पर विजय प्राप्त कर नजावतखँ श्रीनगर में अपना पैर रखा। दुश्मन को अपनी देहली के पास खड़े देख कर्णावती सकपका गई। उसने नजावतखॉ के पास अपना दूत भेजा।

रानी के प्रस्ताव से नजावत खाँ खुश था। उसको लगा कि श्रीनगर अब उनके वश में है। कर्णावती ने लाख सिक्के आगरा पहुँचाने के लिए पंद्रह दिन का मोहलत माँगी थी। पंद्रह दिनों तक सिपाही गंगातट पर इन्तजार करते रहे। नजावतखाँ के सिपाहियों को भरपेट खाना नहीं मिल रहा था। कर्णावती एक तरफ नजावत खाँ को एहसास दिलाया कि वे लोग उनकी हर माँग पूरी करेंगे, दूसरी तरफ कर्णावती किसानों को इकट्ठा किया और बहुत सारा पत्थर इकट्ठा की थी।

एक सिपाही नजावतखॉ से कहा था "*पत्थर गिरने लगे हुजूर। भारी भरकम पत्थर। वे पत्थर खुद ही नीचे नहीं लुढ़क रहे थे उन्हें ऊपर से लुढ़काया जा रहा था। पत्थरों की मिकदार को देखकर लग रहा था कि ताजा-ताजा उखाडकर नीचे नहीं गिराए जा रहे हैं, वहां पत्थरों का जखीरा है।पहले से जमा न किए जाएँ तो इतने सारे पत्थर एक साथ नहीं लुढ़क सकते। जो लोग आगे-आगे चल रहे थे वे अपनी जान बचाने के लिए पीछे की तरफ मुड़े। हमारे पीछे की करफ भी पत्थर लुढ़काए जा रहे थे। हम न आगे जा सकते थे न पीछे जा सकते थे। हमारा काफिला पूरी तरह घिर गया था। घोड़ो के बिदकने से भी हमारे कई लोगों को चोटें आने लगी थी।*"[42]

कर्णावती कामयाब हो गई। नजावतखॉ को रानी पर बिलकुल शक नहीं हुआ। रानी अपने दूत से कहलवाया है कि इस हमले के बारे में उनको कुछ पता नहीं। आगे ऐसा नहीं होगा। किसी विद्रोही लोगों ने ऐसा किया। नजावतखाँ रानी पर पूरा भरोसा किया। रानी ने दूसरा कदम उठाया। लाख सिक्के भेजदिया और

सिक्कों की गिनती के दौरान रानी के सिपाही ऐसी बातें करने लगे कि जिन बातों से नजावतखॉ के सिपाहियों को अपने घरों की याद आगई। अपनों की याद आई, खेती की याद आई, अपने गाँव की मिट्ठी की खुश्बू आई। इस तरह करने से रानी जानती थी कि सिपाहियों को युध्द करने का मन नहीं होता, दूसरी बात यह है कि उन सिपाहियों को भरपेट खाना नहीं मिल रहा था। रानी शहंशाह के पूरे सिपाहियों पर कब्जा कर लिया।

रानी ने बादशाह के सिपाही नायब से कहा -"*तो अपने बादशाह के पास हमारा एक संदेश ले जाओ।कहना कि फिर कभी इस तकफ आँख उठाने की जुर्रत न करें हिन्दुस्तान भर के लोग यहाँ - बद्री-के दार,गंगोत्री-जमुनोत्री के दर्शन करने आते है। हमला करने के इरादे से इधर कभी मत आना। तुम लोग अपनी जुबान से हमारा यह संदेश अपने बादशाह से नहीं कह सकोगे-यह हमें मालूम है। हम उसका इंतजाम कर रहे है। हमने तजबीज किया है कि जिस सिपाही को जिंदगी की भीख चाहिए, उसके लिए हमारा संदेश अपने बादशाह के पास ले जाना लाजमी कर दिया जाय बह सिपाही अपने हथियार हमें सौंप दे।*"[43]

राजमाता ने हुक्म दिया कि शाहंशाह की फौज के सिपाहियों के नाक काट दिये जाये। नजावतखॉ ने भी वहाँ से भागता हुआ अगरा पहुँचा। उसका नाम तो कटा नहीं, लेकिन उसके भागने से लगा कि उसकी नाक कट गई।

इस पराजय के बाद शाहंशाह रानी को नक कटी-रानी कहने लगा था। उत्तर भारत को छोड़कर बादशाह दक्षिण भारत की ओर बढ़गया था।

सिपाही करीम

सिपाही करीम, नजावतखाँ के फौज में एक वीर सैनिक था। आगरे के लाल किले में बैठकर जिसको शाहंशाह ने गढवाल पर आक्रमण करने के लिए कहा। वह बहादुर सिपाही नदी के किनारे बैठा था। नजावतखाँ रानी कर्णावती को 15 दिन की मोहलत देकर सैनिकों को युध्द करने से रोका।उसके बाद और 15 दिन की मोहलत भी रानी को मिलगायी। इन सिपाहियों के लिए तो रोटी एक सपना बन गया था। नदी का पानी पीकर दिन बिताने पड़े। वह अपने बचपन के दिनों को याद करने लगा। माँ कितना प्यार से रोटिया खिलाती थी।शादी के बाद करीम की पत्नी उसके आने तक रोटी खाती नहीं थी। वह भूखा सोएग तो उसकी पत्नी भी भूखी सोती थी।

करीम नींद के लिए भी तरसने लगा था। करीम सोचने लगा था कि "इस दुनिया में असी सत्य सिर्फ एक है। उस सत्य का नाम रोटी है। रोटी दुनिया में प्यार-मुहब्बत की फसले *उपजाती है। दुनिया भर में लडी जानवाली जंगों का कारण भी रोटी है। रोटी के लिए गर्दन काटी जाती है। रोटी के लिए गर्दने कटवा ली जाती हैं। दुनिया दरअसल रोटी के सहारे जिंदा है। इस दुनिया में असरी ची रोटी है, और कुछ नहीं।"*[44]

शाही फौज के लिए, मुल्क हिन्दूस्तान के मुगल बादशाह शहजहाँ की एक पूरी फौज रोटी के लिए तडप रही थी। कोई नहीं था उनकी भूख निटाने वाला। सिपाही तो जंग लड़ रहे हैं। रानी के किसान सिपाहियों को एक नदी के तट पर रूकने के लिए कहा और उनके लिए किचडी बनाई। करीम को लगा कि अपनी आजादी चली गई। आजाद होकर भूखे रहना गुलामी में पेट भरने से हर हालत में बेहतर होता है। सिपाही करीम के मन में बार बार यह बात आ रही थी।

सिपाही चाहे रानी के लिए लडे या बादशह के लिए लेकिन वह पहले इनसान तो होता है। करीम के माध्यम से नौटियाल जी भूखे सिपाहियों का हाल का सजीव चित्रण किया है।

बडी दादी

बडी दादी इस उपन्यास में वर्तमान रूप में दिखाई देती है। बडी दादी के घर पर जब सीडियाँ बना रहे थे। कोई आदमी मर गया, इसलिए सीढियाँ बनने पर रोक लगा दी गई। बडी दादी का घर पर अब भी सीढियँ नहीं बन पाई। बडी दादी के पुरखों के कुल में किसी की मौत हुई। उसी दिन त्यौहार था।उस दिन के लिए ही नहीं हमेशा के लिए त्यौहार रोक दिया गया था। बडी दादी कभी त्यौहार नहीं मनाई।

बडी दादी का नाम क्या है कोई नहीं जानते। बडी दादी घर पर अकेली रहती थी। उसके घर में न कोई इनसान है न कोई जानवर।बस अकेली बडी दादी। गाँव वाले सब बडी दादी से प्यार करते थे। किसी को उससे कोई शिकायत नहीं। त्यौहार के दिन बडी दादी का कोई पुरख मरने के कारण और उसी दिन किसी इनसान का या जानवर का जन्म न होने के कारण बडी दादी के कुल में त्यौहार रोक दिया गया था। वह त्यौहार का शोक ढोती हुई (बडी दादी) आज भी जिंदा है।परंपरा का भोज आज भी ढो रही है।

"बडी दादी पूरे गाँव की हो गई है। रोएँगे तो सब, नहीं तो कोई नहीं। लेकिन बह सब को बाँध के रखती है। गाँव को बंटने नहीं देती। बह भीष्म की तरह है जिसका अपना कोई पुत्र नहीं था लेकिन वह पितामह के रूप में जाना जाता था। वह सोनी गाँव की बडी दादी है। बूढों की बड़ी दादी नौजवनों की बडी दादी। वह आस पास के गाँवों की भी बडी दादी है।"[45]

बडीदादी कितने पीढ़यों को देखी थी। वह अपने जीवन से संघर्ष कर रही है। जो लडका उसके सामने खेलता रहता वह जवानहो जाता और उसी का भी बेटा होता, वह उसके आँगन में खेलता रहता किशोरी लडकियाँ जवान हो जाती और वे भी माँ बन जाती सब बडी दादी देखा करती है। पर बडी दादी का कोई नहीं लेकिन पूरा गाँव तो उसी का है। जिस घर से पौणा आता है उसी घर में पौणा भेजा जाता है। लेकिन बडी दादी के घर सब गाँव वाले पैणा भेज देते हैं, यह जानते हुए भी कि बडी दादी के घर कभी पैणा आने वाला नहीं। फिर भी गाँव वाले रीति को बचाए रखते हैं। बडी दादी के घर से गाँव का रास्ता बंद हो जाता है।वहाँ से किसी का घर दिखाई नहीं देता आगर कोई बडी दादी के घर आए तो उनको यह पूछने की जरूरत नहीं कि घर पर सब ठीक है ना, जो भी आए सिर्फ बडी दादी से मिलने ही आते हैं।

बडीदादी की जमीन जायदाद बाघसिंह अपने कब्जे में लेलिया है, इससे बडी दादी को कोई शिकायत नहीं थी।बस वह यमराज का इन्तजार कर रही थी।वह बेचैन हो रही थी।वह यमराज को कोसती भी है कि क्या यमराज ने मुझ को अपने पास ले जाना भूल गया है।बड़ी दादी अपना प्राण खुद लेना नहीं चाहती वह अंत तक यमराज का ही इन्तजार करती रहती है।

बडी दादी से मिलने परगनाधिकारि देवदत्त आते है तो उनसे कहती है कि *"परधान मंतरी जी को धन्नवाद साहब कि उन्हों ने मेरे लिए रुपए भेजे। आपसे प्रार्थना है कि इन रुपयों से जितनी भी गुड की भेलियां खरीदी जा सकें मेरे लिए भेज दें।"*[46]

दवीदत्त गुड़ की भेलियाँ भेज देते हैं। बडी दादी गाँव वालों को अपने घर बुलाती है। बडी दादी के पास ताकत नहीं था कि वह बैठ सके वह धीमी आवाज में कहने लगी- "मैंने *जिंदगी भर इस गाँव के घर घर से पैणा खाया है। मेरे घर में*

कभी कोई शुभ कार्य नहीं हो पाया कि गाँव का पैणा लौटा सकती। मैं धर्म राज का इनतजार करते करते थक गई हूँ। अब मुझे लग रहा कि मेरा बुलावा आने वाला है। जाने से पहले मैं अपनी जिन्दगी में एक बर तूम लोगों का पैणा लौटाना चाहती हूँ,मेरे बाद मेरा कोई श्राध्द करने वाला भी नहीं है। मेरी दिली तमन्ना है कि गाँव वालों को एक बार अपने घर पर मुँह मीठा करते हुए देखूँ। तुम लोगों को एक-एक गुड़ की गोली दे रही हूँ। तुम लोग उसे अपने मुख में मेरे सामने रख दोगे तो मेरी आत्मा को शान्ति मिल जाएगी। यह मेरी ओर से पैणा भी है और मेरे श्राध्द का भोजन भी।"[47]

बडी दादी की अर्थी को कंधे पर लेते हुए लोगों ने कहा बडी दादी मरी नहीं जीवित हो गई है। उसे नया जीवन मिला है। उसने यम को पराजित कर दिया है।

फजीती

फजीती का चरित्र भी वर्तमान काल में ही होता है। फजीती बाघसिंह की माँ है। फजीती जब ग्यारह साल की थी तभी उसका विवाह करदिया गया। फजीती के पति का नाम गबरू था। उसकी आधी जिन्दगी जेल में ही गुजरी थी। फजीती उसके साथ अनेक कष्ट सही। एक प्रकार से कहे तो उसने पति के साथ नरक भोगा। गबरू चोर भी था। फजीती अच्छा खाना खाने के अच्छे कपडे पहनने के सपने देखती थी।सपने तो सपने बनकर रहगए। गबरू कभी पैसा लेकर घर आता तो फजीती को पहले ही पता चलता था कि उसका पति कुछ गलत काम करके आया है। उसके बेटे भी वैसे ही निकले थे।

" बाघा परिवार में घर की सास नहीं है। वह बहुत पहले मरगई थी। लोग कहते हैं कि बागा परिवार के कठोर अनुशासन के बंधनों की छटपटाहट में मरी उसने अपनी नई, छोटी बहु छटाँकी के साथ अपने पति को देख लिया था। वह बर्दास्त नहीं कर सकी उसने आत्म हत्या करली थी। वह हेंवल नदीं के गहरे तालाब भैंस्यारी में कूद गई थी।"[48]

फजीती अब इस दुनिया में रही नहीं एक तरह से कहा जाय तो उसने नरक से मुक्ति पा लिया। बाघा परिवार के लोग फजीती के लिए वहाँ यहाँ नहीं ढूँढा। उन्होंने नदी के पास गया और लाश को बाहर निकाला। फजीती अपने सारे कष्टों से मुक्ति पा ली है।बाघा परिवार के लोग फजीती के लिए कहीं नहीं ढूँढा। वे नदी के पास गये और लाश को बाहर निकाला। फजीती अपनी सारे कष्टों से मुक्त हो गयी।

"वे *सात लोग थे। कुल सात लोग। बाघा, उसका पिता गबरू,बाघा के दो भाई सुक्वारू और छँछरू, सव्वरू के दो बेटे नरसिंह और भेरू और बाघा का बेटा औतारू। छँछरू का उन दिनों ब्याह किया गया था। छँछरू की दुल्हन छटाँकी थी। उसीके कारण उस घर की गृहस्वामिनी फजीती को नदी में छलाँग मारनी पड़ी थी।"*[49]

गाँव के सभी लोगों को पता चला कि फजीती ने आत्महत्या करलिया। सब लोगों ने फजीती को देखने चले। बुढ़िया कैसे मरी यह बात घाट पर एकत्र सभी लोगों को अच्छी तरह से मालूम थी। लेकिन गाँव वाले सब चुप थे। किसी के पास इतनी हिम्मत ही नहीं हो पाती कि कुछ बात करे। फजीती के स्वभाव के बारे में भी कोई कुछ बोल न सका फजीती क्यों अपनी जान दे बैठी घर के ही नहीं गांव के सब लोग जानते थे। पर बाघा के आतंक के डर से लोग कुछ भी नहीं बोल पा रहे थे। पूरे गाँव के लोग हाथ में एक एक लकडी लेकर घाट पर आए थे।

"*गाँव के लोगों को शवयात्रा में चलने का मौका नहीं मिला था। बुढिया ने वह मौका किसी को भी नहीं दिया। वह अपने पाँवों से चल कर घाट पर पहुँच गई थी। फिर भी दाह-संस्कार के लिए पूरा गाँव आया था। पंडित के अलावा हर घर से कम से कम एक व्यक्ति घाट पर धर्म-लकडी लेकर हाजिर हो गए थे। कुछ लोग बुढिया के गुणों की अपने मन में याद करते हुए आए। लेकिन ज्यदातर लोग बाघा परिवार के आतंक के कारण आये थे। वहाँ न पहुँचने का गलत अर्थ लगाया जा सकता था और बाघा परिवार भविष्य में किसी भी घटना-दुर्घटना के वक्त अपना बदला ले सकता था।"*[50]

फजीती ने अब दुनिया में नहीं रही। लेकिन उसकी मौत को लेकर गाँव में किसी ने कुछ कहने की लिए हिम्मत नहीं की। बचपने से लेकर मरने तक फजीती कभी खुश नहीं रह पाई, बचपन में विमाता के साथ अनेक कष्ट सहती रही। शादी के बाद भी वह कभी सुखमय जीवन बिता नहीं पाती। अंत में वह आत्महत्या करके सारे दुःख से मुक्ति पाति है। नौटियाल जी फजीती का चित्रण इस प्रकार किया कि औरत अनेक कष्ट सहती है लेकिन अपने पति को किसी दुसरी औरत के साथ देखलेती तो वह सह नहीं पाती इस हद तक जाने के लिए तैयार रहती कि अपनी जान दे बैठे।

बाघसिंह

बाघसिंह सोन गाँव में रहनेवाला एक ऐसा कट्टर अनुशासक है, जिसे देखकर पूरा गाँव ड़रता था। बाघा परिवार में जबर्दस्त अनुशासन है। लौह-

अनुशासन। ऐसा कठोर अनुशासन कि लगता है वहाँ सभी चीजें एक-दूसरे से लोहे की मोटी जंजीर के सख्त बंधन में जकडी पडी है। बडे भाई के सामने छोटे भाई की जुबान नहीं खुल सकती पिता के सामने पुत्र नतमस्तक रहता है। जेठानी के सामने देवरानी की घिग्घी बँधी रहती है। अपने से बड़ो की शिकायत करने का क्या अंजाम होता है, यह बात बाघा परिवार में छोटे से लेकर बड़े तक सब को बखूबी मालूम है। यहाँ तक कि घर के कुत्ते और बिल्ली तक इस कठोर अनुशासन की पूरी मातहती में रहते हैं। कुत्ता बड़ा है, बिल्ली छोटी है। कुत्ते का नाम भोटू है और सिराँ बिल्ली। एक घोडा भी था। उस पर बाघा परिवार के कोयी सदस्य सवारी नहीं की। किसी कर्जदार से पैसा वसूली में आया था। गाँव वाले उसे लाट साहब कहकर पुकारते थे।

भोटू और सिराँ जहाँ चाहे बरोक-टोक आजा सकता है। वे जिस घर में चाहें स्वेच्छापूर्वक,मनपसंद ठोस,तरल पदार्थ खा-पी सकते हैं।कोई कुछ शिकाय नही करते। बाघा के बुरी गालियों से डरते थे।"*शुरूआत गालियों से अपनी बासी-तिवासी, सड़ी-गली चीजों को ठीक तरह से सँभाल कर न रखने की, लापरवाही की घृमित आदत की उच्चतम स्वर में गाली युक्त निंदा से, जबर्दस्ती लड़ाई-झगडा करने का बहाना ढूँढने की नीयत से, बेगुनाह, बेजुबान पशुओ की मनगढंत शिकायत करने के इल्जाम से होती है और एवं उसके कुछ ही क्षणों के अंदर आनन-फानन में मौके पर जमा हो गए बाघा परिवार के कुत्ते और मुनष्यों के सामूहिक, आत्मरक्षक आक्रमण से हो सकता है। सोनी गाँव के लोग अब इस अनुशासन के आदी हो गए हैं।*"[51]

गाँव के लोग बाघा परिवार से जितना डरते हैं उतना ही भोटू और सिराँ को लेकर।कुछ कह भी नहीं सकते थे।वे चुपचाप अपने बच्चे और बहुओं को गाली देते थे और उनकी लापरवाही पर डाँटते थे। किसी की इतनी हिम्मत नहीं कि बाघा परिवार से टक्कर ले।अगर किसी ने जाकर शिकायत करने पर बाघा परिवार वालों से क्या जवाब मिलता है सोनी गाँव वालों को पता है।

एक बार बाघा के पास एक गाँववाला अपना शिकायत लेकर आया था। वह बाघा से कहने लगा कि "*तुम्हारे बडे बेटे ने मेरी छोटी बहू की,जब वह धारा पर पानी की गागर सिर पर उठा रही थी, छातियाँ पकड़ली,ऐसे शिकायत करने वाले को बाघा अपनी जुबान से ही जमीन पर पटक देता है-तेरी बहु अपनी*

छातियों को संभाल कर क्यों नहीं रखती,दिखाती क्यो है? शिकायतकर्ता अपना-साँ मुँह लेकर जाने लगता है तो पीछे से बाघा दूसरा बाण छोडता है-और तू घाट पर जाने की तैयारी कर रहा है पर तुझे मुझसे ऐसी गंदी बाते कहने में शर्म नहीं आती? कैसी बेशर्म बहु लाया है तू, जो ऐसी बातों का हल्ला मचाती फिरती है? कुछ हो भी गया तो चुप तो रहे।ये बातें क्या औरों से कहने की होती है ?"[52]

सोनी गाँव में बाघा परिवार जो चाहे कर सकते हैं। उनकी कारगुजारियों की शिकायत घर के अंदर नहीं पहुँच सकती। अगर कोई शिकायत पहुँच ही जाए तो उस व्यक्ति को जिस पर तथाकथित अत्याचार किया गया हो, सख्त हिदायत दे दी जाती हैं कि वह भविष्य में ऐसा मौका फिर न आने दे कि वह सँभलकर रहे और अपनी जवान बेटी व कुलच्छनी बहुओं को ठीक करह से डाँट-फटकार कर सही रखे, यों ही बेलगाम खुला न छोड़ दे जिससे गाँव के नेकचलन लड़के बिगड़ने लगें।

बाघा परिवार के बारे में जानते हुए भी गाँव वाले हमेशा चुप रहते थे। किसी के पास हिम्मत नहीं कि बाघा परिवार से टक्कर ले। बाघा कोई बलवान आदमी तो नहीं है। पर उसकी शक्ति बड़े-बड़े अहलकारों की कलमों से उपजती है। बड़े बड़े दफ्तरों से उसे शक्ति प्राप्त होती है। अपनी उस शक्ति के बल पर बाघा जिसे चाहे, जमीन पर गिरा सकता है। धूल चटा सकता है। बाघा के कुरीतियों का कुछ अंत है ही नहीं। बड़ी दादी को मृत साबित करके उसकी पूरी जायदाद हड़प लेता है। गाँव वाले इस मामले में सब कुछ जानते हुए भी चुप रह जाते हैं।

बाघसिंह की माँ जब आत्महत्या करलेती तो उसके अंतिम संस्कार के लिए ब्राह्मण को और पटवारी को सेत का कुछ हिस्सा लिख कर देता है।इस विषय के बारे में किसी को पता लगने नहीं देता।

देवीदत्त

देवीदत्त परगनाधिकारी है। टिहरी गढ़वाल के ज्यादा तर अधिकारी देहरादून में रहते हैं। लेकिन देवीदत्त नरेन्द्रनगर में रहते है।मन से और तन से भी। वे हमेशा अपने काम में तल्लीन रहते है। देवीदत्त को पता चलता है कि सोनी गांव की बुढ़िया, जो बडी दादी के नाम से जानी जाती है। सख्त बीमार है। देवीदत्त इसका भी पता लगा लेते है कि वडी दादी का जमीन और जायदाद बाघसिंह के कब्जे में है।बुढिया अकेली ही घर में रहती है। इन सब बातों की जानकारी के बाद देवीदत्त उस मामले में छानबीन करने की जरूरत महसूस नहीं

की थी।वे यही सोचने लगे कि एक बेसहारा बूढी है, वह बीमार है।उस का कोई अपना नहीं।

बड़ी दादी के बारेमें सुनकर देवीदत्त का मन विचलित हो उठा।बाकी अधिकारियों के लिए तो यह एक आम बात है। लेकिन देवीदत्त उस तरह नहीं सोचते हैं।उन से जितनी हो सके उतनी सहायता करना चाहते हैं। इतना ही नहीं, कर्मचारियों को साथ लेकर बड़ी दादी के घर चलने के लिए तैयार हो जाते है।

"देवीदत्त हर काम अपने आप को संतुष्य करने के लिए करता आया है। यह उसके जीवन का स्वभाव है। वह अपने सरकारी कामों से कतराता नहीं। उसने कभी किसी को अपने कार्यो से जानबूझकर दुखी नहीं किया। वह ईश्वर से डरता आया है। और ईश्वर से ज्यादा वह आदमी से डरता रहा है। वह मनुष्य मात्र से डरता आया है।उसके विचार में बडी दादी एक परमवीर महिलाहै। इस देश में राष्ट्रीय सम्मान पाने के लिए अगर कोई अर्ह पात्र है,तो वह बडी दादी है।जो आजीवन जिन्दगी की मुसीबतों से, समाज के बाधाओं सदानंदों, कर्णसिंहों की ओछी हरकतों से संघर्ष करती आई है और अब मौत से संघर्ष कर रही है।मौत उसे नहीं ले जाती तो वह स्वयं भी नहीं जा रही है।"[53]

देवीदत्त सिर्फ यही चाह रहे थे कि उनके वहाँ पहुँचने तक बडी दादी जीवित रहे।देवीदत्त काफी तेज कदमों से चलने लगते है वह चाहते थे कि मरने से पहले बडी दादी से बात करना और बडी दादी को यह बात का पता चलनी चाहिए कि किसी ने उसकी मदद की है।मरते हुए आदमी-औरत की सेवा करना सबसे पुण्य काम है।

"अपनी जवानी के दिनों में, अपने विद्यार्थी - काल में देवीदत्त ने जिस नए भारत की कल्पना की थी वह कहीं खो गया था। उसे सिर्फ इतनी खुशी थी कि सत्ता के विभिन्न पदों पर रहते हुए भी वह खुद नहीं खोया। उसने अपने आप को खोजने के मौकों से आजीवन जमकर संघर्ष किया। इतनी लंबी राजकीय सेवा करते हुए उसे हमेशा देश के सब से छोटे आदमी की याद आती रही। उसने निष्कलंक रह कर अपना काम किया लेकिन अपने अलावा और किसी अधिकारी-कर्मचारी के बारे में वह कुछ नहीं बता सकता। वह सिर्फ अपनी जिम्मेदारी ले सकता है और किसी की नहीं।"[54]

देवीदत्त बडी दादी से मिल लेते हैं और बडी दादी से बताते हैं कि तुम्हारी दुस्थिति की खबर सुनकर देश के प्रधान मंत्री को चिन्ता हुई और उन्होंने उसकी

सहायता के लिए पच्चीस रूपयों की रकम भेजी है।देवीदत्त बहुत घ्यान से बडी दादी की बातें सुनते है,बडी दादी उनसे कहती कि जितना रकम आप मुझे देना चाहते हो उतना गुड मुझे भेज दीजिए।देवी दत्त वृध्दा के जीवन की आखरी ख्वाइश को पूरा करना चाहा। मृत्यु की प्रतीक्षा करने वाले व्यक्ति के जीवन की अंतिम इच्छा को पूरा करना एक भला काम ही माना जाएगा।देवीदत्त बडी दादी को वचन देते हैं कि तत्काल गुड भेजा जाएगा।

लौटते समय रास्ते में बाघा देवीदत्त से मिलता है और पूछता है कि बूढी दादी मेरी शिकायत करी थी? "*देवीदत्त ने शान्त स्थिर स्वर में जवाब दिया-किर्फ तुम्हारी तारीफ कर रही थी, कह रही थी सिर्फ वही एक आदमी है जो मेरी देख-रेख परवरिश करता है।*"[55]

देवीदत्त को पता है कि बाघा ने बडी दादी की जमीन जायदाद हडप लिया। देवीदत्त वायदे के अनुसार बडी दादी के घर गुड की भेलियाँ भेज देते हैं। देवीदत्त एक अधिकारी होते हुए भी आम आदमी की तरह बडी दादी के घर आकर उसकी मदद करते हैं। आम तौर पर अधिकारी ऐसे चीजों पर ध्यान नहीं देते। लेकिन देविदत्त जैसे एसी अधिकारी बहुत कम पाये जाते हैं।

छुन्ना

सोनी गाँव में यह परंपरा चल रही थी कि किसी के घर त्यौहार या शादी या कुछ खुशी का मौका हो तो गाँव में सभी के घर पैणा भेजा जाता। बडी दादी के घर पर भी पैणा पहुँचा जाता। छुन्ना सात साल की लडकी है। वह पैणा लेकर बडी दादी के घर जाती है। बडी दादी के घर की सढ़ी देहली तक नहीं बन पाई। छुन्ना के लिए दहेली पर चढ़ पाना एक समस्या है। बेहद ऊँची देहली है। वह चढ़ नहीं सकती। अगर चढ़ जाए तो वहाँ से उतरना मुश्किल है। छुन्ना तो भविष्य की तस्वीर है और मकान अतीत की यादगार।

"देहली *ऊपर है, छुन्ना नीचे है।छुन्ना को अभी सब से ऊँची चढाई पारकरना बाकी है।छुन्ना खड़ी है। उसकी ठुड्डी उस दीवार को छू रही है जो दहेली के बाहर है। बाहर की वह दीवार दहली से नीचे है और उसका एक हिस्सा सीढ़ी से ऊपर है। दीवार एक है। आँगन से छत तक दीवार एक है।*"[56]

छुन्ना देहली पार नहीं कर पाती। देहली पार करने से वह कमरे में पहुँच सकती है। लेकिन देहली रूपी परंपरा जो है वह भविष्य की तस्वीर छुन्ना को रोक लेती है। पूरब में उगने वाले सूरज की किरणें अब तक सीढी पर खडी छुन्ना के पूरे शरीर पर चमकने लगी थी।

दा....आ....आ....दी ! ए बड़ी दा...आ...आ...दी....! छुन्ना ने थक कर एक आवाज दी उस कमरे के अंदर भेजा।रीते कमरे के अंदर से सूनी,बंद दीवारों के घेरे से टकरा कर उसकी आवाज उसी दरवाजे पर लौट आई।उसी देहली पर चली आई जिसके नीचे छुन्ना खडी हैं।आवाज भी हार गई।छुन्ना कमरे के अंदर नहीं जा सकती।जिसके लिए छुन्ना ने आवाज दी थी उसने वह आवाज नहीं सुनी।वृध्दा के कानों ने उसे अपने अंदर ग्रहण नहीं किया और किया भी हो तो उस की चेतना उस शरीर को नहीं थी जो उस समय एक कोने में एक फटे-पुराने,गंदे चीथडों के ढेर के नीचे अचेत लेटा था।

2.उत्तर बायां है चरित्र चित्रण

करणु

करणु चंदवाल गाँव का भेड़ पालक है। वह भेड़ बकरियों की रखवाली करता है। एक दिन रामदत्त जो बी.एल.डबल्यू है उनका आलू का बोरा उठाने से मना करता है, इसलिए उसने जान बूझकर करणु को ऐसे केस में फँसाता है, करणु को ही पता नहीं चलता कि उसने क्या किया। टिहरी पहुँचने पर उस पर यह इल्जाम साबित होता है कि उसने दूध बेचता हुआ अपने पास लाईसेंस नहीं रखा और पुलिस को उसने घायल कर दिया। कोर्ट में करणू सच बोलने की कोशिश करता है, लेकिन वहाँ कोई उसको सुनने वाला नहीं था। करणू के जरिए पता चलता है कि एक ईमानदार गाँव से आया हुया व्यक्ति किस तरह से कोर्ट के केस में फस जाता है। सच बोलता हैं लेकिन कोई उसकी कदर नहीं करता। करणु को बहुत बुरा लगता है। एक साल तक कोर्ट में केस चलने पर वह हार जाता है, दूसरे कोर्ट में अपील करने के लिए वकील कहता है तो करणू मना करता और कहता कि इस पर मैंने बहुत पैसा खर्च किया, मैं अब जेल जाऊँगा तो घर वालों को पैसा खर्च करने की जरूरत नहीं होती। आखिर करणू जेल चला जाता है।

करणू कोर्च जाने के लिए टिहरी जाते समय एक गाँव में रूकता है, वहाँ किसी रिश्तेदार पर भालू वार करता है तो करणु उस औरत को अस्पताल में भर्तीकरता है। डॉक्टर के लिए वह बहुत देर तक इन्तेजार करता है डॉक्टर न

आने पर उनका पता लगा कर वह डॉक्टर के गेस्टहाउस पहुँचता वहाँ किसी की पार्टी चलती रहती है। बहुत देर इन्तेजार करके डॉक्टर को लेकर ही वह वापस लौटता है। करणू का ऐसा व्यक्तित्व हमारे सामने आता है जो सिर्फ अपने लिए नहीं दूसरों के बारे में सोचता है। वह किसी का नुकसान नहीं करना चाहता, उसको टिहरी में हाजरी पेश करना था, जल्दी में था, फिर भी लोगों की मदद के लिए वहाँ रूकता है, बाद में अपने काम के लिए रवाना होता है।

करणू के मन में किसी प्रकार की खोट नहीं है। रामप्रसाद जब जेल आता है,करणू जानता है कि उसके वजह से करणु को जेल में रहना पडा। पर वह उससे कुछ कहता नहीं। करणू की पत्नी जब धनीसिंह के साथ भाग जाती है और करणू धनीसिंह के घर में अपनी पत्नी को देखता है लेकिन कुछ कहता नहीं, बस इतना ही सोचता कि उसमें क्या कमी थी कि अपनी पत्नी को धनीसिंह जैसा दुष्ट आदमी के साथ रहना पड़ा। जब वह वापस लौट कर घर आती है तो करणू उससे कुछ नहीं कहता।करणू मानवता का प्रतीक बनकर हमारे सामने आता है।

सदरू

सदरू एक पालसी है। भेड़ बकरियों की रखवाली करता है। घर से दूर अपने मालिक के पशु का खयाल रखता है। वहाँ सदरू पशुओं की देखबाल करता है। उस रात वहाँ एक बाघ आया था कितने पशु बचे उसको पता नहीं चल रहा था, उसके दो कुत्तों में से एक मारा गाया था। जो बाकी बचा कुत्ता शिखू और पशुओंको लेकर सदरू अपने गाँव की ओर निकलता है। करणू और सदरू दोनों मिलकर पशुओं की रखवाली करते थे। करणू को टिहरी जाना था, उस पर कुछ केस हुआ था, इसलिए अकेले सदरू को ही गाँव लौटना पडता है। रास्ते में बारिश के साथ रात में बर्फ भी गिरने लगती है तो उसको वही रस्ते में अपने पशुओ को लेकर रूकना पडता है।

रास्ते से भटकी सकीना एक गूजर की लडकी से सदरू की मुलाकात हो जाती है। उस रात उसके डेरे में सकीना को जगह मिलता है। सकीना सदरू के प्रति आकर्षित हो कर उसके पास जाने पर सदरू उसको मना करता है और कहताहै कि मैं अपने पत्नी से बहुत प्यार करता हूँ। सकीना को सदरू बहुत अच्छा लगने लगता है। वह सकीना से कहता कि किसी गूजर लडके से शादी करके अपनी जिन्दगी खुशी के साथ बिताए। इससे सदरू के सच्चरित्र का पता चलता है। वह सकीना से कहता है कि -" *तुम लोग और हम इन पर्वतों के बेटे-बेटियाँ*

है। यही हमारा रिश्ता है। यह धरती माँ तुम्हें भी पालती है और हमारा भी पालन करती है। तु यहाँ से उसी तरह बाहर नकल जैसे अपने डेरे से बाहर निकलती है। भैंस-पालक गूजर और भेड़-पालक खडवाले के पर्वती डेरे में कोई फर्क नहीं। यह इन्सान का डेरा है।"[57]

सदरू एक गाँव का अनपढ़ पालसी लेकिन व्याकतित्व के तौरपर वह किसी पढे लिखे इनसान से कम नहीं था। दिल का सच्चा और गाँव में सब की मदद करने वाला सदरू एक भोला है ये कूटनीति बिल्कुल जानता नहीं, उसका मन उतना ही साफ है जितना बुग्यालों के पास उगने वाले फूल। बहाँ का पानी तो स्वच्छ है ही।

सकीना

सकीना एक मुसलमान गूजर लड़की है। वह भैंस का दूध दुहने गधरे के पास आती तो अचानक बाढ़ आ जाती है। वह अकेली गूजर लड़की रास्ते में करणू और दुकम से मिलती है, उनको टिहरी पहुँचने की जल्दी थी, इसलिए उसे नाक की धार तक छोड कर वे लोग आगे बढ़ जाते हैं।

सकीना सदरू का कुत्ता रिकू की आवाज सुनकर उसके डेरे पर पहुँचती है। वहाँ उस को सदरू का चरित्र के बारे में जानने का अवसर मिलता है। उस रात वे लोग बहुत सारी बातें कर लेते हैं। सकीना सदरू को अपनी झोंपडी में आने के लिए कहती है। वह कहता कि अगली बार जरूर आऊँगा। सकीना को यह जानकर खुशी होती है कि- *"इन शिखरों पर औरत के जिस्म के भूखे लोग नहीं रहते।वे लोग रहते हैं जो औरत की इज्जत और अस्मिता की रखवाली करना जानते हैं। सकीना को लग रहा था कि सदरू ने उसे एक गहरी खाई में गिरने से बचा लिया है।"*[58]

सर पर खाली बंठा।हाथ में लाठी।गूजर की बेटी बड़े आराम के साथ नदी की धार से नीचे उतर रही थी।वह लगातार सदरू के ही बारे में सोचती जा रही थी।रास्ते में उसे केशरसिंह परेशान करने लगता है।केशवसिंह हाथ में बंदूक लेकर सकीना को अपने हवाले करने की कोशिश करता है।लेकिन गूजर की लड़की डरने वाली नहीं थी।उसके हाथ की लाठी काफी थी दुष्मन से भिडने के लिए ।वह उससे कहती है कि -"*इससे ज्यादा जबर्दस्ती क्या करेगा रे तू? तेरे इस थैले में जो कुछ भरा है वह धरती की लूट का माल है। जड़ीबूटियों की तलाश करने के नाम पर तू और तेरे जैसे लोग पौधों को उखाड़ कर उन्हें जड़ से नष्ट कर देते हैं। जिन पौधों की पत्तियों को खा कर मेरी भैंस कादूध बढ़ता है तुम उन्हें जड़ से*

उखाड़ देते हो। उनके फूलों को ही नोच डालते हो। फूलों के नए बीजों के आइन्दा जमीन पर गिरने, जमने और फूलने-फलने की नौबत ही नहीं आती। इस धरती के सीने पर उगी हुई किसी भी हसीन चीज को फूलते-फलते नहीं देख सकते तुम उसे रौंद डालते हो। उसे उखाड़ कर अपने इस गंदे थैली में भर देता है तू। फिर इन शिखरों से मैदानों में उतर कर इस थैले में जमा माल की तस्करी करता है। तूम लोग कुदरत और हुस्न के दुश्मन हो।"[59]

सकीना उन जडी बूटियों का थैला फेंक देती है।अकेली लड़की होने पर भी सकीना डरती नहीं। एक आधुनिक लडकी की छवि सकीना में दिखाई देती है।अंत तक वह हार नहीं मानती।

बेतालू

बेतालू गाँव में घराट (पनचक्कियां) चलाने वाला है। घराट नदी तल की बराबरी के स्थर पर नदियों के किनारों पर बने होते हैं। सतगंगा ने उस घराट का नामोनिशान नहीं राखा। बेतालू के पास सिर्फ दे नाली जमीन थी। उसने राजा के जमाने में लंम्बा मुकदमा लड़कर कोर्ट से घराट की अनुमति प्राप्त की।बेतालू की आधी जिन्दगी घराट पर बैठे,वहाँ काम करते बीत गई। बेतालू के पास तब भी दो नाली जमीन थी। अब भी दो ही नाली है। घराट लगाने के बाद उसकी माली हालत सुधर नहीं पाई। अलबत्ता उसकी दैनिक रोटी की समस्या हल हो जाती थी। घर में जरूरत के लायक आटा रोज घराट से आ जाता था।

गाँव में जोर दार बारिश और बाढ़ के कारण वहाँ के पूरे इलाके के जमीनों,मकानों को तोड़ दिया। सबसे ज्यादा नुकसान घराटों का होता है। रैमासी में मशहुर-बेतालू का घराट। सतगंगा ने उस घराटे का नामो निशान मिटादिया। कभी-कभी प्रकृति भी गरीबों का साथ नहीं देती। उन लोगों के झोंपडियों की भी कुछ नमोनिशाना नहीं रहा। अमीरों का तो कुछ निकसान नहीं होगा। इन्हीं लोगों की जमीन, जंगल, घर सब कुछ नष्ट होजाते है।

बेतालू को उनदिनों की याद आनेलगी कि वह कोर्ट सेघराट लगानेकी अनुमति प्राप्त करने पर भी गाँव में कुछ लोग इससे सहमत नहीं होते। कुछ लोगों को जलन होती है, फिर उस पर केस दर्ज किया जाता है। बेतालू को फिर से दो साल लडना पडा। रिकू जो उस गाँव में सबसे ज्यादा जमीन थी और साहुकारी का धंधा भी करता। आखिर बेतालू ने रिखू से कहता है कि "*तुम मान्य साहुकार*

हो एक -एक आना पाई का हिसाब रखते हो। पिछले दो साल से मैं इसलिए खर्च कर रहा हूँ कि मुझे घराट लगाकर कुछ रोटी की जुगाड़ करनी है। पर तुम्हारी तो कोई आमदनी नहीं होनी है? मेरा घराट बने तब भी नहीं न बने उस हालत में भी नहीं। तुम काका, अपनी रकम किस फायदे के लिहाज से खर्च कर रहे हो?इतना छोटा हिसाब तुम क्यों नहीं लगा पा रहे हो? तुम्हारी तो कोई अर्जी नहीं लगी है घराट बनाने की? तुम घटवार नहीं बन सकते काका। घराट को घट कहते हैं और घट हमेशा घटाता रहता है। तुम्हारे जैसे इज्जत दार आदमी को घराट लगाने की क्या जरूरत ?"[60]

इसके बाद रिकू अपना केस बापस ले लेता है।बेतालू के चरित्र से हमे पता चलता है कि गरीब लोगों को एक तरफ कोर्ट कचहरी चूसने लगती तो दूसरी तरफ ईष्य के कारण कुछ गाँव वाले उन्हें आगे बढ़ने नहीं देंगे।उनके रास्ते पर आतंक पैदा करने की कोशिश करते हैं।लंबे अर्से तक घराट चलाने पर बेतालू के जीवन में कुछ फर्क नहीं पड़ता।बाढ़ के कारण उसका घराट का कुछ नामो निशान भी नहीं बचता।बेतालू में एक अकलमंद व्याक्ति नजर आता है।

वहीद

वहीद एक मुसलमान गूजर लडका है। उपन्यास में वहीद हमारे सामने तब आता है जब आजादी के तुरन्त बाद गूजरों की स्थिति का वर्णन होता है। उस समय गूजरों को यहाँ रूकने के लिए,प ाशु चराने की अनुमति पत्र लेनी होती थी। उस समय गूजरों पर अनेक तरह के अत्याचार होते थे। सरे आम काल्ल किया जाता था। गूजरों पर लूट भी होती थी। गूजर वहीद आयशा से बहुत प्यार करता है। गूजर एक जगह बसते है तो अपने घोडों को ढूंढकर अपने वश में ले आते हैं। गूजरों के बेटे घोडों को तलाशने निकलते है। घोडों को पकडने के लिए गूजर जत्ये बनाकर जाते हैं। मस्ती में घूमते हुए घोडों को पकडना अकेले आदमी के वश की बात नहीं होती।

वहीद घोडे के पीछे भाग कर घोडे का मुह खोलकर उसने अंदर लगाम का लोहा अटका देता है। भागते हुए घोडे के साथ भागने के लिए हिम्मत के साथ साथ शक्ति भी चाहिए।

"उस *साल,हिन्दुस्तान की आजादी के बाद,मुल्क के हालात सेडरे हुए गूजरों ने बहुत भारी मन से और बहुत देर से अपनी खामोश बुग्यालों से बिदिई भी थी।शुरू अक्टूबर तक भी वे बुग्यालों में ही रह गए।उस के बाद बहाँ की ठंड में जानवरों का जीना मुश्किल होने लगा,गूजरों ने अपने खेमे हटाये थे।"*[61]

गूजरों को एक जगह से दूसरी जगह जाना हो तो अपने पशुओं के साथ,सब गूजर साथ में निकलते हैं।

"वहीद ने आयशा के करीब आकर धीमी आवाज में कहा -कल के बाद जिन्दा रहा तो मैं तिरी भैंसों की नहीं तू मिरी भैंसों की देख-रेख करेगी।मैं हर हालत में तुझे ले जाऊँगा इन्शा अल्लाह।"[62]

उस रात आयशा और वहीद कई मर्तबां अपने-अपने तिरपाल की ओर से बाहर निकरते थे।खुली चान्दनी में वे दूर-दूर से एक-दूसरे को देखते रहे थे।

ऋषिकेश के बसिन्दगान ने अपने करीबी जंगल में बेकसूर नौ गूजरों और एक गूजरी के मार दिए जाने की मनहूस,दिल दहला देने वाली खबर बहुत ग़मगीन होकर सुनना पडा।मरने वाले गूजरों में किसी का नाम का पता नहीं चलता।यह खबर पूरे गढ़वाल में आग की तरह फैलने लगी थी।गूजरों पर दंगे होंगे ये प्रशासन पहले से जानती थी,फिर भी उन्होंने इनकी हिफाजत नहीं की।बेकसूर गूजरों को अपनी जान देनी पडी।नौटियाल जी आयशा और वहीद की मौत की खबर बाद में सकीना,आयशा जिस की पड़ फूफी थी उसके मुह से कहलाते हैं कि जो नौ गूजर और एक गूजरी मार दी गई उन में वहीद और आयशा भी थे।

आयशा

आयशा एक सुन्दर गूजर लडकी है, जो वहीद से बहुत प्यार करती थी। पैंसों के लालच में आयशा के पिता ने वहीद से शादी के लिए वहीद से पैसा, और भौंसों को माँगता है गरीब वहीद के पास न इतना पैसा था, न भैंसे। आयशा को तो वहीद के साथ भागने की हिम्मत नहीं थी। आयशा की शादी बूढे सईद के साथ करने के लिए उसके घर वाले तय कर देते हैं।

"एक दर्जन भैंस आयशा को अपने सीगों पर उठाकर बूढ़े सईद के पलंग पर डाल देंगी। आयशा, गूजर की बेट आयशा जिस ने बचपन से भैंसों का दूध पिया था और उनके साथ जिन्दगी बिताई थी, उन्हीं भैंसों से खौफ महसूस करने लगी थी। एक दर्जन भैंसे उसके घर के अन्दर दाखिल होकर आयशा को उसके बाप के घर से बेदखल कर देंगी। उन भैंसों का कडवा खयाल उसकी जिन्दगी के हसीन सपनों में बाधा पैदा करने लगा।"[63]

आयशा तो वहीद की राह देखने लगती है।वह सपने देखने लगती है कि घोडों के साथ भागने वाला वहीद ने सरपट भाग रहे घोडे को रोक कर असे

जमीन से उठा लिया है,उसे अपने घोडे की पीठ पर बैठा लिया है और फिर वह घोडा उन दोनों को कहीं दूर भगाए ले जा रहा है।वह अपनी माँ से कह कर भैंस का दूध दुहने के लिए सेती धार के पास जाती है उसका मन तो यही कहता रहता कि उससे मिलने वहीद जरूर आएगा।आयशा के मन में यह उम्मीद थी कि वह एक झलक तो वहीद को देखी ही लेगी।

आयशा मन में सोचने लगती है कि *"क्या मैं बिकाऊ माल हुँ? गाय भैंस की तरह बिकाऊ? मैं इन्सान हूँ या नहीं हूँ? क्या ऐसा नहीं हो सकता कि मैं अपने बाप से कह दूँगी कि मैं जा रही हूँ, मैं बिकाऊ माल नहीं हूँ? मेरे इतना कहते-कहते मेरा बाप मेरी जुबान बाहर नहीं खींच देगा?"64*

आयशा वहीद से प्यार करती है, पर हिम्मत नहीं कर पाती। वह जानती थी कि वहीद के बगैर तो वह रह नहीं सकती। उसे बूढ़े सईद के साथ शादी नहीं करनी है। पर वह उसके पिता के खिलाफ कुछ कह नहीं पाती।वहीद जब उससे कहता कि उसे अपने साथ ले जायेगा, उसमें उम्मीद की आशा जागती है, उसकी आँख नम हो जाती है। आयशा अपनी भाभी रईसा से कहती कि मेरी आँखों में कोई उडती हुई चीज फंस गई भाभी तो रईसा कहती-ऐसे ही होता है आयशा। इन आँखों में उड़ती हुई चीजें फंस जाती हैं। वे गड़ने लगती है। तब कम्बख्त दिल को दर्द होने लगता है। आयशा वहीद की शादी नहीं होती, उसी रात उन लोगों पर हुए हमले में वहीद के साथ आयशा भी मारी जाती है।

देवी प्रसाद

देवी प्रसाद रैमासी का एक साहुकार है। लोगों की मुसीबतों का फायदा उठाकर उनको पैसा देता है और बाद में उनकी जायदाद हडपना तो देवी प्रसाद की आदत है। नत्यू, करणू हुकम पटवारी के साथ मिलकर देवी प्रसाद के घर जाते हैं पाँच सौ रूपए उधार माँगने के लिए।पटवारी उनके आने का मकसद बताता है तो देवी प्रसाद कहता है कि-"*लेकिन आप जानते है हमारी सरकार ने साहूकारी प्रथा पर रोक लगा दी है। कानूनी रोक। पहले की तरह कोई तमस्सुक तो अब लिखा नहीं जा सकता।नहीं तो मुझे गिरफ्तार करने के लिए सरकारी वारण्ट आपके पास ही भेजा जाएगा। इस जजमान के पास कोई चीज बेचने को हो तो उसे मैं खरीद सकता हूँ।"*[65]

पटवारी और देवीप्रसाद की चाल को तो ये लोग समझ नहीं पाते।आखिर यह तय किया जाता कि नत्यू की जमीन देवीप्रसाद को बेच दिया जाय। बिक्री

नामा भी लिख दिया जाता है। इस बिक्री नामा के मुताबिक जमीन तो देवीप्रसाद का हो चुका और नगद पाँच सौ रूपए नत्यू को मिलना था लेकिन जब नत्यू पैसों का गिन्ती करता है तो साढे तीन सौ ही उन को मिलता है। नत्यू पूछने पर देवी प्रसाद कहता है कि-"*रकम पाँच सौ ही मानी जाएगी।बाकी रूपया गांठ खुलाई और एक साल के सूद का काटा गया हो गा। मैंने ठीक तरह से हिसाब लगाकर दिया है।*"[66]

इस तरह देवी प्रसाद गरीब लोगों की मजबूरी का फायदा उठाता रहता है। पहले तो ढोंग रचता है कि वह पैसा नहीं देसकता, सामने जो खड़े गरीब को पैसों की कितनी जरूरत है वह पहले ही पहचान लेता और ऐसा चाल चलता कि उनको लाचार बना कर उनका जायदाद हडप लेता है। मदद करने का ढोंग करता है। अनपढ़, बेबसी, गरीब लोगों को इन सब चीजों का पता नहीं होता बस इतना सोचते कि उस मुसीबत से बाहर आजाए। देवी पासाद तो उसमें अपना फायदा ढूंढता है। गरीब लोगों की जमीन तो घटती जा रही।देवी प्रसाद अपनी जायदाद को बढाता हुआ आगे बढ़रहा है।

रोशना

रोशना करणू की पत्नी है। चंदा गाँव में अपने सास,ससुर,देवर,देवरानी के साथ रहती थी।घर का काम बहुत अच्छे तरीके से कर लेती थी करणू और उसका भाई सदरू हमेंशा बुग्यालों में ही रहते थे। घर पर बहुत कम दिनही रह पाते थे। एक दिन करणू घर आता तो उसकी माँ उसे बताई कि-"*बेटा तेरी घरवाली भाग गई है। वह कहीं ढंगार या बूटे में नहीं गिरी। कहीं नदी-नाले में बहकर नहीं मरी। किसी आदमी के साथ चम्पत हो गई।घास लेने वन गई थी। लोगों की घसियारिनें घर लौटीं, हमारी घसयारिन को जंगल से ही कोई उड़ा ले गया।*"[67]

रोशना घनसिंह के साथ भाग जाती और उसके ही घर में रहने लगी। करणू को पता चलने पर भी कुछ नहीं कर सका। रोशना एक दिन रैमासी की एक बूढ़ी दाई सिब्बी के पास जा कर अपना पेट दिखाती है। सिब्बी ने बताया है कि उसका पांचवा महीना चल रहा है।

रोशना एक आदमी के घर से नहीं भागी, वह पूरे गाँव की सीमाओं को लाघ कर भाग खडी हुई है। धनसिंह को घर छोड कर वह रैमासी में किसी भी दूसरे आदमी के घर चली जाती तो कोई खास बात नहीं होती। रोशना ने तो सबको धता बता दिया। चांदी से अपने पावों से चलकर धनसिंह के घर रैमासी

आयी थी। चंदवालों को इस बात का कोई आभास नहीं था कि रोशना धनसिंह के घर भी जा सकती है।

आखिर रोशना को पता चलता कि वह माँ बनने वाली है वह करणू के घर वापस आजाती है। रोशना यही चाहती थी कि उसको एक बच्चा नहीं हो रहा था, गाँव के लोग कूछ नहीं कह सके। कुछ पुरानी यादों को याद करने लगी कि बच्चा न होने पर कुछ औरतें दूसरे मर्द के साथ माँ बनती थी और वापस अपने घर पहुँच जाती। रोशना ने जो किया उसका किसी ने दोष नहीं माना। इस मामले में तो करणू रोशना से न कुछ पूछा, न कुछ रोशना ने करणू से कहा। हुकम जा कर रोशना को घर वापस ले आता है।

धनसिंह

धनसिंह रैमासी में रहने वाला है। धनसिंह कोई काम नहीं करता। दूसरे की मुफ्त की कमाई पर जिन्दा रहने वाला। अपने अकेले पेट के लिए भी खाना नहीं बना सकता। करणू को जब जमानत की जरूरत होती तो पटवारी कहता कि धनसिंह को अपने साथ ले जाना। उसे दस रूपए देने से वह साथ आएगा। वह वहाँ के मन्शी और वकील को जानता है, तुम उसे अपने साथ ले जाओ काम आसानी से हो जाएगा। लम्बे समय तक यह सिल-सिला चलते रहने के कारण करणू को धनसिंह के घर पर ठहरना होता था।

धनसिंह जानता था कि करणू को उसकी कितनी जरूरत है।"*धनसिंह बहाने बनाने लगा। कहा - टिहरी जाने का टेम नहीं लग रहा है।*"[68] धनसिंह जानता है कि उसकी कीमत इस मौके पर बढ़ गई है। जो वह नहीं जाएगा उसके कागजात नए सिरे से तैयार करने में और ज्यादा खर्च हो जाएगा। इस तरह धनसिंह करणू के पास पैसा लूटता रहता है।

एक दिन धनसिंह करणू की पत्नी को भगाकर ले आता है। वह धनसिंह के साथ उसी के घर में रहने लगती। यह जानते हुए भी करणू कुछ नहीं कर पाता।एक दिन अचानक करणू की पत्नी घर से गायब हो जाती है। धनसिंह के समझ में नहीं आता कि वह क्या करे। धनसिंह कुछ काम नहीं करता था। करणू की पत्नी घसियारिनों की साथ जाकर काम करती थी। बहुत सारा पैसा भी मिल जाता था।

धनसिंह करणू को भी धोखा देता है। धनसिंह के घर में अपनी पत्नी को देखकर करणू कुछ नहीं कह सकता। उस पालसी के पास इतनी हिम्मत नहीं कि

धनसिंह से पूछे मेरा घर उजाड कर तुम अपना घर बसा लिया, जिस तरह रोशना जो करणू के पत्नी धनसिंह के पास आती जब उसे पता चलता कि वह माँ बनने वाली है वह चुपचाप धनसिंह के घर से भाग जाती है। वह करणू के पास चली जाती है।

किसला

किसला एक भोली और सुन्दर औरत है। शादी होकर दस साल होने पर भी उसका बच्चा नहीं हुआ। किसला का पति बहुत भला आदमी है। स्वस्थ दिखाई देने वाले अपने मर्द के साथ उसे एक विधवा जैसी जिन्दगी बितानी पड़ती है। वह अपने पति के बारे में कभी किसी औरत के सामने कुछ भी नहीं कहा। किसला एक दिन पडोसी के आंगन में बंधी जवान पैणदी को देखा। उसे तून आगई थी।उसे पट्ठा के पास ले जाना है। पट्ठा तो जोल के पास है। दूर दूर गाँव के लोग अपने भैंस को लेकर वहां आते हैं। तीर कांठा में जोल रहता है। जोल और पट्ठे के अलावा उस घर में और कोई नहीं रहता।

किसला मन में यह सोच कर जोल के पास जा रही थी कि पौणदी को तो पटठे के हवाले कर दूँगी और में खुद जोल के बाहों में जाकर उससे कहदूंगी कि मुझे भी एक बच्चा देदे। उसका पति भी इस बिषय में कुछ नहीं कहेगा। किसला को तो बांझपन से मुक्त पाना है। किसला जोल के घर पर पहुँचती है।

किसला जोल से कहता है -*"अकेली नहीं रहूँगी तुम भी रहोगे मेरे साथ। मैने दस साल तक काफी कुछ सहन कर लिया। पर आज नहीं सह सकती। तुम मेरी बात नहीं मानोगे तो मैं आज तुम्हारे ही सामने अपनी जान गंवा दूंगी।पशु के मन में भी इच्चा का वेग उठता है और उसकी इच्छा भी पूरी हो जाती है। पौणदी भी आबाद हो कर जा रही है यहाँ से ।"*[69]

जोल बहुत समझाने पर भी वह मानने को तैयार नहं होती।वह किसला को आश्वासन देता कि उसके पति को वह कुछ दवाइयाँ देगा तो उस को जरूर बच्चा होगा।किसला को लेकर वह उस रात ही किसला का घर पहुंचता है।किसला के मायके और ससुराल में उसकी हम उम्र सभी औरतों का मां बनने का सौभाग्य मिला है।किसला के मन में जोल ने आशा की किलमे जगा दी।किसला को जोल के मुख से निकलने वाली हर बात पर विश्वास होने लगा है।यह आदमी आम लोगों से एक अलग किस्म का आदमी है।

जोल जीतू को समझा कर किसला के पास भेज देता है।किसला आखीर अपना मंजिल को पा लिया।

जोल

जोल तीरकांठा में अपने पटठे के साथ रहता है।पाँच साल पहले उसकी पत्नी चल बसी।जब वह जीवित थी तो पटठे(भैंसा सांड) को मारने नहीं दिया।उसके चले जाने के बाद जोल पटठे को ही आपना बेटा मानने लगा।सब लोग अपने पौणदी(भैंस)को लेकर जोल के पास आते हैं।वह किसला से कहता है कि-*"पहाडों के ढलानों पर जो घास फैली दिखाई देती है वह पशुओं के खाने लायक घास नहीं है।बास्या के झाड़ है। एक ऐसा बेकार पौधा जिसे किसी भी काम के लिए इस्तमाल नहीं किया जा सकता।उसकी पत्नी, टहनी,फल,फूल या जड़ कोई भी चीज काम की नहीं होती।हवा कोभी खराब कर देता है।आदमियों कोरोगी बना देता है।यह हमारे पहाड का पौधा नहीं।हमारे देश का भी नहीं।विदेशी पौधा।भूख फैली थी।सरकार ने अमरीका से गेहूं मंगवाए थे।अमरीका के गेहूँ के दानो के साथ इसके बीज भारत चले आए थे।खूद तो नहीं आए होंगे।भेज दिए गए होंगे।इसे कोई पूरी तरह खत्म नहीं कर सकता। हमारे जंगलों और खेतों में उगने वाले फूल पौधो का सर्वनाश करता जा रहा है। यह दुर्बीज हमारे देश में जमकर बैठ गया है।"*[70]

जोल तो एक अनपढ़ इनसान है, लेकिन उसकी बातों से ऐसा नहीं लगता। किसला जब जोल के पास आकर उसे एक बच्चा देने के लिए कहती तो, वह आसानी से बात टालता है और कहता कि मेरी जिन्दगी में मैने मेरी पत्नी के अलावा और किसी स्त्री से संबन्ध नही रखा। मैं अपनी पत्नी से बहुत प्यार करता हूँ। जोल अपने को कुछ बोल पाने की हालत में नहीं पा रहा था।उसने किसला को अपनी गोद से हटाकर जमीन पर धर देता है।

जोल किसला को बता देता है कि किस तरह उसने हसीनो के पति अलादीन को दवाएं दी।हसीना जो गूजर की लडकी थी, अपने पति के साथ जाने से इनकार कर देती उसे पति को देखते ही गए आ जाता था।अलादीन मेरे दवाइयां लेने के बाद हसीना के पास गया और कुछ ही दिनों में वह अपने पति के साथ ससुराल चली गई। किसला को समझाता कि मैं किसी का नाजायज फायदा उठाना नहीं चाहता। तुम अपने पति से बहुत प्यार करती हो मैं, तुम्हारे पति से बात करूँगा उसके बाद उसको दवाइयां दूँगा। जोला के कारण किसला का जीवन फिर खुशी से भर जाता।

3.झुण्ड से बिछुडा उपन्यासों के पात्र

दुश्मन (शतरू)

दुश्मन इस उपन्यास का मुख्य पात्र है। दुश्मन का जन्म होते ही उसके पिता का मृत्यु हुई। जब से दुश्मन की माँ उसे दुश्मन नाम से पूकारती थी।गाँव वाले शतरू करके पुकारते थे। दुश्मन का शरीर बेहद दुबला पतला। देखने से ऐसा लगता था कि तेज हवा चलेगी तो वह उसे कहीं दूर उड़ा ले जाएगी। लेकिन उसके मजबूत कलेजा का कोई शेर भी मुकाबला नहीं कर सकता था। उसका तो मुकाबला ही बाघों से होता था। गाँव वालों से अपने पिता के बहदूरी के कहानिया सुनता था। दुश्मन तोपची बनना चाहता था। उसकी माँ यह नहीं चाहती थी कि वह तोपची बने। दुश्मन की माँ चाहती थी कि वह पल्टन में भर्ती हो जाए।लेकिन पल्टन में भर्ती होने की बात हरी वर्दी पहनने की बात, अपनी एडियाँ बजाते हुए अपनी आजादी को खत्म कर, बदन को बे वजह तान कर, हाकिमान को सलामी बजाते रहने की बात शतरू को लुभावनी नहीं लगती थी। वह हमेशा अपनी मर्जी का मुताबिक रहने का ख्वाईशगार रहा है।

दुश्मन की माँ सरला है, पिता जग्गू अब इस दुनिया में नहीं है वह एक तोपची था। जब भी अपना पति बंदूक हाथ में लेकर जंगल की ओर निकल पडता था तो उसके आने तक सरला का मन विचलित रहता। जब तक जग्गू घर नहीं लौट आता, तब तक वह नींद की एक झपकी भी नहीं ले सकती थी। वह सोना चाहती, तब भी सो नहीं सकती थी। अपना आदमी बाघ का मुकाबला करने, उससे मुठ भेड़ करने गया है। उसे अपने घर के बिस्तर पर नींद कैसे आ सकती है? साँसे रोक कर वह जंगल की ओर से सुनाई दे सकने वाली किसी गोली चलने की आवाज पर अपना ध्यान केंद्रित करने लगती थी। सही सलामत घर की ओर आते हुए अपनी आदमी को देख कर उसकी जान में जान आ जाती थी। इसलिए वह नहीं चाहती थी कि अपना बेटा तोपची बने। दुश्मन को पल्टन में दाखिल होने के लिए कहती है।

दुश्मन पल्टन में भर्ती न होने से उसकी माँ उदास होती है लेकिन बेटे के तोपची बनकर जब गाँव का रक्षा करता है तो अपने नजरों में बेटा बहुत ऊँचा हो जाता है।

दुश्मन गाँव वालों का भरोसा था। सब यह जानते थे कि अकेला दुश्मन ही बाघ पर वार कर सकता है, इस गाँव को बाघ से बचा सकता है।

शान्ति बुढिया

शान्ति बुढिया इस उपन्यास की त्रासदी का प्रतीक है। शान्ति बुढिया एक एसी औरत है जिसके कोई अपने नहीं है सिर्फ गाय को ही अपना सब कुछ मानती है। गाय को नाम भी रखा था शान्ति ने *भोली*। जब भोली पैदा होने के बाद उसकी माँ नहीं रही। तब से भोली शान्ती बुढिया की जिन्दगी का एक हिस्सा बनगई। हर दिन शान्ती बुढुया भोली से बातें करती रहती थी। अपने खूँटे पर खडी भोली उसके मुँह से निकलने वाली सब बाते खानेशी से सुनती रहती है। गाय उसकी सहेली है। गाय के बगैर वह जी नहीं सकती। अपने हर काम को करने से पहले वह गाय के पास आकर बात बता जाती है। खलासा कर जाती है। गाय से उस काम का मतलब हो चाहे न हो।

शान्ति बुढिया की भोली गाय। नाटे कद की एक छोटी सी काले रंग की गाय ऊँछाई में बिल कुल शान्ति के बराबर। शान्ति कुछ बोलती है तो अपनी गर्दन ऊँचा कर भोली उसकी ओर देखती जाती है। ऐसे देखने लगती है जैसे वह सब कुछ समझ रही है, शान्ति क्या-कुछ बोल रही है। रोटी के टुक़डे बची हुई रोटियाँ बची हुई दाल या सब्जी अक्सर भोली के पास भी पहुँचती रहती है। भोली को चरने के लिए जंगल नहीं भेजती थी घर के आस पास ही चराती थी। एक दिन गाँव के सब पशु घर लौटे मगर भोली वापस नहीं आई। जब शांति को पता चलता है कि बाघ ने भोली को मारदिया वह अपने बिस्तर में लेटी बड बडाती रही-

" *भोली मैं तो तुझे बता कर गयी थी कि मैं पानी लने धारा पर जा रही हूँ और वन से गाँव की और लौट रहे दूसरे पशुओं के साथ मिलकर तू खुद ही घर पहुँच जाना। जैसे तू रोज पहूँचत रहती थी। तू ने धोखा कर दिया मेरे साथ। मुझे अकेला छोडकर चली गयी। नहीं भोली। तेरा कोई दोष नहीं गलती मुझ से ही हुई जोमैं तुझे खेत किनारे निपट अकेले छोड़ कर वहाँ से चली आयी। बाघ ! तुझे मेरी हाय लगेगी। तू भी मेरी ही तरह मरेगा। तड़प तडप कर मरेगा। अपनी मौत नहीं मरेगा किसी और केहाथ से मारा जायेगा।*"[71]

शान्ति गोदन भी करना चाहती है लेकिन जैसे ही वह दान करने की बात सोचती है फौरन यह खयाल भी उसे परेशान करने लगता है कि अभी न जाने और कितने दिनों तक धरती पर कायम रहते रहने की नौबत आती है। जीवित रहना, जिन्दगी काटना उसके लिए एक कठिन काम है। सब से मुश्किल काम। शान्ति अपनी जीन्दगी पर बार बार विचार करती है। सोचती रह जाती है कि बहुत

मुश्किल काम है दुनिया में जिन्दा रह पाना, और जिन्दगी के आखिरी मौके पर पराक्षित हो कर हरना। मनुष्य की खाल के अन्दर उठती गिरती साँसो को कायम रख पाना। यह तो सबसे मुश्किल काम होता है। भोली के अपने आँगन से निकल जैने के बाद उसके पास कुछ भी तो नहीं रह जायेगा।

वह मनहूस खबर, पलक मारते न मारते, पूरेगाँव में फैल गयी थी। गाँव की सबसे गरीब, बेसहारा बुढ़िया, शान्ति की गाय, भोली। बेहद अफसोस की बात। उसकी एक मात्र जायदाद। विधवा बेसहारा शान्ति जिस के कोई अब आगे नहीं पीछे नहीं। बेटा, न बेटी, आदमी इस संसार के कब का विता हो जुका था। गाय का दूध बेचकर और उसकी सूरत को देख देख कर, उसकी सूरत के सहारे किसी तरह अपना गुजारा कर रही थी।

गाय भी तो अपना वादा नहीं निभा सकी। गाय भी चली गयी उसे अकेला छोडकर। उन दोनों की जिन्दगी के बीच में एक बाघ आ पड़ी कहीं से। वह बिस्तर पे सो कर बड बडा करती थी। अपने खेतों के किनारे ही घास चरवालिया करती थी वह पनी गाय को। भोली शान्ति से कभी यह नहीं पूछती कि वह क्या करने जा रही है। ऐसे सवाल भोली न कभी पूछती है, न पूछे सकती है। फिर भी उसे अन्दाज रहता है कि वह कहाँ जा रही है। लेकिन शान्ति खुद ही बोले जा रही है। अपनी एक एक बात भोली को बताय बगैर, हर जीज का हवाला दिये बगैर शान्ति को चैन नहीं मिलता। भीतर से कोई काम करके आएगी। बाहर खूँरे पर बँधी, खमोश भोली को उस कर हिसाब देने लगगी।

अब तो भोली नहीं रही शान्ति को अधमरा छोड कर चली गयी। पूरा गाँव बुढिया पर तरस खा रहा था। बूढी दादी और गाय का रिश्ता माँ-बेटी का रिश्ते से भी ज्यादा था, जो एक बाग के वजह से बूढी दादी का जीवन त्रसद बनगया। बाग गाँव के लोगों के लिए एक शाप बनगया था।

जग्गू

जग्गू अपने इलाकें के एक मशहूर तोपची, जिसकी गोली हमेशा अपने लोगों के जीवन की रक्षा करने के महान उद्देश्य से बन्दूक से बाहर निकलती थी। जग्गू है तो ग्रामवासी बे फिक्र है। उन्हें वनैल पशुओं से कोई डर नहीं।गाँव के लिए जग्गू का मौजूद रहना ही काफी है। रक्षक। त्राता। मुक्तिदाता। जग्गू अपने एकांत क्षणों में भी बाघ के बारे में ही सोचता था। मन में सिर्फ अपने सामने मौजूद बाघ के जीवन को मिटा देने की हवश। कोई डर नहीं जिस तोपची के मन में अपने तन को बचाए रखने की चिन्ता हावी हो जायेगी, वह डर जायेगा और डरा

हुआ तोपची कभी जीत नहीं सकता। किसी भी हालत में नहीं.लेकिन डरा हुआ बाघ कभी-कभी जीत जाता है।

जब जग्गू बाघ को मार कर घर वापस आता है तो उसकी पत्नी पूछती है कि क्या तुम्हे कभी बाघ से डर नहीं लगता। जग्गू मुस्करता और कहता कि डरा हुआ तोपची कभी जीत नहीं कसता।

"ऐसा लग रहा कि पूरा गाँव निकल पडा है बाघ को जंगल से घर लाने।जग्गू ने अपना काम कर लिया है।अब गाँव के नौजवानों को अपना फर्ज निभाना है।नौजवानों के साथ एक बुजुर्ग दिगम्बर सिंह को भीजोश चढ आया है। गाँव का पुश्तैनी सयाण।वह भी उनके साथ चल निकला।बाघ के ज़मीन पर लेटे हुए शरीर के अलावा वह उस मौके का भी इन आँखों से मुआयना करना चाहता है जहाँ पर खड़े हो कर जग्गू ने बाघ पर गोली दागी।"[72]

लोग आपस में जग्गू और दुश्मन के किस्से सुनते रहते हैं और उन किस्सों को सुनतेनहुए कहानी सुनाने वाले और कहानी सुनने वाले खुद अपने को भी गौरवान्वित महसूस करने लगते हैं।

सुबेदार हिम्मत सिंह

कुछ समय पहले बंगाल आमर्ड पुलिस से पेंशन याफ्ता होकर सुबेदार हिम्मत सिंह स्थायी तौर पर लौट ाया था। हथियार बन्द फोर्स का एक अनुभवी अफसर। कहता है कि बन्दूक चलाना उसके बायें हाथ का खेल होता है। जिन्दगी भर उसने गोलियाँ ही तो चलायी है। सुबेदार सिंह दुश्मन को बताता है कि वह लोग कम्युनिष्टों को कैसे मारने थे। दुश्मन समझ नहीं पा रहा है कि निहत्य लोगों की भीड़ पर गोलियाँ क्यों दाग़नी पटती होगी। सुबेदार सिंह बताता है -*"एक मर्तबा ऐसा हुआ कि मेरी एक ही गोली एक साथ दो कम्युनिस्टों को बेंध बैटी । उस अयाह भीड़ में वे दोनों एक - दूसरे से सट कर खड़े थे। एक दम चिपके हुए। गोली ने एक के दाहिने हाथको और दूसरे के बायें हाथ को जख्मी कर दिया था। घायल होकर वे दोनो ज़नीन पर लोटने लगे थे। अस्पताल ले जाने से पहले, अपने ट्रक पर डालने के बाद हमने उन्हें बन्दूक के कुन्दों से भी मारा था। एक अख़बार वाला एक किनारे पर खडा हेकर उस वाक्य का फ़ोटो खींचने लगा था। हमने उसे पकड़ा। उसका कैमरा तोड़ - फोड़ कर फेंक दिया और उसके बाद उस बेटे की एसी धुलाई कर दी थी कि उसे जिन्दगी भर याद रख सके।"73*

कम्युनिस्ट लोग प्रचण्ड जुलूस लेकर आते थे। वे जोर जोर सेनारे लगाने लगते - चोलबेना, चोलबेना। ये योलबना और वो चोलबेना ट्राम के भाड़े में एक अठन्नी बढ़ोत्तरी कर दियो जातेपर वे कलकत्ते शहर की जिन्दगी ठाप कर देते थे।

वहाँ सभी कुछ का चलता एक जाता था। अफसरों केहुकम के मुताबिक सुबेदार सिंह और उनके साथिया उन्हें आगे बढ़ने से रोकतेतो वे रूकने का नाम नहीं लेते थे। बढ़ने से रोकते तो वे रूकने का नाम नहीं लेते थे। बढ़ते ही चल आते थे। पूरा चलना ठाप हो जाता था। पूरी सरकार ही उनकी घेरे में आ जाती । जब हर चीज़ रूक जाती और सिर्फ उनके कदम बढ़ते दिखाई देते, तब उस रूके हुए माहौल में अपनी सरकार के बड़े हाकिमान की राहें खोलने के लिए, हुकुम उदूली करने वाली भीड़ पर फायर करने का हुक्म सुनाया जाता और सुबेदार सिंह और उनके साथी फायर कर देते।

कम्युनिस्टों के बारे में सुबेदार सिंह कहते है कि -" *हाँ, सूरत शक्ल से तो वे बिलकुल आदमियों जैसे होते है। एकदम आदमियों की तरह दिखाई देते हैं। लेकिन उनका स्वभाव आम आदनियों से एक दम अलग होता है। बहुत उग्र , बहुत उद्दत होते हैं व् सब किसी की भी परवाह नहीं करते। अफसरों को तो वे कुछ समझते ही नहीं। उन्हें किसी भी डिसिप्लिन में नहीं रखा जा सकता। अफ़सरों की तो एक भी बात मानने को तैयार नहीं होते। स्वभाव से आदमी नहीं होते शेर होते है।*"[74]

तेज सिंह

तेजसिंह गाँव से बाहर जा कर मोटर सड़क पर निर्माण विभाग में गैंग में बेलदारी का काम करता है। मोहर सड़क गाँव से पाँच मील की दूरी पर है। वहाँ तक उसे रोज अकेले ही आना जाना होता है। वह अपने जीवन का एक किस्सा सुना रहा है

" *उस दिन सुबह बहुत तड़के निकल गया था मैं गाँव से रास्ते में मैंने देखा। एक गाय मरी पड़ी है। उसके शरीर से खून की धार बह कर रास्ते की चौड़ाई को पार कर उससे बाहर तक फैली थी। उस मरी गाय को देखकर शतरू, मेरे हाथ - पाँव ढीले हो गए। मुझे कँप कँपी छूटने लगी । गाय को जिस बाघ ने अभी -अभी मारा, बह हो सकता है, कहीं पास ही में छुपा हो। दुबका भैठ हो किस झड़ी, केनीचे। वह मुझ पर भी हमला कर सकता है। मैं गाँव से दो मील दूर निकल गाया था।*"[75]

तेजसिंह को बग्वा (कई लोगों को बाघ के दिखाई देने पर, या कहीं आस-पास से उसके शरीर से निकलने वाली तीखी, नाक के रास्ते प्रवेश कर पूरे शरीर को फाड़ने, पस्त कर देने वाली दुर्गन् को सूँघते ही बघवा लग जाता है) लगा था। उसने कोई अपने वश में थोडे ही चल रहा था। एक बाघ का खौफ दौड़ाने लगा था उसे। समय से पहले पहुँचे देखकर तेजसिंह का मेट और ओवरसियर बहुत

खुश हो गए थे। आगे तेजसिंह बताता है -*"महाराजा का नाम सुनते ही हमारे लोग थर -थर काँपने लगते थे। महाराजा को हवाया गया ते उसकी जगह पर डी. एम. राज करने लगा। अब उस डी. एम से भी एक बहुत बड़ा हाकिम लखनाऊ से राज चलाता है। जो नाराज होने पर डी. एम को भी नौकरी से अलग कर सकता है, उसे कहते है मुख्यमंत्री। हम तो यहाँ नहीं जानतेथे कि कोई सबसे बड़ाहाकिम होता है जिसे मुख्यमंत्री कहते हैं। हमारी रियासत में सिर्फ महाराजा होता था, कोई मुख्यमंत्री होताह नहीं था हमारे लिए तो तमाम बाघों से बड़ा बाघ हुआ मुख्यमंत्री। "*[76]

पान लानेके लिए अपने ओवर्सयर के साथ तेजसिंह को देहरादून जाना पड़। वापस आकर तेजसिंह खाना खाता है तो मन ही मन सोचता कि जो जिसकी किस्मत का होता है ुस को मिलता है। उस कहानी का दूसरा हिस्सा शतरू को तेजसिंह की घरवाली से सुनने को मिलाया। जिसे सुनकर शतरू को अपने पिता पर बहुत गर्व होता है।

श्रीधर प्रसाद

श्रीधर प्रसाद अपने को इलाके का सबसे बड़ा आदमी मानता है। है भी। सभी लौग ऐसा ही मानते हैं। वह जगह जहाँ पर बाघ ने गाय मारी थी, श्रीधर प्रसाद के घर से एक गोली की मार भर की दूरी पर थी। इतना नजदीक कि लगता है सेठ के घर का आँगन हो। आदमियाँ के नीच के छोटे बड़े लोगों का फर्क नही कर पाता। बस यही एक कमजोरी है बाघ के अंदर। इस एक मात्र कमजोरी के कारण रह गया वह जानवर का जानवर। अपने पडोसी के मृत्यु पर जश्न मनाने के लिए शतरू को बकरियां लाने के लिए कहता है तो दुश्मन इनकार करदेता है।वह किसी तरह शतरू की बन्दूक को जब्त करवाने की धुन में रहता था।

गाय पर हमलाकर बाघ ने श्रीधर प्रसाद को एक दूसरी किस्म के, भयानक संकट में भी डाल दिया था। श्रीधर प्रसाद ने अभी कुछ ही महीनों पहले शहर जाकर परगनाधिकारी के पास एक अर्जी पेश की थी। अर्जी में कहा गया था कि दुश्मन गाँव के लोगों को बेवजह धमकाता रहता है और इस बात का सख्त आदेश है कि अपनी बन्दूक से वह किसी गाँव वासी के खिलाफ किसी भी समय गलत काम को अंजाम दे सकता है। इसलिए प्रार्थना की गयी थी कि दुश्मन का लाइसेंस रद्द कर उसकी बन्दूक को जब्त कर दिया जाय। श्रीधर प्रसाद आमतौर पर गाँव में किसी से बात नहीं करता था। किसी से बात करने की उसे कोई

जरूरत ही नहीं पड़ती थी। गाँव के अनदर उसका अपना रूतबा भी किसी बाघ से कुछ कम नहीं था।

श्रीधर प्रसाद को लगा कि बाघ ने शान्ति बुढ़िया की गाय पर नहीं। सीधे - सीधे उसी के ऊपर हमला बोल दिया है। उस रात चिन्ता और आतंक के मारे सोने के नाम भी नहीं ली।अपने बरामदे से बाहर खेत में अंधेरा घना होने से पहले उसने आखिरी बार मारी गयी गाय की मड़ी को दखा तो जब से उसे नींद नहीं आयी। इस नाजुक मौके पर अब उसकी रक्षा अगर कोई कर सकता है तो सिर्फ शतरू कर सकता है। सिर्फ शतरू, जिसे दुश्मन भी कहा जाता है। एक दिन बकरियों को ले आने से इनकार करने पर उसका मजाक उडाने वाला श्रीधर प्रसाद आज दुश्मन की मदद करने जा रहा है। आखिर श्रीधर प्रसाद बन्दूक को दुश्मन को दिला देता है।

हीरा लाल

हीरा लाल एक पटवारी है। पटवारी लोग गाँव वालों को किस तरह परेशान करते है। इस पात्र के द्वारा बताया गया। खासकर अपना बात न मानने वालों पर किस तरह बदला लेते है.इसका चित्रण हम हीला लाल के पात्र द्वारा जान सकते है। पटवारी हीरालाल दुश्मन को अपने पास बुलाता है और उससे कहता है कि तेरा बन्दूक को जब्द किया गया है। अब तू बन्दूक लाकर मेरे हवाले करना होगा। पटवारीक मदद से श्रीधर प्रसाद ने दुश्मन की बन्दूक जब्त करवाई, लेकिन खुशी का मौका ज्यादा समय टिका नहीं, श्रीधर प्रसाद के घर के पास गाय को मार दिया बाघ ने, पूरा गाँव में दुश्मन अकेला ही था जो बाघ का मुकाबला करनेवाला, उसे तो बन्दूक की जरूरत है, उसको फिर वापस लाने के लिए श्रीधर प्रसाद को पटवारी की घर जानी पड़ती है। श्रीधर प्रसाद जितना भी कोशिष करे पटवारी बन्दूक वापस करने की बात नहीं मानता।

हीरालाल सेठ की बात मानने को हरगीज तैयार नहीं हो रहा था। किसी भी कीमत पर नहीं। आखिर श्रीधर प्रसाद उसको मना ही लेता है। दुश्मन को पता चलता है कि श्रीधर प्रसाद ने बन्दूक जब्त करवाई है, वह चुप हो जाता है। पटवारी, श्रीधर प्रसाद और अन्य लोग दुश्मन के घर पहुँचते हैं और उसका बन्दूक वापस करते हुए कहते है कि गाँव का भविष्य तुम्हारे हाथ में है गाँव का रक्षाकरो।

3.2.4. यमुना के बागी बेटे उपन्यास के पात्र

सत्यवती

सत्यवती एक ऐतिहासिर पात्र है जिस की कहानी से उपन्यास का शुरूआत होता है। सत्यवती एक राजकन्य है। महाराजा वसु की वीर्य से जन्मी

थी। राजा शांतनू अपनी पत्नी गंगा जाने के बाद कई दिनों तक राजा अकेली ही थे, जब उन्हों ने सत्यवती को देखा तो अपने आपको रोक नहीं पाये। अपना बेटा देवव्रत ने पिता की शादी सत्यवती से करवाई। अपने दोनों पुत्रों रोग ग्रस्त होकर चलबसे। उनका कोई संतान नहीं था। राजगद्दी का वारिस कोई नहीं था।

सत्यवती के जीवन में अंधकार छा गया। सत्यवती ने भीष्म को अपने पास बुलाकर अपने दिल में छुपाए सभी रहस्य उससे बोलदेती है। और राजपद को स्वीकार करने को कहती है। लाख कोशिश के बाद भी जब देवव्रत राजा बनने के लिए हाँ नहीं कहता तो वह अपने अतीत के बारे में भीष्म से कहती है - *"मुनि ने मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर कहा - सुन्दरी ! अपनी इच्छापूर्ती के एवज में मैं तेरे तन की गंध को सुगंध में बदल सकता हूँ। मैं अकबका गई। कुछ भी बोल नहीं पाई। अचानक वहाँ वातावरण में इतना धुंधलका छा गया कि वह सुबह रात में बदल गई। घटा टोप अंधकार! नाव से बाहर कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। मैं अत्यंत भयभीत होगई थी। सोच नहीं पा रही थी कि यह क्या हो रहा है और अपनी रक्षा कैसे करूँ। उस अंधकार के वातारण में ऋषि ने मुझे अपने वश में कर लिया था। मुनि ने कहा - मेरे द्वारा स्थापित इस गर्भ को यमुना के व्दीप पर त्याग कर तू फिर से कन्या हो जाएगी.....उस गर्भ से परा राट के पुत्र महान योगी महर्षि व्यास प्रकट हुए बेटे, जो द्वैपायन के नाम से विख्यात हैं। वे मेरे कन्यावस्थ के पुत्र है।"77*

सत्यवती विमाता होने पर भी भीष्म को माँ का प्यार दिया। हमेशा वह भीष्म से विनती करतीरहती थी कि तुम राजा बन के रक्षा करो। अंत में वह भीष्म से कहती है -" *अगर तुम पुत्र उत्पन्न करने की मेरी बात नहीं मान ने पर ऊतारू होतो बेटे ! मेरा एक और अनुरोध तुम्हारे इस भाई के बारे में है। तुम मेरी इस बात पर विचार करो और अपना निर्णय दो । मैं खुद साफ साफ सोच पाने में असमर्थ पा रही हूँ। मेरे मन में यह बात आ रही है कि अगर हम दोनों, तुम और मैं मिलकर आग्रह करें तो शायद वह मानले और तब तुम्हारे स भाई की संतान हमारे राज्य की वारिस हो सकती* है।"[78]

सत्यवती का पात्र एक आदर्श रानी एवं माँ के रूप में बताया गया है। वह राज्य एवं प्रजा की रक्षा करना चाहती है।

सरदार सुन्दरसिंह

सरदार सुन्दरसिंह टिहरी गढ़वाल स्टेट फोर्सेज का सेनापति है। पिछली कई सालों से टिहरी में रहते हुए गढ़ देश के इतिहास के बारे में और उस के

विभाजन के उपरांत, टिहरी - गढ़वाल रियासत के अस्तित्व में आने के बाद की कुछ मुख्य घटनाओं के बारे में काफी कुछ जानकारी हासिल करली थी।वे विद्वान् पंडित से अपने संदेशों को पूछता रहता है।

सुन्दरसिंह चवालीस बरसों से फौजी जीवन बिताता आ रहा था। शुरू के इक्कीस बरस उसने भारतीय सेना में अंग्रेजों की नौकरी करते हुए बिताए। अपनी क्षेत्रों के इतिहास और भूगोल को, धरती और वनस्पति को और उसकी सभ्यता और संस्कृति की विशेषताओं को पूरी गहराई से जाने - समझने की से हमेशा जीज्ञासा वनी रहती है। प्रथम विश्व युध्द के दौरान उसे सायाना और तीरा में भी तैनात रहने का मौका मिला था। मेसोपोटामिया के मोर्चे पर उसकी पलटन की जर्मन फौजों से भी लडाई होती रहती थी। उस जमीनी लड़ाई में अपनी जान पर खेलना नजर आने लगता था। सुंदरसिंह। अपने खूंखार, जांबाज सिपाहियों के साथ मजबूरी से पांव जमाकर वह जहां पर भी खड़ा हो जाता, वह जमीन सुन्दर सिंह की पलटन की हो जाती। "*उसका नाम सुनते ही आतंकित हो उठने वाली जर्मन फौज के बहादुर सिपाहियों पर सिर्फ अपनी जान बचाने की फिक्र हावी होने लगती थी। रणभूमि पर अपने देश की विजय - पताका फहराने और हर्षित देशवासियों केबीच अपने गर्वोन्नत फौजी टुकड़ी का नाम रौशन करने का खयाल उनकेदिमाग से पूरी तरह गायब होजाता था। तगडे बलिष्ठ ,छः फुटे जर्मन जवान मैदान छोड़कर पलायन करते नजर आने लगते थे। सुन्दर सिंह की वहादूरी से खुश होकर अंग्रेज ने उसे* सरदार बहादुर *के खिताब से नबाजा था।*"[79]

रियासत में सुंदरसिंह की नियुक्ति महाराजा कीर्तीशाह के शासन काल में हुई थी। उसने कई शासकों को सत्ता केतख्त पर चढ़ते और उतरते देखा। गर्दन झुकाकर खामोश रहने वाले कई आला हाकिमान को उसने शासक की नजरों में चढ़ती ही सत्ता के मद में बोखलाते, ऐंठते और बेडौल तरीके से मोटा होते देखा। नरेंद्रशाह राजा बनने पर अपना राज-काज नए डंग से करना चाहा जो एकदम नया।अपने प्रशासन में सब नए रखना चाहता है।कर्मचारियों को भी।

सुन्दरसिंह कहता है - *"मुझे चार्ज छोड़ने का हुक्म आया है मेजरसाब ,तुम लोगों के साथ मैंने अपनी जिन्दगी का बहुत अच्छ, काबिले यादगार वक्त बिताया तम को और टिहरी गढ़वाल स्टेट फोर्सेज के तमाम जवानोंको इतने लम्बे अपसे तक लगातार साथ देते हुए मेरी हौसला अफजाई करते रहने के लिए मेरीतरफ से बहुत बहुत शुक्रिया और भविष्य के लिए मुबारकबाद।* "[80]

नरेन्द्रशाह

नरेन्द्रशाह महाराज कीर्तीशाह का पुत्र था। 1913 को कीर्तीशाह की मृत्यु हुई। उस समय नरेद्रशाह नाबालिग था। प्रशासन का काम-काज अंग्रेज रियासत में चलने लगा। 1919 में अंग्रेज से राजसत्ता अपने हाथ में लेते ही रियासत की राजधानी को ओडायली में एक नया नगर नरेंद्रनगर को बनाता है। टिहरी - गढ़वाल रियासत की कुछ ही वर्ष पहले बनाई गई नई राजधानी। ऋषिकेश से पैदल छः मील की खड़ी चढ़ाई की दूरी पर सरकारी खर्चों से ओडायली में, घने जंगल के बीच बसायागया एक नया, भव्य नगर। नवयुवक राजा नरेन्द्रशाह के पावों में चक्र लगा रहता था। वह कई बार दुनिया के दूसरे देशों की सैर कर आया था। विलायत और पूरे यूरोप की चकाचौंध को भी अपनी आँखो से देख आया था। दुनिया कहाँ से कहाँ पहुँचगई।

नरेन्द्रशाह ने युग का राजा है। पुराने राजाओं की तरह प्रजा से गल - कंठे हो कर रहना उसे पसंद नहीं। उसके हिसाब सेराजा और प्रजा के बीच प्रयाप्त फासला कायम रहना चाहिए। *"नरेन्द्र शाह को अपने राज्य सेबाहर निकल कर यरोप और दीगर में घूमते रह ने का चस्का था। वह जिस देश में भी जाता, हां के निर्माण - कार्यो का बहुत बारीकी से, गंभीरता से अध्ययन, जानकारी करते रहने की उसकी प्रवृत्ति थी। वह नरेंद्रनागर में कुछ ऐसा कर के दिखाना चाहता था जैसा कहीं और न दिखाई दे सके - कुछ निराला, जिसे देख कर लोग दांतों - तले उंगली दबाने लगें। वह अपने को एक महान निर्माता ,अभियंताओ का अभियंता साबित करना चाहता था।"*[81]

नरेन्द्रशाह का टिहरी से मन उचट गया था। वह घाटी में नहीं, चोटी पर रहना चाहता था। वह एक दम नई किस्म की राजधानी बसाना चाहता था। उसको टिहरीशहर की तरह नहीं बनाना चाहता था, जहाँ हर साल गर्मियों के आते ही हैजा का प्रकोप शुरू हो जाता है। वह एक ऐसी नगरी बसाने के ख्वाब देखने लगा था, जिसके आस पास कोई गाँव नहीं होगा, मीलों -मील तक आम प्रजाजन की कोई बस्ती नहीं द्खाई देगी। रियासत की सर्वोच्च अदालत हुजूर कोर्ट और जेल उस राजघाटी में नहीं ले जाए जाएंगे। आम लोगों के लिए टिहरी ही सही जगह है।

अंबा

अंबा एक राजकुमारी है। शाल्व के पराक्रम की धाक जमी हुई थी। उसकी वीरता के किस्से सुन आंबा मन ही मन ऐसे वीर को अपने दिल का राजा चुन

लिया था। उसे चाहने पर अंबा पर मामूली - सा लांछन भी लग गयाता। काशी नरेश ने अंबा की इच्छा की उपेक्षा करते हुए स्वयंवर की घोषणा कर दी थी। लेकिन अब हालात बदल गये थे। शाल्व को वीरता की गाथा में उलट - फेर हो चुका था। काशी में भीष्म से मिली पराजय के बाद शाल्व को अपना जीवन सारहीन लगने लगा था। जब शाल्क अंबा को नहीं अपनाना चाहता था।

काशिराज की अपमानित, सब ओर से ठुकरादी गई राजकुनारी अंबा कहां जाए ? उसे कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था। उसके हृदय में भीष्म के प्रति प्रतिशोध की प्रबल भावना जागृत होने लगी। वह भीष्म को किसी भी तरीके से पराजित करना चाहती थी। परशुराम को अपनी कहानी सनाती हुई " *शाल्व से मेरी प्रीति की बात सुनकर देवव्रत ने मेरे चरित्र पर संदेह किया और मुझे स्वीकार नहीं किया। मेरी विपत्ति का मूल कारण देवव्रत है। से अपना विवाह नहीं करना था, फिर भी उसने मुझे जबर्दस्ती अपने रथ पर डाला और हस्तिनापुर ले आया। वहां कहने लगा, मेरे भाई से विवाह करले। उसका भाई कितनी औरतें रखेगा।*"[82]

अंबा तीर्थ में जाकर कठोर तपस्या करने लगी थी। दुनिया केदेखने में तोदेवव्रत का अंबा सेकोई संबंध नहीं रह गयाथा। लेकिन दिल तोदिल है। उस पर तोकिसी का वश नहीं रहता ? इस मामलें में पार्वती जीतगई थी, उसने शिव को प्राप्त कर लियाता। अंबा हार गई। सब कुछ करनेकेबाद भी वह देवव्रत को अपना नहीं बना सकी।

अंबा की तपस्या लगातार जारी रही। बाद में वह अंबा नाम से प्रसिध्द नदी हुई, जो केवल बरसात में जल से भरती थी। उस में बहुत सारे ग्राहनिवास करते थे। उसके भीतर उतरना और स्नान आदि तीर्थ - कृत्यं का संपादन बहुत कठिन होता था। किसी सीधी रेखा में बहने के बजाय वह हमेशा टेढ़ी - मेढ़ी होकर बहती थी।

चक्रधर जुयाल

चक्रधर जुयाल इंपीरियल पुलिस के अनुभवी हाकिम है। होम मेंबर बनने के बाद महाराजा नरेंद्रशाह के इशारे समझने लगे। चक्रधर जुयाल एक दुसरी ही किस्म की इन्सान और अपनी ही किस्म का हाकिम था। वह पुखर बुध्दि का व्यक्ति था और लिखाई - पढ़ाई में बचपन से ही अपने सहपाठियों के मुकाबले हमेशा अव्वल रहता था। अपने समकालीनों से हमेशा आगे। उसकी जुबान से निकल ने वाली फर्राटदार, कैंचीमार, विक्टोरियन अंग्रेजी में उसके गंभीर, विद्वतापूर्ण विचार सुनते हुए अंग्रज हाकिमान भी दंग रह जाते थे। अंग्रेजी कविताओं और विचारों के

उध्दरण वह वाक्यों में नहीं, पैरों में देबैठता था। उसका जन्म रियासत में नहीं गढ़वाल के भू भाग में हुआ था, जोकि अंग्रेज भारत में शामिल था और *ब्रिटिश गढ़वाल* कहा जाता था। वह गढ़वाली था - एक पहाड़ी आदमी, लेकिन अपने व्यक्तित्व के ढवे और कार्यशैली के निरालेपन के कारण वह अंग्रेज हाकिमान के नजरों में बहुत जल्दी बहत ऊंचा उठ गया था। पंजाबी बलूची, पख्तून था। कोई भी दूसरे अफसर उसका मुकाबला नहीं कर पाते थे। किसी भी मामले में नहीं। पूलिस क्रूरता में भी नहीं।

"चक्रधर अपने को पवित्र ब्राह्मण मानता था। कितनी ही व्यस्त दिनचर्या हो,उसकी संध्या -पूजा में कभी व्यवधान नहीं आ सकता था। वह दुर्गा का अनन्य उपासक और बदरी विशान का कट्टर भक्त था। राजपद को वह ईश्वरीय देन मानता था और हूकूमत के किसी भी विरोधी का महिषासुर की भांति बध कर देना वह अपना क्रतर्व्य को बाएं हाथ का खेल मानता था।अपने इन्हीं विशिष्ट गुणों के कारण वह महाराज नरेंद्रशाह का प्रियतर और अत्यंत विश्वसनीय हाकिम बन गाया था।"[83]

चक्रधर हमेशा देर रात तक जाग कर काम करते रहनेका आदी था। सुबह कोबह जरा देर से जागता था। रात के मौके पर राजगढ़ में अपने विस्तर पर लेटे -लेटे चक्रधर आज दिन -भर अपने सैनिकों के अद्भुत शौर्य भरेका रनामों केबारे में सोचने में लगा था। बहुत शान्त और ठंडेदिमाग से वह एक एक घटना की याद करते हुए उनका विश्लेषण करने लगा था। वह बहुत खुश था। उसे .कीन हो गया था कि उसने ढंढकियों की आने वाली पीढियों के दिलों पर भी आज के दिन के खौफ की याद अमिट रहेगी।

चक्रधर की कार्यवाहियों से लोग गुस्से में थे। वे नरेन्द्र नगर में दुव्यवहार व अपने लोगों की मौन केलिए भी चक्रधर को ही जिम्मेदार मान रहे थे। यह मांग भी लगातार उठ रही थी कि उसको रियासत से हटाकर फिर से अंग्रेजी सरकार के पास भेज दिया जाय।

पद्मदत्त रतूड़ी

पद्मदत्त रतूडी रियासत का वन अधिकारी था। राजा नरेन्द्रशाह ने विलायत से फॉरेस्ट्री का डिप्लोमा लेकर लौटे पंडित पद्मदत्त रतूड़ी एम.एस्सी. को वन बन्दोबस्त अधिकारी के पद पर बैठा दिया था। पद्मदत्त अंग्रेजों से भी बड़ा अंग्रेज होकर लौटा है। लौगों कोउसके घरपर काम करने वाले नौकरों सेउसे बारेमें जो जानकारियां मिलती है उन्हें सुनते हुए लोग दांतों तले उगलिया दबाने लगते हैं।

"अपने रसोई घर तक में उसका सीधा दखल रहता है। रसोई के वह बार - बार चक्कर काटता रहता है। उसे शक रहता है कि वहां कामकर रहा नौकर रसोई घर में रखी कोई चीज चुपके से अपने मुह के अंदर डाल सकता है। गरीब आदमी के ईमान का कोई भरोसा नहीं होता.....मुँह खोलकर गप्प करो और फिर ऊपर नीचे के दोनों ओंठों को बंद करलो।"[84]

जंगल के सबसे बड़े हाकिम के जंगली व्यवहार से परेशान रहती है वनों में घास काटती घसियारिने। घरों की ओर पानी लेकर जा रही पनिहारिनें बहुत खौफ खाती है। उसके सफेद घोड़े को लपकते आते देख औरतें इधर -उधर बिदकने - भागने लगती है।

पद्मदत्त हमेशा पदमदत्त बनकर बात करता था। हुकूमत के पूरेगरूर की जुबान में। उसके पीछे दीवान बहादूर की शाह थी। वहाँ के लोगों को डाँटते हुए पदमदत्त कहता है कि -" *एक बात साफ तरीकेसे समझलो !तुमलोग दरबार की जमीन पर मुक्त में रहने आये हो।दरबार की भूमि पोंकट की नहीं है।"*[85]

पदमदत्त को पता चलता है कि वन में बहुत कीमती चीजें है तो वह सोचता है कि इन सब चीजों पर उसका हक़ जमा करनी चाहए। वह किसी को वन में नहीं जाने देता-

"तुम जहाँ चाहो, जा सकते हो। लेकिन रिजर्व फॉरेस्ट में तो मैं किसी को घुसने नहीं दूँगा। न घास के लिए न लकड़ी केलिए न भेड़ -बकरियों, ढोर डंगरों को लेकर यशन - युगान के लिए जंगलों के अंदर खलिहान तो मैं हरगिज बनने दूँगा। तुम्हारे यहाँ रहने सेटिहरीदरबार का थेले -भरका फायदा नहीं जितनी जमीन तुम्हारी खेती पर बर्बाद हो रही है, उस पर कीमती पेड़, लगाए जाएंगे तो हमारे जंगलों में मोती झडने लगेंगे। दरबार के खजाने में सोने की बरखा होने लगेगी।"[86]

अंग्रेज तो हमारे देश से चले गये मगर उनके निशान ऐसे अधिकारियों के रूप में हमारे बीच में ही है।

किशन दत्त

किशन दत्त आम आदमियों का सहारा बनकर आता है। जब जक्रधर और पद्मदत्त के खिलाफ कोर्ट में गवाही देने जा रहे लोगों पर पदमदत्त गोली चलाता है। तो दो लोग मारे जाते और दोनों घायल हो जाते। किशनदत्त को इस हमले का पता चलते ही उनकी मदद में लग जाता है।

" *किशन दत्त सबसे आगे डिप्टी हाथ में बंदूक लिए चल रहा था। उनमें से किसी को भी रूकते न देख डिप्टी ने अपनी बंदूक उछाई और अपने एक दम करीब आ लगे किशन दत्त की ओर तान दी। वह उस पर निशाना साधने लगा था। उसने अपना हाथ फैलाया और अपनी ओर तनी हुई नाल का मुह मोडकर उसे बीच की दिशा में कर दिया। जमीन की ओर।"87*

मौंके से पदमदत्त के गायब हो जाने के बाद किशनदत्त ने अपने कुछ साथियों को कहा कि घायलों और लाशों डंडवाल गाँव ले जाओ। वह खुद दस पंद्रह आदमियों कोलेकर टिहरी ले जाए जा रहै अपने गिफतार साथियों को छुड़ाने के इरोदे से आगे बढ़ा। किशन दत्त को कैद किया जाता है और मौत की सजा दी गई है, तू कुछ खाता, मांगता है तो माँगलो। तो किशनदत्त कहता है कि - *"मुझे मौत की सजा दी जा रही है तो मैने क्या मांगना है तुम से ? क्या वे तेरे बाल बच्चे नहीं है ! 'है', वो खाएंगे तू मांगलें। जो उनके भाग्य में होगा वह उन्हें मिलेगा और मांगने से थोडें होगा वह पूरा।"*[88]

किशनदत्त को फिर बन्द कर देते है। चार रोज तक कोशिश करने पर भी किशनदत्त कुछ बताता नहीं है। यह उनका व्यक्तित्व पूर्ण रूप में मिलता है। मरना पसंद करते हैं लेकिन अपने साथियों को बचाना चाहते हैं।

इस उपन्यास में किशनदत्त गाँव वालों के मदद गार के रूप में हमारे सामने आता है। कभी न सर झकाने वाला इनसान डटकर हर मुकाबला का सामने करने वाला इनसान एक ऐसा इनसान मरना पसंद करेगा लेकिन किसी के आगे अपने को नीच दिखाना नहीं चाहता।

3.2.5. भीम अकेला उपन्यास के पात्र

अर्जुन और श्रीकृष्ण

आर्जुन और श्रीकृष्ण महाभारत के ऐतिहासिर पात्र हैं। अर्जुन पांडव का भाई है और पांडओं का गूरू श्रीकृष्ण। कुरूक्षेत्र युध्द में बंधु-बाधवों का महावध करने के बाद वे हिमालय में अपने पापों का प्रायश्चित करने आए थे।

सबका वध करने के बाद उन्होंने खुद अपनी ओर देखा था। जीवन निस्सार लगा। गुरु-सलाहकार-संरक्षक कृष्ण के उपदेशों का भंडार चूक गया था। अर्जुन पहले ही कहा था- "*एतान्न हंतुमिच्छामि ध्नतोऽपि मधुसूदन ।*

अपि त्रैलोकराज्यस्य हेतोः किं नु महीकृते ।। "89

अर्थात हे मधुसूदन !मुझे मारने पर भी अथवा तीनों लोकों के राज्य के लिए भी मैं इन सब को मारना नहीं चाहता; फिर पृथ्वी के लिए तो कहना ही क्या।

रणभूमि में अठारह अक्षौहिणी सेना के शीर्ष पर खड़े अर्जुन ने उसे वाहिनी पर नज़र डाली थी, जो उस समय शत्रु के रूप में समुपस्थित थी। उसमें कृष्ण की निजी सेना भी थी। वह सेना अर्जुन सहित कुल पांडवों का, यहाँ तक कि स्वयं कृष्ण का भी, संहार करने के लिए खड़ी थी। अर्जुन घबरा गया। बोला, इन सबका संहार करने के उपरांत बचा क्या रहेगा ? ये सब नहीं रहेंगे तो जीना किस लिए है ? हमें किस लिए लड़ा जा रहा है ?

" *यदि माम प्रती कारम शस्त्रं शस्त्रपाणयः ।*
धार्त शब्द्रा रणे हन्यु स्तन्मे क्षेमतरं भवेत ।।"[90]

अर्धात् यदि मुझे शास्त्र रहित एवं सामना न करने वाले को शस्त्र हाथ में लिए हुए धृतराष्ट्र के पुत्र रण में मार डालें तो वह मारना भी मेरे लिए अधिक कल्याण कारक होगा।

नहीं ! कृष्ण बोले, नहीं, भागो मत। लड़ो। कृष्ण ने भ्रमित अर्जुन को जो उपदेश दिए, उनके संचय को गीता कहा गया और ज्ञान की पराकाष्ठा यह हयी कि पाँडवों को रणभूमि में अपने किए धर्मयुद्ध का प्रायश्चित करने के लिए। क्रम भूमि का त्याग कर देना पड़ा और अंत में हिमालय का शरण लेनी पड़ी।

पांच पांडव। एक कुत्ता। कुरुक्षेत्र से निकल कर वे सीथे बर्फान की ओर चले। कुरु भूमि । कुरु भूमि को चंद लोगों के स्वार्थों की पूर्ति के लिए अनगिनत बेकसूर मनुष्यों के रक्त से सींचा गया था। कुरुक्षेत्र युद्धभूमि का एक प्रतीक बनकर रह गया। वहाँ पर नए रक्त का संचार होने में अभी समय लगेगा। पर्याप्त समय लगेगा। जिस भूभाग के लिए महाभारत रचा गया, उसे जीतने के बाद विजेता भी वहाँ से भाग गए।उन्होंने भी उसका सुखोपभोग नहीं किया। हिमालय में भाग आए। बसने के लिए नहीं, गलने के लिए आए।

भीम

भीम जो इस उपन्यास का शीर्षक है, जो ऐतिहासिक पात्र होते हुए भी वर्तमान की घटनाओं से गुजरता है। भीम पांडवों का भाई है। पांडव हिमालय के ओर चले थे। धारी गाँव से कुछ दूर पहुँचे तो उन्हें पता चला कि धारी गाँव से पहले एक राक्षस रहता है। वहाँ उसका राज है। वह राक्षस यात्रियों के प्रत्येक दल में से एक आदमी अपनी भोजन के लिए माँगता है। यात्रियों का दल तब तक

आगे नहीं वढ़ सकता जब तक राक्षस को बलि के लिए एक आदमी न सौंप दिया जाए। महाभारत के विजेता पाँडव एक राक्षस के कठोर नियम के सामने किंकर्तव्य विमूढ़ हो गए। पांडवों ने तय किया कि भीम को राक्षस के हवाले कर देंगे।

पांडवों ने भीम के राक्षस के हवाले कर दिया। राक्षस ने शेष चारों पांडवों सहित उनके साथ चल रहे अन्य यात्रियों को आगे जाने की अनुमति दे दी। बाकी पांडवों ने सोचा था कि राक्षस का वध कर के भीम लौटेगा। तेरह दिन तक भीम नहीं लौटा तो पांडवों ने भीम की तेरहवीं की तैयारी की। लेकिन धारीगांव में अन्न का दाना तक नहीं मिला था। सब लोग चिंतित हो कर रोने लगे और वे लोग कुन्ती माता समेत आगे वढ़े। धारीगांव से पांडव स्यांरी की ओर बढ़ने लगे। कुछ दिनों से एक जोगी उनके साथ था।जोगी मौन बाबा था वह चुपचाप चला जा रहा था। थकान से चकनाचूर बेबस पांडव अलसाकर एक जगह पर बैठ गए। प्यास के मारे उनकी हालत खराब हो गई थी।उस समय कुंती को अपना भीम की याद आती है।वह बोलती है कि अगर इस समय मेरा भीम होता तो मुझे पानी पिला देता। उस समय जोगी अपनी चिमटा के द्वारा पहाड से पानी लादेता।

पंडित जी कहते हैं विधायक जी इसे उपणधारी कहते हैं। आपको रास्ते में मिला होगा यह पानी। बारह महीने एक जैसा रहता है। न घटता है, न बढ़ता है। नौटियाल जी के साथ तेजसिंह भी पंडित जी के बातें सुन रहे थे। आगे क्या हुआ जानने के लिए वे उत्सुक थे। उपणधारी का पानी को नौटियाल जी पीकर अपनी प्यास बुझा चुके थे। उपणधारी से चल कर पांडव स्यांरी पहुँचे। यह गाँव उनको अच्छा लगा। उन्होंने यहाँ डेरा डाल दिया। कुंती माता ने भीम की आवाज़ सुनी उनको लगा कि सपना है लेकिन जोगी नींद में सपना बड़बड़ाया जा रहा था। कुंती माता को पता चला कि जोगी ही भीम है। सब पांडव खुश हो गए।

राक्षस भीम को मारने के लिए आगे बढ़ा तो भीम राक्षस को दांतौन करने के लिए एक चीड़ के पेड़ दे दिया।राक्षस चीड़ का पेड़ नहीं थाम सका। वह डर के मारे भाग गया। चीड़ का पेड़ भीम का गदा बना। उससे प्रहार कर भीम ने राक्षस का वध किया, और यात्रियों की राह का काँटा हमेशा -हमेशा के लिए साफ़ कर दिया। राक्षस को मारने के लिए जहाँ चीड़ का पेड उखाडा था उस स्थान पर भीम पानी पैदा किया। उसको भिऊंपाणी कहते हैं।

"राक्षस को मार गिराने के बाद उस वीराने में भीम ने अपने चारों ओर देखा। वह अकेला था। उस के भाई उसे छोड़ कर कैलाश यात्रा पर आगे बढ़ गए थे। वे मोक्ष प्राप्ति के फेरे में थे। तब विधायक जी, भीम को हंकार चढ़ गया।उसे इस बात का दुःख नहीं था कि उसके भाइयों ने उसे दौत्य से क्यों लड़ाया। उसे ग़ुस्सा इस बात का था कि उसे राक्षस को सौंपे जाने के बारे में उसके भाइयों ने आपस में सलाह मरावरा किया, उसमें उसको भी क्यों शामिल नहीं किया गया। कि उससे पूछा क्यों नहीं गया।"[91]

भिऊंपाणी में पानी उपजने के बाद भीम ने स्नान किया और जोग -वेश धारण कर लिया।अपने नंगे बदन पर उसने विभूत रमा ली, कानों में कुंडल पहन लिए और एक हाथ में कमंडल और दूसरे में चिमटा उठा लिया। भीम ने देखा कि उसकी तेरहवीं की तैयारियाँ चल रही है उसने उसमें शामिल हो पाया।भीम ने पहाड़ के सीने पर चिमटा मारकर वहाँ पानी की धारा उपजा दी तब भी पाँडवों को यह अहसास नहीं हो पाया कि यह काम तो सिर्फ़ भीम ही कर सकता था।

तेजसिंह

तेजसिंह एक जीवित शहीद है। सन् 1948 ई.की जनवरी की 11 तारीख़ को टिहरी की राजशाही का तख़्ता उखाड़ने के लिए अलकनंदा के तट पर कीर्ति नगर में जो लोग जमा हुए थे,उनमें तेजसिंह भी था और इससे बड़ी बात यह है कि उस दिन शहीद नागेंद्र सकलानी और मोला राम नौटियाल भरदारी के साथ तेजसिंह को भी गोल लगी थी। उनका देहांत हो गया, यह जीवित रह गया।

तेजसिंह बांसी भरदार का रहने वाला है। तेजसिंह नौटियाल जी से मिला था और वह अपना बयान जारी रखा। तेजसिंह, गोविन्दसिंह, धूलू धनाई और गाँव के लोग मिल कर नरेंद्र नगर गए थे। वे लोग राजा के पास माँगे मानने जा रहे थे। बहुत लोग वहाँ पर जमा हो कर नारे लगा रहे थे। उस जगह कुमाऊंनी कम्युनिष्ट देवीदत्त भाषण दे रहा था। तेजसिंह का बयान नौटियाल जी अपने डायरी में लिख रहे थे।

वहाँ के ऑफिसरों ने लोगों से कहा कि हम माँग मंजूर नहीं करेंगे शूट करेंगे, वहाँ आँसू गैस चलाई गई थी, गैस इस तरह था कि मिर्च पीस कर डाल दी गई। सभी लोगों ने एक ओर जमा हो गए। तेजसिंह को भी नगर अस्पताल में भर्ती किए थे और वहाँ एक महीने तक भर्ती रहा।तेजसिंह के सात बेटे और दो बेटियाँ है। बेटियों का विवाह कर लिया है। बेटों में कोई नौकरी पर नहीं है।

तेजसिंह फूट फूट कर रोने लगा था। आर्थिक स्थिति ने उसे पस्त कर दिया है। स्वतंत्रता सेनानियों के नाम पर शोहदों ने क्या - क्या फायदे नहीं उठाए ? लेकिन तेजसिंह जैसा का तैसा है। आज़ाद हिन्दुस्तान पर शासन कर रहे राजनेताओं ने उसके एक भी बेटे को नौकरी पर लगाना तक ज़रूरी नहीं समझा।

तेजसिंह कहने लगा -"*मुझे कुछ साल तक पंद्रह रुपये माहवाह सहायता मिलती थी। कुछ समय से एक सौं रुपये मिलने लगे हैं। लेकिन पेंशन लेने के लिए मुझे हर बार देव प्रयाग जाना पड़ता है। मुझे लुंज -वायु (गठिया) हो गई है।इन उल्टे - सीधे रास्तों से देव प्रयाग आने -जाने में मुझे बेहद तकलीफ़ होती है। आधे से ज़्यादा पैसा आने -जाने में ख़र्च हो जाता है। मैंने इंधिरा गाँधी के लिए भी पत्र भेजा है।मैं कई बार प्रार्थना पत्र भेज चुका हूँ। मैं ने मोरार्जी भाई को भी लिखा था। जिलाधिकारी को भी कई अर्ज़ियों भेजीं। मेरी अर्ज़ियों पर कोई ध्यान नहीं देता। मेरी कहीं सुनवाई नहीं होती। मैं अपनी पेंशन श्रीनगर बैंक से लेना चाहता हूँ। नहीं तो मनीआर्डर से भेज दी जाए।*"[92]

नौटियाल जी तेजसिंह की बात ध्यान से सुनते है। उनका बयान डायरी में लिखते हुए वहाँ की स्थिति को महसूस की। सब उनकी मन में एक चित्र बन कर सामने आने लगा। तेजसिंह पर उनको तरस आने लगा। तेजसिंह को देखकर उनको गर्व हुआ। नौटियाल कहने लगे –" *मेरे सामने एक भीम खड़ा है। तेजसिंह साक्षात भीम है। जीवित भीम। वह राक्षस का वध करके लौटा है। और हम लोग उसे पहचान नहीं रहे हैं। बांसी भरदार का तेजसिंह जीवित भीम है। पांडवों का भाई। दुष्टों का संहारक। पीड़ितों का मुक्ति दाता।*"[93]

देवीदत्त तिवाड़ी

देवीदत्त तिवाड़ी एक कुमाऊंनी कम्युनिष्ट नेता थे। नरेंद्र नगर में राजा के पास माँगे मानने लोग जा रहे थे, वहाँ से एक बड़ा जुलूस निकला। वहाँ अनेक लोग इकट्टा हो गए। लोग भाषण देने लगे। कीर्तिनगर एस.डी.एम. कोर्ट के यहाँ देवीदत्त तिवाड़ी ने भी भाषण दिया था। नागेन्द्र सकलानी भी भाषण दिए। देवीदत्त तीवाड़ी ने लोगों से कहा था "*डरना मत, हम जीतने वाले लोग हैं।हम डरते नहीं डरना मत।*"[94]

यह सब बातें कॉमरेड देवीदत्त तिवाडी टहरी पहुँच कर विस्तार में नौटियाल जी को बताया था। देवीदत्त तिवाड़ी के बारे में नौटियाल जी लिखते है -

" रंग साँवला। मुझे उसके चेहरे का रंग नागेंद्र सकलानी के रंग से मिलता - जुलता लगता था। नागेंद्र सकलानी के आलावा जिन कम्युनिष्ट साथियों के जीवन और कर्म से मैं आजीवन प्रेरणा लेता रहा हूँ, उनमें देवीदत्त तिवाढ़ी भी था। उसका घर अलमोड़ा जिले में रानी खेत सदर से कुछ दुरीपर था। साधारण किसान परिवार में पला एक अनुशासनबध्द नौजवान बोल्शेविक। कुमाऊं से टिहरी रियासत के मुक्ति आन्दोलन में सिर पर कफ़न बांधकर कूद गया था। कीर्ति नगर में उस दिन तिवाड़ी के सिर पर लाठी की चोंटे आई थी। मैंने उसके टिहरी पहुँचने पर देखा,उसके सिर पर पट्टियाँ बंधी थीं। नागेंद्र - मौलू के शवों को लेकर टिहरी की तरफ बढ़ने वाले जन समूह के तूफानीदस्ते का नेतृत्व कॉमरेड चंद्रसिंह गढ़वाल,देवीदत्त तिवाड़ी और त्रेपनसिंह ने भी कर रहे थे।"[95]

अपने शहीदों के शवों को कंधों पर उठाए टिहरी रियासत की पूरी प्रजा टिहरी ओर बढ़ती गयी थी। वे सामंती हुकूमत को पलटकर अपनी आज़ाद सरकार कायम करने का पख्का इरादा किए हुए बढ़ते गए थे। उससे पहले उस हुकूमत को बदले बगैर,वे अपने घरों को लौटने वाले लोग नहीं थे। हज़ारों लोगों ने अपने शहीदों के शवों को टिहरी पहुँचने से पेश्तर,13 और 14 जनवरी की रात को सामंत शाही का तख़्ता उलटकर, शासन सत्ता अपने हाथों में लेकर एक नया इतिहास क़ायम कर दिया था।

देवीदत्त तिवाड़ी टिहरी पहुँच कर ख़ून में सनी हुई नागेंद्र सकलानी की डायरी नौटियाल जी के हाथ में सौंपे थे।

शास्त्री इंदुभूषण नौटियाल

शास्त्री इन्दुभूषण नौटियाल, नौटियाल जी के तायेरे भाई है। शास्त्री भाई से नौटियाल जी बहुत प्यार करते हैं। शास्त्री काशी में संस्कृत का अध्ययन कर रहे थे। एक साल की परीक्षा दे देते तो वे आचार्य की डिग्री पा लेते थे। उस समय सन् 1941 में शास्त्री जी फौज में भर्ती हो गए थे। शास्त्री जी ने भारतीय सेना में अपना नाम लिखा लिया था। उन्होंने पढ़ाई छोड़कर फौज में भर्ती होगए।

नौटियाल जी के पिता को एक दिन एक पत्र मिला था - नौटियाल जी कहते है कि -"*पत्र पिता ने खोल कर अभी - अभी पढ़ा है। पक्ष मेरे चाचा काशीराम ने मालीदेवल से भेजा है। सूचित किया है कि शास्त्री फौजी से भाग गया है और रियासती पुलिस उसकी ज़ोरों से तलाश कर रही है। पिता की कही बात हम सबके कानों में पडी है।*"[96]

शास्त्री जी ने फौज छोड़कर कांग्रेस में भर्ती हो गए थे। परिवार में सब लोग चिंता में डूबे थे। उनका कोई जानकारी नहीं थी।

एक दिन नौटियाल जी की पत्नी नौटियाल जी से कहती है कि उनके घर एक जोगी आए थे उनको मैं ने पीने के लिए पानी दे दिया और भिक्षा के लिए आटा देने गई तो उन्होंने दक्षिणा माँगा, मैंने जब ससुर जी का नाम लिया और कहा कि उनसे पैसे मांगकर दूँगी तो वे घबराकर चले गए। लोग कहते हैं कि वे शास्त्री जी है। वे ताई के घर गए और वहाँ से भिक्षा स्वीकार की। ऐसा कहते हैं कि जोगी के लिए एक बार अपने जन्म के घर से भीख माँगना ज़रूरी होता है। ऐसे भीख माँगे बिना उसकी साधना पूरी नहीं होती। ताई ने कहा कि यह मेरा बेटा नहीं है उसको भिक्षा देकर भेज दिया।

नौटियाल जी शास्त्री के बारे में कहते हैं *"अब नहीं मिल सकते। वे आज अपनी माँ से भिक्षा लेकर चले गए हैं। ताई के अन्य कोई संतान नहीं है। मेरे ताऊ कब के हमें छोड़ के चले गए।मैं ने तो उनहें देखा भी नहीं । भारत आज़ाद हो गया है। उस आज़ादी के लिए अपना सब कुछ न्योछावर करने वाला एक सेनानी फ़ौजी के कानून के डर के मारेस्वतंत्र भारत में वेश बदल कर छुपता फिरता है। फौज का भगोड़ा, भगोड़ा होता है। अंग्रेजी की गुलाम फ़ौज के भगोड़े को आज़ाद भारत की सरकार वही सजा देगी जो अंग्रेज तजवीज कर गया है।"*[97]

शास्त्री भाई जी ब्रह्मचारी के वेश में, श्वेत वस्त्रों में घूमते हैं।

सआदती बाबक

कामरेड् सआदती बाबक दुनिया भर के नवजवानों के बीच एक नई अलख जगाने वाला, विश्व नवजवान सभा का अधिकारी है। सआदती बाबक एक ईरानी कॉमरेड है। नौटियाल जी कैंट रेलवे स्टेशन से हंगरी बुडा पेस्ट से भारत आए मेहमान सआदती बाबक को अपने साथ काशी हिन्दु विश्वविद्यालय लेकर आए थे। तू देह पार्टी का सदस्य है बाबक। जिस पर ईरान में पाबंदी है। उसका सदस्य होना सबसे बड़ा जुर्म माना जाता था।

सआदती बाबह तू देह पार्टी के निर्णय के अनुसार ईरान से बाहर घूमता रहता था। उसके पास जो पास पोर्ट है, उसमें उसके ईरानी मूल का होने का कोई ज़िक्र नहीं।इरान में उसके घर पर बाबक की माँ रहती है, जो सात वर्षों से अपने बेटे की सूरत देखने को तरस्ती, रहती हैं।

ईरान की बदनाम राजनीतिक ख़ुफ़िया एजेंसी सवाक वहाँ के कम्युनिस्टों को जिस तरह की यातनाएँ देती है उनका वर्णन सुन कर भी जी घबराने लगता है। तू देह पार्टी का कोई भी सदस्य को एजेंसी सवाक पकड़ लेते है,उस को अनेक यातनाएँ दे देते हैं। बर्फ़ के मोटी मोटी सिल्लियां तरतीबवार बिछाकर कैदी को उस कोठरी में बंद कर देते हैं।

कैदी को ऐसी कोठरी में बन्द कर देते हैं उसमें बाहर का हवा बिलकुल अंदर नहीं आ पाता। दरवाज़े और देहली के बच,नीचे से एक बहुत पतला सुराख़ बजा कर उस छेद से वे एक लंबे चिमटे से पकड़ -पकड़ कर एक-एक का सैकड़ों बिच्छुओं को कोटरी के भीतर धकेलते हैं। जितना यातनाएँ रखने पर भी कैदी कुछ जवाब नहीं देता।

अपने बचाव में भी वह कुछ नहीं बोलता। नौटियाल जी सआदती बाबक के बारे में कहते है - *"पेरिस के हवाई अड्डे पर धरी एक घटना की ख़बर हमारे पास काशी तक आ पहुँची है। वायुयान से उतर कर बाबक वेटिंग रूम में पहुँच गया। उससे कुछ दूरी पर बैठी एक ईरानी बुढ़िया ईरान से पेरिस आई है।उसके पास ईरानी पासपोर्ट है। उसे नहीं मालूम सवाक के जासूस तेहरान से ही उसकी निगरानी करते आ रहे हैं। लेकिन सवाक की गतिविधियों से वह सशंकित हैं। उस बाबक उसे पूरा शक है। पेरिस हवाई अड्डे पर बाबक के वेटिंग रूम में पांव धरते ही तेहनान से आकर वहाँ एक कोने पर प्रतीक्षा कर रही बुढ़िया को प्रांस की पुलिस को साथ लेकर,अचानक वहां पर आ धमके सवाक के जासुसों ने अपने घेरे में लेलिया।"*[98]

सवाक के जासूसों उस बुढ़िया से कहा कि सामने कोई नौजवान आ रहा है तुम से भेंट करने क्या वह तुम्हारा बेटा है। बुढ़िया ने कहा कि वह मेरा बेटा नहीं हैं। उस बुढ़या पर बहुत ज़ोर देकर पूछने पर भी उसने कुछ नहीं कहा मैं उसे नहीं पहचानती वह मेरा बेटा नहीं है। फेंच पुलिस अफ़सर उस बुढ़िया से कहते है कि मानलो कि वह तुम्हारा बेटा है हम तुम्हें छोड़ देंगे। तब भी वह बुढ़िया नहीं मानी। अंत में नौटियाल जी कहते है - सआदती बाबक को अपनी माँ का फ़ातिहा न जाने किस देश की धरती पर पढ़ना पड़ेगा।

जोशी

जोशी स्यांरी गाँव के प्रधान है। नौटियाल जी को उस गाँव की स्थिति बता देते है।नौटियाल जी यज्ञ में भाग लेले जाते है तो जोशी के घर में ठहरते है। वहाँ पर जो यज्ञ किया जा रहा है वह हर बारहवें साल में आयोजित होता है। पर इस बार यज्ञ सत्ताईस वर्ष के बाद हो रहा है। यज्ञ की तैयारी के लिए गाँव में दो -

तीन बार बैठकों की आयोजन की जाती, किसी की गैरहाजरी में बैठक न हो पाती। जोशी सोचते थे कि इस बार बैठक में नहीं जाऊँगा।

उस रात उनकी दुकान में आग लग गई और पच्चीस हज़ार रुपयों तक नष्ट हुआ। आग लग गई तो सारा गाँव के लोग बुझाने के लिए आए थे।पानी का धारा बहुत दूर था और पानी भी कम था। लोग मुश्किल से आग बुझाई।

जोशी ख़र्ज लेकर दुकान को ठीक करवाया और व्यापार करने लगे। उनको सरकार की ओर से कुछ सहायता मिली नहीं थे। नौटियाल जी पूछते हैं आग कैसे लगी, जोशी बताते है -" *पटवारी कानूनगो (पर्वतीय क्षेत्र के पुलिस अधिकारी) ने भी मुझ से यही पूछा था, किस पर शक -शबहा हो तो बताओ। मैंने कहा, जिस गाँव ने मेरे घर की आग बुझाई उसी पर मैं पुलिस के डंडे बरसवाऊं,यह मुझे मंज़ूर नहीं। मेरा किसी पर शक नहीं।"*[99]

उस रात नौटियाल जी उन के घर पर ही रुके थे। वहाँ के बहुत सारे जानकारियाँ पाए।उस जगह पर मोटर मार्ग नहीं। पैदल चलना भी मुश्किल लगता है। मार्ग बनाने के लिए कितना भी अर्ज़ियाँ रखे कुछ फ़ायदा नहीं हुआ था।इन सभी बातों पर चर्चा हुई थी।

सूरमा भरदारी

सूरमा भरदारी शहीद मोलूभरदारी की पत्नी थी। सूरमा भरदारी चौदह साल की उम्र में विधवा हो गई। मोलू भरदारी सामंती दासता से मुक्त किए गए समाज के जिम्मे छोड़ कर विदा ले चुका था। अपनी पति की प्रतीक्षा करने वाली सूरमा को पता चला कि उसका पति अब घर लौट कर नहीं आएगा।

सूरमा भरदारी को किसी ने याद नहीं किया। शहीद की विधवा को देखने के लिए किसी को फ़ुर्सत नहीं थी। वह अकेली थी।सामंती शासन से मुफ्त में नए भविष्य की ओर अग्रसर रियासत में एक दम अकेली। वह आदमी, जिसने अग्नि को साक्षी मानकर जीवन भर उसका साथ देते रहने की क़सम खाई थी। राजशाह की गुलामी की ज़ंजीरों को तोड़ने के लिए सूरमा भरदारी का साथ निभाने का अपना वादा भूलकर स्वयं अग्नि की लपटों के हवाले हो चुका था। पति गुजर ने के बाद सूरमा भरदारी अकेली होगई। अनेक वर्ष बीत गए। सूरमा भरतारी की जवानी जिन्दगी के ढलान पर उतरने लगी। ज़िंदगी की कठोर धूप -बरसातों ने उसे कठोर बना दिया था। उसकी समझ में यह बात बहुत अच्छी करह बैठ चुकी थी कि "*आज़ादी के चमकते हुए घाम पर थोड़ी से लोग कुंडली मार कर बैठ गए*

हैं। उस सूरज को उनकी तियोरियों की क़ैद से मुक्त कराने के लिए अभी कई और मोलू भरदारियों को अपनी कुर्बानियाँ देनी होंगी।"[100]

पचीस वर्षों के बाद उत्तर प्रदेश की सरकार ने किसी तरह सूरमा भरदारी को पंद्रह रुपये माहवार पेंशन दे दिया। सूरमा भरदारीका नाम स्वतंत्रता सेनानियों की सूची में शामिल कर दिया गया। सूरमा भरदारी को पेंशन मिलने की ख़बर से गाँव -बस्ती में कइयों की छाती पर साँप लोटने लगे। गाँव के लोग भूल चुके थे कि वह एक शहीद की विधवा है, जिसके प्रति पूरे देश को कृतज्ञ होना चाहिए। जिसका ऋण यह देश कभी नहीं चुका सकता।

अज्ञात व्यक्ति द्वारा भेजी गई शिकायत में यह लिखा था कि" *सूरमा ने अपने देवर से बच्चे पैदा कर लिए है, इसलिए उसे जो पेन्शन स्वीकृत की गई है, उसे बंद कर दिया जाना चाहिए।"*[101]

उत्तरप्रदेश शासन ने, उस शिकायत पत्र को रद्दी की टोकरी में डाल देने की बजाय, उस पर तत्काल जाँच किए जाने की आदेश जारी कर दिया। परगनाधिकारी जाँच की और कहा कि सूरमा ने सच में अपने देवर से बच्चे पैदा किया। सूरमा का पेंशन रोक दिया गया। उससे माँग की गई कि वह अब तक प्राप्त कुल धनराशि को सरकारी ख़ज़ाने में जमा कर दे।

विद्यासागर नौटियाल कहते हैं कि "*जो लोग अपने प्रगतिशील विचारों के वाहक मानने की ग़लतफ़हमी में जी रहे हैं, उन हज़ारात या सज्जनात से पूछना चाहता हूँ कि यदि ऐसा हुआ होता कि कीर्ति नगर में राजाशाही से लड़ते हुए सूरमा भरदारी गोली खाकर शहीद हो जाती और उसकी मृत्यु के फलस्वरूप उसके पति को स्वतंत्रता संग्राम सेनानी पेंशन स्वीकृत की जाती और मोलू भरदारी अपने समाज में एक सच्चा आदमी की तरह जीवन व्यतीत करने के लिए किसी कुंवारी कन्या से शादी कर लेने का अपराध कर बैठता तो सूरमा की पेंशन बंद करने वाला शासन मोलू भरदारी की पेन्शन को बंद कर देता था उसे यथावत जारी रखता ? वह नियम, जो सूरमा पर लागू किया गया, वह मोलू भरदारी पर भी लागू किया जा सकता या नहीं? "*[102]

नौटियाल जी का विचार शत प्रतिशत सही है इस पर पूरा समाज को विचार करने की आवश्यकता है। सूरमा भरदारी को जो दो हज़ार रुपये पेन्शन मिला उस पैसा को उसने जूनियर हाईस्कूल क्वीलाखाल की स्थापना में दान दे दी, और निवेदन किया कि उसमें अपने पति का नाम रख दिया जाय।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर सं. रामचन्द्र वर्मा, पृ. 191
2. वस्तु और कला, जयशंकर प्रसाद, पृ. 5
3. काव्यालंकार, भामह, पृ. 54
4. नयी कविता का आत्मसंघर्ष, मुक्तिबोध, पृ. 104
5. मार्क्सवाद और उपन्यासकार यशपाल, डॉ.पारसनायमिश्र, पृ. 7
6. हिन्दी समीक्षा - स्वरूप और संदर्भ रामदरशमिश्र, पृ. 305
7.A Dictionary of modern criticalterms, Rogerfowler, पृ. 145
8. बृहत् हिन्दी कोश, पृ.1239
9. Times and Novels , Mendilow , पृ.234-235
10. हिन्दी उपन्यास-शिल्पगत विकास यात्रा, देवेशठाकुर, पृ. 234-235
11. हिन्दी उपन्यास-शिल्पगत विकास यात्रा, देवेश ठाकुर, पृ. 53
12. आर्यकल्प, सं.अवधेश नारायण मिश्र, पृ. 50
13. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 50
14. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 8
15. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 19
16. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 15
17. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 121
18. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 130
19. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 136
20. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 140
21. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. भूमिका
22. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 37
23. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 107
24. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. प्रथम पन्ना
25. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 24
26. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 34
27. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 46
28. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 63

29. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 71
30. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.13
31. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 15
32. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 16
33. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 19
34. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 20
35. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 21
36. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 50
37. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 51
38. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 52
39. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 41
40. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.126
41. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 81
42. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.121
43. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 90-91
44. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 70
45. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.138
46. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 140
47. सूरज सबका है ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 98
48. सूरज सबका है ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 98
49. सूरज सबका है ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 100
50. सूरज सबका है ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 93
51. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 94
52. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 134
53. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 130
54. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 136
55. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 138
56. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 27
57. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.122
58. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.122

59 उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 125-26
60. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 132
61. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 33
62. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ .38
63. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 28
64. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 30
65. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 91
66. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 93
67. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.159
68. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 49
69 उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 266-67
70. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.262
71. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 37
72. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 55
73. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 23-24
74. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 24
75. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 41
76. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 44
77. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 82
78 यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 83
79. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 84
80. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 14-15
80. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 33
81. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 74
82. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 118
83. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 52
84. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 94
85. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.124
86. यमुना के बागी बेटे ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 52
87. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 94

88. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 124
89. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 2
90. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 3
91. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 68
92. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 61
93. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 61
94. भीम अकेला ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 56
95. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 57
96. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 77
97. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 83
98. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 87
99. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 90
100. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.117
101. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.118
102. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 120

विद्यासागर नौटियाल गढ़वाल के महत्वपूर्ण कथाकार और उपन्यासकार है। टिहरी-गढ़वाल रियासत के क्रूर सामंतवाद और कांग्रेस में कार्यवाद का साहस पूर्वक प्रतिरोध कर मध्य हिमालय की घाटियों-चोटियों की विकट राहों पर कंधे पर अपने साथियों के साथ रिक्तम पताका झुलाने वाले गढ़वाल के इस महान सपूत ने अपने जीवन और कृतित्व के द्वारा मिसालें कायम की हैं। हिन्दी कथाकारों में यशपाल और अज्ञेय अपने जीवन में क्रान्तिकारी रहे थें। उनके बाद की पीढ़ी में फणीश्वरनाथ रेणु और नौटियाल जी दो ऐसे कथाकार है, जिन्होंने जीवन के आरंभिक बर्षों में संघर्ष और लड़ाई का रास्ता चुना।

नौटियाल जी के उपन्यास उन गढ़वालियों की जीवंत कथाएँ हैं। उनके उपन्यास कोई कल्पित कथाएँ नहीं हैं। घास गूजरों की भैंसों, खडवालों और पशुओं के लिए *जीवन दात्री* तथा *संजीवनी* है। घास में जो जीवन छिपा है, उसको नोटियाल जी की नजर से देखने पर ही साहित्य तथा जीवन के संबन्धों को समझा जा सकता है। परन्तु बड़े लोग तो घास को केवल अपने बगीचों में उगाते हैं। केवल उसकी हरियाली देखने, या नंगे पांव उस पर चल कर ठंडक महसूस करने के लिए। यह घास भी माली उगाता है। वही उसे पानी देता है, काटता है। साहब लोग तो उसे अपने गोरे पांवों के तलवों से रौंदते हैं।

पहाड़ की घास, जंगल, बरसात, ऊंची चोटियों पर चमकीली बर्फ, इन पहाड़ों के गीत, उन्हीं की तरह विद्यासागर नौटियाल जी के उपन्यासों को सिर्फ पहाडी जीवन की वास्तविकता कहकर, उसे क्षेत्रीय सीमित अर्थों में उन्हें मुख्यधारा के सृजन से अलग कर देखने से हम उन की सृजन दृष्टि की उच्चता के अनुबोध से बंचित रह जाएंगे। अंधेरे कोने में पड़े प्रकृति से संलिप्त चरित्र को विद्यासागर नोटियाल ग्रामवासियों की उदारता, परोपकार के चलते थाने, कचहरी, सरकारी वकील और बंदीगृह में ले आते हैं। वास्तव में विद्यासागर नौटियाल एक अज्ञात किन्तु शोषण चक्र में पिसते यक्ति को जिस उजाले में लाते हैं वह उजाला असल में नई वास्तविकताओं, नई दुनिया, नए कानून और नए कानून को अपने हाथ में रखने वालों का एक ऐसा हथियार है जिससे वे रूग्ण समाज का निर्माण करते हैं और आत्ममुग्ध रहते हैं, और सबसे बड़ी बात यह है कि वे समाज के सभी स्त्रोतों पर काबिल रहते हैं तथा कानून और न्यायपालिका को प्रहसन की हद तक लाकर नियंत्रित करते हैं।

विद्यासागर नौटियाल जी की दृष्टि कलात्मक सृजन की नहीं है। वे सीधे-सीधे भाषिक व्यवहार से आदमी के भीतर की शक्ति या आदमी के भीतर की नफरत या आदमी के भीतर की स्वच्छता, समता, संवेदना की मानवोन्मुखी लहर, सौंदर्य के प्रति ललक और दुनिया को अच्छा बनाने की चाह उकेरते हैं। नौटियाल जीके रचना संचार के भीतर जो अनुपम अनुभव है वह व्यक्तियों,जातियों और वर्गों का लंबे अर्से से शोषणकारी शक्तियों,वर्चस्ववादी शक्तियों की प्रताड़ने का अनुभव है। वह अपनी क्षेत्रीयता में वैश्विक है और इस नाते आज की दुनिया में शोषणकारी और वर्चस्ववादी शक्तियों के रूप बदल कर आने पर भी बदस्तूर है। संवेदना के स्तर पर उसकी प्रतीति देकर विद्यासागर नौटियाल जैसे समग्र विश्व को संबोधित है और आदमी को बाहर और भीतर से उस शक्ति से निपटने के लिए एक जुट हो जाना चाहिए क्योंकि असमता रूग्णता का पर्याय है। रूग्ण व्यवस्थाओं, सत्ताओं की समाप्ति का मानवीय सपना नौटियाल जी के उपन्यासों का केंद्रीय विषय है।

अनेक परतों में जिया जीवन जब साहित्य में झलकता है तभी उस जीवन के महत्व को जाना जा सकता है। जीवन के रहस्य तथा यथार्थ को भी उन्हीं की निगाहों से देखे बिना समझ पाना संभव नहीं। यदि सपाट धरती, मरूस्थल या सागर के किनारों पर बसे मछुआरों का जीवन अलग-अलग रहते हुए भी मानव जीवन के अनुभव में कोई साँझ बनाए रहता है तो इसी साँझ को समझाने के लिए विद्यासागर नौटियाल जी के साहित्य में चित्रित जीवन को भी समझना होगा। घास, जंगल तथा मानव संबन्धों को समझना भी आवश्यक है।

4.1. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में सामाजिक परिस्थितियाँ

हर युग की सामाजिक स्थिति एक जैसी नहीं होती। वह परिवर्तनशील होती है। प्राचीन युग के समाज में वर्ण व्यवस्था अन्धविश्वास, बाल विवाह आदि विभिन्न प्रकार की कुरीतियां प्रचलित थी। लेकिन जैसे-जैसे समाज आधुनिक युग में पदार्पण करने लगा, वैसे-वैसे ये सारी कुरीतियाँ रूढियाँ, समाप्त होने लगी।लेकिन आज भी ये कुप्रथाएँ (कुछ मात्रा में) समाज में प्रचलित हैं।

हर युग के समाज नें अगर कोई सबसे ज्यादा उपेक्षित रही है, दयनीय स्थिति में रही है, तो बह है नारी। नारीयों पर किसी भी समाज की दृष्टि नहीं जाती। हर समाज में नारी शोषण का शिकार होती आ रही है, उसे उपभोग की वस्तु बना दिया गया है। लेकिन आज समाज में नारी की स्थिति पहले की अपेक्षा

अधिक सुधर गई है। नारी की स्थिति को पुरूष के समानान्तर लाने के अनेक प्रयत्न किए गए। इसके फल स्वरूप आज नारी किसी भी क्षेत्र में पुरूषों से कम नहीं है, बल्कि उसकी स्थिति अब पुरूषों से भी ऊँची होती जा रही है। इसी प्रकार इस युग में अस्पृश्यता को अपराध करार दिया गया है। पिछडी जातियों को विशेष सुविधाएँ दी गयी है और जमींदारी प्रथा का उन्मुलन किया गया है तथा शिक्षा का यथा संभव प्रचार-प्रसार किया जा रहा है। आधुनिक युग तक आते आते समाज उच्च वर्ग, मध्यवर्ग और निम्नवर्ग इस प्रकार से तीन वर्गों में विभाजित हो गया।

उच्चवर्ग को जीवन की सारी सुख-सुविधाएँ प्राप्त होती गई जब कि मध्यवर्ग विभिन्न कठिनाइयों से जूझता रह गया। मध्यवर्ग, जो न मजदूर बनकर रह सकता है और न ही पूँजीपति बन सकता है, नौकरी-पेशा यह वर्ग अपनी आर्थिक स्थितियों से जूझता हुआ आज कुंठा, घुटन, संत्रास और निराशा की स्थिति में अपना जीवन यापन कर रहा है। जिससे उसमें असंतोष, आक्रोश, अजनबीपन के बीज पनपने लगे है।

जीवन की विसंगतियों और विडंबनाओं का वर्णन इसी मध्यवर्ग में देखने को मिलता है और तीसरा वर्ग है निम्नवर्ग जिस का संबन्ध श्रमिक वर्ग से है। सारा जीवन काम करना ही इसी वर्ग की नीयति है। इस वर्ग की स्थिति अत्यंन्त दयनीय है।

इसके अलावा समाज में और भी कई समस्याएं है, जैसे वृद्दों की समस्या, बाल मजदूरों की समस्या, चोरी डकैती, घुसखोरी, परिवार से संबंधित विभिन्न समस्याएँ आदि के प्रति कोई दृष्टिपात नहीं करता है। लेकिन साहित्यकार इन समस्याओं को निकट से देखता है और उसका यथार्थ चित्रण अपने साहित्य में करता है।

सूरज सबका है उपन्यास में सामाजिक स्थितियों को समझने के लिए हमे तीन प्रकार के समाज के बारे में जानकारी लेनी जहूही होगी, पहला ऐसा समाज जो रानी कर्णावती नजावतखाँ जैसे सरदार को श्रीनगर से ऐसे मार भागई, दूसरा समाज वीर भडों को हराकर गोरखों का गढ़वाल में पैर रखना, तीसरा एक ऐसा समाज बाधसिंह जैसे लोगों के हरकतों को बरदाश्त करनेवाले गांव वालों की स्थिति। लोग बदले, राज बदला। समाजिक स्थितियों में अनेक बदलाव आए, लेकिन उस दिन से आज तक आम आदमी कुचला ही जा रहा था। समाज में पीसता ही जा रहा था।

शहंशाह हिन्दुस्तान को कब्जे में करलिया था। श्रीनगर पर भी वह अपना हक जमाना चाहता था, शहंशाह ने पता कर ही लिया था कि श्रीनगर के पडोसी पहाडी राजाओं ने शहंशाह को अपना बादशाह कबूल कर लिया था। श्रीनगर में एक औरत राज कर रही थी उसको डराया-हराया जा सकता है। बादशाह श्रीनगर को भी हासिल करके भारत पर अपना अधिकार जमाना चाहता था।

" *कदम-दर-कदम पूजनीय धरती को फौजी कदमों से रौंदने की कोशिश। बादशाह के मंसूबे ऊंचे थे। पर्वत-दर-पर्वत। नदी-दर-नदी। गंगा यमुना से अलकनंदा। पब्बर से पिंडर। बद्रीनाथ। केदारनाथ। गंगोत्री। यमुनोत्री। आदिबद्री महाशू-पौबासू। फते पर्वत से बिनसर। शिवालिक से पैनखंडा नंदादेवी, पिंडर तक हुकूमत। एकच्छत्र राज हिमालय। सातवी सदी के चीनी यात्री ह्वेन सांग ने पिसे ब्रह्मपुरी कहा है -हिमालय का वही भाग उत्तरकाशी। तिब्बती माल की मंडी- बाड़ा-हाट। स्कंदपुरण में जिसे केदारखंड कह गया है,वही हिमालय। नगाधिराज। भारत का मुकुट।तिब्बत की देहली गढ़वाल। श्रीनगर राजा पहाडों में उच्चतम। जिसका सिक्का तिब्बत में चलता है। चाँदी का सिक्का तिब्बती सोना बटोर लाता है।*"[1]

बादशाह को श्रीनगर पर हक जमाना बहुत मामू सी बात लगी, अपने लाख सौनिकों को नजावतखाँ के साथ भेज कर श्रीनगर पर हक जमाना चाहा। बादशाह शाहजहाँ अपने पुरखों को याद कर रहा था। "*बाबर कुछ ही महीनों के अंदर काबुल से फिर भारत की ओर चल पड़ा। उसने सबसे पहले दौलत खाँ के सैनिकों को काटा और लाहौर तक पहुँच ने का अपना रास्ता साफ किया।तब वह दिल्ली की ओर बढ़ चला। चाचा को धूल चमाने के बाद वह भतीजे की खबर लेने आ रहा था। इब्रहीम लोदी से बाबर ने पानीपत के मैदान में लड़ाई लड़ी।बाबर की सेना की संख्या बहुत कम थी। इब्रहीम लोदी की सेना उसकी सेना के मुकाबले कई गुना अधिक थी। लेकिन अपने तोपखाने के बल पर बाबर ने पानीपत की लड़ाई जीत लो और इस तरह उसने हिन्दोस्तान को जीत लिया। लोदी युध्द में मारा गया।बाबर दिल्ली और आगरा का मालिक बनगया।*"[2]

शाहजहाँ श्रीनगर को पाकर अपना सपना पूरा करना चाहता था। अपनी पुरखों की याद उनकी विजय गाथाओं को याद करके व संतुष्ट हुआ। उसको इस बात पर कोई शक नहीं था कि जल्द से जल्द श्रीनगर पर अपना हक जमा लेगा। नजावतखाँ शाहजहां के सपने पूरा करने की पूरी कोशिश कर रहा था। उसने

श्रीनगर के आस-पास के इलाकों पर अपना हक कायम रख दिया। वहां के पहाड़ों पर वर् देख कर नजावतखां पागल बन गया वह सोचने लगा कि वर्फ बादशाह के पास भेज दिया जाए तो बहुत अच्छा होगा। बादशाह बर्फ को देखकर बहुत खुश हो जाएंगे। बर्फ से लदी हुई नावों का दिल्ली पहुँचाना और वहाँ से आगरा की ओर तीर की गतिसे दौड़ना मुगल शासन के इतिहास में एकदम नई घटनाएँ थी। पहाडों की बफे शाही दरबार में एक नया संदेश ले कर आई थी। आम आदमी के मन में यह बात घर करने लगी थी कि मुगल शासन ने यमुना नदी पर उसके उद्गाम-स्थल से प्रयाग में गंगा से उसके मिलन स्थल(संगम)तक पूरी तरह अपना अधिकार कर लिया है और गंगा के उद्गम गंगोत्री पर भी शाहंशाह बहुत जल्दी कब्जा करने वाला है। नजावत खाँ के नेतृत्व में शाही फौज गदवाल सिपाहियों को पराजित करते हुए आगे बढे जा रही है।

नजावतखाँ सोचा नहीं था कि रानी कर्णावती इतनी जल्दी हार मानलेंगी।कर्णावती ने पंद्रह दिन की मोहलत मांगी। नजावतखाँ तुरन्त हाँ कर दिया। चौदह दिन पूरे हो गए। सिपाहियों को खाने के लिए ठीक से खाना नहीं मिल रहा था।सिपाही सोच भी नहीं सकते थे कि नजावतखाँ रानी को मोहलत देगा। वे इतना जानते थे कि बाकी इलाकों को जिस तरह हरादिया, उसी तरह श्रीनगर में भी युध्द बोली जाएगी। वे वहाँ से अपनी जगह पहुँच जाएंगे लेकिन ऐसा नहीं हुआ। रानी और पंद्रह दिन मोहलत मांगी थी नजावतखाँ हाँ कर दिया।

सिपाहियों को अधपेट खा कर जीना पड़ रहा था। दिन भर कबायद करने वाले लंबे तगडे हट्टे-कट्टे सिपाहियों को पूरी गिजा नहीं मिल रही थी। पिछले चार दिनों से उनहें सिर्फ चार-चार रोटियों पर जिंदा रहना पड रहा था। आज की रात उन्हें चार रोटियाँ भी मयस्सर नहीं हो पाई और सिर्फ दो रोटियो पर अपना गुजारा करने को कहा जा रहा था। एक मुद्दत हुई उन्होंने दाल का एक दाना भी मुँह में नहीं डाला था। गोश्त तो उनके लिए एक सपने की बात हो गई थी। अब वे सिर्फ गंगाजल पीकर जिंदा रहने को मजबूर हो रहे थे और उन्हें आगे बढने से रोका जा रहा था। वे कहं देहातों में लूट-मारकर अपने लिए खाना जमा करले ऐसी कोई संभावना वहां नहीं थी। कई-कई कोस तक इंसानी बस्तियों का कोई अस्तित्व नजर नहीं आ रहा था लड़ाइयाँ लड़ने को बेताब, अपनी जान की बाजी लगा कर फतह हासिल करने वाली एक फौज को नदी किनारे वीरान जंगल में भूखों मारा जा रहा था।

सिपाहियों को खाना एक सपना बन कर रह गया। उनके खाने का सामान रास्ते में ही लूट लिया गया था। इसलिए उनको तीन दिन से भरपेट खाना नहीं मिल रहा। आगरा में सर ऊँचा करके अपना बदन तन के खडे होने वाला सिपाही आज सर झुका कर गंगातट पर पानी पी कर अपनी भूख को मार कर बैठे हुए है। सिपाहियों को सिर्फ दो रोटियां ही मिली थी। उन दो रोटियों से कोई संतुष्ट नहीं था। जिन के पेट में भूख की आग जल रही थी और जो दुशमनों से लड़ते हुए मरने-मारने को तैयार रहते थे, अब दिमागी तौर पर फौजदार के खिलाफ लड़ने के लिए तैयार हो गये थे जिस की बेवकूफियों की बजह से वे भूखों मरने को मजबूर हो रहे थे। वे सब मिलकर नजावतखाँ के पास गए। सिपाही इनामुल्ला खान अपनी बात शुरू की "*हमने इशारा मिलते ही संतूरगढ़ की तरफ रूख कर दिया। संतूरगढ़ पर भी आज हमारे शहंशाह आजम का डंका बोल रहा है। तब हम ननोर किले की ओर बढ़े और उसे सर किया। हमने चंडीघाट में गंगा को पार किया, श्रीनगरकी फौजें हमें नहीं रोक पाई और अब हम इस जंगल में नदी के इन सुसान किनारों पर फँस गए है। हमारे पास रसद खत्म हो गई है। रसद की नई खेपों के क से मंगाए जाने का कोई इंतजाम नहीं किया जा रहा है। पिछले एक हफ्ते से हमें आधे पेट खा कर जिंदा रहना पड़ा। आज सिर्फ दो रोटियों पर गुजारा करने को कहा गया।*"[3]

उस समय सिपाहियों की सामाजिक स्थिति इस तरह थी। उनको घर की याद आने लगी। भर पेट खाना नहीं मिल रहा था। सिपाही रसद लेकर वापस आ रहे थे तो उन पर पत्थरों की बारिश हुई उनका रसद लूट ली गई। रानी के सिपाही उन्को पकड कर रानी के पास ले आए। रानी कर्णावती ने नायब शहजहाँ का फौजदार था, उससे कहा -"*तो अपने बादशाह के पास हमारा एक संदेश ले जाओ। कहाना कि फिर सभी इस तरफ आँख उठाने की जुर्तर न करें। हिन्दुस्तान भर के लोग यहाँ वद्री केदार, गंगोत्री-जमुनेत्री के दर्शन करने आते हैं। हमला करने के इरादे से इधर कभी मत आना। तुम लोग अपनी जुबान से हमारा यह संदेश अपने बादशाह से नहीं कह सकोगे यह हमें मालूम है। हम उसका इंतजाम कर रहे हैं। हमने तजबीज किया है कि जिस सिपाही को जिंदगी की भीख चाहिए, उसके लिए हमारा संदेश अपने बादशाह के पास ले जाना लाजमी कर दिया जाए। वह सिपाही अपने हथियार हमें सौंप दे।*"[4]

उस दिन आगरा दरबार में बर्फ नहीं पहुँची। खबर को ज्यादा देर तक छिपाकर नहीं रखा जा सकता। बर्फ का बहाँ पहुँचना इस बात का सबूत था कि उन बर्फीले पहाड़ों पर मुगल हुकूमत चल रही है।

रानी को जो भी सिपाही बंदी के रूप में मिलें उन सब की नाक कटवा दी। पूरा फौज नाक कटवा कर वापस आगरा पहुँचा।

शाहजहाँ ने मिर्जा शजअ (नजावत खाँ) का मनसब छीन लिया। लेकिन इतनी बडी सजा देने के बाद भी उसे संतोष नहीं हुआ। बादशाह को मन हुआ था कि वह भरे दरबार में मिर्जा शुजअ की नाक कलम करवा दें पर उसके नतीजों पर विचार करके वह चुप रहा। राजा-बादशाह जिसे देते थे, छप्पर फाड़कर देते थे। इनाम-खिताब ऐसे ही बाँटे जाते थे और जिस पर खफा होते थे उसे वे जमींदोज कर देते थे। बादशाह ने मिर्जा शुजअ की जागीर भी छीनली।

अब्दुल रहीम खान खाना के प्रपौत्र मिर्जाखाँ को उस जागीर का जागीरदार बना दिया गया,जिसे मिर्जा शुजअ से छीन लिया गया था। बादशाह ने कर्णावती का नाम बदल दिया था। वह कर्णावती को नक-कटी रानी कहने लगा था और इस पराजय के बाद उत्तर भारत की ओर पाँव बढ़ाने के शाहजहाँ के मंसूबे पर पानी फिर गया। वह दक्षिण की ओर बढ़ गया था। कई-कई साल बाद गोरखे आए थे। गढ़वाल में गोरख्याणी मची थी। गढ़वाल और नेपाल के बीच जंग छिड़ी थी। अंग्रेज देख रहे थे। दो पहाडी मुल्कों में मार-काट मची थी। ईस्टइंडिया कंपनी के मार्फत हिन्दुस्तान पर काबिज अंग्रेज सावधानी से चुप था बस देख रहा था। गढ़वाल की पूरी लंबाई को पार कर गोरखे उसके आखरी छोर तक पहुँच गए थे। अंग्रज कंपनी के कब्जे वाले भारत की गढ़वाल से मिलने वाली सरहदों तक नेपोलियो ने कब्जा कर लिया था। वे गढवाल के हिम-मंडित शिखरों से लेकर उसके मैदानी, भावरी हिस्सों तक फैल गये थे। समूचे गढ़वाल पर नेपाल का साया दिखाई देने लगा था।

व्यापारी अंग्रेज ने, कंपनी बहादुर ने भारत पर कब्जा करलिया था और उसने भारत के इतिहास की जानकारी भी हासिल कर ली थी। मोटी-मोटी जानकारी। वही इतिहास जो राजा -रानियों की प्रशस्ति करता है और उनकी बिरदा वली गाता है। जनता का इतिहास तो अभी लिखा जाना बाकी है। हिन्दोस्तान के उत्तर में जिस पर अंग्रेज काबिज हो गया था। एक सौ चार गढ़ थे। एक सौ चार गढ़ों के एक सौ चार भड़ थे। जिस वक्त अजयपाल ने गढ़ों पर

विजय प्राप्त की और उन्हें अपनी अधीनता में लाकर एक नए मुल्क गढ़वाल का निर्माण किया और खुद को उसका राजा बनादिया उस वक्त की बात किए जाए तो गढ़वाल में कुल एक सौ चार गढ़ थे।

" भड़ *गढ़वाली में पराक्रमी, वीर और अनेक दूसरे अर्थों के लिए समप्रयुक्त शब्द है।भारी-भरकम काम जो किसी के वश का न हो जो उसे कर दिखाये-वह परक्रमी भड़ है।जो खूँखार दुश्मनों को गाजर-मूली की तरह काटने लगे, जिसे देख कर दुश्मन के छक्के छूट जाएँ वह वीर भड़ है।"*[5]

भड़ राज करता था पर ऐश नहीं करता था। उसके राजसी ठाट बाट नहीं होते थे। उसका निवास किसी महल में नहीं होता था। वह अपने गढ़ के आस-पास रहता था। गढ़ याने एक विशाल चबूतरा। भड़ योध्दा होता था। षडयंत्रकारी नहीं। निश्छल, निष्कपट, पराक्रमी, परम साहसी योध्दा। कूटनीति से कतई अनभिज्ञ। पत्थरों पर सोने वाला, जंगलों। जंगली इलाकों में, पहाडों के घेरे में, उन्की धारों और खालों में, नदियों के तटों पर, खुले में, खुले आसमान के नीचे रहने-सोने वाला एक सार्वभौम शासक जो अपने ऊपर किसी और की सत्ता हर्गिज स्वीकार नहीं करता था। ऊपर आकाश, नीचे भड़। जहाँ भड़ होता उस समाज में लोगों को किसी की कमी नहीं होती।

काफू चौहान जैसे वीरों को धोखे से मारने के बाद उस समाज के लोगों पर अनेक प्रकार के जुल्म होने लगे। गोरख लोग गढ़वाल पर अपना हक जमा लिया। एक नये तरह का जुल्म शुरू हुआ। गोरख लोग आदमियों को बेचने लगे। गढ़वाली दास-दासी बनकर बिकने लगे।

नेपाल सरकार का नियम कि जिस किसान के ऊपर राज्य का बकाया हो वह 'देखते मिछे'(सिपाहियों द्वारा उसकी माँग किए जाने पर तत्काल) अदायगी नहीं कर सकता तो उसे गिरफ्तार कर लिया जाए। गिरफ्तारी के बाद उसे बेचे जाने के लिए हरिद्वार पहुँचा दियाजाए। हरिद्वार में गुलामों की मंडी लगती थी। हरिद्वार में एक गोरखी थाना भी मगोडे में विशेष तौर पर इसी कार्य के लिए खोला गया था।

उस समय गढ़वाली समाज में हर एक किसान डरता हुआ जीवन बिताता था। गोरखे गाँव में आने वाले हैं, इस बात का पता चलते ही वे लोग कहीं न कहीं छुप जाते थे। उस गाँव से दूर चले जाते थे। कई लोग जो सिपाहियों के हाथ लग

जाते उन को कोई बचाने वाला नहीं होता था। अगर कोई पैसा देकर बकायादार को मुक्ति कर देता है तो उस बकायादार को जिसने पैसा दिया उसके पास बंदी बनकर रहना पडता था। ऐसे में गढ़वालियों के साँसे तेज से धडकने लगी। अपने समाज से दूर जाने का किसी का मन नहीं होता था। जो लोग सिपाहियों को दिखाई दिए उनको पकड कर ले जाते थे और मंडी में बेच देते। पति को कोई खरीद लेता तो पत्नी को कोई और तो बच्चों को कोई, आँखों के सामने पति पत्नी से बिछुड जाता बच्चे मां से और भाई दूसरे भाई से बिछुड जाता।

मंडी में सबको बेच दिया जाता है। कहा जाता है बारह साल तक गोरखों ने दो लाख गढ़वालियों को दास-दासी बना कर बिक्री किया।कौडी के भाव बेचे दिया। उन दो लाख गढ़वालियों ने उसके बाद अपने जीवन में फिर केदार भूमि के दर्शन नहीं किए। फिर अपने सेरे नहीं देखे। उन में उगने वाली धान-गेडूँ-सरसों की लहलहाती, खिल खिलाती फसलें नहीं देखीं। अपने वनों में मधुमक्खियों की छत्ते नहीं देखें, लेकिन जो सोना-चाँदी और नकदी दौलत वे जमीन में गाड़ दिथे। वह अभी भी बोलती है। अनेक बार ऐसे किस्से सुनाई देते हैं कि किसी को सपने में बताया गया फलाँ जगह तेरे पुरखों का धन गड़ा है। तू उसे निकाल ले और लोग उस गड़े खजाने को उस निश्चित स्थान से सचमुच खोद लाए है।

एक युग बीत जाने के बाद गढवालियों ने अपना राजसिंहासन बंधक रख कर उस पैसे के बल पर एक नई सेना का गठन शुरू कर दिया। खुले जंगलों में, कच्ची छानों में, नदियों के किनारों पर, पहड़ों की चोटियों पर भेड़ों की तरह रहने, सोनो वाले गढ़वाली नेपालियों की गुलामी से गढ़वाल को मुक्त कराने के लिए फिर से संगठित होने लगे थे। उनके पास कोई हथियार नहीं थे। अपनी छानों के अंदर से वह अपनी खेती-बाडी के काम आने वाले कुल्हाडों -दराँतियों को हाथ में लिए अपने ठिकानों से निकल कर दून घाटी की ओर प्रस्थान करने लगे थे।

जिस काम को मुगल बादशाह शहंशाह नहीं कर पाया, जिसे नेपाली नहीं करपाए वह काम अंग्रेजों ने बड़े सलीके से कर दिखाया। गढ़वाल को टुकडों में तोड़ कर उन्होंने उसके स्वतंत्र अस्तित्व को भी समाप्त कर दिया। गढवालियों के राजा को चंद मुल्कों की आशा दिखा कर अंग्रेजों ने गढ़वालियों की मदद किया। गोरखें हार गए। गढवालियों पर ज्यादा शासन अंग्रेजों का ही था। राजा सिर्फ नाम के लिए था।

गढ़वाली समाज में अनेक राजाओं ने शासन की। अंग्रेज अपना हक जमा रखा। आम जनता पर किसी राजा का असर नहीं था। वे स्वतंत्रता चाहते थे अपने समाज में अपने लोगों के साथ खुश रहना चाहते थे। राजाओं एवं अंग्रेजों के पालन का तो अंत हुआ। लेकिन पटवारी परगनाधिकारी आदि अधिकारियों के जुल्म तो गढ़वाली समाज में जीवित प्रजा को सहना ही पडता था। बाघासिंह के कठोर अनुशासन का पालन सोनी गांव वालों को करना ही पड़ता था। किसी को बाघासिंह के खिलाफ जाने की हिम्मत नहीं थी। बाघासिंह के परिवार के लोग गाँव की औरतों के साथ बदतमीजी का विरोध करने का हिम्मत किसी में नहीं। अगर किसी ने शिकायत की तो उस व्यक्ति को, जिस पर तथाकथित अत्याचार किया गया हो, सख्त हिदायत देदी जाती है कि वह भविष्य में ऐसा मौका फिर न आने दे कि वह संभल कर रहे और अपनी जवान बेटी और कुलच्छनी बहुओं को ठीक तरह से, डाँट-फटकार कर सही रख, यों ही बेलगाम खुला न छोड़ दे जिससे गाँव के नेक चलन लडके बिगड़ने लगेंगे।

सिध्द शब्द गढ़वाली में शुभ-प्रस्थान के लिए प्रयुक्त शब्द है। आम बोल चाल में, किसी व्यक्ति को तुम कहाँ जा रहे हों पूछना गढ़वाली में बहुत बुरा माना जाता है। इसके लिए केवल एक शब्द प्रयुक्त किया जाता है-*सिध्द*।

बाघसिंह की पत्नी फजीती आत्महत्या कर लेती है। गाँव के सब लोग जानते थे कि वह क्यों आत्महत्या की। पर किसी के पास इतनी हिम्मत नहीं कि कुछ सवाल करे। पूरा समाज बागसिंह से डरता था। बाघसिंह कोई बलवान आदमी नहीं है पर उसकी शक्ति बड़े-बड़े अहलका रों की कमलों से उपजती है। बड़े -बडें दफ्तरों से उसे शक्ति प्राप्त होती है। अपनी उस शक्ति के बल पर बाघा जिसे चाहे जमान पर गिरा सकता है, धूल चटा सकता है। बाघसिंह के क्रूरता से पूरा गाँव परिचित था। बडीदादी जो घर पर रहने वाली अकेली बुढ़िया का पूरा खेत बाघसिंह ने कब्जा किया। बडीदादी जानती तक नहीं थी। बडीदादी तो यमराज का इन्तजार कर रही थी। बाघसिंह पटवारी और अन्य अधिकारियों को पैसा देकर बडीदादी को मृत दिखाकर उसका खेत हासिल किया था। ऐसी स्थिति में देवीदत्त बडीदादी की मदद करने के लिए आता है। गांव वालों के लिए सोने गांव के लिए खास कर बडीदादी के लिए वह किसी भगवान से कम नहीं था।

" देवीदत्त ने उस मामले की छानवीन कर ने का उस मामले में उलझ ने की जरूरत नहीं समझी। एक बेसहारा बुढ़िया है। वह बीमार है। मरणासन्न हालत में है। उसका कोई अपना नहीं। उसके पास कोई संपत्ति नहीं। संपत्ति क्यों नहीं और कैसे उस पर किसी ने कब्जा कर लिया इस प्रश्न की गहराई में जाने से उस बुढिया का कोई लाभ नहीं होने वाला है। उसके जीतेजी उसे मृत कैसे घोषित कर दिया गाया? इस प्रश्न की तह में जाना भी मुश्किल है।"[6]

देवीदत्त बडीदादी से मिलना चाहता था। वह बस इतना ही चाहता था कि उसके जाने तक बडीदादी जिंदा रहे। बडीदादी नहीं जानती थी कि उसका खेत बाघसिंह कब्जा किया और बाघसिंह की माँ आत्महत्या कर ली। इस बात किसी को पता नहीं चलने के लिए पटवारी और पंडित को उसका थोडा खेत दान किया। इन सब बातों से उसे कुछ लेना देना नहीं था।

गाँव के सब लोग बडीदादी का आदर करते थे। बडीदादी के घर से पैणा नहीं आएगा, यह जानकर भी गाँव वाले बडीदादी के घर पैणा भेज देते थे। अंत में बडीदादी देवीदत्त की सहायता से गांव में सब को पैणा (गुड की गोलियाँ) खाने के लिए कहती है, पूरा गांव बडीदादी के घर के पास था। सब लेग उसकी अर्थी में भाग लिए है, सब यह सोचने लगे कि बडीदादी यमराज को हरा दिया है। बडीदादी मरी नहीं, जिवित है।

उत्तर बायां है इस उपन्यास में नौटियाल जी हम लोगों को एक ऐसे समाज के सामने लेकर जाते हैं, उस समाज के बारे में पढते हुए ऐसा महसूस होता है कि हम भी उस समाज के एक आम व्यक्ति हैं। जो भी घटना घटती है लगता है कि हमारे साथ हो रहा है। कुछ पात्रों को देख कर उनका ईमानदारी, सच्चाई देखकर हमे अपना सर झुकाना ही पडता है भले वे लोग अनपढ़ ही क्यों न हो लेकिन ये लोग सच्चे हैं। कहीं-कहीं ऐसा लगता है कि लोगों को अनपढ़ होने के कारण कितने अत्याचार सहने पडते हैं। जब इस समाज के लोग अपने बच्चों को बचाने के लिए अपनी जमीन गिरवी रखते हैं उस खाली कागजाद पर हस्ताक्षर करते हैं, इतना भी नहीं जानते कि उसमें क्या लिखा है। कर्ज लेते हैं तो पांच सौ की जगह साढ़े तीन सौ ही मिलता है और बाकी पैसा सूद में कट जाता है तो ये बेबस और गरीब लोग कुछ नहीं कर पाते। जितना मिला उतना पैसा लेकर दबे पँव लौट आते, पूछने किसी को हिम्मत नहीं होगा कि पैसा क्यों कम

दिया गया। अगर किसी ने थोडा बहुत हिम्मत दिखाकर पूछ भी लिया तो सेठ के पास तो जवाब पहले से ही तैयार रहता था। सेठ पहले से ही जान लेता है जो बेबस इनसान उसके पास आया है उसको पैसों की कितना जरूरत है। सेठ कितना भी कम पैसा दे वह कुछ नहीं कह पाएगा,अगर अपने जीवन काल में वह सूद के साथ पैसा नहीं लौटा पाएगा तो सेठ लोग उसकी जमीन हडप लेंगे। कागजाद तो पक्का तैयार कर लेते हैं।

समाज में सेठ लोग तो ऐसे होते हैं कि अगर उनको किसी भी जमीन अच्छी लगती है तो उस जमीन के मालिक को किसी न किसी मुसीबत में फंसाकर जमीन हडप लेते हैं। कागजाद कभी पक्का नहीं लिखा गया तो सेठ को कोई फर्क नहीं पडता, और वकील को खरीद ने में तो सेठ को ज्यादा समय नहीं लगता। इस उपन्यास में सामाजिक स्थितियों का वर्णन बखूबी से किया गया है। उपन्यास का हर पन्ना आगे पढ़ने के लिए प्रेरित करता है।

उपन्यास की शुरूआत में ही हमको पालसियों और गूजरों की जीवन स्थिति को जानने का मौका मिलता है। पालसी अपनी भेड बकरियों को चराने के लिए पहाड की ऊँचाई पर रहता है। उसको कभी नीचे आने की जरूरत ही नहीं पडती। गूजर तो बुग्यालों के पास रहते हैं। पालसी अपनी भेड बकरियों की हर पल देख बाल करता रहता है। रात में वह जब डेरे के अंदर सोता है तो भेड बकरियों की देखबाल के लिए दो कुत्तों को छोड देता। कुत्ता अपने मालिक का वफादार जानवर है। यह अपने जान जाने तक वह मुसीबत से निपट लेता है। पालसी का कुत्ता कभी अपने आप से हार नहीं मानता। गूजर के घोडे, भैस बुग्याल के पास पहुँच ने के बाद मुक्त हो जाते है। भैंस को तो किसी खूंटे से बांधने की जरूरत नहीं पड़ती।

पालसी अपनी भेडों की सुरक्षा में पर्वत के ऊपर रहने का आदी बन जाता है।

"पहाडों के निचले इलाकों के मुकाबले धार पर खूब-खूब तेज हवाएँ चलती हैं। वहाँ कोई ओट नहीं होती। पर हवाएं चलती है तो चलें, हवा का मुकाबला कर लिया जाएगा। वहां बाघ तो नहीं आएगा।आराम से पाँव पसार कर सो सकते हैं।"[7]

गूजर एकदम भिन्न होता है पालसी से, गूजर बाघ-भालू से नहीं घबराता।वह हट्टा -कट्टा इनसान होता है। गूजर की भैंसों पर बाघ हमला नहीं कर सकता। वे भैंसे रहती है झुण्ड में। रात को सोते वक्त वे खुद ही एक गोल

घेरा बना लेती हैं और अपने नवजात और कमउम्र के बच्चों को उस घेरे के बीच में रख लेती है, उस मजबूत घेरे को तोडकर बाघ उन बच्चों तक पहूँचही नहीं सकता।

"गूजर कही भी घर पर नहीं रहता।वह पहाड़ की ओट लेकर रहता है। धार से बहुत नीचे, झोंपडी बना कर रहता है। गूजर की झोंपडी, एक पूरा भवन। ऊँचा, हवादार सुरक्षित। घने वृक्षों से भरे वन के अन्दर एक खूबसूरत, साफ-सुथरा आवास।"[8]

गूजर हरसाल मैदानी इलाकों से अपने मवेशियों को लेकर पहाडों की उँचायों पर आते हैं। उनके परीवारों और पशुओं की संख्या सालों साल बढती रहती है। स्थानीय ग्रामवासियों के लिए यह विशेष चिन्ता का विषय बना रहता है।

"टिहरी-गढ़वाल रियासत की आजादी से पहले गूजरों को रियासत की बुग्योलों, वनों चरागाहों के अंदर पशु चराने के अनुमति-पत्र बहुत कंजूसी के साथ, बेहद सतर्क हो कर दिये जाते थे। स्थानीय ग्रामवासियों के अलग-अलग गाँवों के अलग-अलग वन क्षेत्रों में चरान-चुगान के हक हकूक सरकारी कागजात में दर्ज किए जाते थे। उस दैरान बहुत थोडे, सीमित गूजर परिवारों को चरान-चनगान के परमिट जारी किए जाते थे।"[9]

भारत आजाद हुआ था। उस वक्त गूजर, खडवाले और भैंसवाले अपने-अपने चरागाहों, वनों और बुग्यालों में अपने पशुओं को चरा रहे थे। 15 अगस्त,1947 को टिहरी गढ़वाल रियासत की हुकूमत ने भारत के आजाद हो जाने के बाद अपनी स्थिति जाहिर करने के लिए टिहरी शहर के पोलो ग्राउंड में एक विशेष दरबार आयोजित किया गया। रियासत अब भारत का भाग नहीं, उस से एकदम अलग, एक स्वाधीन देश है। प्रजामण्डल ने रियासती प्रजा की आजादी के लिए अपना संघर्ष जारी किया। खडवालों, भैंस वालों और गूजरों को इस आन्दोलन के बारे में कुछ पता नहीं था। आन्दोलन कारों को थाने में रख कर तरह-तरह की यातनाएं देते थे। वहाँ सुनवाई का नाटक होता और उन्हें लम्बी-कठोर कैद और भारी जुर्माने की सजा सुनाईं जातीं।

"उसी दौरान, आजादी मिलते ही, पड़ोसी हिन्दुस्तान में सांप्रदायिक दंगों की शुरूआत हो गई। पाकिस्तान में हिन्दुओं और भारत में मुसलमानों का सामूहिक संहार किया जाने लगा। बडे पैमाने पर लूट-पाट शुरू हो-गई। चलागाहों में जो

गूजर थे, सब मुसलमान थे। टिहरी-गढ़वाल रियासत के बाहर पड़ोसी आजाद हिन्दुस्तान के मैदानी भागों में मुसलमानों के कत्लेआम की शुरूआत हो जाने की उडती-उडती दिल दहलाने वाली खबरें गूजरों के कानों में भी पडने लगी।"[10]

हिनदुस्तान की आजाद के सिर्फ पंद्रह दिनों के बाद ऊंचे पर्वतों पर होने वाले मौसम के बदलाव के कारण गूजरों को हमेशा की तरह वहां से मैदान के निचले इलाकों की ओर चले आना था। गूजर अकेला नहीं चलता, उसका कुनबा और उसके पशु साथ चलते हैं, पंवाली की बुग्यालों में गूजर को यह सुनकर बहुत अच्छा लग रहा था कि हिन्दुस्तान से फिरंगो को भगा दिया गया है और कि मुल्क आजाद हो जाने पर मुसलमानों का कत्लेआम क्यों किया जा रहा है-उनका कसूर क्या है।

"भारत की आजादी के उस साल उन बुग्यालों में निवास कर रहे गूजरों का मन कर रहा था कि वे वहां से वापस न जाएं। वहीं जमे रहें। जाड़े भर पहाड़ों पर ही अपना गुजारा कर लें। गूजर हिन्दू मुसलमान के झगडे में नहीं पड़ता। गूजर हिन्दू भी होते हैं और मुसलमान भी। हिन्दू और मुसलमान गूजर आपस में भाई-भाई की तरह रहते हैं। मुल्क हिन्दुस्तान में फैली सांप्रदायिकता के पागल पन की लपटों से दूर बुग्यलों में अपनी भैंस-गाय बछडों-घोडों - बकरियों, अपनी औरतों और बच्चों के साथ शान्त जीवन बिता रहे मुसलमान गूजरों का मन हो रहा था कि वे इसी सुरक्षित ईलाके में छुपे रहें।"[11]

गूजर कहीं छुप कर नहीं रह सकता। गूजर तो कुदरत के कायदों से पाबन्द रहता है। गूजर अपने पशुओं के बगैर रह नहीं सकते। उन पशुओं को एक दिन भी घास के बगैर नहीं रखा जाता। उनकी मजबूरी है कि सर्दी शुरू होने से पहले से ही वह बुग्यालों से उतर कर मैदानी हिस्से में चले जाते हैं। जब गूजर मैदानी जगह पर पहूँचता है तो वहां उसका कत्ल हो सकता था या न तो उसको लूटा जाता था।

गूजर लोग मन ही मन इस कत्लेआम के किस्से सुन कर डर रहे थे। फिर वे लेग कुछ कर नहीं सकते। पशुओं को लेकर तो उन को अपनी जगह पहुंचना ही है। रास्ते में ही कत्ल और लूट होता है। इसलिए वे लोग झुण्ड बनकर निकलते हैं, दूसरी तरफ अपने पशुओं को भी साथ लेकर चलना है तो ये लोग रास्ते में ही अपना डेरा बना लेते है और दूध घी पास के इलाके में बेच कर आते हैं फिर डेरा उखाड कर दूसरी जगह पर पहुँच जाते हैं। लंबे समय तक यात्रा

करने के बाद ही वे अपनी जगह पहुंच पाते। रास्ते में बाकी गूजर मिलते जाते अनको अपने साथ लेकर झुण्ड बनकर निकलते हैं।

" *वे आजाद भारत और टिहरी-गढ़वाल रियासत की सीमा के करीब पहुंचे तो रियासती हुकूमत ने गूजरों की रक्षा के लिए उनके साथ हथियार बन्द पुलिस तैनात कर दी थी। हुकुम यह था कि रियासत की सीमा के भीतर एक भी हादसा नहीं होना चाहिए।*"[12]

हर गूजर के मन में यह डर था कि जल्द से जल्द अपनी जगह पहुंच जाए वरना पता नहीं कहाँ कीसी मुसीबत का सामना करना पडे। ऋषिकेश, आजाद हिन्दुस्तान की सरहद पर मिलने वाला पहला शहर है। वहां पहुँचते ही गूजर अपने को सुरक्षित महसूस करते थे। गूजरों को हमेशा अपने बुग्यालों की याद आती थी। पर क्या करे वे लोगों को लौटना ही पडेगा ना," *ऋषिकेश के बासिन्दगान ने अपने करीबी जंगल में नौ बेकसूर गूजरों और एक गूजरी के मार दिए जाने की मनहूस, दिल दहला देने वाली खबर बहुत ग़मगीन होकर सुनी थी। मरने वाले गूजरों में किसी के नाम का पता नहीं चला।*"[13]

दंगाइयों के हथियार बन्द होकर जंगल में गूजरों के डेरों की ओर कूच करने की जानकारी प्रशासन को पहले से ही हो गीई थी। लेकिन गूजरों की हिफाजत करने की जरूरत नहीं समझी गयी थी।

ये किस्सा तो आजादी के समय का था। उस समय समाज की परिस्थितियां इस तरह थी। चांदी और रैमासी के बीच कोई गांव नहीं। रैमासी और चांदी के बीच बटिया लगातार ढलान से होकर गुजरती है। रैमासी तक नदी के दोनों किनारों पर देव दार के छोटे-बड़े पेड़ो का साया कायम रहता है। रैमासी से आगे सब कुछ बदल जाता है।

सदरू इस उपन्यास का मुख्य पात्र है जो घर से दूर पहाडों पर अपने मालिक के भेड बकरियों की देखबाल करता रहता है उस का भाई करणू है, करणू भी पहाडी परही रहता है एक दिन करणू को पता चलता है कि वह गिरफ्तार हो चुका है और उसको टिहरी जाना है यह जानकर वह चिन्तित हो जता है, उसको यह बात समझ में नहीं आयी कि वह किस जुल्म में गिरफ्तार हो चुका है। इस तरह बहुत सारे केस उस गाँव में होते हैं। अगर किसी पटवारी या सेठ का कुछ काम हो उसे गाँव का आदमी बिना पगार लिए ही उन की मदद

करनी चाहिए। अगर कोई बोरिया हो तो उसको उठाकर उनकी जगह तक पहुँचा देनी चाहिए, अगर कोई ऐसा नहीं किया ते उसको किसी ने किसी मुसीबत में फसाना पटवारी और बाकी अधिकारियों को आसान काम है।

अब भी प्रजा की स्थिति वैसे ही है, किसी में इतनी हिम्मत नहीं है कि हाकिम के खिलाफ जाए। जो भी अधिकारी गाँव में आए उनको नजराना के रूप में कुछ न कुछ देना पडेगा। उसके बाद उस बोरिया को उस अधिकारी के घर तक पहुँचाना भी पडेगा। करणू ने ग्राम सेवक अधिकारी को नजराने में दिया गया आलू का बोरिया उठाने के लिए इनकार कर दिया था। इसलिए उस पर गलत इल्जाम लगाया गया बहुत सारा पैसा खर्च होने पर भी उसे सजा सुनायी गयी,करणू को तो एक साल जेल में बिताना पडा।

चंदगाँव में सैंतीस घरों में सिर्फ एक बच्चा है। बाकी सब बहुएँ जवान है लेकिन किसी को भी बच्चा नहीं है। चंदवासियों को पता नहीं चल रहा कि क्यों उनके गाँव में बच्चे पैदा नहीं हो रहे हैं।

"हुकम को अफसोस है कि उसने शादी के बाद से आज के दिन तक छटांकी के साथ कभी जी भरकर बातें नहीं की। दिन भर हम जुदा-जुदा रहते हैं। रात को सोते हैं तो घर के सभी लोग उसी एक कमरे में सोए रहते हैं। उस कमरे के बीच में चूल्हे से सटकर मेरे माँ - बाप का बिछौना लगता है, एक कोने पर मेरी बहन लेट जाती है जिसे अभी तेरहवां लगा है और जिसका अभी ब्याह करना है। दूसरे कोने पर हम दोनों भी अपने लिए एक मुरेठी बिछा लेते हैं। हम साथ-साथ लेट जाते हैं पर हम आपस में कोई बात नहीं कर सकते। अगर कभी हमें ऐसा मौका मिलता है कि दिन के वक्त हम दोनों किसी तरह एक साथ हों, बहां हमारी बातों को सुनने वाला और कोई न हो तो छटांकी मुझसे थोडा-बहुत बातें करलेती है। छटांकी कहती है कि हम पशु है। दोनों के दोनों। वह कहती है कि हमारा गाँव एक पशुओं की बस्ती है। कि पशु हम से अच्छे होते हैं। उन्हें अपने काम करने में शरम नहीं आती। वे जो करते हैं खुल कर करते हैं। हम खुल कर आपसे बोल भी नहीं सकते। मैं रैमासी में ब्याही जाती तो आब तक कई बच्चे जनलिए होते।"[14]

करणु को बार बार टिहरी की कछड़ी में बुलाया जाता था तो बार बार रैमासी से गुजर कर जाना पडता था। रैमासी में अक्सर करणू धनसिंह के घर

जाता था, उसकी बुढ़ी माँ करणू के लिए रोटी बनाती थी, करणू हमेशा धनीसिंह से कहता है कि किसी लडकी से शादी करल धनसिंह की पत्नी प्रसव पीडा के कारण चल बसी थी। धनसिंह कहता था कि मुझे कोई लडकी देने के लिए राजी नहीं होंगे तो करणू कहता है कि *"कुंआरी मत ला, कहीं से कोई छुटैल उठा ला या बाप केघर पर बैठी किसी विधवा को पटाले जो भावजों की ताने सुनते-सुनते तंग आ गई हो।*

- दो घरिया औरत भी मुफ्त में कहां मिलती है आज कल ? मायके वाले उसका भी तो कुंआरी कन्या वाला मोल मांगने लगते हैं।

- किसी की नाराज बैठी घरवाली को ही लेआ भगा कर। बाद की बाद में देख लेना। पटवारीजी ने तो तेरा ही पक्ष लेंगे ही, तेरी मदद, तरफदारी करेंगे ही।"[15]

एक दिन जब करणू घर गया तो पता चला कि उसकी पत्नी दिखाई नहीं दे रही है। करणू को पता नहीं चला कि उसकी पत्नी गयी कहाँ ? जब वह टिहरी जा कर वापस आते वक़्त रैमासी में रूका था, वह घनसिंह के घर गया तो वहाँ अपनी पत्नी रोशना को देखकर करणू के मन में सतगंगा बह रही थी। करणू को लगता है कि वह अपनी पत्नी को बुलाकर बात करले कि क्यों उसने ऐसा किया। लेकिन करणू ऐसा नहीं किया। वह रात वहाँ रुक कर चुपचाप वापिस आजाता है। न उस दिन करणू रोशना से कुछ कहता, जब रोशना उसके घर वापिस आती है और वह माँ बनने वाली है, उस समय भी करणू कुछ नहीं कहता।

मौसम और चीजों के बदल ने के साथ रैमासी में खबरें भी बदलती रहती है। आज की खबर दूसरे ही दिन पुरानी हो जाती है। रैमासी वासियों को ताजा भोजन खाने की तरह ताजा खबरों में डूबे रहने की आदत है। गांव में तो कुछ न कुछ घटनाएँ गठती रहती है।

रैमासी के सिणकू का बेटा ग्याडू बम्बई गया था। गाँव में वह पहला लडका था जो बंबई गया और पाँच साल के बाद लौट आ रहा है। गाँव में सब खुश थे। सब इन्तजार कर रहे थे उसे देखने केलिए। ग्याडू तो अब गणेश बनगया था। ऐसे मौके पर कन्हैया जैसे लोग सिणकू के घर जाकर उसका मदद करते हुए उसकी पैसों से चाय पीता है। रैमासी में बहुत सारे लोग ऐसे होते हैं जो मुफ्त में अपना काम निपटा लेते हैं।

गाँव के लोग तो आपस में मिल जुल कर रहते हैं। एक दूसरे का दुःख दर्द जानते हैं। नौटियाल जी ऐसे समाज का वर्णन हमारे सामने ले आते है कि

लगता हैं जो गाँव के बारे में कुछ भी जानता नहीं है, उसको तो उपन्यास पढ़ने के बाद ऐसा लगता है कि वह गांव का ही वासी है।

झुण्ड से बिछुडा उपन्यास के आरंभ में एक छोटी सी टिप्पणी दी गयी है। जिस में *बध्वा* के प्रचलित अर्थ के साथ यह भी संकेत दिया गया है -लोग ऐसे किस्से भी सुनाते हैं कि कई बार ऐसा भी हुआ कि बध्वा प्रभावित आदमी बाघ की ओर खिंचता चला गया। मस्त चाल से चल रहे बाघ के पीछ-पीछे उसे खुद ही दोड़ लगाते देखा गया। यदि इसे उपन्यास का रूपक मानले तो इसी के सहारे कहानी आगे बढ़ती है।

गाँव के अन्दर गाँव वासियों की सभी तरह की हरकतें सामान्य का रवाइयाँ जारी थी। लोग इधर-उधर आते जाते दिखाई दे रहे थे। रास्ते के किनारे बैठे कुछ मर्द लोग हाथों में तार के पत्ते लिए कोट-पीस का खेल खेल रहे थे और खेलते खलते बीच में खूब शोर भी मचा रहे थे। कुछ उस खेल के मात्र दर्शक बने थे और किसी मजेदार चाल के बाद उस शोर में अपना भी योगदान कर रहे थे।

"सरकारी कागज़ात में हर गाँव के वन संबन्धी हकूक, आजादी से भी पहले से, राजाओं के जमाने से ही, पूर्व निर्धारित हैं। सरकारी काग़ज़ात में मरगदना के इस ओर और मरगदना के उस ओर रहने वालों के जंगल आपस में बाकायदा बँटे हुए हैं। उनके घास के रकने, कारत की लकडी के क्षेत्र, पठालखानें, माटाखानें सब कुछ अलग-अलग दर्ज हैं। किस गाँव के लोग कहाँ-कहाँ तक, लम्बाई चौड़ाई में कहां से कहाँ तक घास-लकडी काटने, अपने मवेषियों से चरान-चुगान करवाने के कानूनी तौर पर हकदार हैं, किस वन से संबन्धित अधिकारों से लैस है इस बात को जानने के लिए किसी और को पूछ लेने की कोई जरूरत नहीं पडती। फैला हुए वन नक्शे पर बहता हुआ मरगदना सब कुछ खुद ही खुलास कर देता है।"[17]

बहुएँ और बेटियाँ इस बक्त न तो कोट-पीस खेल रही थी, न कोई दूसरा खेल, उन्हें अपनी गृहस्थी के जाल से ही छुट्टी नहीं मिल पाती थी। उनमें से कोई हाथों में या सरों पर अपने बंठे, गगरियाँ, पतीले लिये पानी लेने जलधारा की ओर जा रही थी या पानी भरे बर्तनों को सर पर उठाये अपने घरों की ओर लौट रही थीं। वे सामान्य ढंग से आपस में बातें करती जा रहीं थीं, लेकिन उनके करीब, आस-पास के दूसरे लोगों को भी सुनाई दे रहा था कि वे क्या कुछ लोलती जा रही हैं, अपने खुले बारामदे में अकेले बैठ सेठे श्रीधर प्रसाद के जोर-जोर से

गरमा गरम चाय सड़कने की आवाजें घर से बाहर काफी दूरी तक पहुँच रही थी। दूसरों को भी साफ-साफ सुनाई देरहा था कि सेठ मज़े में चाय सुड़कता जा रहा है। गाँव पर उतर आ रही शाम के धुँधल के वातावरण में, नगियों के घर के बाहर, सामने के एक खुले आँगन में कुछ बच्चे गुल्ली डण्डा खेलने में मस्त थे।

मरगदना अपनी शाह बदल कर कही दूसरी ओर नहीं जा सकता। वह जहाँ से सौ साल पहले बहता होगा, आज भी वहीं बहता जा रहा है।ठीक उसी लीक पर। असल में वह अपने प्रवाह की दिशा या क्षेत्र को बदल नहीं सकता दो पहाड़ों के बीच,उन दोनों के सीमित साझे तल पर वह खुद भी बाँधा हुआ, जकड़ा हुआ रहता है। वहाँ कोई मैदान तो हैं नहीं जो बाढ़ के आ जाने पर नदी का पानी इस साल एक ओर को बहने लगे और दूसरे साल वहीं से बहुत दूर किसी दूसरी दिशा की ओर उत्पात मचाते फिरे। मरगदना सदियों से अविचलित रहने वाले दो पहाडों के तल पर बहता जाता है। पहाड़ अपना स्थान छोडकर खुद कहीं भाग कर नहीं जा सकते। जैसा कि उनके निवासी भागते रहते हैं। उनके निवास भागे-तो भागे। वे अपनी-अपनी जगहों पर स्थिर हैं। मौसम के हिसाब से उसके पानी की मात्रा घटती या बढ़ती रहती है। पानी की वह मात्रा ही उसकी रफ्तार को निर्धारित करती है। बहुत मध्दम गति से या विकराल रूप धारण कर उसके स्पटिक की तरह साफ दिखाई देने वाले या मिट्टी-गाद से परिपूरित बेहद गंदले जल के वहां बहते रहने के कारण लोग अपनी तरफ से अपनी-अपनी समझ के अनुसार, जैसे चाहें मतलब निकाल लें मरगदने का उससे कोई सरोकार नहीं रहता।

घाटी में उनगिनत चीजों को भी अपने साथ बहाने लगता हैं मरगदना। लकड़ी के टुकड़े, भारी-भरकम दरख्त और इनके अलावा कभी-कभी अपने ही तल पर बरसों से जमें बैठें खूब बड़े-बड़े पत्थरों को भी उखाड़ता हुआ और उन्हें भी अपने चपेट में लेकर अपने साथ धकेलता, बहाता हुआ वह पहाड़ों की शान्ति को, उनकी नीरवता को झकझोर देने वाला, कँपा देने वाला शोर मचाने लगता है। अगड़म बगड़म बकने लगता है मरगदना। ऐसे कि जैसे वह अपने होश-हवाश खो कर, सन्निपात के रोग की चपेट में न जाने क्या कुछ बड़बड़ाने लगा हो।

"मरगदना में बाढ़ आयी है। नदी-तल से उठने वाले उस भयंकर शोर में सिल्ला या पिल्ला किसी भी बस्ती के निवासियों को कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा हैं। कहाँ तो सामने के गाँव की भी एक-एक बात सुनाई दी जाती थी, कहाँ अपने

ही धरों-आँगनो में जोर-जोर से, चिल्ला -चिल्ला कर कही जा रही बातें भी समझने में नहीं आ रही हैं। वर्ष के बाकी महीनों के बदलते मौसमों के दौरान मरगदना को पार करने के लिए लोगों को उसके पानी में उतर कर अपने पाँव भिगोन तक की जरूरत नहीं पड़ती। पाँव नहीं भिगोने होते हैं शान्त हो कर, शर्मीली चाल से बहते जा रहे उसके छुई-मुई जैसे गुम सुम बहते जा रहे पानी में।पाजामा या पैन्ट को उतार ने की कोई जरूरत नहीं। छिछले पानी के बीच-बीछ में जगह-जगह पर स्थायी तौर पर एक दूसरे के आस-पास पडे हुए,तल पर जमें हुए बड़े बड़े पत्थरों पर छलाँग लगाते हुए लोग उसे आसानी से, यों ही पार करते हुए आगे निकल जाते हैं।"[18]

अपने उद्देश्य को सफलता पूर्वक पूरा करने के लिए वहाँ पहुँचने वाले लोगों के लिए यह बात जरूरी होती है कि वे पहाड़ को, उसके विभिन्न हिस्सों को, भली भाँति जानते हों, उसके तमाम तौर तरीकों से परिचित हों, कहाँ-जंगल हैं, कहाँ जंगल नहीं है। कहीं मिट्टी है, कहीं पत्थर है, कहीं पानी है। घरों की लिपाई करने के लिए लाल माटी चाहिए तो मारखान की जानकारी होनी चाहिए। छांवाई करने के लिए पतले पत्थरों-पठालों की जरूरत है तो पठालखान कहाँ पर है। घांस लेने जा रहे हो तो मालूम होना चाहिए पहाड के किस हिस्से में इस मौसम में अच्छी घांस उगती है। पेड़ों के इलाके में, खतरनाक ढलानों पर लटकती हुई समतल भूमि के सीने पर, पानी से पसीजती हुई जगहों पर और यह बात भी मालूम होनी चाहिए कि जिस जगह जा हरे हो वहां आजकल घास होगी या नहीं होगी। घर में आने वाली नयी-नयी बहू को पहले-पहल इन्ही सब चीजों की जानकारी हासिल कर लेना जरूरी होता है।

ईंधन के लिए उपयोग में लायी जा सकने वाली लकड़ी की जरूरत है तो उस वन के बारे में और वहां उगने वाले उन पेडों के बारे में मालूम होना चाहिए। अगर शिकार की तलाश में जा रहे है तो पलटे अपने मन में यह बात तय कर लेनी होगी कि अब कि बार, मुख्यतया किस तरह के जानवर का शिकार करना है। पहाड के किसी हिस्से में, उसकी वनों में खास कर उनके बस्ती से बेहद दूरी पर स्थित ऊँचे, बर्फीले शिखरों में प्रवेश करने से पहले यह तय तकना जरूरी होता है कि आप वहां क्यों जा रहे हैं। उस मौसम में और रात-दिन के उस खास वक्त पर जिस शिकार की खोज में जा रहे हो, वह किस इलाके में मिल सकता है। एक-एक चीज की सही जानकारी नहीं होगी तो पहाड़ पर क्या करने जायेगे?

अपने धारे पहुंच जाने वालों के सामने पहाड़ अपनी स्थिति को,अपने अभाव और दीनता को, अपने वैभव और समृध्दि को और अपनी या आपकी त्रृटियों को खुद ही बताने, उजागर करने लगता है।

लेकिन एक अकेले बाघ की हरकत ने, उसकी मात्र एक कार्रवाही ने पूरे गांव की हरकतों पर रोक लगा दी थी। पूरे गाँव को एक दम चुप करा दिया था। उसके सब रटवासियों की अक्ल ठगली थी उसने कबड्डी खेल रहे, उछलते, कूदते, जिन्दा और मरने से इंकार करने वाले समस्त जिन्दा दिल खिलाडियों की साँसो को भी खत् कर दिया था। हवा में उछालें लेती हुई कबड्डी, कबड्डी, कबड्डी की उनकी तेज पुकार एक झटके में बन्द हो गयी थी। उस अकेले बाघ ने उन सब को मार दिया था। सामूहिक तौर पर मार दिया था। गुल्ली-डण्डे के उस खेल में बाघ भी शामिल हो गया। उसने भी भांचो मार लिया था। अपने डण्डे के उस खेल में बाघ भी शामिल हो गया। उसने भी भाँचो मार लिया था। अपने डण्डे से गाँव की गल्ली को उछाल कर बाघ ने कहीं इतनी दूर फेंक दिया था कि उस ढूँढ पाना अब असंभव हो चुका था। बाघ ने गुल्ली को न जाने किस दूरी पर फेंक दिया था। दलली को गायब कर देने के कारण बाघ को अचानक हासिल हो उठी बेशुमार पीढीयों की अब कोई गिनती ही नहीं की जा सकती थी।

श्रीधर सेठ उसका ऋणी बन गया था। उसे अपने जीवन की चिन्ता सताने लगी थी। वह अपने बचने की तदबीरे सोचने लगा था। बाघ की उस हरकत से सेठ को बड़ा झटका यह लगा कि उसे अपने को गाँव के बाकी सामान्य निवासियों की पंगत में उन्ही सब की बराबरी पर शामिल हो जाने का अहसास होने लगा। इतना ढीठ, ऐसा मूर्ख, ऐसा मक्कार बाघ। गाय ऊँचे भीटे के किनारे एक खेत में शान्ति पूर्वक चर रही थी। उससे करीब बीस फुट की दूरी पर एक खडीक का पेड़ था बाघ ने शायद इसी खड़ीक के पेडे के पीछ अपने बदन को छुपा कर घात् लगाई होगी।

शिकार, शिकार होता है। बाग एक शिकारी होता है और आदमी, जिसे हम तोपची कहते हैं वह भी शिकारी होता है। उस मामले में वे दोनों एक होते हैं। उस मामले में उन दोनों में कोई फर्क नहीं होता। जो मनुष्य -शिकारी होता है शिकार के मामले में उसका असली गलुरी भी बाघ होता है। उसे काफी कुछ बाघ से ही सीखना है होता है। सिर्फ गोली चलान, एक ऐसी कला है जिस का सीधा

प्रशिक्षण बाघ से नहीं लिया जा सकता। उस विद्या के अलावा शिकार करने के मामले में शिकारी को बाकी तमाम जीजों, अन्य सभी चीजों की सीख बाघ से ही लेनी होती है।

दुश्मन को यह बात मालूम हो गयी थी कि उसका नाम एक तोपची था। असीम हिम्मत से लबालब एक बहादूर आदमी। इलाके का एक जाना-माना शिकारी, जिसकी शोहरत बहुत दूर-दूर तक फैली थी। गाँव-बस्ती को आतंक के साये में डुबा देने वाले जिस जिस बाघ या भालू के या बनैले सुअरों की खूँखार, छुरिया होली के धोरे फटक ने की कोई हिम्मत न कर के, जिसके आतंक के मारे लोग अपने घरों से बाहर पैर तक धरने का साहस न जुटा पा रहे हों उसे खत्म करने का काम जग्गू को सौंपा। उस खूँखार जानवार को गोली से ज़मीन पर बिछाकर इलाके के अंदर पसरे आतंक को मिटा देगा। यों उस काम को सौंपने की वैसे कभी ज़रूरत नहीं पड़ती। जग्गू किसी के कहे बगैर खुद ही मुस्तैद हो जाता है। वह काम उसे करना है, यह बात उसके दिल में खुद ही बैठ जाती।

" ऐसा लग रहा है कि पूरा गाँव निकल पड़ा है बाघ को जंगल से घर लाने। जग्गू ने अपना काम कर लिया है। जहाँ पर खडे होकर जगगू ने बाघ पर गोली दागी। मौके पर पहुँच कर गाँव के नौजवानों ने पेड़ के एक मजबूत, खूब लम्बी शाखा को काट लिया है। वे उस का साँग बना लेंगे। उस लकड़ी पर बाँध दिया हैं उन्होंने बाघ के हाथ और पाँवा उन्हे साँग के मार्फत बाघ के बेहद वज़नी शरीर को अपने कंधो पर लेकर उसे ढोना है। उन्हों ने उसे ज़मीन से उठा लिया है। छः आदमी कुल छः आदमी लगे हैं साँग पर। तीन आगे, तीन पीछे। साँग भारी मालूम हो रहा है। उनके मन जोश और उत्साह से भरे है लेकिन उस जोश के बावजूद वे तेज चाल से नहीं चल सकते। वे बहुत सँभल सँभल कर अपने पाँव आगे बढ़ा रहे हैं।"[19]

गाय के मार दिये जाने के कुछ ही देर बाद शाम का धुंधलका रात में बदल गया था। आकास में और गाँव के वातावरण में घना अंधकार अपनी चादर फैला चुका था। और दिनों की तरह रात के मौके पर खिल-खिल जाने वाली उनके अंदर की हँसी-खुशी गायब हो चली थी। उन्हें कहीं से भी आशा की कोई किरण आती नहीं दिखाई दे रही थी। किसी भी ओर से नहीं। बाघ मौत का दूसरा नाम बन चुका था। गाँव के हर निवासी के दिमाग के भीतर जीवन और मृत्यु के बोध का भयंकर संघर्ष छिड़ गया था। लोग बाग को मौत का प्रतीक मानने लगे थे। अपने अन्दर कायम जीवन के अस्तित्व को बाघ के जीवन के अस्तित्व से भिड़ाया

जाने लगा था। दो में से एक के जीवन का अन्त होना अनिवार्य दिखाई देने लगा था। अब या तो बाघ जीवित रह सकता है या ग्रामवासी और उनके पशु धन इसकेलिए जो भी किया जा सके, किया जाना चाहिए। भविष्य की चिन्ता ने बस्ती के तमाम लोगों के बीच एकता का भाव पैदा कर दिया था। उन्हें एकता के मजबूत सूत्र में बांध दिया था। मजबूरी में वे सब आपसी मतभेदों को भूलाने लगे थे। अपने उस काल्पनिक सुरक्षित भविष्य का उन्हें दुश्मन एक मात्र रक्षक दिखाई देने लगा था।गांव बस्ती के सामने बाघ एक भयंकर खतरे के रूप में प्रगट हो उठा था। लगों को उस खतरे को मिटा देने की चिन्ता सताने लगी थी। एक बाघ ने, बाघ के जीवन ने लोगों को अपने-अपने भविष्य के बारे में सचेत कर दिया था। उस बाघ के मार दिये जाने से, उसके जीवन का अंत हो जाने से गांव का भविष्य सुरक्षित हो जाएगा-यह बात लोगों के दिमागों में जम कर बैट गयी थी।

ऐसा नहीं था कि उससे पहले बाघ उस इलाके में न रहा है। बाघ वहां लगातार मौजूद रहता था। लोगों को उसकी मौजूदगी की लगातार जानकारी रहती थी। जंगलों में, जंगलों के आस-पास के इलाकों में बाघ रहते ही हैं। रात के मौके पर बस्ती के भीतर पहुँच कर कुत्तों को खींचकर ले जाने की घटनाएँ लगातार होती रहती थी। उस तरह की घटनाओं के बाद लोगों को अहास होता रहता था कि बाघ आस-पास कहीं मौजूद है। लेकिन उसकी उस मौजूदगी ने गाँव को कभी उस कदर भयभीत, उस तरह आतंकित नहीं किया था जैसा कि शान्ति बुढ़िया की गाय के मारदिये जाने के बाद आज स्थिति पैदा हो गयी थी।

लोगों को बाघ का मुकाबला करना था बाघ को खत्म कर देना जरूरी हो गया था। वस्ती के सब लोग मिल कर, अपनी सामूहिक ताकत के बल पर बाघ का सफया नहीं कर सकते थे। यह कोई रस्साकशी में जोर आजमाने की बात नहीं थी। एक अकेला बाघ एक तरफ एक पूरी बस्ती एक तरफ एक बाघ की शक्ति के सामने एक पूरी बस्ती अक्षम हो उठी थी। बाघ अब मौके पर और ज्यादा सत्रक होकर प्रवेश करेगा। बहुत सावधान हो कर आएगा। वह सचेत रहता है कि अब की बार जब वह अपनी मड़ी के पास जा रहा है, उसकी फिराक मे इधर - उधर कही तोपची भी मौजूद हो सकते हैं।

बाघ सब कुछ जानता है। सब चीजें समझता है।उसे तोपचियो को झाँस में रखते हुए अपने किए शिकार के मांस का भक्षण करना है। बाघ ने गाय को इसलिए मारा कि उसे अपनी भोज्य सामाग्री के रूप में इस्तमाल कर सके। भोजन

की जरूरत के लिए मारा। यों ही मार देना और मार कर फेंक देना, मार कर चले जाना, उसे भूल जाना और फिर कभी उसके पास न आना, बाघ का ऐसा कायदा नहीं होता। मारा और भूल गये। मारने के बाद वहां से गायब। रफूचक्कर। यह आदमियों का स्वभाव होता है। इन तमाम चीजों के बारे में, बाघ के स्वभाव के बारे में, उसके साहस के बारे में, उसके कायदों के बारे में दुश्मन को भी पूरी-पूरी जानकारी रहती है।

अनपढ़, अंगूठा-छाप दुश्मन। बाघ कब आयेगा और किस दिशा से आ सकता है। आने से पहले वह उसके आस -पास किसी शिकारी के होने या न होने की कितनी सावधानी से, किस तरह की छानबीन करेगा। मड़ी के पास पहुंच जाने पर उसकी माँ से खाने की तैयारी करने से पेश्तर कितनी बारीकी से नीरीक्षण करेगा। उस मड़ी पर और कुछ भी करने से पहले बाघ इस बात की जांज करेगा कि उस पर किसी मनुष्य का हाथ तो नहीं लगा है। उस पर मानुष्य-गन्ध सूंघने लगेगा अगर उसे किसी और ने नहीं छुआ है तो वह सुरक्षित भोजन है। बाघ को शिकार की रग-रग के बारे में ज्ञान रहता है और दुश्मन को बाघ की रग-रग के बारे मे ज्ञान रहता है। अपने उसी ज्ञान के आधार पर वह बाघ पर, उसकी शक्ति पर, उसकी फुर्ती पर हावी होकर उसे मार गिराया जा सकता है। वह बाघ को अकेला रहते हुए ही मारता आया है। अकेला ही मारने मे सक्षम है।

"गोली लपकते हुए बाघ के सर पर लगी है। सर पर लगी अकेली गोली ने बाघ को जमीन पर लुढ़का दिया है। गोली से भी ज्यादा तेजी से शतरू वहीं से पीछे की ओर भाग चला मयान के नीचे जमीन पर गिरी हुई रायफल को उसने अपने हाथों में उठालिया। अपनी बन्दूक को जमीन पर रखा। फुर्ती से एक बार फिर पीछे की ओर घूमा।जमीन पर लेट रहे बाघ के बदन पर ठाँय-ठाँय दो फायर और तब रायफल को, उस पर लगे फीते के सहारे, उसने कन्धे पर लटका दिया और अपनी बन्दूक हाथ में थामे किसी बन्दर की तरह लपकता हुआ मचान के ऊपर जा पहुँचा।"[20]

बाघ को मारने के बाद बेहोश हुए सुबेदार को उठा के वहां से ले आता है। अपना बिस्तर पर लेटे-लेटे शतरू ने फैसला किया कि इस वक्त मुझे सो जाना चाहिए। सुबह जल्दी उठना पड़ेगा और गाँव के किसी भी आदमी और औरत के जगने से पहले किसी और के दिशा-फिराकत के लिए गांव की बटिया पर पहूँचने से भी पेश्तर, बस्ती से बाहर निकल जाना चाहिए। इस वक्त जल्दी नही सो पाया

तो नींद पूरी नहीं होगी और जंगल में पहुंच जाने पर आँख दर्द करने लगेंगी।

एक छोटी-सी, गहरी, आराम दायक नींद। उन आँखों की हिफाजत करने के लिए उनकी सलामती के लिए।

"नहीं। उसके दिल की आँखे कुछ और ही निर्देश दे रही है। आज, वह इस रात के अपने घर पर खुलने का इन्तज़ार नहीं कर सकता। उसे इसी वक्त निकल जाना चाहिए। शिकारी के लिए रात के कोई मायने नहीं होते और अपनी बन्दूक से सिर्फ निहत्ये मनुष्यों को मारने में माहिर एक अकेले बन्दूकची की बुजदिली के कारण वह अपनी बिरादरी से बिछुडा, एकल-भक्षी तोपची बन कर नहीं रहेगा। उसे अपनी नयी पीढ़ी को साथ लेकर चलना होगा। तभी उनका भविष्य उज्वल हो सकेगा।"[21]

इस उपन्यास की मूल कथा में कई उपकथाएँ है जिनमें गढ़वाली जीवन की झाँकी ही नहीं अतीत की राज्य सत्ताका प्रतिरोध भी है। इस उपन्यास में पहाडी जीवन में लोगों के संघर्ष के इतिहास के नीचे दबा संघर्ष भी मुखर है।

भारत में अंग्रेजी राज के दौरान मध्य हिमालय के काफी बड़े भूभाग में फैली एक देशी रियासत-टिहरी गढ़वाल। भगीरथी और यमुना दोनों नदीयों का उद्‌गम स्थल। पुराणों के अनुसार-देव-भूमि। वहाँ के शासक ने दरबारियों, चाटुकारों के माध्यम से अपने को *बोलंदा नदी* (बोलता हआ बदरीनाथ) घोषित करवा दिया था। उस देव-भूमि के एक भाग यमुना घाटी (रवाई) में रहने वाले साधारण मनुष्यों-रवांल्टे-को पशुवत् नारकीय जीवन बिताना पड़ता था।

जल, जंगल और जमीन पर मलिकाना हक दरबार को होता था। लोग दरबारियों की इजाजत के बगैर उन जंगलों में प्रवेश तक नहीं कर सकते थे। ऊंचे, हिममंडल शिखरों व घयटियों के निवासी जंगलों, चरागाहों में सदियों से पशुपालन कर किसी तरह अपना गुजारा करने आये थे। वे न्यूनतम आवश्यकताओं की अपूर्ती हो जाने पर संतुष्ट हो जाने वाले लोग थे। बहुत अच्छे जीवन की उनकी कल्पना की उडान कभी पहाडों-जंगलों-नदियों के घेरे से बाहर-घाटी से चोटी तक की परिधि से बाहर नहीं जा सकती थी। उनके सपने भी इसी तरह के होते थे कि वे अपने पशुधन को लेकर मुक्ती (ढेरसारी) पत्तियों से लदे किसी घने जंगल में या कहीं हरे-भरे, लंबे-चौडे चरागाह में बेरोक टोक घूम रहे हैं। उससे ज्यादा अपने जंगलों और चरागाह में स्वच्छंद होकर घूमते रहने से ज्यादा-वे रवांलटे और किसी चीज की कामना या याचना नहीं कर सकते थे।

" लेकिन अपने राजमहल के स्वर्ग में निवास करने वाला उनका राजा उनके जैसे मामूली सपने देखता था। उसकी वफादारी गुलाम प्रजा के प्रति नहीं, लंदन में बैठने वाले अंग्रेज महाप्रभु के प्रति रहती थी। उसका मन उन पहाडों की वीरानगी से निकल कर यूरोप के सजीले- रंगीले देशों की सैर करने लगता था। उसकी राजसी आकांक्षाओं की पूर्ति में कुछ अंग्रेज भक्त दरबारियों को प्रजा के सपने बाधा देते मालूम होने लगे। सपनों की उस टकराहट के फलस्वरूप वे वन उपजों का व्यापारिक दोहन करने के मकसद से चरवाहों ,वन वासियों को उनके पारंपरिक वनों से बेदखल करने लगे। "[22]

खुफिया तंत्र की गोपनीय रिपोर्ट के मताबिक,आजकल रियासत के दीवान राय बहादूर चक्रधर जुयाल और फॉरेस्ट सेटलमेंट ऑफिसर पदमदत्त रतूडी का नाम सुनते ही रवाई-जौनपुर के वनवासियों में उत्तेजना फैलने लगती है।टिहरी से चलकर वहां तक,या उन इलाकों की सीमाओं को छू-भर लेने वाले छोरों तक, पैदल पहुंचने में किसी भी आदमी को कम से कम चार -छः दिन लग जाते हैं। राजधानी नरेंद्र नगर से सात-आठ दिन। नरेन्द्रशाह के दिमाग में हमेशा यह बात घूमती रहती है कि गढवाल के पहाड़ी इलाके में जन्म लेने वाले, रियासत के बड़े से बड़े अहलकार को भी इस बात की ठीक ठीक जानकारी नहीं हो सकती कि अंग्रेज लोग किस-किस तरह की चीजें पसंद करते हैं और कौन-सी चीजें उन्हें नापसंद होती हैं। उनका उठना-बैठना, हँसना-बोलना, जागना -सोना, पढ़ना -खोलना, शिकार करना था। मछली, मारना इन में से किसी भी चीज के बारे में मिट्टी के घरों के अंधेरे ओवरों में पैदा होने वाले गढ़वाली लोग कुछ भी नहीं जान सकते। उनके आचार-विचार के बारे में, उनके जीवन में अपनाए जाने वाले कायदे -कानूनों के बारे में गढ़वाल में रहकर तो कुछ भी नहीं जाना जा सकता।

"और उस तरह की जानकारियों के बगैर, पुराने जमाने के गढ़वाली लोगों की समझ बैसी ही होगी जैसा कि टिहरी नगर है -धूल -मिट्टी में सने हुए लोग ....मिट्टी -पत्थरों के योग से बनाया गया, पुराना पड़ गया शहर। उस शहर में जन्म लेने वाले लोग, जिन्हें कभी अंग्रेजों के साथ संपर्क में रहने का मौका नहीं मिला, शासन का संचालन अंग्रेजों के माफिक कौशल से तो हरगिज नहीं कर सकते। अंग्रेज कौम के रहन -सहन के अपने तरीके हैं। अपने परंपरागत कायदों के लौह अनुशासन की सीमा के अंदर रहकर भी उस कौम को इतना बल मिल गया की वह पूरी दुनिया पर अपना शासन जमा सके।"[23]

अंग्रेज लोग परंपराओं की रक्षा करने वाले लोग है। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में सैकड़ो साल पहले पर्श पर पड़े स्थाई के दाग तक साफ नहीं किए जाते। वे आज भी उसी तरह चमकने रहते हैं कंजर्वेटिव अंग्रेज अपना दिल तोड देगा उसके टुकडे -टुकडे हो जाने देगा, लेकिन व अपने समाज की मान्यता प्राप्त परंपराओं से खिलवाड़ नहीं कर सकता। कुर्सी पर अधलेटे मालिक को जम्हाइयां आने लगी हैं। लेकिन वह अपने ही घर के भीतर पता नहीं क्या कुछ कर रही,न जाने कैसी मुद्रा में लेटी या बैठी अपनी पत्नी के जीवन में घंटी बजाकर बाधा पैदा नहीं कर सकता।

दुनिया पर हुकूमत करने वाले अंग्रेज के पूरी दुनिया को अनुशासन में रखने का राज यही है कि वे अपने कोएक लौह अनुशासन में बांधे रखने की क्षमता रखते हैं। अंग्रेज एकअजीब कौम है। मन मसोसकरवह अपने ही बरामदेमेंपड़ी एक कुर्सी पर बैठ जाता है। गंभीर होकर आराम कुर्सी पर पसरा हुआ वह कई तरह के कयास करने में खो जाता है...

रियासती शासन को ठीक करना है, उसे सही ढर्रे पर लाकर रियासत की आमदनी में इजाफा करना है तो रियासत की सेवाओं में उच्चतम पदों पर ऐसे लोगों को लाकर बिठा देना होगा, जो अंग्रेज हाकिमान से फर्रादे दार अंग्रेजी में बात कर सकें। जिनके सुझावों, कार्यवाहियों को काटने की बात अंग्रेज अफसरान कभी दिमाग में भीन ला सकें।

" टिहरी शहर में वसंत के शुरू होते ही चारों ओर रंग विरंगे फूलों की मादक खुशबु पूरे वातावरण में फैलने लगी थी। जगह -जगह पर लिंटाना की झाडियां भी दिखाई देने लगी थी। हैजा -निरोदक, लेकिन मलेरिया फैलाने वाला एक खतरनाक पौधा। जेल से नीचे की ओर भीलंगना के तट तक पसरे हुए तीखे ढलानों पर, शिवला और कंडल के घाटों के बीच लिंटाना की झाडियां बहुतायत में उगने लगी थीं। मजबूत, लंबी लता बनकर फैलने लगता है बेशरम लिंटाना। एक -दुबींजा एक बार जम जाता है तो फिर मिटाए नहीं मिटता। इसे जिंदा रहने के लिए पानी की मदद की भी जरूरत नहीं पड़ती। इसकी जडें कभी मर नहीं सकतीं। इसके पौधे को छू देने भर से हाथों में एक अजीब किस्म की बास भर जाता है।"[24]

यमुना घाटी में ढंढके के थमने के आसार नजर नहीं आ रहे थे। वहाँ से खबरें मिलने लगी थी कि टिहरी दरबार की हुकूमत को ठेंगा बताते हुए नगाण

गाँव के हीरासिंह, कंसेरू के दयाराम, खमुंडी गोडर के दयाराम और किशन दत्त के नेतृत्व में रवांलटों ने अपनी अलग समानांतर सरकार कायम करली है। ये कोई राजा नहीं मंत्री नहीं, मेंबर नहीं है। भड़ भी नहीं है। बहुत मामूली लोग हैं। लेकिन इलाके में अब उनका राज चलने लगा है। कुछ दिन पहले चांदा डोखरी में जमा लोगों ने अपनी आजाद पंचायत की स्थापना करते हुए यह ऐलान कर दिया था कि रियासत के वन-संबन्धी नए कानूनों को नहीं माना जाएगा।

विद्यासागर नौटियाल जी कहते है कि" *मेरा जन्म एक जंगलाती परिवार में हुआ था। यमुना घाटी का अन्न, जलव वायु मेरे बचपन की हिफाजत करते रहे। अपने जन्म से तीन साल पहले घटित तिलाड़ी कांड की दरूण कथाएँ मेरे दिल को एक भारी पत्थर के मानिंद दबाती लगती थीं। उन स्वाभिमानी रवांल्टों की बीरगाथा। लोक को सुनाकर मैं उस ऋण से उऋण होने की योजनाएँ बनाता रहता था। इस छोटे से उपन्यास की सामग्री मैं सन् 1964 से ही एकत्र करने लगा था, जब कुछ भुक्त भोगी रवांलटों, सैनिक कार्यवाहियों में शामिल एक सिपाही और कुछ अन्य प्रत्यक्ष दर्शियों से भेंट कर मैंने अपनी डायरी में उनके साक्षात्कार दर्ज किए थे।"*[25]

दिन बदिन बढ़ते जा रहे चक्रधर के अत्याचारों से लोग परेशान होने लगे। चक्रधर की कार्य वाहियों से लोग गुस्से में थे। वे नरेंद्रनगर में हुए दुर्व्यवहार व अपने लोगों की मौतों के लिए भी चक्रधार को ही जिम्मेदार मान रहे थे। यह मांग भी लगातार उठ रही थी कि उसको रियासत से हटाकर फिर से अंग्रेजी सरकार के पास भेज दिया जाय।

चक्रधर और पदमदत्त के खिलाफ लोग कोर्ट में गवाह पेश करना चाहते थे यह जानते ही पदमदत्त अपने तरीके से चाल चलने लगे और दो तीन गावाहों को उसने फसाकर अपने साथ ले जाते हुए रास्ते में उन्हें कोसता है -"*तुम समझते हो कि सरकार ने पोस्ट आफिस इसलिए खोला है कि तुम उसके जरिये सीधे दरबार को अर्जी भेजने लगे? जिस साले हरामजादे कुकुर-बिराले के मन में आए, वह कौंसिल को रजिस्ट्री करने लगे सरकारी डाकखाने से? प्रजा की तरफ से तुम्हारे अर्जी भेज ने का काम कौंसिल ने ढंडक की कार्यवाही माना है। तुम हो कौन जो रिआया की तरफ से बोलने लगे हो? प्रजा कीतरफ से बोलने का हक तुम्हें किसने दे दिया? मूर्ख सोंगडो !* "[26]

रवाई के लोगों की एक सभा जौनसार की सीमा पर लगे चांदाडोखरी में चल रही थी। यमुना और बडया रगाड के बीच बसे गांव नगाण गांव का हीरासिंह भी अपने घर से बाहर मील दूर उस जनसभा में गया था। उसका बाईस बरस का बेटा जयपालसिंह घर पर था। शाम होते-होते गाँव में यह खबर सुनाई दी गई कि पद्मदत्त-सुरेन्द्रदत्त बड़कोट से सुलह समझौते की बात करने के नाम पर जिन लोगों को टिहरी ले गए हैं, उन्हें अध-बाट में गिरफ्तार कर लिया गया है और अब उन्हें टिहरी जेल से ले जायाजा रहा है। कुल दस-बारह लोग, जो उस वक्त घर प मौजूद थे, खबर सुनते ही हीरासिंह के घर पर इकट्टे हो गए।"*रूढी के डांडे पर नीचे जमीन पर लेटे दो शहीद, दो घायल रवांल्टे, एक डिप्टी। रात का मौका। निपट अंधकार। इस वक्त वे सब अक ही स्थान पर इकट्टे थे। परस्थितियों नेउन सबको-प्रबल विरोधइयों को, जबर्दस्ती आपस में जिला दिया था। डिप्टी सुरेन्द्रदत्त नौटियाल को इस मौके पर उन लोगों के अपने पास मौजूद रहने से सहारा मिलने लगा था। सहारा, चूंकी वे जंगली जानवर नहीं थे, मनुष्य थे-आदमी के बेटे। आदमी को आदमी के अपने पास होने का सहारा। ऐसे कठिन संकट के मौके पर मनुष्य मात्र की मौजूदगी। चाहे उसकी सूरत न दिखाई दे, आवाज सुनाई देती रहे, जिससे उसकी मौजूदगी का सबूत मिल जाता है।"*[27]

पदमदत्त वरसाली-नाकुरी के जंगली, खतरनाक रास्तों पर रात-भर दौडता चा गया। कभी इन्ही राहों पर रोज सुबह गंगाणी से चलती हुई रेणुका नाकुरी घाट से भागीरथी का जल लेकर। ऋषि क पूजा के समय से पहले राढ़ी के डांडे की चढ़ाई-उतराई पार कर आश्रम मेंलौट जाती थी। पद्मदत्त लगातार दौडता जा रही था। एक ही रात में छत्तीस मील पार कर गया। उसके मन में स्थायी तौर पर यह डर धंस गया था कि ढंढ की उसका पीछा कर रहा है। लोगों पर गोली चलाने के बाद वह काई घबरा रहा था।

राजा ने रवांल्टों पर गलत इलजाम लगाकर उन्हें सजा देने से पहले माफी मांगने के लिए कहता है तो हथकडियों में जकड़े वे ढंढकी रवांल्टे इतनी जोर जोर से और इतने खुलकर हँसने लगे थे कि राजा का चेहरा फीका पड गया और उसके साथ मौजूद की नजरें जमीन पर गई थी। उनको हँसते देख खिसियाया नरेन्द्रशाह किसी तरह उस बैरक से बाहर निकल गया था।मौत अपने सामने खडे होने पर भी रवाल्टें अपना सर नहीं झुकाया।

"जगह जगह पर खुली मीटिंगे होने लगी हैं, कभी चांदा डोखरी, कभी बडकोट कभी ठडियार, कभी राज तर में।खाई से बाहर के लोग भी खालटें बनने लगे हैं। जौनपुर की पट्टियों - दशज्युला, छैज्युला, लालुर, इडवात्स्यूं के अलावा भागीरथी घटी की दशगी और हातड़ पट्टियों में भी पटवारियों के लिए प्रजा को दबा कर रखना मुश्किल होने लगा है। बंगाज की भी यही हालत है। लोग पटवारियों की नहीं सुन रहे हैं। वहाँ हर आदमी की जुबान से एकही सवाल पूछा जाने लगा है-किशनदत्त क्या बोल रहा है? या हीरासिंह ने क्या कहा है ? हालात ऐसे होगए हैं कि यमुना-घाटी से शुरू होने वाली यह आग रियासत के हिस्से में, चौतरफ, फैली नजर आने लगी है।"[28]

रियासती फौज के कमांडेंट सुन्दरसिंह की बर्खास्तगी के कुछ ही दिन बाद चीफ सेक्रेट्री देवेंद्रदत्त रतूडी के नाम से प्रकाशित एक इश्तहार खाई जौनपुर के अनपढ़ जनता के बीच बांटा जाने लगा -*"यह जाहिर है कि कुछ शरारती आदमी, जिनके निसबत तहकीकात हो रही है, रियाया के मन में किस्म किस्म का डर दिखा कर और झूठी अफवाह उड़ाकर खौफ पैदा कर रहे हैं,मसलन-गाँव-गाँव में, पट्टी-पट्टीयों में इस किस्म के गुमनाम खत भेजे जा रहे है कि गाँव वाले ऐसे शरारती आदमियों को किसी खास मुकाम में बगरज ढंढक मिलें, वर्ना उनके घर जलादिए जाएंगे और वे मारे जाएंगे। ऐसी भी झूठी अफवाह उड़ाई जा रही है कि औरतों के ऊपर टैक्स लगेगा, नाप मौरूसी आलू खेतों पर मामला बढ़ाया जावेगा, मवेशी चुगाम बंद कर दिया जावगा, वगैरह वगैरह।"*[29]

हर एक विषय में जो दरबार में नियम प्रचलित किए गए हैं, उसी की सूचना अफसरान दरबार मुताल्लिका से दरयाफ्त करने पर मिल सकती है, और यदिकोई दरबारी कर्मचारी नियम-विरूध्द काम करे तो शिकायत, मुताबिक नियम दरबर के, आला इलजामों में हो सकती है।

अब गाँव के जंगलों में घसियारिनों के कानों में उडती हुई खबरें सुनाई देने लगी हैं। अपनी रियासत के एक सुदूर कोने पर बसेरवाई प्रान्त के लोग अपने जल-जमीन-जंगल के हुकूक की रक्षा के लिए अपनी जान कुर्बान करने की तैयारी करने लगे है। वे ढंढक पर उतर आए हैं। मर्द लोग भी इन खबरों को सुनते है तो आश्चर्य में डूबने लगते है। कैसे बहादूर लोग है ये रवांल्टो ?

भीम अकेला उपन्यास में नौटियाल जी समाज का सहज वर्णन किया है। यह उपन्यास एक यात्रा है जो सभी समस्याओं को अपने में समेट लेता है।वहाँ के समस्याओं से गुजरते हुए नौटियाल जी आगे बडते हैं। रास्ते में नौटियाल जी पुराने भवन की ओर चले। भवन बहुत पुराना है, लगता है अभी गिरने वा है। मास्टर जी बच्चों को पेड़ के नीचे बिठाकर पाठ पढ़ा रहे थे। भवन का एक भी कमरा ऐसा नहीं था जिस के अन्दर कुछ तो सुरक्षित तौर पर रखा जा कसे।छत विहीन भवन की दीवारें अलग-अलग अनुपात में दूरी थी। वह जगह ऐसी थी कि कुछ आसन ही नहीं था किसी अतिथि को बिठाने के लिए।

वहाँ पास में एक हौज था, मास्टर जी को हमेशा उस हौज से डर लगता था कि बच्चे उसके अंदर न जा गिरे। तेरह कदम लंबा और खूब चौड़ा हौज था। मास्टर जी कहते है - "*एकाध बार ऐसी घटनाएं हो भी चुकी है साब और इतने सारे बच्चों में किस किस पर नजर रखूं कि वह इसकी ओर न आ लगे? लोग अपने मासूम बच्चों को मेरे भरोसे भेजते है विधायक जी। मैं इस हौज की गहराई में डूबने से उन्हें कैसे संभाल कर रखूँ ?*"[30]

कई गाँव से बच्चे वहाँ पढाई के लिए आते हैं लेकिन उनको बैठने के लिए भी ठीक जगह नहीं है। भवन मरम्मत के लिए शिक्षा विभाग मात्र नौ हजार रूपए की राशी देने को तैयार था, जिसे गाँव वालोंने लेने से इन्कार कर दिया। उतने में मरम्मत करवा लेना किसी भी तरह संभव नहीं था। गाँव वाले इस संकरे स्थान से हटकर एक नए, चौडे स्थान पर एक नया भलन बनावाना चाहते हैं। नए भवन को बनवाने लायक धनराशि शिक्षा विभाग देना नहीं चाहता।

नौटियाल जी जब खेतों में से निकलते हैं तो सुआरों से रौंदे खेत मिले। यहां के लोगों को पानी मिलना बहुत मुश्किल है।वे लोग खूब मेहनत करके फसल उगाते है तो उस में अधिक भाग सअरों की टोली आकर रौंद देती है। खूब लंबे चौडे खेत थे। धारीगांव का पन सौड। यह खेत सिंचाई की व्यवस्था न होने के कारण लोग इससे कोई खास उपज नहीं ले सकते।

गाँव के लोग बडी आत्मीयता के साथ मिलते है। किसी के घर पर जाओ अजनबी नहीं लगते। नौटियाल जी लिखते हैं -"*इस गाँव के लोग कितनी*

आत्मीयता से मिले हैं। पिछली बार मैं स्यांरी गया था तो सीधे प्रधान जी के घर जा लगा। भोजन सेरा में कर आया था। गर्मी थी।मैं ने पानी पिया और चाय भी पी थी और जब मैं वहां से चलने लगा तो प्रधान जी ने कहा-अभी ठीक तरह से नहीं बैठे नौटियाल जी। अभी खुद नहीं मिटी। कभी दोबारा अना, फुर्सत से आना।"[31]

पहाड की धार पार करने के बाद सेरा भरदार का क्षेत्र दिखाई देता है। नीचे दाहिने हाथ की ओर एक नदी बहती है और दूलरे तट पर कुछ झोंपडियां होती हैं इनमें फसल-पात की सुविदा के अनुसार लोग अपने मवेशियों को लेकर अस्थायी तौर पर, खासकर बरसात के दिनों में निवास करते हैं। ये छानें स्यांरी गाँव के निवासियों की है। नहर के निर्माण के बारे में लोग सोचते हैं कि इस नहर का निर्माण हमारे सपने साकार करेगा। लेकिन इस नहर का निर्माण हमारे सपने साकार करेगा।लेकिन इस नहर का निर्माण कब होगा,या पूरा होगा भी या नहीं इसका उत्तर तो फिलहाल कोई दे नहीं सकता।

स्यारी गाँव में अगस्त्य ऋषि के मंदिर में अनेक ब्रह्मण बैठ कर हवन कर रहे थे। नौटियाल जी वहाँ पहुँच गए। बहुत लोग मिले थे नौटियाल जी से अपनी शिकायतें लेकर। नौटियाल जी ने सबकी अर्जियाँ लेली नौटियाल जी ने बांसी गाँव का तेजसिंह भी आकर नौटियाल जी से मिला था। तेजसिंह एक जीवित शहीद था।1948 जनवरी 11को कीर्तिनगर में टिहरी की राजशाही को खतं करने के लिए जो लोग जमा हो गये उन में तेजसिंह भी एक था,सने उस दिन के पुरे घटना क्रम का ब्योरा नौटियाल जी को सुनाया।

तेजसिंह कहता है -"*मुझे कुछ साल तक पंद्रह रुपए माह वार सहायता मिलती थी। कुछ समय से एक सौ रूपे मिलने लगे हैं। लेकिन पेंशन लेने के लिए मुझे हर बार देवप्रयाग जाना पड़ता है। मझे लुंज-वायु (गठिया) हो गई है। इन उल्ट्-सीधे रास्तों से देवप्रयाग आने जाने में मुझे बेहद तकलीफ़ होती है। आधे से ज्यादा पैसा आने-जाने में खर्च हो जाता है।मैंने इंदिरा गाँधी के लिए भी पत्र भेजा है। मैं कई बार प्रर्थना पत्र भेज चुका हूँ। मैंने मोराजी भाई को भी लिखा था। जिलाधिकारी को भी कई अर्जियां भेजीं। मेरी अर्जियों पर कोई ध्यान नहीं देता। मेरा कोई सुनवाई नहीं होती। मैं अपनी पेंशन श्रीनगर बैंक से लेना चाहता हूँ। नहीं तो मनीआर्डर भेज दी जाए।"*[32]

तेजसिंह एक जीवित शहीद है। आजादी के लिए अपनी बलि देने के लिए तैयार हुआ शहीद। अब वह बूढ़ापे में है। नेताओं को उसकी कोई जरूरत सी नहीं लगी। कोई भी उसकी मदद नहीं कर रहा है।

नौटियाल जी तेजसिंह की तुलना भीम से करते हैं। वह अकेला भीम जो राक्षसों का संहैर किया था। अकेला भीम पहाड़ पर चींटा मार कर पानी को ऊपर लाया गया। जहां पर साल के बारह महीने पानी उभरता रहता है। लोगों की प्यास बुझाता रहता है।

नौटियाल जी अपने भाई शास्त्री के बारे में बताते है कि वे पहले फौज में भर्ती हो कर वहाँ से भाग गए और अंत में जोगी का वेश धारण किया। अपने माँ से भी भिक्षा लेकर वे हमेशा के लिए दूर हो गए।*"अब नहीं मिल सकते। वे आज अपनी मां से भिक्षा लेकर चले गए हैं। ताई केअन्य कोई संतान नहं है। मेरे ताऊ कब के हमें छोड के चले गे। मैंने तो उन्हें देख भीनहीं। भारत आजाद हो गया है। उस आजादी के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने वाला एक सेनानी फौज के कानून के डर के मारे स्वतंत्र्य भारत में वेश बदल कर छुपता फिरता है। फौज का भगोडा, भगोडा होता है। अंग्रेजों की गुलाम फौज़ के भगोडे को आज़ाद भारत की सरकार वही सजा देगी जो अंग्रेज तजबीज कर गया है।"*[33]

नौटियाल जी यज्ञ में जाने के लिए जोशी जीके यहाँ रुके थे। जोशी जी गाँव के प्रधान थे। उन्होंने गांव की स्थिति को नौटियाल जी को बताया। यज्ञ तो हर बार हवें सल आयोजित किया जाता था,कुछ झगडों के कारण सत्ताईस साल बाद यज्ञ कियाजा रहा था। जोशी जी अपने घर में आग लग जाने की बात भी कह देते हैं। जोशी कहते है -" *मैंने आपको बताया न, आग बुझा ने का काम पूरे गाँव ने मिलकर किया। आपको मालूम है, धारा(जलधारा) यहां से काफी दूर है। धारा में पानी कम ही रहता है। सब लोग अपने -अपने घरों से बंठे -गागरें ले आए थे पानी ढोने के लिए धारा से यहां तक लोगों की एक जंजीर बन गई थी। एक आदमी धारा से पानी का भांडा दूसरे को थमाता, दुसरा तीसरे को, तीसरा चौथे को इस प्रकार वह बंठा-गागर हाथो हाथ यहां पहुंचते जा रहे थे। पर उस पानी की पेश नहीं चल रही थी। अग्नि प्रचंड थी। वह तो अगस्त्य ऋषि की ही कृपा हुई कि उस पर काबू पाया जा सका।"*[34]

समाज तो मनुष्यों से बनता है। एक दूसरे के मदद के बिना मुनष्य जीवित नहीं रह सकता। जोशीजी के घर में आग लगने के मामले में पुलिस, पटवारी बार-बार पूछने पर भी जोशी कुछ नहीं बोले क्योंकि जोशी सोचते हैं कि जिस गाँव में मेरे घर की आग बुझाने के लिए लोग इतनी मदद की है तो मैं उन पर लाठियाँ कैसे बरसाऊं।

नौटियाल जी यज्ञ-स्थल पर पहुँचे तो वहाँ एक खंबे पर एक कुत्ता बंधा हुआ पाया। नौटियाल जी को आश्चर्य हुआ कि अगस्त्य-ऋषि के यज्ञ में यह कुत्ता क्या कर रहा है।कुत्ते को इसलिए बांधा गया है कि गाँव के जिस घर में भी कोई बहु-बेटी मौजूद नहीं होगी, चुपके से वहां घुस जाएगा और वहां से कुछ उठाकर चंपत हो जाएगा। कुत्ता भागने की कोशिश नहीं कर रहा था, और भौंक भी नहीं रहा था।

नौटियाल जी लिखते हैं -" *यहाँ के लोगों को मुख्यतया मार्ग चाहिए। जिंदगी सदियों से पहाडों के घेरे में कैद है। लोगों के अंदर उस घेरे को सिसी तरह तोड़ सकने की एक सामूहिक छटपटाहट दिखाई दे रही है। कहीं आने - जाने के रास्ते नहीं है। वे पांडव युगीन राहों पर चलने को विवश हैं। यज्ञ-स्थल पर घंटे-घडियालों के आकाश भेदी नादी के साथ प्राह्मणों ने आगस्त्य ऋषि की पूजा-आर्चना शुरू कर दी। जाने क्यों मेरे मन में यह विवाद उठने लगा कि यह विरोधाभास तो नहीं कि वे पूजा अगस्त्य ऋषि की कर रहे हैं और कामना मौटर मार्ग की कर रहे हैं। प्रकटतः यह ऋषि मुनियों के, राजा-रानियों के प्राचीन, अंधकार में डूबेयुगों के घेरे से बाहर निकलने की छटपटाहट है।*"[35]

मार्ग के अलावा बिजली, पानी, स्कूल के उच्चीकरण आदि सामान्य विकास की मांगे प्रस्तुत हुई थी। नौटियाल जी के पास प्रार्थना पत्रों की एक अच्छी मोटि तह जमा हो गई थी।

नौटियाल जी जिस घर में रूके उस घर में माता जी ने कुछ नींबू ले जाने के लिए कहा। नौटियाल जी लिखते है - इस बैग को लंबी राह पर ढोना यों भी काफी दिक्कत-तलब साबित हो रहा है। अब गलगल ले जाने के लिए मना करता हूँ तो माता जी उसे अपना अपमान भी समझ सकती है। बहुत प्रेम पूर्वक दी जा रही किसी सौगात को ले जाने से मना नहीं किया जा सकता। वहां से विदा लेकर नौटियाल जी आगे बढ़े। कोई न कोई मिल ही जाते थे मदद करने केलिए यज्ञ मेंभाग लेने के लिए कई लोग निकले हैं, इन सब को नौटियाल जी रास्ते से लौटते हुए देख रहे थे।

उन लोगों को देखकर नौटियाल जी कहते है " *इन में से कुछ तो न जाने कितने -कितने वर्षों के बाद इधर आ रहे है। रोजी-रोटी की तलाश में घर से बाहर निकल गए लोग। कई लोग ऐसे भी होंगे, खासकर युवक और बच्चे जो अपने जीवन में पहली मर्तबा इन राहों पर आ रहे होंगे। पहाडों से बाहर, भारत के विभिन्न शहरों में जन्मे लोग। अपनी जडों को तलाश कर रहे नौजवान। अपने माता*

-पिता से मिली जानकारी के आधार पर वे सिर्फ इतना भर जानते है कि टिहरी - गढ़वाल में एक पट्टी भरदार है। हम लोग उस भरदार पट्टी के एक गाँव स्यांरी के निवासी हैं। हम नहीं, हमारे पुरख वहां के निवासी थे। उन प्रवासियों से गुजरात या पंजाब या किसी और राज्य के बारे में पूछिए,जहां वे निवास करने लगे हैं तो वहां का इतिहास भूगोल आपके सामने फटाफट खोल कर रख देंगे। कई लोग अविभाजित पंजाब के शहरों, देहातों के गली-मोहल्लों के बारे में भी बताने लगेंगे। लाहौर, के क्वटा, कराची, गुजरांवाला, पेशावर।"[36]

इस यात्रा की विशेष बाद यह है कि इस वन में इस तरह चलते हुए कष्ट और पीड़ा चाहे जितना भी हो शर्म किसी को महसूस नहीं होती। अनेक लोग इस रास्ते से चलते हैं अजनबी हैं लेकिन ऐसा लगता है सब एक दूसरे के साथ है।

नौटियाल जी अपनी यात्रा पूरी करके वापस तो निकल रहे, पर उनकी स्मृतियों में वहां के गांव, वहां के लोग, उनका जीवन विधान, उनकी आत्मीयता किसी को भूल न सके। सब कुछ अपनी स्मृति में रख कर वहां से वापस आगए।

4.2. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में सांसकृतिक परिस्थितियाँ

2.1. लोकगीतों का वर्णन

गढ़वाली के अनेक लोकगीतों में पहली पंक्ति के बोल केवल छन्द मिलाने के लिए जोड़ लिए जाते हैं। उसके शाब्दिक अर्थ का गीत के कथ्य से कोई संबन्ध नहीं होता। गीत को गाने वाले और उसे सुनने वालों को पहली पंक्ति पर ध्यान देनेकी जरूरत नहीं पड़ती। वे गीत के असली मतवब पर अपना ध्यान केंद्रित करते हैं।

पूरा गाँव औरतों और मर्दों के मिले जुले झुण्ड, दो हिस्सों में बंट जाते हैं और रात के अंधियारे में जलती आग की तेज रोशनी में एक गोल घेर में सधे कदमों से झूम-झूम कर नाचते हुए गाने लगते हैं।

" हिंसार का गोंदा, साली, हिंसर का गोंदा।

मौण का तमाशा (त्यौहार) साली, कितनी गते होगा ।"[37]

हिंसार-गर्मियों में पहाड़ियों के जंगलों में पकने वाले छोटे, जीले, रसभरे फल। हिंसर का गोंदा उसका रसभर गुच्छा। मौण का मेला सामूहिक तौर पर मछलियों को मारने-पकड़ने का त्यौहार होता है। गाँव के गाँव नदियों के किनारे

पर जमा हो जाते हैं। टिहरी-गढ़वाल रियासत के गोड़, जौनपुर और देहरादून जिले के जौनसार-बाबर के कुछ इलाकों में पारंपरिक तौर पर हर साल जड़ी-बूटियों-पत्तियों को पीस कर उनका रस नदियों के पानी में डाल देते हैं जिससे मछलियाँ मरने लगती हैं।

"गेहूँ जौ के लेटा भेना,गेहूँ जौ के लेटा।
मौण का त्यौहार भेना, चौदहे गते जेठ।"[38]

अच्छी भर पूर फसल, जो काफी मात्रा में उगी हो। तेज हवाओं के चलते उसके पौधे कभी-कभी आपस में गुंथ जाते हैं। उनके उस तरह से गंथ जाने को लेटा कहा जाता है।

" घराट में घाणू लगाया साली,घराट में घाणू लगाया।
मैण का त्यौहार भेना,तू जरूर आ जाना।"[39]

घराट (पन-चक्की) में जब घटवाड़ी (अनाज) पीसा जाता है तो रिड़ी (पाटों के पर लगाए गए उस भांडे से, जिसके अंदर पीसे जाने के लिए घटवाड़ी भरा जाता है) नल्के के द्वारा अनाज के दाने चक्की के पाटों के बीच पहुँचते हैं। उस क्रिया को घाणू लगाना कहा जाता है।

" तड़ी में तांद भरी साली,तड़ी में भरी तांद।
गीतों की तांद पर साली, तू दीखती बंद।"[40]

जुलाहे लोग जब ऊन कपडों की बुनाई करते हैं तो इरण को, जो लम्बाई में होता हैं, रस्सी के द्वारा एक खूंटे से कसकर बांध लेते हैं। उसे तड़ना कहा जाता है। फिर उसके अंदर बुनने का तागा भरकर बुनाई शुरू की जीती है। उसे कहा जाता है तांद का बुना जाना।

" बाबले की कूची साली,बाबले की कूची।
गीतों की तांद पर साली,तू दीखती ऊँची।"[41]
(कुल गाने वाली युवतियोंके बीच)

पहाडियों के ढ़लानों-भीटों पर एक लम्बी, सींकदार पत्तियों वाली घास उगती है। जिसे बाबला कहते हैं। उसके बुने मजबूत रस्सों से किसी जमाने में झूला पुल भी बनाए जाते थे। पहाडों में घरों को बूहारने के झाड़ू व दीवारों पर चूना पोतने की कूचियां भी उस बाबला घास से बनाई जाती है।

"बांची जाएगी पोथी साली,बांची जाएगी पोथी।
मेरी हो जाएगी साली,पहनेगी लम्बी धोती।"[42]

तू इतनी लंबी धोती पहनने लगी कि तेरे पांवों की एडियां तक छुप जाएंगी,

दिखाई नहीं देंगी।

" रीठ के दाने घोल जाएंगे साली,रीठ के दाने।
भरी हो जाएगी साली,बैठी रहगी छाजे।
गोठ में गाय बांधी साली,गोठ में गाय बांधी।
अध-रात में साली,खंखरियों की चोटें।
तड़ी पर बुनी तांद भेना,तड़ी बुनी तांद।
तुझे ता नहीं था भेना,मैं गोडरियों की बांद।"[43]

यह गीत खुलासा करता है कि रतिराम कितने हसीन ख्वाब देखने लगा था। यह बांद बिजामति मेरे घर पर आ जाय तो उससे कोई काम नहीं करवाया जाएगा। उसकी खूब सूरती से मेरे घर की शोभा बढ़ जाएगी। उस जमाने में कई लोगों को इस तरह का बड़ा शौक होता था और कुछ बांदें बडी मनचली होती थीं। उनकी रंगीली नज़रों में जो युवक बैठ जाता था। वे अपने पति को छोड़ कर या उससे छूट लेकर उसी के घर चली जाती थी। चाहे उसके घर पर पहले से ही कितनी बीरबानियां क्यों न मौजूद हों। कुछ औरतें तो काफी बड़ी उम्र तक अपने इन शौकों को पूरा करने में लगी रहती थीं। जो बांद जितने अधिक घरों से छूट करवाती आती उसका *टका* (मोल) उतना ही बढ़ता जाता था और समाज में उसकी प्रतिष्ठा भी बढ जाती थी। ऐसी बांदे कुछ मर्दों के सपनों में लगातार घूमने लगती थी और किसी भी तरह उसे अपने घर पर बैठा लेने पर उसके पूर्व पति को नीचा दिखाने की अपनी तमन्ना भी पूरी कर लेती थीं। ऐसी नाक-नक्श वाली बांद किसी और के घर पर क्यों रहे ? उसे अपने छज्जे पर बैठी देख लेने मात्र से उनके मन की प्यास बुझ जाती थी। देखले, अपनी खूब सूरती के लिए इलाके में मशहूर इस बांद की जबानी के जोश को तुझे नाकाबिल से संतुष्टि नहीं हो पाई। तेरे घर-बार को देख लेने के बाद, तुझे जांच *लेने के बाद तु*झे छोड़ कर, तेरे घर-बार को छोड़ कर वह अब मेरे पास चली आई है। रात में वह मेरे साथ सोती है। तू अपना सर फोड़। पहले लोग गेहुं-जौ की अच्छी फसल पाने के लिए अश्विन कार्तिक के महीनों में खेतों में अपने धन-चैन, गाय-बछियाओं को गोठ में बांधते थे। गांव में होने वाले मेलों में आम औरत-मर्द हद से आधी रात तक, बारह बजे तक, नाच-गान करते थे और उसके बाद अपने घरों को लौट जाते थे। लेकिन प्यार के शौकीन लोग गीतों के बोलों के द्वारा अपने प्यार व दुख-दर्द का इजहार करने के साथ-साथ नजरों की टक्कर से भी अपने प्यार की प्यास बुझाते रहते थे। ऐसे लोग रात-रात भर गीत गाते थे और नाचते रहते थे।

"मस्ती में झूम-झूम कर नाचने-गाने के उस माहौल में जिन लोगों को अपनी बांद पर किसी प्रकार का शक होता वे चुप के से उस पर और उसके प्रेमी पर सतर्क नजर रखने लगते। मौका मिल जाने पर मार पीट भी कर बैठते। बिजामति की ससुराल वालों ने भी वैसा ही किया। उसके मर्द ने अपनी बिरादरी के कुछ लोगों को अपने साथ ले लिया और मौका मिलने पर, जब गीत गाने वालों की संख्या खूब कम थी, और गाँव के लोग नींद के आकाश में झूमने -भूलने लगे थे। उन्हों ने बिजामति के भेना (जीजी) पर खुंखरियों से बार करना शुरू कर दिया। बाद में खुद वहां से भाग निकले। लोगों में भागदड़ मचगई।"[44]

पहले कुछ इलाकों में ऐसा रिवाज था कि मायके में बांद किसी पर-पुरुष के साथ कुछ भी करले तो ससुराल वालों को उस पर वहाँ किसी भी तरह की रोक लगाने का अधिकार नहीं होता था। लेकिन वे गाडरी, नाच-गान और मस्ती के उस उल्लासमय वातावरण में प्यार-भरी नज़रो से बार-बार टकराते रहने की उस घटना को बर्दाश्त नहीं कर सके।

2.2. ग्रामीण सांस्कृतिक परिवेश

भारतीय कृषक का समस्त जीवन ग्रामीण संस्कृति से अनुप्राणित है। ग्रामीण कलाएँ, पर्व, त्यौहार, संस्कार, रूढियाँ, प्रथाएँ, रीति-रिवाज, खेल-कूद आदि विभिन्न अवयवों के योग से संस्कृति बनती है। ये अवश्य ग्राम-जीवन में व्यवस्था एवं अनुशासन के आवश्यक तत्व है, तथा ग्रामीणों में घुले-मिले है। ग्रामीण संस्कृति की भौतिक वस्तुएँ, कला और उपयोग दोनों की दृष्टि से उपयोगी है।

गाँव के लोगों के आचार-विचार, रहन सहन, खान-पान, उत्सव त्यौहार आदि आज भी विद्यमान है। संस्कृति का संबन्ध मनुष्य के उस समस्त घटना क्रम से है, जो एक सामाजिक सदस्य के रूप में सोचता है, विचारता है, अथवा विभिन्न क्रिया-कलाप करता है।

" बहुत सारे लोग।
छुन्ना के अपने-पराये।
हेंवल घाटी के लोग।
कुजणी पट्टी के लोग।
पट्टी-पट्टी के लोग।
गाँव सोनी के लोग।
गाँव -गाँव के लोग।"[45]

गाँव के लोग सुख ही नहीं दुःख भी साथ में सहलेते हैं। बडीदादी अकेली ही घर पर रहती है। पैणा देने के लिए जरूरी है कि घर के आँगन में बच्चे खेलें। यहाँ इस घर के आँगन में बच्चे खेलें। यहाँ इस घर में जो पैणा देता है उसे पैणा वापस नहीं मिलता। उस घर पहुँच कर समस्त रीति-रिवाज खत्म हो जाते हैं ओ घर है बड़ी दादी का इस घर से कभी पैणा नहीं मिलता। फिर भी लोग बड़ी दादी को पैणा देते हैं चूँकि वह रस्म गाँव के अंदर जिंदा है। इसी रूप में जिंदा है कि जो जिंदा है, और जिससे वैर-भाव नहीं है, उसे पैणा दिया जाना चाहिए। बडीदादी की मृत्यु के समय पूरा गाँव बडी दादी के कर्म कांड में भाग लिया। पूरा गाँव बडी दादी को अलविदा कहा है। सब लोग कहते है कि बडी दादी मरी नहीं जीवित हो गई है। बडी दादी को जीवन मिला है। बड़ी दादी की अर्थी को एक मर्तबा अपने कंधे पर लेने के लिए शव यात्रियों में आपस में होड़ लग गयी।

भारतीय संस्कृति का जीवंत रूप आज हमें गाँवो में विशेष रूप से प्राप्त होता है। हमारे जीवन की बुनियादी गहराइयाँ शहरों में न होकर गाँवों में दृष्टिगत होती हैं। स्वतंत्रता - परवर्ती ग्रामीण परिवेश नवीन संदर्भों की उपस्थिति से परिवर्तन की ओर भी गतिशील है।

ग्रामीण संस्कृति के अंतर्गत वे सभी काम करने सोचने, विचारने, रहन-सहन के तौर -तरीके आदि आते हैं। जिन्हें मनुष्य पीढी दर पीढी अपने पूर्व समाज से हस्तांतरित करता आ रहा है। तथा जिन्हें सामाजिक स्वीकृति एवं संस्कृति प्राप्त होती है।

लोक संस्कृति हमारे ग्रामीण जीवन में आज तक जीवित है क्यों कि यह संस्कृति, संस्कार, शास्त्रीयता और पांडित्य की चेतना और अहंकार से शून्य है। लोक संस्कृति का निर्माण लोक समाज व ग्रामीण परिवेश द्वारा किया जाता है जिनमें लोकाचारों की प्राधनता होती है। लोकाचारों से युक्त लोक संस्कृति उन समाजों में बहुतायत रूप में देखी जा सकती है।

जिसमें शिक्षा का प्रायः अभाव होता है। ग्रामीण संस्कृति में देवी-देवताओं की पूजा भूत-प्रेत संबन्धी विश्वास, भोतिक स्वार्थ की पूर्ति हेतु मनौतियाँ आदि ऐसी धारणएँ है जो उनहें परंपराओं से मिली है। इन परंपराओं से गाँव अभी हट नहीं पा रहे हैं। कुछ हद तक देखा जाए तो युगीन प्रभावों की परिणति से ग्राम जीवन नई-नई भंगिमाएं प्राप्त कर रहा है।

ग्राम जीवन के लोक गीतों, लोक कथाओं, एवं लोक कलाओं में वहां का विशिष्ट भूभाग अपनी समग्रताओं में उद्‌घाठित हो उठता है। लोक धर्म शब्दों और वाक्यों के आडे -तिरछे प्रयोगों से वहां भी भौगोलिक एवं प्राकृतिक छवियाँ अपना अलग ही परिवेश निर्मित करती है। इसके अतिरिक्त भक्तिपूर्णगीत, प्रेमगीत, सामूहिक गीत, वैवाहिक गीत, नृत्य गीत, जादू तंत्र आदि है। लोकोक्तियाँ, कहावतें व मुहावरें ग्रामीण भारत के संस्कृतिक अंग मानी जाती हैं।

ग्रामीण संस्कृति में लोग शिक्षा के अभाव में नवीन बदलाव को स्वीकार नहीं कर पाते। परिणाम स्वरूप वे अपने पारंपरिक मूल्यों से चिपके रहते हैं। ग्रामीण जीवन की सांस्कृतिक परस्थितियों के समन्वित प्रभाव तथा योग। योग से ही वहाँ के निवासियों की मानसिकता का निर्माण होता है। उसी में वे अपनी अस्मिता, अस्तित्व समझ कर उसका पालन जैसा चलता आया है वैसे ही चलाने के पक्षधर होते हैं। ग्रामवासी लोग अपनी विशिष्ट जीवन पध्दति और सांस्कृतिक परंपरा के रूप में अंगीकार किए रहते हैं। इसके अलावा हर गाँव का अपना विशिष्ट प्रकार का जन जीवन और मान्यताएं होती है, जो कि सांस्कृतिक परंपराओं पर टिका हुआ है।

लोक-मानस में प्रचलित कथाएँ लोक कथाएँ होती है। इसका आधार लोक कण्ठ होता है और उसी के सहारे पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होती चलती है। शिक्षित एवं अशिक्षित दोनों ही वर्गों की ये मौखिक परंपरागत संपत्ति है। इनका लेखकीय ब्यौरा आज के विज्ञान प्रधान युगों में तो संभव है लेकिन पहले संभव नहीं था। अतः कण्ठ के सहारे ही आज तक लोक मानस में जीवित है।

लोकगीत मानवता के आदिम पारंपरिक प्रथाओं और उसके विभिन्न मूल्यों एवं विश्वासों का प्रतिनिधित्व करती है। गाँवों में लोकगीतों के साथ, लोक कथाएँ भी मनुष्य के दैनिक जीवन, उसके सुख दुःख आदि को दर्शाती हैं। हमारे देश की विशाल और प्रचीन संस्कृति में विविधागत एकता है। विद्यासागर नौटियाल जी के उपन्यसों में ग्राम जीवन में प्रचलित लोकगीतों का आकर्षक वर्णन प्रस्तुत हुआ है।

लोकगीत ग्रामीण जनता की भावना, उनके संवेगों, अनुभूतियों एवं उनकी सौंदर्य - भावना का प्रतिनिधित्व करते हैं। गाँवो में अनपढ़ या कम पढे लोग ही अधिक दिखाई देते हैं। वहाँ पर लोक गीतों का अधिक प्रचलन है। क्योंकि विभिन्न सांस्कृतिक अवसरों पर्वों त्यौहारों आदि पर उल्लास की अभिव्यक्ति लोकगीतों के माध्यम से की जाती है।

विभिन्न प्रर्वों एवं उत्सवों को गाँववाले बड़े आह्लादक ढंग से मनाते हैं। इस विषय में डॉ.रवीन्द्र भ्रमर लिखते हैं कि"*लोक गीत लोक मानव के व्यक्तिगत और कथा की भाँति ये भी लोक कण्ठ की मौखिक परंपरा की धरोहर और लोक मानस की विविध चिन्ता धाराओं के कोण माने गए है।*"[46]

गाँवों में विभिन्न प्रकार के लोकगीत गाये जाते हैं। जैसा कि फसलों का गीत, प्रेम-गीत, जन्म पर गीत, देश भक्ति गीत, सावन के महीने के गीत आदि विभिन्न अवसरों पर विभिन्न प्रकार के गीत सुनने को मिलते हैं।

लोकगीत गाँव की संस्कृति का महत्वपूर्ण अंग होता है। लोक गीतों में समाज का जीवन झलकता है और संस्कृति प्राणवान हो उठती है। हम आज वर्तमान जीवन की व्यस्तता में फंसे हुए अपनी बहुमूल्य संस्कृति के स्वरूपों को भूलते जा रहे हैं। आज लोक गीतों के प्रति हमारी श्रध्दा न्यून होती जा रही है।

ग्रामीण लोग जिन भावों की अभिव्यक्ति सामान्य तौर पर करने केलिए हिचकते हैं उन भावों की अभिव्यक्ति लोक गीतों के माध्यम से करते हैं।

2.2. गाँव वालों के सपने

गाँव की बहुओं को घास, लकडी, पानी, धूप, बरखा, खेती के मामले में जो सुख रैमासी में मिलता है वह और किसी गाँव में मिल ही नहीं सकता। रैमासी गाँव नहीं बाजार है बाजार। आराम-चैन का गाँव रैमासी। ऐसा सुख और कहाँ मिल सकता है ? ज्यादा काम करने की कोई जरूरत ही नहीं पड़ती। रैमासी के सेरों में जैसा भरपूर अनाज पैदा होताहै, उसे देख कर दूसरे गाँव के निवासियों को जलन होने लगतीहै। अन्न के कोठारों को ते शायद नागराज खुद ही भर देता है। कुछ जादू है रैमासी में और उसके खेतों की मिट्टी में।

" *औणी रूम्कादि झुम्कादि बणु बिटे ब्वारी घणी घाण मां*
नान्हा दन्किन दाणि छाणि मैं द्यौ तै देलितू जाणि मां
राशी भंकर की पुणिक पड़नी खार्यों न कोठरूं मां
तै गौ मां सुख शान्ति सर्द ऋतु माँ ये तौर होणी जना।"[47]

खूब बड़ी -बड़ी टोलियों में रूमती-झूमती बहुएं वनों से घर लौट रही हैं। नन्हे बालक दौड़ पड़े फलों के दाने छान पहचान कर मझे देना मां, इसे देगी तो

तू देख लेना फिर। सुखाए गए अनाज ढेर के ढेर सूप से पुन-पुन कर कोठरों के अंदर डाले जा रहे हैं। उस गाँव में शरत ऋतु में सुख-शान्ति इस तरह जमा हो रही है।

चोरों ओर के निवासी अपनी बेटि का विवाह रैमासी के लड़कों से करने के ख्वाब देखने लगते हैं। बेटी को मांगने कोई रैमासी से आ जाय तो बेटी वालों को उस पर दुबारा नहीं सोचना पड़ता। बेटी को ऐसे ही आराम के गाँव में दिया जाना चाहिए पैसा गाँव रैमासी। अपनी बेटी को रैमासी ब्याह देने के लिए लोग उतावले रहते हैं। रैमासी वालों के सामने अपनी बेटियों के विवाह की जरूर समस्या पैदा हो जाती है। उनका गाँव से बाहर रिश्ता तय करना जरा मुशक्लि हो जाता है। चौतरफा गाँवों के जिमदारों को ऐसी बहु की जरूरत होती है जो जिमेदारी कर सके, जिमेदारे के काम में अपनी जान खपा सके। रैमासी की बेटी को बहू बनाकर लाने में दुसरे गाँवों के लोग डरते हैं। ऐसे निठल्लि गाँव से जो बहू लाई जाएगी वह किसी काम की नहीं होगी। दिन भर बालों पर कंघी करती रहेगी। सुबह उठ कर सास से पूछने लगेगी-जी !चाय नहीं बनी अभी ? एक दुल्हन ने, सुना है, सुबह पलंग से उठने पर अपनी सास को आवाज देकर बुलाया और उससे कहा-मेरी चप्पलें कहां गई होंगी ?जरा खोज लाना जी ? मैं नीचे कैसे उतरूँ ?

"सास *करदी कुटणी पिसणी*
ब्बारि बणिनि सयाणी
ब्बारे जमाना"[48]

कूटने -पीसने का काम सास करती है, बहु मुखिया बन गई है। वाह रे जमाना।

"भूमी का स्वामित्व महाराजा का होता था। मर्द किसान दरबार की जमीन पर साल दर साल सिर्फ हल लगा कपते थे। लेकिन वे उस भूमि पर किसी भी तरह का बाग-बगीचा उगा नहीं सकते थे। फलों के पेड़े लगाने के लिए अर्जी देकर दरबार से इजाजत लेनी होगी। दरबार से बगीचा लगाने की इजाजत कुछ खास, चुने हुए खैरख्वह लोगों को ही मिल पाती थी। प्रजा व आम आदमी वैसी इजाजत पाने के लिए दरबार में अर्जी लगाने की बात सोच भी नहीं सकता था। लोगों के पास जमीन भी इतनी नहीं होती थी कि वे उस पर फलों के पेड़ लगा सकें। बगैर इजाजत पेड़ उगाना अपराध होता था।"[49]

बहुत अच्छे जीवन की उनकी कल्पना की उड़ान कभी पहाडों-जंगलों नदियों के घेरे से बाहर-घाटी से चोटी तक की परिधि से बाहर नहीं जा सकती

थी। उनके सपने भी इसी तरह के होते थे कि वे अपने पशुधन को लेकर ढेरसारी पत्तियों से लदे किसी घने जंगल में या कहीं हरे-भरे, लंबे-जौड़े चारागाह में बरो कटोक घूम रहे हैं। अपने जंगलों और चारागाहों में स्वच्छंद हो कर घूमने के सपने रवाल्टें देखते रहते हैं।

4.3. धर्म और पूजा-पध्दति

धर्म प्राचीन काल से ही भारतीय समाज का प्रमुख अंग रहा है। समस्त पदार्थों को नियमित रूप से धारण करना धर्म कहलाता है। धर्म को अत्यधिक महत्वपर्ण माना जाता है। धार्मिक धारणा से संबंधित कई पर्व,त्योहार आदि मनाए जाते हैं। कहीं पर धर्म के नाम पर लोग भोली-भाली जनता के साथ खिलवाड़ करते हैं उन्हें धोखा देने के लिए धर्म पुरूष बने रहने का स्वांग रचते हैं।

व्यावहारिक हिन्दी कोश में लिखा है कि "*धर्म नैतिक कर्तव्यों और नियमों की वह पध्दति है,जिसके पालन से व्यक्ति लोक और परलोक दोनों में यश और पुण्य का काम करता है।*"[50]

धर्म एक शक्ति भी है और विश्वास भी इसकी धारणा अमूर्त एवं अति प्राचीन है। इसके स्वरूप चिन्तन में कल्पना का सहयोग अनिवार्य है। हमारा अतीत धार्मिक दृष्टि से गौरवमय रहा है और उसके नियम शाश्वत नियमों की भाँति समाज में मान्य रहे हैं। मनुष्य जन्म से लेकर मृत्यु पर्यान्त जीवन के विविध सोपानों में धार्मिक मान्यताओं को एक आवश्यकता के रूप में मानता आया है।

धार्मिक संदर्भ में ग्राम जीवन में आस्तिकता का अर्थ धार्मिक आस्था से है। आस्था और क्रिया धर्म के मुख्य उपादान है। दोनों के समन्वय के बिना धार्मिक साधना संभव नहीं। आस्थाहीन क्रिया बाह्याडंबर और क्रिया हीन आस्था बुध्दि-विलास कहलाता है। गाँव के सांस्कृतिक जीवन पर धर्म का गहन प्रभाव है। धर्म उनके व्यवस्थित जीवन का कोई अंग ऐसा नहीं जो धर्म के रंग में रंगाता हो। गांव के लोगों का पारिवारिक जीवन, सामाजिक जीवन एवं आर्थिक जीनव सभी धार्मिक भावना से परिचालित होते हैं, और तो और उनके मनोरंजन के साधन तक धार्मिक भावना से संचालित होते हैं।

धर्म को अपने अपने ढंग से विभिन्न विद्वानों ने विवेचित एवं विश्लेषित किया है।

डॉ.राधाकृष्णन का मत है कि "धर्म वह अनुशासन और कुत्सितता से संघर्ष करने में सहायता देता है। काम, क्रोध और लोभ से हमारी रक्षा करता है, नैतिक बल को उन्मुक्त करता है, संसार को बचाने का, महान कार्य के लिए साहस प्रदान करता है।"[51]

सांस्कृतिक मान्यता प्राप्त पवित्र विश्वास ही धर्म है, जो मानव समाज को अपनी पूर्व पीढ़ियों से सामाजिक विरासत के रूप में प्राप्त होते हैं तथा जिनके आधार पर वे अपने जीवन क्रम को निर्धारित करते हैं, एवं आकस्मिक आपदाओं को सहन करने का संबल प्राप्त करते हैं।

वैसे देखा जाए तो मनुष्य के कर्म को धर्म माना जाता है। पर बदलती परस्थितियों के अनुसार धर्म ने व्यक्तिगत सामाजिक प्रतिष्ठ का रूप धारण करलिया। परिणाम स्वरूप धर्म का परंपरागत रूप लुप्त हो गया। उसके स्थान पर रूढ़िवादिता, अंधविश्वास आदि का जन्म हुआ। धार्मिक युग ने आर्थिक बल पर प्रतिष्ठित व्यक्तियों के द्वारा समाज के निर्बलों पर अत्याचार होते हुए देखा जाता है और अंधविश्वास का नाम पर उनका शोषण किया जाता है।

गांव की औरत किसला व्यास कथा सुनने मंदिर जाती थी वहाँ का पंडित सभी औरतों को तिरछी नजर से देखते हुए कथा सुनाता था और कहता था कि *"ऐसा कोई पुरूष हो ही नहीं सकता हमारे युग में। वह सतयुग की बात थी, अब घोर कलयुग लगा है। हमारे पास कोई कमनीय नारी आ जाय तो उसके यौवन रस का भोग किए बगौर हम तो नहीं छोड़ सकते उसे ?"*[52]

भोली औरतें ऐसे पंडितों की बातों पर विश्वास करके अपना जीवन बरबाद कर लेती हैं।

धर्म से ही ग्रामीण घोर अपवादों एवं संकटो के बीच नैतिक बल प्राप्त करते हैं। उनके जीवन में ईश्वर के प्रति अटूट आस्था है जिसके कारण जीवन-गती की अनश्चिताएं, उत्कंठाएँ, बाधाएँ उन्हें परेशान नहीं करती और काल के गाल में जाकर भी निरंतर संघर्ष को ही प्रेरित करती है। धर्म का संबन्ध मनुष्य के आचरण से भी है और आस्था से भी। सांस्कृतिक मान्यता प्राप्त विभिन्न पवित्र विश्वास ही धर्म है। जो मानव समाज को अपनी पूर्वी पीढ़ियों से सामाजिक विरासत के रूप में मिलती है।

धार्मिक सहिष्णुता ग्रामीण भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण अंग है। यह भारतीय ही है जो अनेक धर्मों को अपने आपमें समाहित किए हुए है क्यों कि भारतीय ग्रामीण संस्कृति में सबसे बडा धर्म मानव प्रेम है। यहाँ मानवीय उच्च आदर्शों की पूजा होती है। गाँवों में धार्मिक अनुष्ठान का बड़ा महत्व है, शिक्षा के प्रचार-प्रसार से आज शहरों में धार्मिक अनुष्ठनों पर कोई विशेष ध्यान दिया नहीं जाता। जीवन की प्रत्येक क्रियाएं ही धर्म द्वारा नियंत्रित होती है। धार्मिक अनुष्ठान और पूजा-पाठ का अपना अलग महत्व है।

चांदी गाँव वालों को पता चलता है कि उनके गाँव में चांदीकांठ पहाड़ सोने के पहाड़ बनगाया था। तो लोग पूजा करने लगे और नहा कर जन्दी जन्दी पहाड़ के पास जाने लगे "*गाँव के मरदों ने ग्राम देवता के थान पर दीप बाला और मूर्ति को धूप सुंघाकर उसकी संक्षिप्त पूजा की। अपने घरों की महिलाओं को नहा -धोकर तैयार होने और उसके फौरन बाद चांदी कांठा चले आने को कहा और खुद चाँदी कांठा की ओर लपकने लगे। उन्होंने औरतों से कहा था-जब तक तुम वहाँ पहुँचती हो हम वहाँ के देवी देवताओं की पूजा-पाठ का काम पूरा कर लेंगे।*"[53]

गाँवों में जोगी लोगों का आदर किया जाता है। वे उनको गौरव भाव से देखते हैं। जिसके घर पर जोगी शिक्षा के लिए आता है गाँव वाले उसे खाली हाथ नहीं भेजते। जोगी गीत बहुत मधुर धुन में गाते हैं। गाँव वालों को जोगी के गीत बहुत अच्छे लगते हैं।

"*कागज पत्री सबुन बांची*
कर्म न बांची कैन
धर्म का सच्चा रखवारा
अमर जगत माँ व्हेन
भिक्षा दी दे माता,जोगी
तेरो सवाल बतालो
बारा बरस को हरच्चूं बेटा
बौड़िक घर ऐ जालो।"[54]

कागज पत्री सबने बांचे।कर्म किसी ने नहीं बांचा। धर्म के सच्चे रखवारे दुनिया में अमर हुए हैं। माता भिक्षा दे दे। जोगी तेरे सवाल का उत्तर वताएगा। बारह बरस से गायब हुआ बालक लौट कर घर आ जाएगा।

गांव के लोग अप्सराओं के बारे में खूब जानते हैं वे कहते है कि अप्सराएं रात में नदी में नहाने वाले युवक को अपने साथ लेकर चली जाती है, वह युवक वापस नहीं आता, लोग समझते हैं कि युवक पानी में बह गया है लेकिन अप्सरा उसे अपने साथ ले जाती है।

अनेक लोक कहानियाँ भी होती है। देवी देवताओं के मूर्तियों के बारे में अनेक लोक कथाएँ प्रचलित हैं। इन लोक कथाओं पर गाँव वाले विश्वास करते हैं। उनका आदर करते हैं। देवी देवताओं की पूजा करते हैं। उपणधारी की देवता

खुली जगह में बैन हुई थी। धुनार के सपने में देवी आयी थी और कहा कि वह पानी के अंदर है। धुनार उस देवी मा को तट से उठाकर ऊपर पहुँचा दिया। माली देवल में लक्ष्मी नारायण की मूर्ति भी एक माली को मिली थी उसने भी मूर्ती को पहाड के ऊपर रख दिया। आज भी देवी-देवताओं का जिक्र आते ही उन लोगों को यह कहानी याद आती है। चांदी गाँव केलोग जोन (चांद) को भगवान मानते हैं। उनका मानना हैं कि चांद के प्रकाश की वजह से ही गाँव वालों को सुख मिल रहा है।

" *अपने पितरों का स्मरण कर, उन्हें धन्यवाद देते हुए चांदीकांठ के तल पर खड़े हो कर उन्होंने दीपक जलाया था और देवी-देवताओं की पूजा-स्तुति करने लगे थे। अचानक एक अजीब घटना हुई। निर्मल, स्वच्छ आकाश में, चांदी कांठे पर देवताओं की स्तुति में हाथ जोड़ कर खड़े लोगों ने साफ-साफ देखा-कोई बलवान ग्रह, जोन से कहीं ज्यादा बलवान, जोन को घसीट कर कहीं एक ओर ले जा रहा था। उसकी शक्ति के सामने जोन बेबस मालूम होने लगा था। जोन की ओर से अपने स्थान पर रूके रहने की कोई कोशिश हो ही नहीं रही थी। ग्रह घसीट रहा था, जोन घसीटा जा रहा था। लोग कुछ समझ सके कि हो क्या रहा है उससे पहले ही उस ग्रह ने जोन को निगल लिया। आकाश में अंधकार छा गया। जोन आकाश में मौजूद था लेकिन उसका रंग काला पड़ गया था। लोगों के हाथ जुड़े के जुड़े रह गए।लोग रोने लगे। उनका जोन कहीं लुप्त हो गया था। सोने का पहाड़ फिरसे मिट्टी-पत्थर मे मामूली पर्वत में तब्दील हो गया था।*"[55]

लोग मानते हैं कि उनके कोई पुरख उस जमाने में सोना-चांदी के साथ ग्रहण लगा हुआ चांद को ले आया। इसलिए चाँदी गाँव में कभी रोशनी नहीं आती। वे रैमासी वालों से चांद को खरीद कर अपने साथ ले जाने की कोशिश की। वे लोग नाकाम हो गए। सर झुकाकर चलने वाले पालसी लोग आज भी सर झुकाकर ही चलते हैं। उनके जीवन में कुछ बदलाव नहीं आया था। देवी-देवताओं पर उनका भरोसा कभी टूटा नहीं था।

" *वह घास भैंस के जीवन के लिए जरूरी होती है।*
उस घास पर गूजर की नजरें लगी रहती हैं।
वह घास भेड़ के जीवन के लिए जरूरी होती है।
उस घास पर खडवाले की नज़रें लगी रहती हैं।
वह घास पशुओं के जीवन के लिए जरूरी होती है।
उस घास पर किसानों की नजरें लगी रहती है।"[56]

जंगलों में घास पत्तियों की तलाश में गूजर, खडवाले, किसान घूमते रहते हैं। हरेक की इच्छा होती है कि उसके कब्जे में वन-क्षेत्र का विस्तार होता रहे। सभी लोग उन चारगाहों से दूसरों को हटाकर वहां की घास पर अपना कब्जा करना चाहता है।

वह घास गूजरों, खडवालों, भैंसवालों को बाँटती है। उन्हें लड़ाती है। वही घास गूजरों, खड़वालों, भैंसवालों को जोड़ती है। उन्हें मिलाती है। दो महीने की घास। जिन्दगी भर की आस।

मंदिर में पूजा करते हुए पूजारी गीत गाने लगता है। गाँव वालें तन्मय होकर गीत सुनते रहते हैं। इन शब्दों के जरिए ग्रामीण जनता की जिन्दगी में खुशहाली आएगी। वह पूरे जोश के साथ सामुदायिक विकास के काम पूरा करने जुट जाते हैं। गाँव का पंडित मंदिर में आंख मूंदकर गीत गाने लगता है।

"नित्य सवेरे जाग कर ईश्वर के गुण गाया कर
मन मंदिर में गाफिला झाड़ू रोज लगाया कर
फूल-फूलों की डालि घर-घर मां लगाव।
ये सूखा गढ़वाल काश्मीर बणावा।"[57]

भारत माता तो रामदत्त पंडित के अलावा और कोई हो नहीं सकता भारत माता के रूप में रामदत्त हथैली फैलाकर नई पीढ़ी को आशिर्वाद देकर गीत गाने लगता है। *" होकर जवान बच्चा मत भूल मुझ को जाना,*
निज देश की कमाई फैशन में मत गंवाना।"[58]

4.4. नारों का इतिहास

गाँव के लोगों में नारे अपने कामों में उत्साह बढ़ाते हैं। वे काम कर रहे हैं तो नारों को याद करते हैं और पूरे जोश के साथ काम करते हैं। गढ़वाल के भड़ो का वर्णन जहाँ भी आता है, लोकगीतों में जहाँ-तहाँ पँवाड़े गाए जाते हैं, काफू चौहान का जिक्र गौरव के साथ किया जाता है।

" वीरू भड़ू का देश
बाबन गढ़ू का देश
उप्पू गढ़ को जवान
काटी भी सिर न झुकी
कनुरै हो लो स्वाभिमान"[59]

वीर था काफू चौहान। अपनी जान की परवाह उसने कभी न की। अपनी प्रजा के लिए उसने अपनी जान दे दी। क्षमा मांगने से छोड दूँगा कहा जाने वाले

राजा के सामने काफू चौहान सर तक नहीं झुकाया। कापू चौहान का सर काटने पर भी उसने सर को ऐसा झटक दिया कि सर राजा के पैरों में गिर ने के बगैर उल्टी दिशा में जा गिरा ऐसा स्वाभिमान था काफू चौहान।

अपनी रियासत के एक सुदूर कोने में बसे रवाईं प्रान्त के लोग अपने जल-जंगल - जमीन के हुकूक की रक्षा के लिए अपनी जान कुर्बान करने की तैयारी करने लगे हैं। लोग आशचर्य चकित होने लगे कि कैसे बहादुर लोग हैं ये रवांल्टें। रवाल्टें पले सोचते थे कि महाराज उनकी तकलीफ दूर करेंगे। महाराज को देखते ही लोग अपने मन में सोचने लगते कि उन की दुःख दूर हो जाएंगे। उन्होंने ऐलान किया कि रियासत के वन संबन्ध में कानूनों को नहीं माना जाएगा। बड़कोट के रवाल्टें ने मेंबर हरिकृष्ण रतौडी का स्वागत किया। उनका मानना है कि रतूडी जरूर उनका मदद करेगा। वे रतूडी को देखकर नारे लगाने लगे कि -

" बो*लंदा बदरी की जय हो*

श्री108 महाराज की जय हो।"[60]

वे लोग नहीं जानते थे कि हाकिम से कुछ बोलने पर वह उनकी मदद नहीं करेगा। ठीक ऐसा ही हुआ था। माधोसिंह भंडारी को याद करते ही लोगों में एक तरह का जोश छा जाता था माधोसिंह के शौर्य, त्याग और बलिदान की कहानियाँ देश-देशान्तर में प्रचलित थीं। " *भड़ू मा कू भड़ होलो*

माधोसिंह भंडारी।"[61]

वीरों का एक वीर होगा माधोसिंह भंडारी। यों तो उसके कई ठिकाने थे, कई गढ़ थे लेकिन माधोसिंह का नाम मुख्यतया मलेया की गूल के ऐतिहासिक निर्माता के रूप में जीवित है। "*एक सिंह रंदो बण*

एक सींग गाय का

एक सिंह माधोसिंह

और सिंह काहे का।"[62]

लोक गीतों में वर्णन आता है सुरंग खोदते खोदते बहुत लंबा समय बीत गया। माधोसिंह पहाड़ी के तल को खोदता रहा, खोदता रहा। सुरंग इतनी भर ऊँची कि उसके अंदर आदमी मुश्किल से बैठ-बैठ कर आगे बढ़ सकता है। माधोसिंह गाँव के पश्चिमी भाग में बहने वाली गाड के पानी की दिशा बदलकर उसे पूर्व की ओर बहाने पर उतारू हो गया था। वह रोज एक लंबी रस्सी छेंड़े के अंदर ले जाता। जहाँ तक खुदाई हो जाती उस स्थान को उस रस्सी से मापता।

फिर छेंडे से बाहर निकाल कर वह उसके ऊपर उस रस्सी के निशान से पहाड़ की पैमाइश करता। तब पहाड़ के ऊपर निशान लगाकर माधोसिंह गाँव वालों को और अपने साथ काम करने वाले मजदूरों को बताता-आज हम यहाँ तक आगे बढ़ गए है। कदम - कदम चलता माधो पहाड़ के तल को खोदता जा रहा है। वह चंद्र भागा गाड़ के पानी का रूख बदल डालेगा।

खुले जंगलों में, कच्ची छानों में, नदियों के किनारों पर, भड़ों की तरह रहने सोने वाला गढ़वाली नेपालियों की गुलामी से गढ़वाल को मुक्त कराने के लिए फिर से संगठित होने लगा था, उनके पास कोई हथियार नहीं थे। अपनी छानों के अंदर से वह अपनी खेती-बाडी के काम आने वाली कुल्हाड़ी, दराँतियों को हाथों में लिए अपने ठिकानों से निकल कर दून घाटी के ओर प्रस्थान कर रहे थे। सब के मन में नारे लग रहे थे। काफू चौहान को याद करते हुए, अपनी आवाज को नारों में बदलते हुए वे आगे बढ़ रहे थे।

हर देव जोशी जो अंग्रेजों से नफ्रत करने वाला हरदेव जोशी। कुमायुँ का दीवान था। हरदेव जोशी को पता चला अंग्रेज लोग उसके राजा को मदद किया लेकिन बहुत कम मुलक ही राजा के नाम कर दिया इस घटना से हरदेव जोशी बहुत दुःखी हुआ। वह अंग्रेजों को श्राप देने लगा और अपना प्राण त्याग दिया।

" अंग्रेज तेरा नाश हो
अंग्रेज तेरा नाश हो
अंग्रेज तेरा नाश हो।"[63]

गढ़वाली लोग हरदेव जोशी और उसके दुःख को देवी मंदिर में कही गई उसकी बातों को आज भी याद करते हैं।

बाघ को मारने वाले जग्गू और उसका बेटा दुश्मन को देखकर गाँव वालों के मन में एक तरह का आदर भाव जागृत होता था। लोग आपस में जग्गू और दुशमन के किस्से सुनाते रहते है।" *बाप भी बिलकुल ऐसा ही था।*
सूरत शक्ल भी वैसा ही।
सुभाव भी अपने बाप का जैसा।
जैसा बाप वैसा बेटा।
भलों के भले,बुरों के बुरे।
हमारे बीच भी था एक जग्गू।
हमारे बीच भी है एक दुश्मन।
हमारा अपना दुश्मन।"[64]

एस.एस.बी.के जवान अपने प्रशिक्षण के दौरान कम्युनिष्ट खेल रहे थे। जवानों के बीच एक जवान कम्युनिस्ट बन गाया था, वस पर सवार यात्रियों के बीच भोली-भाली जनता के बीच छुप गया था। बाकी जवान उसके तलाश में निकल पड़े। वियतनाम के जंगलों में छुपे हुए कम्युनिस्टों को चतुर अमरीकी सैनिक ज़मीन के नीचे से खोज-निकालते हैं। वहाँ छुपे हुए कम्युनिस्टों की तलाश में हार जाने की अपनी हताशा में अमेरीकन फौजियों ने उनके बारे में सही-सही जानकारी न देने वाले निडर, देशभक्त बच्चों को भी भून डाला था।

उस खेल के द्वारा बस के अंदर बैठे आतंक श्रोताओं के मन में यह भाव भरा जा रहा था कि कम्युनिस्ट होना बहुत-बहुत बुरी बात होती है। देशद्रोह की बात। " *सामूहिक स्वर-मिल गया,मिल गया*

सामूहिक स्वर-देशद्रोही,आस्तीन का सँप

एक जवान की आवाज-आम लोगों के बीच बैठा है

दूसरे जवान की आवाज-चुपचाप बैठा है

तीसरे जवान की आवाज-छुप कर बैठा है।"[65]

इस तरह नारों के साथ फौजी जवान लोग खेल रहे थे। गाँव का आदमी डरा हुआ देख रहा था और सोच रहा था कि-कम्युनिस्ट होना बड़ा पाप है।

कम्युनिस्टों के द्वारा सीमान्त क्षेत्रों के अंदर लगाए जाने वाले नारे बहुत लोक प्रिय होते हैं। वे नारे गाँव-गाँव के बच्चों और नौजवानों की जुबान पर बौठ गए है। कम्यनिस्टों के द्वारा लगाए जाने वाले नारों की जगह दूसरे किस्म के नारे लगा कर इस सशस्त्र बल के नौजवान अपने भरसक सीमान्त किसानों का ध्यान बाँटने की कोशिश करते रहते हैं। गरीबी में पीसते जा रहे पर्वतीय लोगों की चेतना को झक झोर देने वाले नारे –" *कमाने वाला-खाएगा*

लूटने वाला-खाएगा

नया जमाना-आएगा ।"[66]

निष्प्रभावी करने की दृष्टि से, आम आदमी को भरमाने के लिए जीवन की असली समस्याओं से उनका ध्यान बँटने के लिए, वे बिल्कुल दूसरी तरह के, गैर-राजनीतिक, निरर्थक नारे लगाने लगते हैं, जैसे –

"*सच्चे अपनी लोली के-गढ़वाली वीर चमोली के*

जब दुश्मन आगे बढता है-पीछे हटो

जब दुश्मन विश्राम करने लगे-हमला करो

जब दुश्मन पलायन करने लगे-पीछा करो।"[67]

अपने अस्त्र-शस्त्र का ठीक तरह से उपयोग करने की विधि का प्रशिक्षण लेने के साथ साथ वे गुरिल्ला युध्द का मूल मंत्र भी कंठस्थ करने में लगे रहते हैं।

यात्रियों को रास्ते से जा रहे जवानों की नारे सुनाई देने लगे थे -

" *अन्न जहाँ का-हमने खाया*
जन्म जहाँ पर-हमने पाया
उसकी रक्षा कौन करेगा ?
हम करेंगे,हम करेंग।"[68]

अनपढ़ गाँव वाले लोगों कोयह पता नहीं कि कम्युनिस्ट कौन होता है, और फौजी जवान लोग उन्हें क्यों पकड कर ले जाना चाहते हैं। गाँव के कुछ नवयुवक कम्युनिस्टों को बारे में जानते, वे उत्साह के साथ उनका साथ देते हैं। उनकी मीटिंग में हाजिर होते और उनके प्रसंगों को तन्मयता के साथ सुनते थे।नारों ने उनको नया जीवन दिया था, एक नया जोश दिया।

4.5. लोकोक्तियाँ और मुहावरें

लोकोक्तियाँ या कहावतें किसी भाषा की संपदा होती है। इनके प्रयोग से भाषा में चमत्कार आ जाता है तथा अभिव्यक्ति थोडे में अधिक प्रभावशाली हो जाती है। लोकोक्तियाँ लोक जीवन के अनुभव से प्रप्त होती है। इसका शाब्दिक अर्थ भी इसी तथ्य का संकेत करता है। लोकोक्ति अर्थात लोकानुभव पर कथित उक्ति लोकोक्तियाँ वाक्य मूलक इकाई के रूप में व्यवहृत होती हैं।

कहावतों का प्रयोग किसी बात का समर्थन अथवा खण्डन करने के लिए होता है। गाँवों में सभी लोग बिना कहावत के अपनी बात नहीं बोल पाते अर्थात् कहावतें ग्रामीण जीवन तथा संस्कृति का अंग बन गई है। इन कहावतों में सभी स्तर के लोग तथा अपने व्यवसाय के अनुभव को संजोया गया है। कहावतें लोक प्रकृति की दर्पण होती है।

" *जै बण तू जालो सुई बण सजीलो।*"[69]

यह एक गढ़वाली कहावत है। जिसका अर्थ होता है कि जिस वन में तू जाए वही वन सजीला।

" *चढ़ने को लाए,ढोना पडा ।*"[70]

यह कहावत अलादीन कहता है वह अपनी पत्नी को घर लेजाने आता है, लेकिन वह बीमार का नाटक करती है और पति के साथ नहीं जाती। तो अलादीन सोचता है कि वह शादी इसलिए किया कि वह अपनी भैंसों की देखबाल करेगी लेकिन वह तो माँ-बाप के कुनबे पर बोझ बनी है।

" *इस देश को एक और महाभारत का इन्तजार है।*"[71]

कंडी घाट। कंडी माने माला। कहा जाता है कि अत्याचारी दुर्योधन ने द्रौपदी का चीर हरन किया था। द्रौपदी घूमने लगी थी। उस वक्त घूमती हुयी द्रौपदी के कंठ की जादूई माला टूट गई। उसके दाने बिखर गये। वे कांडीधार पर आ गिरे। तब से यहीं पड़े है। उसकी माला के वे दाने तल से कांडीधार पर पांडवों के ऐसे वंशजों का इन्तजार कर रहे हैं जो उन्हें एक सूत्र में पिरो कर उनसे फिर एक पूरी माला बना सकें। एक ऐसी माला जिसे अपनी खूब सूरत, आकर्षक गर्दन पर धारण करने वाली युवती का इस देश का कोई शक्ति धारक या उसके मुस्टण्डे कभी शील-रण करने की जुर्रत न कर सकें। द्रौपदी की माला के उन सफेद-उजले दानों को एक सूत्र में पिरोने, वाला कोई शूर वीर जनार्धन अभी इस देश में पैदा नहीं हुआ।

" *वह जमीन उसकी तो है नहीं जो वह वहाँ पर ओलियार।*"[72]

इसका अर्थ है झाडियां आदि काटकर नई जमीन की सफाई।

" *को लाली तोड रैमासी के फूल।*"[73]

इस कहावत का अर्थ है कि रैमासी का फूल कौन तोड़ लाएगा रैमासी गांव को देवताओं का गाँव कहा जाता है। वहाँ के लोग हमेशा सुख की जिन्दगी विताते रहते हैं। दूसरे गाँव वालों के लिए तो रैमासी गांव एक सपना ही है।

" *तन्नी लगै द्यान,तन्नी।*"[74]

इस कहावत का मतलब है वैसे ही लगा दीजिए वैसे ही। रयीसेठ उसके जमाने में कोई गाँव वाला ने तीन फल को उसके पेड़ से चुराया। उससे रयीसेठ ने कहा कि जैसा फल है उसी जगह पर वैसे ही लगा दो। रैमासी के निवासी तभी से आपसी बोल-चाल में उस बोल का कोई उदाहरण देने के लिए प्रयोग करते आए हैं।

"*औंस की रात आकाश में थाली उछाल ने वाला ब्राह्मण।*"[75]

उनयाल ब्राह्मण ने दरबार में पूजा शुरू की। पूजा के अंत में मन्त्रोच्चारण करने के बाद उसने कांसे की एक थाली हाथ में ली और लम्बे हाथ से उसे आकाश की ओर उछाल दिया और, तब लोग कहते हैं, श्रीनगर के आकाश में पूर्ण मासी का चाँद उग आया था और वह पहाडों की घाटियों और चोटियों पर अपना तेज प्रकाश फैलाने लगा था। सैकडों साल पहले की वह घटना गढ़वालियों की जातीय स्मृति में हरदम समाई रहती है। यह एक आम बोल-चाल का मुहावरा है।

"*आदतें बदल सकती है स्वभाव नहीं बदलता।*"।"[65]

सूरज की महानता बताते हुए नौटियाल जी इस कहावत का प्रयोग किया है।

" *तेरी जड़े नीचे जाएं,तेरा सिर ऊपर की ओर बढ़े।*"[77]

देवदार पेड़ आसमान को चूमने लगता है। उसकी जड़ें धरती के अंदर, उसकी गहराइयों में गहराती चली जाती है। किसी परोपकारी के प्रति-शुभकामनाएँ प्रकट करते समय वृक्ष की याद आ जाती यह एक गढ़वाली कहावत है।

" *रकम बुझाना* "[78]

इसका अर्थ है कि भूमि का लगान जमा करना। उस जमाने में समय पर लगान नहीं भरा तो पूरे गाँव को अनेक कष्ट सहने पड़ते थे।

" *जो जिसकी किस्मत का होता है उसी को मिलता है।*"[79]

जो चीज अगर हमारे किस्मत में लिखी होती तो हमे जरूर मिल जाती। जो भूखे इनसान को जब खाना मिलता है तो वह बहुत खुश होकर ऐसा सोचने लगता।

"*अपणा गोरू ढौढ़ा फर कै द्या।*"[80]

इस का अर्थ है कि ढंगार(ऊंची चट्टान)से नीचे गिरा दो अपने गोरू। हाकिम लोग गढ़वाली लोगों से चिढ़ जाते हैं उस समय इन वाक्यों का प्रयोग करते हैं। गोरू का मतलब है जानवर। गढ़वाली लोग अपने मवेशियों से दूर नहीं रह सकते।

"STAND ON DUTY UNTIL DISABLED - N.Shah "[81]

जब तक अशक्त नहीं हो जाते,अपनी तैनाती पर कायम रहो। यह टिहरी के महाराज नरेंद्र शाह की कही हुई बातें हैं। वे हाकिमों को उनके पास काम करने वाले पटवारी अन्य लोगों को हमेशा यही सुनाते थे।

" *न नौ मन तेल होगा,न राधा नाचेगी।*"[82]

इस कहावत को जो काम नहीं होने वाला है उसी के संदर्भ में प्रयोग करते हैं।

गाँवों में ही मुहावरों और कहावतों का प्रयोग ज्यादात किया जाता है। इनके प्रयोग के बिना वे लोग रह नहीं सकते। हर कहावत या मुहावरे के पीछे कुछ न कुछ गूढ़ अर्थ तो जरूर होता है।

4.6. प्रकृति वर्णन

प्रत्येक देश की भाषा और बोलियों में रचित काव्य एवं गीतों में प्रकृति के विविध रूपों, विविध क्रिया व्यापारों और गतिविधियों का सजीब चित्रण मिलता है। प्रकृति और मानव का अनादि काल से अटूट तथा शाश्वत संबन्ध रहा। जब मानव आज की आडंबरातापूर्ण सभ्यता से असंख्य योजनाओं दूर था और प्रकृति की क्रीड़ में एकाकी वास करता था,तब प्रकृति ही उसके लिए सब कुछ थी। प्रकृति की

रमणीयता तथा अनूठी छवि को निहारते हुए उसने अपने आप को हमेशा उसी से घिरा पाया। वह अहर्निश प्रकृति की गोद में खेलते हुए सुख-दुःख का अनुभव करता था। प्रकृति की साहचर्य में मानव-चरित्र भी विकसित होता रहा। मानव का ज्ञान जिस काल और युग में जिस रूप में था उसने उसी रूप में प्रकृति को अपनाया।

प्रकृति मानव जीवन की आंतरिक अनुभूतियों को प्रभावित करती है। लेखक प्रकृति के विभिन्न रूपों को अनेक प्रकार से वर्णन करता है। जिस समय उसकी दृष्टि मानव जगत के किसी महान रूप या उसकी किसी विशिष्टता से प्रेरित होती है तो उस समय मानव ही समाज का सर्वश्रेष्ट प्राणी प्रतीत होता है। साथ ही जिस समय उसकी दृष्टि प्रकृति की किसी महत्वपूर्ण विशिष्टता से प्रेरित होती है तो उसके लिए प्रकृति का रूप भी वरेण्य होता है।

प्रकृति का स्वतंत्र एवं पूर्ण व्यक्तित्व है। वह मात्र उपभोग की वस्तु नहीं है। एक निजी संसार प्रकृति का भी है जहाँ वह मानव के ही समान सुख दुःखमय जीवन व्यतीत करती है। प्रकृति मानव की शिक्षि का है। जन्म से लेकर मृत्यु तक मानव न जाने क्या सीखाता है। वह दृढ और निर्भिक रूप से जीवन के कष्टो को अपने वक्ष पर सहन करने की शिक्षा प्रप्त करता है। इस अंधकार मय संसार-समुद्र में डूबे मानव के लिए उपदेश ही उसे ज्ञान की रस्सी की भांति डूबने से बचा सकता है। ग्रामीण जीवन में प्रकृति शहर से भिन्न होने के कारण वहाँ ग्रामीण परिवेश में मनुष्य प्रकृति की अधिक सामीप्यता और आत्मीयता प्राप्त करता है। उसे प्रकृति के प्रति लगाव होता है। नौटियाल जी को सूरज बहुत प्रिय लगता है। उगते सूरज को देखकर वे बहुत प्रसन्न होते हैं।

सारे देश में आकाश, हवा, पानी है लेकिन हर पगह का आकाश एक सा नहीं होता। नौटियाल जी को पानी से बहुत ही लगाव है क्यों कि वह अपने गति से आगे की ओर ले जाने वाली प्रगति है। गति के प्रवाह में पानी नदी का रूप धारण कर लेता है। नौटियाल जी का पानी कभी जड़ जीवन की लाचारी के रूप में दिखाई पडता है तो कभी जमीन पर रत्न हार की तरह आकाश से उकर कर बिछडता है तो कभी मेघों से रिक्त होकर सरकता है। वह पहाड़ से निकल कर प्रवाहित होती है। अतीत से निकल कर वर्तमान को उछलते हुए भविष्य की ओर संक्रमण करता है।नौटियाल जी के लिए जन की शक्ति प्रकृति की शक्ति है। मानव का जीवन प्रकृति से अधिक प्रभावित करता है। वनस्पति जगत् और मानव जगत में जीवन संबन्धों को दर्शाते हुए प्रकृति को प्रतिष्ठा प्रदान करते हैं।

पेड़ ग्राम जन जीवन का प्रतीक है। जिसका मूलाधार धरती में गड़ा है और जिसे सूर्य के सम्मुख पड़ने की क्षमता प्राप्त है।

नौटियाल जी फूल, पौधे घास के बुग्यालों का भी बखूबी वर्णन किया है। प्रकृति के रूप,गुण, भाव, कार्य आदि के चित्रण या मूलाधार मानव ही है। वह उसके रूप, गुण आदि से प्रभावित होकर उसकी अभिव्यक्ति के लिए आतुर हो तड़पता है और उसकी हृदय की अन्तर्धारा उसके रूपांकन में प्रवाह मान हो उठती है।

गाँव के प्राकृतिक दृश्यों में खेती की शोभा सभी लोगों को अपनी ओर आकृष्ट करती है। गाँव में कुछ ऐसे प्राकृतिक दृश्य होते हैं जिन को देख कर मन उल्लास से भर जाता है। शरीर के रग-रग में स्फूर्ती आ जाती है और मन में नए नए भाव उठने लगते हैं। नदियों की तरंगें और हरे भरे खेत, उन खेतों में काम करने वाले मनुष्य और घास काट ने वाली घसयारिनों के दृश्य देखकर मन उल्लास से भर आता है।

यह विदित है कि भारत में पूँजीवाद के प्रवेश के साथ ही गरीबों पर होने वाले अत्याचार भी बढ़ते गए है। आज तो उन्हें अपना जीवन व्यतीत करने केलिए बहुत संघर्ष करना पड़ रहा हैं। इन लोगों को खाने के लिए दो जून की रोटी भी नसीब नहीं होती। इस वर्ग के अधिकांश लोग अनपढ़ होने के कारण पूंजीपतियों का शोषण तंत्र निर्विवाद चल रहा हैं।

6.1. देवी-देवताओं का वर्णन

गाँव में रहने वाले लोग दिवी-देवताओं की पूजा किए बिना नहीं रह सकते। पूजा पध्दति उनकी आदत सी है। गाँव के लोग यह मानते हैं कि वे लोग जैसे भी हो जो भी हो वह उनके देवताओं का दिया हुआ वरदान है। गाँव के लोग जितना भी दूर जाए अपने जीवन काल में एक बार तो देवी माँ का दर्शन करने वापस अपनी जगह पर आते हैं। अगर वे न रहे तो अपने बच्चों को उस मंदिर में भेज देते हैं। देवताओं के लिए कोई अमीर नहीं और कोई गरीब सब समान है। खास कर पहाडी इलाके में बसे देवी देवता तो खुली जगह में ही रहते हैं।

नौटियाल जी अपने बचपन में पौबासू देवता की डोली देखी थी। घास काटने वाली युवती उस रास्ते की ओर देखकर पौबासू देवता माराज !तेरी बलि देऊं माराज।

नौटियाल जी अपने पिता से पूछने पर वे कहते है कि "*इनके चार देवता हैं बेटा। म्हासू, पौबासू, चालदू और बैठू। इनमें बैठू कहीं आता जाता नहीं हैं।*

अपने ठिकाने पर रहता है। पौबासू सबसे प्रतापी देवाता है। बंगाण के बफ़र्ान देवता भी यात्रा करते हैं। एक गाँव से दूसरे गाँव। एक धार से दूसरी धारा एक वन से दूसरी वन। एक थाच से दूसरी थाच देवता कंधों पर, डोली पर चलते हैं और इन देवताओं के पास बद्रीनाथ से ज्यादा सोना-चाँदी है।"[83]

गाँव के लोग यह मानते हैं कि पौबासू देवता के दर्शन के बाद कुछ मांगने से मनौती पूरी होगी। पूजा करने के लिए सब गांव वाले इकट्ठा हो जाते हैं। जितने भी दुश्मन हो पूजा के समय सब मिल जुलकर साफ मन से प्रर्थना करते हैं। अपनी दिल की बात देवी मां को सुना देते हैं। मिलजुल कर नृत्य करते हैं। देवता की डोली लेकर एक जगह से दूसरी जगह पहूँचते हैं।

" *लोगों ने बरसों से घिल्डों, संदूकों के भीतर संभाल कर रखे गये ,अपने धुले हुए कपड़े पहन लिए थे। उन्होंने थालियों में धूप, दीप, नैवेद्य सजा लिए। अपने वाद्य यंत्र, ढ़ोल, नगाड़े, रणसिंघे, शंकोरे, घंटे, घंटिया, घरों से बाहर निकाल लिए और ग्राम देवता के आंगन के बाहर पहुँच कर उन्हें बजाने लगे थे। पूरे गाँव में उत्सव मनाने का वातावरण पैदा हो गया था। ग्राम देवता के थान पर कहीं तिल रखने की जगह बाकी नहीं रह गई थी।"*[84]

देवी माँ की पूजा तो बडे धूम-धाम से की जाती था। खास कर गाँव में तो उल्लास के साथ सभी लोग भाग लेते हैं।

गाँव में ऐसे लोग भी होते हैं, देवताओं को बलि चढ़ाते हैं, कुछ अनर्थ हुआ या बारिश नहीं हुई तो यह मानलिया जाता है कि देवी मां हम पर बहुत गुस्से में है और कुछ प्रायश्चित करना चाहिए। गांव की एक बुढ़िया शान्ति अपनी गाय को देवी मां के नाम पर पंडित जी को देना चाहती थी।*"ईश्वर के दरबार में उसकी मान्यता हो जायेगी। सभी कुछ पूराकर लिया जायेगा। देवी-देवताएँ को सब कुछ दिखाई देता है। वे भी तो देख ही रहे हैं मैं अपना जीवन किस तरह गुज़ार रही हूँ। मेरे एक-एक दिन कैसी दीन हालत में, कैसे-कैसे अयावों में काट रहे हैं। ऐसे में मैं जितना कुछ भी कर सकूँ उसी को मेरी ओर से दान। पन्न सभी कुछ कर दिया गया मान लिया जायेगा। मेरे लिए तो गोदान करना ही कोई बड़ा यज्ञ करवाने से भी एक बड़ा आयोजन मानलेंग देवता लोग। एक फूल के चढ़ा देने पर। एक अकेली धू-बत्ती के जलादेने पर उसकी एक लट की सुगन्ध मात्र से संतुष्ट और प्रसन्न हो कर वरदान देने को आतुर होने वाले देवी-देवता।"*[85]

ऐसे लोग तो अपना सब कुछ देवी माँ पर न्योछावर करना चाहते हैं। वे लोगों का भलाई सोचते हैं। इतना ही सोचते हैं कि लोगों की भालाई में ही अपनी भलाई है। देवी देवता के बारे मे अनेक मन चाह घटनाएँ पंडित लोग गाँव वालों को सुनाते थे।

गाँव के लोग श्रध्दा और भक्ति के साथ मंदिरों में देवी देवताओं की कथा और महाभारत आदि कथाएँ सुनते थे। गांव के लोग देवी माँ पर पूरा भरोसा रखते हैं। कुछ लोगों के सपने में आकर देवी माँ जो आदेश देती है, उसका पालन वे जरूर करते थे। *सूरज सबका है* उपन्यास में माधोभंडारी जो गाँव वोलों के लिए चंद्रभागा नदी को गाँव की तरफ लाने की कोशिश करता है पर पानी उतरा नहीं। देवी उनके सपने में आकर कहती उसके बेटे की बलि देने से पानी उस गाँव में आएगा। माधोसिंह भंडारी लोगों की भलाई के लिए कुछ भी करने को तैयार था, उस ने अपने बेटे की बलि देकर चंद्रभागा नदी को उस गाँव में बहने दिया।

बडीदादी जैसी बुढिया हर दिन यमराज के इंतजार करते हुए उनकी प्रार्थना करती रहती थी। बडीदादी मौत का इंतजार करती रहती थी। वह आत्महत्या करना नहीं चाहती। बडीदादी कहती है -"*मेरे साथ अन्याय हुआ है, भयंकर अन्याय। जीवन भर देवी-देवताओं ने अन्याय किया। अब ज्यूँरा (यमराज) अन्याय कर रहा है। मेरी मौत क्यों नहीं आती ? जिंदगी एक अलग चीज है, मौत अलग चीज। जीवन के लाखों देवी-देवता हैं। हर धार पर एक देवता है। हर कुल में एक देवता है। देवी-देवता नदियों-धारों, नालों, तालाबों के किनारों पर भी बसते हैं। घाट -घाट पर रमते हैं। जो जगह रमणीय होती है, वहाँ एक देवता रहता है। यह धरती भैरवों , कालियों,नरसिंहों से बिछी पड़ी है। पृथ्वी पर अनगिनत आदमी है और अनगिनत देवता है। चौरासी लाख देवी-देवता। जीवन की देवियां। जीवन के देवता। मौत का सिर्फ एक देवता है ज्यूँरा।*"[86]

बड़ी दादी जैसे लोग आज बहुत कम मिलते है। वह कभी अपने लिए नहीं सोचती। वह हमेशा लोगों की भलाई चाहती थी।

पहाडियों में देवताओं दर्शन के लिए लोग बहुत दूर-दूर से पहुँच जाते थे। देवी माँ का दर्शन करके वापस लौटते थे। पहाडियों पर बसे देवी माँ का दर्शन करना उन कांटीली राहों पर चलना आज के जमाने में नव युवकों एवं युवतियों के लिए मुश्किल का काम है। फिर भी लोग अपने हाथों में थैला, बक्सा कुछ भी

लेकर निकल पडते हैं देवी मां का दर्शन करने के लिए, देवी माँ के पास पहुंच ते ही उनकी सारी बाधाएँ दूर हो जाती हैं। उनको याद तक नहीं रहता है कि उन्होंने कांटीले रास्तों को पार करके पत्थरों की ठोकर खाकर यहाँ तक पहुँचे है।

6.2. सूरज का वर्णन

सूरज लंबे-चौड़े आकाश में धूमता है। गर्मियों के मौसम में वह पूर्व के उत्तर में उगता है और पश्चिम दिशा के उत्तरी कोण में अस्त होता है। शीतकाल के दौरान वह पूर्व दिशा में कहीं दूर दक्षिणी कोने से उगता है और पश्चिम के दक्षिण में आखरी छोर पर अस्त होता है। सूरज रोज अपनी राहें बदलता रहता है। आकाश, सूरज के खेल का मैदान है। सूरज उस लंबे-चौड़े मैदान में तीन सौ पैंकठ सूर्यपथों पर चलता है। सूरज की हर चीज निश्चित है। सूरज की यह मजाल नहीं कि वह अपने सुनिश्चित कार्यक्रम से टस से मस हो जाए।

"सूरज एक गाँव के लिए नहीं, किसी एक आलीशान घर के लिए नहीं, एक आदमी के लिए नहीं, एक कुल के लिए नहीं, एक घाटी के लिए नहीं। वह एक पट्टी के लिए भी नहीं। सूरज सबका है। सार्वजानिक। थौलधार पर्वत का भी है। उसके आरपार जितने पहाड़ है, जितनी घाटियाँ है और उन पहाड़ों की गिरफ्त से बाहर जो लंबे चौडे मैदान हैं-सूरज उन सबका है। सूरज पूरी दुनिया का है। वह पूरी दुनिया के ऊपर प्रकट होता है। वह पूरी दुनिया के हवा-पानी को, दुनिया में रहने वाले समस्त जीवों के जीवन को संचालित करता है। सूरज निर्जीव पदार्थों को भी जीवन प्रदान करता है। उनकी जीवन यात्रा भी सूरज के माध्यम से पूरी होती है। निष्प्राण समझे जाने वाले मिट्टी पत्थरों का जीवन लाखों वर्षों का होता है। उनके जीवन को भी सूर्य प्रभावित करता है। इस धरती पर सबसे महत्वपूर्ण चीज सूरज है।"[87]

गर्मियों का सूरज सुबह के वक्त आसमान में दैंतखाल के काँठे से प्रकट होता है। उसकी किरणें सी उन सीढियों पर अपना अक्स डालती हैं। सूरज के हर काम में एक तरतीब है। एक निश्चित सिल सिला है। वह निश्चित सिलसिला उसका स्वभाव है। आदतें बदल सकती है, स्वभाव नहीं बदलता। सूरज का स्वभाव हमारी कुदरत है। सूरज हमारी कुदरत का निर्माता भी है और उसका अंग भी है। सूरज आकाश में खेलता है। वह जमीन पर खेलता है। सूरज अपने कार्यक्रम से टस सेमस नहीं हो सकता। सूरज का वर्णन करते हुए नौटियाल जी लिखते है कि

- *"सुबह होता है तो सूरज पर्वतों के पूर्वी ढाल की चोटियों पर अपनी किरणें फैलाता है। फिर किरणों का घेरा पर्वतों पर धीरे धीरे नीचे सरकने लगता है। उतर कर वे हेंवल घाटी की तलहटी में फैल जाती हैं। किरणें नदी में स्नान करने लगती हैं। दोपहर।फिर सूरज आकाश में ढलने लगता है। वह पश्छिम की ओर ढलने लगता है। उसकी किरणें हेंवल घाटी की गहराई से दूसरे, पूर्वी पहाड़ पर ऊँचे उठने लगती हैं। तब दैंत खाल का पश्चिमी ढाल भी जगमगाने लगता है। जिसे सूर्य की किरणें सुबह को नहीं मिलीं, शाम को सही। जिससे सुबह धूप ताप ली सने ताली। सूरज सबको न्याय देता है। न्याय करने की कोशिश करता है। धीरे-धीरे सूरज अस्त होने लगता है।"*[88]

आदमी अपनी मेहनत से रात-दिन एक कर सकता है। पर वह रात न बना सकता है, न दिन बना सकता है। धरती को दिन भी सूमज देता है, रात भी सूरज देता है। सूरज थमता नहीं, वह कहीं सुस्ताता नहीं,व ह कभी या कहीं पड़ाव नहीं डालता। वह आधा दिन आधी पृथ्वी पर, शेष आधा दिन बाकी पृथ्वी पर प्रकाश फैलाता है। अंधकार को भगाता रहता है। सूरज के जीवन में कभी रात नहीं होती।

सूरज सबका हैं उपन्यास में एक जगह नौटियाल जी लिखते है कि *"सूरज लाखों घरों के रहस्य जानता है, करोडों लोगों के भेद जानता है। सूरज पूरी दुनिया के भेद जानता है। पर सूरज अपने भेद किसी पर प्रकट नहीं करता। सूरज रोशनी फेंकता है, चीजों पर रोशनी फेंकता है। उन्हें उजागर कर देता है। सूरज की रोशनी में कोई जो चाहे देखने जो कुछ देख सके देख ले। जो न चाहे, न देखे। कुछ भी न देखे। जो न देखे न देख सके, वह न देखे। सूरज की ओर से कोई जबर्दस्ती नहीं। सूरज अपना काम करता है। अपना काम कर देता है। लोग अपना काम करें, न करें उसे कोई मतलब नहीं। सूरज खुद कुछ नहीं बोलता, न तेरी बात, न मेरी बात। न तेरे पक्ष में, न मेरे पक्ष में। न तेरे खिलाफ न मेरे खिलाफ। सूरज हँसता है तो यह पता नहीं लगता कि वह किसके लिए हँस रहा है और किस पर हँस रहा है।"*[89]

सूरज एक ग्रह है। मनुष्यों के जीवन का सबसे बड़ा ग्रह। सूरज मनुष्यों के जीवन को संचालित करता है, पूरे जगत को संचालित करता है। सूरज जो कुछ देखता है उसे खुद प्रकट करने लगे तो धरती आग की लपटों में स्वाहा हो

जाएगी। सूरज सब बातें अपने मन में रखता हैं। वह किसी पर आरोप नहीं लगाता, गवाह भी नहीं देता। यमुना के बागी बेटें उपन्यास का नरेंद्रशाह सोच ता है कि *"नरेंद्रशाह को विश्वास है कि उस बादशाह के साम्राज्य का सूरज सदैव देदीप्यमान रहेगा-जगमग, जगमग। आकाश में विचरण करने वाले सूरज की तरह वह भी कभी अस्त नहीं हो सकता। इस वक्त बाकी लोगों की दृष्टि में न समझ गंवार लोगों की दृष्टि में, सूरज अस्त हो रहा है कि दरअसल सूरज अस्त नहीं हो रहा है, वह अंग्रेज बहादुर के राज के पूर्वी भूभाग एशिया से चुपके-से सरकते हुए पृथ्वी की पश्चिमी दिशा में स्थित, उसी के राज के दूसरे भाग यूरोप में प्रवेश करने की तैयारी में लगा है। जानने वाले जानते है, एशिया के सूर्यास्त के साथ इंग्लैंड का सूर्योदय शुरू होता है।"*[90]

हम लोग जो सूरज से असीम दूरी पर उससे ऊष्मा, ऊर्जा, प्रकाश, पाते हैं सूरज, सूरज है। वह डूब नहीं सकता। सूरज कभी नहीं डूब सकता वह लगातार उगताही रहता है। सिर्फ उसके उगने के स्थान और प्रदेश बदलते रहते हैं। सूरज का कार्यक्रम हजारों वर्षों का कार्यक्रम होता है। जानने वाले जानते हैं कि किस राह से गुजरेगा। इस धरती पर सबसे महत्वपूर्ण चीज सूरज है। सूरज हम सबका है।

6.3. नदियों का वर्णन

नौटियाल जी के उपन्यासों में नदियों का खूब ब्रणन मिलता है। यह कोई काल्पनिक नदियां नहीं है। आज भी हम उन नदियों के पास जा सकते हैं। नदियां अनेक नामों से जानी जाती है। प्रकृति से हम को मिलने वाला एक अनोखा तोफा नदी है।

"दैंतखाल का पश्चमी ढाल, देवीधार का पूर्वी ढ़ाल। दोनों के बीच में से एक नदी है। नदी घाटी में है। हेंवल घाटी। हेंवल नदी। गंगा की बहना गंगा की पता नहीं कितने बहनें है। गंगोत्री के दक्षणी क्षेत्र बंदर-पूंछ के पूरब में, पैन खंडा के पश्चिम और पिंडप के दक्षिणी - पश्चिमी इलाके में इन पहाडों पर जितनी जल धाराएँ उपजती है वे सब गंगा के बहनें है। गंगाजल की घाराएँ है। पहाडों पर गंगा की बहनें है। गंगा जल की घाराएँ है। पहाडों पर गंगा - यमुना की अनगिनत धाराएँ है। पहाडों पर गंगा-यमना की अनगिनत धाराएँ उपजती है। शिव की जटा से बाहर निकल ने वाली भागीरथी। शिव की जटाएं पूरे हिमालय में चारों ओर बिखरी पड़ी है। पूरी पर्वत माला शिव का मस्तक है। नदियों में सिर्फ गंगा और यमुना के नाम से जाने जाते हैं। उनकी शाखाएँ उपशाखाएँ अनगिनत है।"[91]

पहाडों से उतर कर गढ़वालियों की भगीरथी हरिद्वार में पहुँचती है तो गंगा के रूप में जानी जाती है और मैदानों में बहने लगती है। मलेया के दक्षिण में उसकी पूरी लंबाई में अलकनंदा बहती है।

यमुना के मायकेकी एक मनोरम धारी। हरी-भरी पट्टी। पूरे भारत में धान का सर्वाधिक उपजाऊ क्षेत्र।"*यमुना-घाटी से गंगा धाटी की ओर आते वक्त उस पर्वत को पार करते ही बरसाली क्षेत्र शुरू हो जाता है-बष्टों की बरसाली। उस गांव के, तल पर भागीरथी प्रवाहित होती रहती है।*"[92]

नदी के किनारे अनेक गाँव बसे रहते है। पूर्व काल में तो ऋषियों का आश्रम नदी के किनारे ही रहते थे। प्रातः काल उठकर नदी में स्नान करने के बाद ही उनका पूजा-पाठ शुरू होता है। मरगदना नदी का वर्णन करते हुए नौटियाल जी लिखते हैं कि -"*मरगदना अपनी राह बदल कर कहीं दूसरी ओर नहीं जा सकता। वह जहाँ सो साल हले बहता होगा आज भी वहीं बहता जा रहा है। ठीक उसी लीक पर। असल में वह अपने प्रवाह की दिशा या क्षेत्र को बदल ही नहीं सकता। दो पहाडों के बीच, उन दोनों के सीमित, साझे तल पर वह खुद भी बँधा हुआ, जक़डा हुआ रहता है। वहाँ कोई मैदान तो है नहीं जो बाढ़ के आ जाने पर नदी का पानी इस साल एक ओर को बहने लगे और दूसरे साल बहाँ से बहुत दूर, किसी दूसरी दिशा की ओर उत्पात मचाते फिरे। मरगदना सदियों से अविचलित रहने वाले दो पहाड़ों के तल पर बहता जाता है।*"[93]

मौसम के हिसाब से नदी का पानी की मात्रा घटती या बढ़ती रहती है। बहुत मद्दम गति से या विकराल रूप घारण कर स्पटिक की तरह साफ़ दिखाई देने वाले या मिट्टी -गाद से परिपूरित बेहद गंदले जल के वहां बहते रहने के कारण लोग अपनी-अपनी समझ के अनुसार, जैसे चाहे बैसे मतलब निकाल लेते हैं। इससे नदी का कोई सरोकार नहीं।

पहाड़ों पर कई धाराएँ होती है। धारा का पानी पहाड़ के सीने से सटकर गिरता है। यह पानी बारहों महीने इतना ही रहता है। न बढ़ता है, न घटता है। बरसात के मौसम में कुदरती तौर पर पहाड़ पर चोरों ओर पानी के सोते फूट जाते हैं। कई जलधाराएँ गर्मी में सूख जाती हैं। उपणधारी धारा कभी सूखती नहीं। हमेशा पानी गिरता ही रहता है।

पल्लीधार का वर्णन करते हुए नौटियाल जी लिखते है कि-"*सबसे वड़ा ताल मुख्य ताल है-सहश्र ताल इस तालसे निकल कर लगातार दो धाराओं में पानी बहता रहता है।पूर्वी कोने से निकल ने वाली जलधारा भी लांगना नदी में मिलती है। पश्चिमी किनारेसे निकलने वाली जल राशी भागीरथी की एक सहायक शाखा पिलंग केरूप में जानी जाती है। इसी पिलंग नाले के किनारे-किनारे किसी युग में प्रसिध्द संतस्वामी रामतीर्थ बाड़ाहाट-उत्तर काशीसे चलकर सहश्रताल पहुंच गए थे। भीलांगना भी भागीरथी की एक सहायक नदी है। इन दोनों का टिहरी में संगम होता है। टिहरी नगर उत्तरकाशी से बहत्तर किलो मीटर की दूरी पर स्थित है। दोनों नदियाँ एक ही पर्वत की दो अलग-अलग दिशाओं में अवतरित होती है। भागीरथी का उद्‌गम गोमुख, भीलांगना का खत्लिंग।*"[95]

कुल जलधाराएँ भागीरथी, यमुना, भीलांगना, अलकनंदा पहाड़ों की ऊंचाइयों से अवतरित होकर नीचे की ओर उतरती है। नदियों का पानी लगातार प्रवाहित होता रहता है। पहाड़ी नदी बटिया के साथ साथ बहती है। उसमें जितना पानी रहता है उस हिसाब से वह कई गुना ज्यादा शोर मचाती चलती है। ऐसे स्थानों पर जब पूरी नदी एक साथ नीचे गिरती है तो उससे पैदा होने वाली आवाज से अकेला गहराई भयभ्रांत हो जाता है।

6.4. गाँव का वर्णन

नौटियाल जी के उपन्यासों में गांवों का वर्णन बहुत ही प्राकृतिक रूप में हुआ है। उपन्यास को पढते हुए हमें लगता कि यह गाँव जाना पहचाना हुआ है। गांव वाले हमेशा मिल जुल कर रहते हैं। अपने रीति रिवाज को कायम रखते हैं। गांव में किसी को कुछ हो जाए तो पूरा गाँव उसकी सहायता करने में जुटजाता है।

उत्तर बायां है उपन्यास में रैमासी गांव का वर्णन करते हुए नौटियाल जी लिखते है - "*रैमासी एक लंबा चौड़ा गाँव है। एक ओर नदी बहती है। दूसरी दिशाओं में पहाड़ खड़े है। उन पहाड़ों से सोते, फूटते रहते हैं, पानी बहता रहता है। गाँव भी फैला है और गाँव से सिंचित खेत भी फैले है। गांव के निवासी भी खूब-खूब फैलकर रहते हैं। कोई सिमटा हुआ नहीं। धरती उपजाऊ है। खूब धान पैदा होता है। खूब धान बरसता है। खूब पानी बरसता है। खेत असिंचित नहीं है ,उनमें सिंचाई की सुविधा है। मकान बनाने के लिए पत्थर, छवांई के लिए पठालें गाँव की सीमा के अंदर आसानी से मिल जाते हैं।*"[96]

रैमासी गाँव के लोग धान पैदा करते हैं। रैमासी के हर व्यापारी को पता है कि चाँदी और दूसरे गाँवों की आखरी सीमा रैमासी है। अपने अनबिके माल को लेकर वे वापिस अपने गाँव नहीं ले जा सकते। रैमासी से आगे बढ़ जाने उसका सामर्थ्य नहीं होता। उसके पास उतना समय भी नहीं होता। इसलिए आम तौर पर, अंत में, भाव वही तय होगा। जो रैमासी वाला बोल दे। चाँदी गाँव का वर्णन इस प्रकार है -"*चाँदी कांठा-चांदी का शिखर।लगातार बर्फ से ढका हुआ पहाड़। सुबह उस पर बर्फ चमकती है। तब लगता है कि वह चाँदी से मढ़ा हुआ पहाड़ है। कांठे की चमक चांदी गांव पर पड़ती है, तो गांव में भी एक अजीब, खूब सूरत जादूई चमक फैल जाती है। इस तरह सूरज की किरणें चाँदी कांठ को और चांदी कांठा चांदी गाँव को चमकाने लगते हैं। गाँव वालों का खयाल है कि कुल देवी देवताऔं चांदी कांठ में निवास करते हैं।*"[97]

श्रीनगर का वर्णन करते हुए नौटियाल जी लिखते है कि "*श्रीनगर राज। पहाड़ों में उच्चतम। जिसका सिक्का तिब्बत में चलता है। चांदी का सिक्का तिब्बती सोना बटोर लाता है।*

सबसे ऊपर
सबसे ऊँची सीढ़ी।
बेहद ऊँची देहली।
उस पर चढ़ पाना एकसमस्या थी। शाहजहाँ ने चढने की कोशिश की।
शिवालिक
यमुना घाटी
माल घाटी
सलाणा दिन-रात सलामी देने की मुद्र में खड़े गगन चुँबी पर्वतों की धरती।
कोस दर-कोस।
सीढ़ी दर-सीढ़ी।
देहली पर चढ़ लिए तो कमरे के अंदर दाखिल
उसने माल पार किया। सलाण की सीढ़ियाँ पूरी नहीं चढ़ पाया।
सलाण के बाद श्री नगर। श्रीनगर के आगे पैनखंडा। उससे और आगे तिब्बत।
दुनिया की छत।
सोने की खान।
छपराड़।तिब्बत की स्वर्णिम राजधानी।"[98]

मुगल बादशाह नजावतखाँ श्रीनगर के पहाडों के बारे में वहाँ जमे हुए बर्फ के बारे में उस नगर के प्रकृति सौंदर्य के बारे में सुनकर श्रीनगर पर हमला

बोल दिया। लेकिन वह हार गया था। उस प्रकृति तक राजा पहुँच नहीं पाया। श्रीनगर के आस-पास से इलाकों में जहां भी चले उनको प्रकृति सादर आमंत्रण करती है। गंगा नदी के पानी पीने से ही लोगों में अजीब शक्ति प्रवाहित होने लगती है। गढ़वाल का वर्णन करते हुए नौटियाल जी लिखते है कि -"*नए, ताजा फूलों की बहार। कुछ ही दिन पहले तक गढ़वाली घरों में बच्चों ने फुफियारी का त्यौहार मनाया था। गढ़वाली रिवाज के अनुसार एक महीने तक लगातार हर रोज सूर्योदय से पूर्व, सुबह-सुबह उठ कर ताजा फूल चुने थे। उन्हें पास पड़ोस के हर घर की देहली-दरवाजों पर बिखेरा था जहां एक वर्ष के अंदर कोई मौत न हुई हो। पेडों की आधीआधी शाखों पर फूलों की जगह अब नन्हे-नन्हे फूल भी दिखाई देने लगे थे। अभी हाल में बद्रीनाथ, केदार नाथ के कपाट खुले थे। हर साल इन दिनों तीर्थ यात्रा शुरू हो जाती थी। अनगिनत श्रध्दालु राह खुलने से पेश्तर चट्टियों से अपनी यात्रा शुरू कर देते। हिन्दुस्तान के कोने-कोने से आने वाले श्रध्दालू राह खुलने से पेशतर चट्टियों से अपनी यात्रा शुरू कर देते।*"[99]

केदारनाथ, बद्रीनाथ, ऋषिकेश जो श्री नगर के आस पास है लोग देवभूमि कहकर उन स्थलों का पूजा करते हैं। भारत में अंग्रेजी राज के दौरान मध्य हिमालय के काफी बड़े-भूभाग में फैली एक देशी रियासत टिहरी-गढ़वाल। भगीरथी और यमुना दोनों नदियों का उद्‌गम-स्थल। पुराणों के अनुसार देव-भूमि। हां के शासक ने दरबारियों, चाटुकारों के माध्यम से अपने को बोलंदाबद्री (बोलता हुआ बदरीनाथ) घोषित करवा दिया था।" *उस देव भूमि के एक भाग यमुना घाटी (खाईं) में रहने वाले साधारण मनुष्यों-रवाल्टों-को पशुवत नारकीय जीवन बिताना पड़ता था। जल, जंगल और जमीन पर मालिकाना। हक दरबार का होता था। प्रजा के लोग दरबारियों की इज्जत के बगैर उन जंगलों में प्रवेश तक नहीं कर सकते थे। ऊंचे हिम मंडित शिखरों व घाटियों के निवासी जंगलों, चारगाहों में सदियों से पशुपालन कर किसी तरह अपना गुजारा करते आए थे।*"[100]

टिहरी गढ़वाल रियासत में रहने वाले रवांल्टों पशुपालन कर जीवन बिताते थे। वे न्यूनतम आवश्यकताओं की अपूर्ती हो जाने पर संतुष्ट हो जाने वाले लोग थे। वहुत अच्छे जीवन की उनकी कल्पना की उड़ान कभी पहाडों-जंगलों-नदियों के घेरे में बाहर घाटी से चोटी तक की परिधि से बाहर नहींजा कसती थी। उनके सपने भी इसी तरह के होते थे कि वे अपने पशुधनको लेकर मुक्ती (ढेर सारी) पत्तियों के लदे किसी घने जंगल में या कहीं हरे-भरे, लंबे-चौडे चारागाह में बरोक

घूम रहे हैं। उससे ज्यादा-अपने जंगलों और चारगाहों में स्वच्छंद होकर घूमते रहने से ज्यादा और किसी चीज की याचना या कामना नहीं कर सकते।

पाली और दाली का वर्णन करते हुए नौटियाल जी लिखते है कि "*दोनों पहाड़ों के सीनों पर करीब-करीब बराबरी की ऊंचाई पर आमने सामने बसे हुए दो गाँव है पाली और दाली। दोनो के बीच में। उनके तल पर,हरदम मौजूद रहता है मरगदना। एक गवाह भी और जामीन भी। मरगदना के आर-पार एक ओर के तट से पाली गाँव की शुरूआत हो जाती है, दूसरे तट से दाली की। दोनों गाँवों से एक दूसरे के घरों की एक-एक चीज, एक-एक आदमी या औरत, बत्ते और यहाँ तक कि कुत्ते और मवेशी भी खूब अच्छी तरह पहचान ने में आ जाते हैं। एक गाँव में कोई जोर जोर से बोल दे, वह आवाज सामने बसे दूसरे गांव के वहाँ के कुल निवासियों को साफ-साफ सुनाई दे जाती है। उस-सबकी हरकतें साफ़-साफ़ दिखाई देती रहती है।*"[102]

गाँव हमेशा खेतों से हराभरा ही रहता है। कई गाँवों में पानी न होने के कारण खेत सूख जाते हैं तो, गाँव वालों का दिल भारी पड़ जाता है। गांव का किसान अपने खेतों में हरीभरी फसल देखना चाहता है। गांव की सहर करने निकले नाटियाल जी लिखते है कि"*धारी गाँव का भात खा कर कालीमंदिर से कलिया सौड़ की चढ़ाई चढते हुए मैं कुछ सोच में पड गया हूँ। ऐसे ही भागता रहा तो मैं किसी भी गाँव को समझ नहीं पाऊँगा। यहाँ एक-एक गाँव को समझने के लिए आधा जीवन लगाने की जरूरत है। कितना सतही काम कर रहा हूँ। इस गांव के बारे में मेरी क्या जानकारी है ? इस गाँव के सीधे-सादे लोगों का प्रतिनिधित्व करने का मुझे सचमुच कोई अधिकार है?*"[103]

गाँव के लोग अक्सर मिल जुल कर ही रहते हैं। किसान अकेला तो खेती का काम कर नहीं सकता। सब साथ में मिलकर खेती का काम करले ते हैं। गांव की औरतें झुण्ड बनकर जाती है खेतों में घास काटने के लिए। वे समूह में अपना काम एक दूसरे से न बांट लेते हैं। किसी का मदद करने के लिए पूरा गाँव ख़डा होता है।

आजकल का आदमी शहरी जीवन में व्यस्त और कहाजाए तो प्रकृति से एक दम दूर हो चुका है। मशीनी जीवन बिताने लगा है। शहरी आदमी सोचता है कि वैज्ञानिक चीजे सब के साथ वह बहुत खुश रह सकता है। उसी में सुख

मिलता है। लेकिन प्रकृति की गोद में पले बड़े और सुख जीवन बिताने वाले ग्रामीण लोगों से कभी मुकाबला कर नहीं सकते।

6.5. बुग्यालों का वर्णन

पालसी अपने भेडों को चराने के लिए कुछ महीनों तक बुग्यालों पर निवास करलेता है। पालसी लोग पहाड के समतल भूभाग पर डेराडाल कर अपने पशुओं का देखबाल करते हैं। बुग्यालों में रहने वाले आदमी को पहाडी से नीचे आना थोडा मुशकिल लगता है, इसलिए पालसी लोग सारी चीजें अपने पास रखलेते हैं। लकडी भी लेकर जाते हैं।

"पल्लीधार, जिसके चारों ओर बुग्यालें ही बुग्यालें हैं। जंगलों से दूर, बेहद दूर, एक अलग-थलग बुग्याल जंगलों से घिरे हुए अपने गांवों से भेड़ पालक बाहर निकल ते है तो उनके दिल में जल्दी खुली बुग्यालों में पहुँचने की इच्छा बलवती होने लगती हैं। सर्दियों के मौसम के बीतने से पेश्तर भेड़ पालक अपने मन में बुग्यालों में जाने का कार्य क्रम तैयार करने लगते हैं।"[104]

भेड़ पालक को अपने भेडों की रक्षा करने के लिए बुग्यालों में जाना पड़ता है। पहाड़ के ऊपर तक बाघ पहूँच नहीं सकता। भेड़ पालक कुत्तों को अपने साथ लेकर बुग्याल पहुंचता है। वहां पर कुत्ते भेड़ों की रक्षा करते है।

"काफी लंबे इलाके तक वनस्पतियां पैली रहती है। जब इनका क्षेत्र समाप्त हो जाता है तब दिखाई देते हैं बुग्याल घास के गुच्छे। फैली हुई धरती पर अनेक रंगों के फूलों के साथ चिपकी हुई बुग्याल। यहाँ फूलों के पौधे भी कदमें छोटे हो जाते हैं। इनके नीचे शरण लेकर बाघ अपने शरीर को छुपा नहीं सकता। बुग्यालों में बाघ नहीं आता।"[105]

सेतीधार का गढ़वाली में अर्थ होता है-सफेद धार। सेती धार एक अजीब बुग्याल है। वह एक सपाट मैदान नहीं। प्रकृति ने वहाँ छोटे-छोटे मैदानों की एक श्रृंखला बनाई है। पहाड़ के उच्चतम शिखरों पर एकदम अदृश्य बुग्यालें फैली पड़ी है। सेतीधार को देख कर लगता है प्रकृति ने लुकाछिपी खेलने के लिए बनाई है।

बुग्यलों में अनगिनत छोटे-बड़े पौधे होते हैं। घास-गुच्छों का एक खूब सूरत गलीया। पहाड़ों के सीने पर मीलों दूर तक बुग्यालें फैली रहती है। छोटी मधुमखी

की बराबरी करने वाले मासूम फूल। आदमी की हथेली को पूरी तरह ढंक देने वाले बड़े फूल। कुदरत के दुश्मन मनुष्य से कुछ सवाल पूछने के लिए वे उसकी राह में खड़े है।

फूलों का वर्णन करते हुए नौटियाल जी लिखते हैं कि-*"ब्रह्म कमल। बुग्यालों की धरती पर फूलों का सिर मौर। अपने बड़े आकार के कारण आदमी की आपस में मिली हुई दोनों हथेलियों में समा सकने वाला, देवताओं की पूजा में प्राथमिकता-प्राप्त फूल। जहां तक नजरें देख सकती हैं बुग्याली बुग्याल। फूल, रंग, खुशबू। आदमी सुध-बुध भूल जाय। तरह-तरह के रंग-बिरंग उन फूलों की मिश्रित खुशबु का नशा कई लोगों को बेहोश कर देता हैं। खासकर उन लोगों को जो वहां सिर्फ सैर करने आते है। देहरादून, मसूरी, चकराता की निचली पहाडियों से आने वाले सैलानी। बडे, शहरों के निठल्ले, बाजारू लोग। मौज मस्ती लूटने के इरादे से वहाँ पहुँच जाने वाले बड़े घरों के शहजादे। उन सब को वहाँ मतली होने लगती।''*[106]

पालसी, गूजर और खड़वाले, जो जंगलों में गावों में बुग्यालों में अपना जीवन बिताते हैं, लेकिन कभी प्रकृति को हानि नहीं पहुँचाते। उस प्रकृति का रस वे हर पल लूटते रहते। फूलों को, पौधों को देख कर खुश रहते हैं, कभी उस को तोड़ने का इरादा अपने मन में नहीं लेते। शहरी लोग आकर फूलों को नष्ट करदेते हैं, और औषधी वनस्पति को लूटते हैं। पालसी कभी ऐसा नहीं करता। वनस्पति को वह भगवान मानता है। उसको बेच कर पैसा कमाना नहीं चाहता। जानवर तो उसके साथ ही रहते हैं। जानवरों से उसे प्यार हो जाता है। हमेशा उनकी हिफाजत करता रहता है। शहरी लोग जानवरों का शिकार करते हैं। जानवरों की चमड़ी से व्यापार करते हैं। पालसी को इन शहर वालों के हरकतों से नफरत होती है।

बुग्यालों में दिन के वक़्त घना कुहरा छाया रहता है। आकाश बादलों से भरा रहता है। दिन अंधियारे होते हैं, और रातें उजियारी होती हैं। सेतीधार एक अजीब बुग्याल है। वह एक सपाट मैदान नहीं। प्रकृति ने वहाँ छोटे-छोटे मैदानों की एक श्रृंखला बनाई है। बुग्यालों में अनेक पशु-पक्षी देखने को मिलते हैं। भेडों को तो घास की जरूरत होती है। भेड़ किसी दूसरे जानवर को हानि नहीं पहुँचाते। कस्तूरा मृग, हिरने, सफेद भालू अन्य जानवर भी घूमते रहते हैं। आदमियों से दूर रहते हैं।

बुग्यालों में जीवन बिताने के लिए आए गूजर और पालसी लोग कुछ महीनों के लिए वहाँ ठहरते हैं उसके बाद बुग्यालों पर तेज हवाएँ चलने लगती है और बर्फ पिघलने लगता है। ज्यादा बर्फ होने के कारण वहां पर घास सूख जाता है। उस समय पालसी और गूजर अपने जानवरों को साथ लेकर दूसरी जगह पहूँच जाते हैं। जब बुग्यालों को छोड़ कर जाते है तो उनकी आँखों में आँसू भर आते हैं,दिल भारी हो जाता है, कहने के लिए कुछ शब्द नहीं होते। बस वे लोग बुग्यालों को बहुत देर तक देखते रहते और मन में यह प्रर्थना करते हैं कि अगले साल जरूर वे बुग्यालों के पास आएंगे।

6.6. पहाडों का वर्णन

पहडों को देख कर ऐसा लगता है कि आकाश की ऊँचाइयों तक फैले हुए है। पहाड़ तो अनंत काल से अपनी ही जगह पर खड़ा होता है। पहाड़ के सीने पर चल कर, उसे पार करते हुए लोग जिधर चाहे उधर जा सकते हैं। पहाड़ कहीं नहीं जाता। अपना उद्देश्य सफलता पूर्वक पूरा करने के लिए वहाँ पहूँचने वाले लोगो के लिए यह बात जरूरी होती है कि वे पहाड़ को, उसे विभिन्न हिस्सों को भली भाँति जानते हों। पहाडों के सीने से ही अनेक घार बहते रहते हैं जो पहाड़ी इलाके में रहने वाले लोगों की पानी वहाँ के पहाडी से ही मिलता है।

भेडपालक, गूजर लोग अपने मविशियों को लेकर पहाड़ों पर चले जाते हैं। वहां कुछ महीनों तक बस जाते हैं। पहाड़ ही उनका पालन करता है। पहाड़ों पर जो समतल प्रदेश में पैदा हुए धारा के बुग्यालों में वे डेरा डाल कर रहते थे। कई गांव तो पहाडों पर ही बसे थे। जो लोग पहाडों पर अपना मकान बनाकर रह लेते, उनको नीचे आने का मार्ग इतना आसान नहीं होता था। कई जगहों पर पहाडी इलाके में पानी नहीं मिलता था,पानी के लिए लोगों को मीलों दूर तक जाना पड़ता था।

पहाडों से बहने वाली धाराओं में से कुछ धाराएँ गर्मी में सूख जाती थी। कुछ धाराएँ लोगों की प्यास बुझाती थी। कई जगहों पर ऐसा होता था, पहाड़ के दूसरी ओर एक गाँव होता, चढान उतर कर पार करने से गांव में पहुँच जाते थे। पहाड़ों पर बसे देवी माँ का दर्शन केलिए जो लोग आते थे रास्ते में धारी का पानी उनकी प्यास बुझाता था। नौटियाल जी लिखते है कि -"*यहाँ के लोगों को मुख्यतया मार्ग चाहिए।जिंदगी सदियों से पहाडों के घेरे में क़ैद है। लोगों के अंदर उस घेरे को किसी तरह तोड़ सकने की एक सामूहिक छटपटा हट दिखाई दे रही थी। कहीं आने-जाने के रास्ते नहीं है।*"[107]

पहाड़ लोगों को रास्ता दिखाने वाला है और पहाड़ लोगों के लिए याद करने वाली जगह होता है। अपने उद्देश्य को सफलता पूर्वक पूरा करने के लिए वहां पहूँचने वाले लोगों के लिए यह बात जरूरी होती है कि वे पहाड़ को, उसके विभिन्न हिस्सों को, भली भाँति जानते हों, उसके तमाम ठौरों से परचित हों। कहां जंगल हैं, कहां जंगल नहीं हैं। कहाँ मिट्टी है, कहाँ पत्थर है, कहां पानी है। घरों की लिपाई करने के लिए लाल माटी चाहिए तो मरखान की जानकारी होनी चाहिए। छँवाई करने के लिए पतले पत्थरों पठालों की जरूरत है तो पठाल खान कहां पर है। घास लेने जा रहे हो तो मालूम होना चाहिए पहाड़ के किस हिस्से में इस मौसम में अच्छी घास उगती है। पेडों के इलाके में। खतरनाक ढलानों पर लटकती हुई। समतल भूमि के सीने पर। पानी से पसीजती हुई जगहों पर, और यह बात भी मालूम होनी चाहिए कि जिस जगह जा रहे हो वहां आज कल घास होगी या नहीं होगी। घर में आने वाली नयी नयी बहूं को पहले इन्हीं सब चीजों की जानकारी हासिल कर लेना जरूरी होता है। ईंधन के लिए उपयोग में लायी जा सकने वाली लकड़ी की जरूरत हैं तो उस वन के बारे में और वहां उगने वाले उन पेड़ों के बारे में मालूम होना चाहिए। काष्ठ के लिए जा रहे हैं तो पेड़ की उस खास प्रजाति का पता होना चाहिए जिस की लकड़ी से अपने घर का निर्माण या मरम्मत करना चाहते हो। दराँती, कुटले, गैंती, फावड़े के बेंट या हल के नाड़े-नसूड़े बनाना चाहते हो। हरेक चीज की जानकारी जरूरी हो जाती है, और अगर शिकार की तलाश में जा रहे हैं तो पहले अपने मन में यह बात तय कर लेनी होगी कि अब की बार, मुख्यतया किस तरह के जानवर का शिकार करना है।

पहाड़ के किसी हिस्सों में, उसके वनों में और खास कर उनकी बस्ती से बेहद दूरी पर स्थित ऊंचे, बर्फीले शिखरों में प्रवेश करने से पहले यह तय करना जरूरी होता है कि आप क्यों जा रहे हैं। किस मतलब से जा रहे हैं। इस बात का पता रहना चाहिए कि उस मौसम में और रात दिन के उस खास वक़्त पर जिस शिकार की खोज में जा रहे हो, वह किस इलाके में मिल सकता है। एक -एक चीज़ की सही जानकारी नहीं होगी तो पहाड़ पर क्या करने जायेंगे ? अपने अभाव और दीनता को,अपने वैभव और समृध्दि को और अपनी या आपकी त्रृटियों को खुद ही बताने, उजागर करने लगते हैं।

श्रीनगर के पहाड़ों पर जमें हुए बर्फ के लिए लोग पागल होत थे। श्रीनगर पर हमला करने वाला मुगल बादशाह भी उस बर्फ के बारे में सुनकर ही वह पागल हो गया था। संतूरगढ़ के अंदर सिपाही घुस कर वहाँ से बर्फ ले आया।

"तमाम फौजियों की मौजूदगी में उन्होंने अपने उन भारों को खोला।उनके अंदर से ज चमकीली चीज निकल रही थी उसे वे जमीन पर रखते जा रहे थे।एक साथ वहाँ पर बर्फ का एक छोटा-सा पहाड़ बन गया था।पहाड़ों की चोटी से लाई गई ताजा,चमकीली,इनसान के गर्म लहू को सर्द कर देने वाली बर्फ के उस ढेर के पास खड़े होकर नजावतखाँ अपने भविष्य के ताने-बाने बुनने लगा था।"[108]

बादशाह बहुत खुश था। पहली बार आगरा के लोग सफेद बर्फ को देख रहे थे। रानी कर्णावती को अपने राज्य को बचाने के लिए इन पहाड़ों का सहारा लेना पड़ा। मुगल सेनाओं को भगाने के लिए पहाड़ों पर पत्थरों को जमा किया। पहाड़ों पर रानी की सेना छुपकर उन शत्रृ पर वार किया।

पहाड़ लोगों के लिए लाभदायक है। पहाडों पर ही अनेक वनस्पतिया मिलती है। अनेक तरह के पौधे सब वहां पर देखने को मिलते है। पहाड़ लोगों का जीवन भर का साथी है। पहाड़ों पर अनेक तरह के जंतू अपना राज करते रहते हैं। पशु-पक्षी भी वहां रहते हैं। बर्फ तो वहां पर जमा ही रहता है। धरती पर बहुत कम दिखाई देने वाले अनेक जानवर पहाड़ो पर देखने को मिलते हैं। पहाड़ों पर तेज हवाएँ चलती है। वहां रहने वाले लोग आराम से रह सकते हैं। पहाड़ों पर पहुँचने के बाद गूजर लोग और पालसी अपने जानवरों को खुला छोड़ देते हैं। जानवर भूल जाते हैं कि पालतू जानवर है। पहाड़ों पर अनेक कीमती जड़ी बूटियां मिलती है। कुछ शहर वालें वहां की जडी बूटियों को चुरा कर व्यापार करते हैं। पहाड़ सब कुछ सहता हुआ, चुपचाप देखता हुआ एक विराट पर्वत है।

6.7. जंगलों का वर्णन

गाँव के लोगों को जानवरों और जंगलों से कोई दूर नहीं कर सकते। पेड़ों से भरे हुये घने जंगल में वे अपने जानवरों को चराने के लिए ले जाते हैं। कुछ पालतू जानवर खेतों के पास ही चरते रहते हैं। झुण्ड में रहने वाले भैंसे आदि पालतू जानवर जंगलों में चरने जाते हैं। दुनिया जोड पर टिकी है। पशु-पक्षियों, जीवाणु-कीटाणुओं सूरज, चाँद, नक्षत्रों, मिट्टी, पत्थर, वायु, जल, आकाश, धरती के सीने पर उगती वनस्पति और भूगर्भ में गहरे-गहरे स्थित पदार्थों की हरकतों का जोड़ कुदरत का काम है। धरती पर केवल मनुष्य एक ऐसा प्रणी है जो कुदरत् की

चीजों को काँट-छाँट कर, उन्हें जोड़ तोड़ कर अपने माफिक सँवर लेता है तो मानव सभ्यता का उदय होता है।

"घने वन, जो उनके गाँवों को अपने घेरे में लिए रहते हैं। वनों का लंबा चौड़ा क्षेत्र है। गांव की सीमा खत्म होने लगती है तो वहां सबसे कीमती, सबसे लंबी और मोटे वृक्ष दिखाई देते हैं। धरती पर मीलों तक उन बड़े दरख्तों के चौडे पत्तों का बिछौन लगा रहता है। उन लंबे वृक्षों के क्षेत्र का खत्म हो जाने के बाद आचानक धरती का रूप बदल जाता है। वहां के ढलानों पर धरती से एकदम चिपके हुए ऊँचाई के बुरांस के पेड़ फैले मिलते हैं। उनके आस पास छोटे छोटे पौधे दिखाई देते हैं। बेशकीमती जड़ीबूटियों के पौधे।"[109]

वनों में अनेक तरह के पेड़ पौध होते हैं। आजकल सभ्यता के नाम पर मनुष्य वनों के पेड़ों को काट कर अलग दुनिया बसाता है लेकिन मानव यह जानता नहीं कि वह अपने पैर खुद कुल्हाडी से काट रहा है। जंगलों में पेडों की वजह से कई प्राकृतिक विपत्तियों को हम रोक सकते हैं। गांव वाले तो जंगलों की पूजा करते हैं। शहर की संस्कृति से प्रभावित होने पर भी वे लोग जंगलों से दूर रहना नहीं चाहते।

" जेठ महीने के शुरू, होते-होते यमुना घाटी की चोटियों पर बसे गांवों के निवासी अपने भेड़ो को लेकर बुग्यालों में जाने की तैयारी करने लगते हैं। ऊंचे डांडों पर बर्फ पिघलने के साथ यमुना और उसकी सहायक नदियों में पानी की मात्रा बढ़ने लगती है। तब लगता है, जाड़ों में अलसाई धरती अंगडाई लेने लगी है। टिहरी रियासत में यमुना और उसकी सहायक कमल नदी के बीच की घाटी में एक अजीब, अपनी ही किस्म की धरती फैली है। धान की ऐसी बहुतायम में पैदावर मुल्क हिन्दुस्तान में और कहीं नहीं दिखाई दे सकती। अपनी इस धान की उपज पर यहां के बाशिंदे रवांल्टे गर्व करते आए है।"[110]

बडे, अफसर, पटवारी और हाकिमान के साथ मिलकर जंगलों को लूटना चाहते हैं। गांव वासी, भेडपालक जंगल को कभी तोड़ना नहीं चाहते। कीमती वृक्षों के बारे में उनको पता ही नहीं चलता। अपने जानवरों के घास के लिए लकडी इकट्ठा करने के मकसद से ही वे जंगल जाते हैं। वडे, अफसर लोग तो प्लान बनाकर आते हैं। बडी कीमती वृक्षों पर अपनी नज़र रखते हैं। वे चाहते हैं कि किसी गांव वालों को जंगल में घुसते न देने से उन कीमती वृक्षों को आसानी से गिराकर व्यापार कर सकते हैं।

" जंगल के सबसे बड़े हाकिम के जंगली व्यवहार से परेशान रहती है वनों में घास काटती घसियारिनें। घरों की ओर पानी लेकर जा रही पनिहारिनें बहु खौफ खाती है। उसके सफेद घोड़े को लपकते आते देख औरतें इधर-उधर बिदक ने भागने लगती हैं। पदमदत्त रियासत के जंगलों के नए नक्शे तैयार करने लगा है। उसके नक्शे में रियासत के अंदर जितनी जमीन है, उस पर दरबार का मालिकाना हक दिखाई जाने लगा। जमीन पर हल लगाने वाले प्रजा के लोगों का उस पर कोई हक नहीं हो सकता। खेत दरबार के, खलिहान दरबार के, वैसे ही, जैसे पहाडों और जंगलों पर मालिकाना हक दरबार का होता है।"[111]

हाकिम लोग हमेशा यह काम करने की कोशिश में रहते कि गांव वाले लोगों को जंगल जाने से रोक ले। जंगल जाने के बिना गांव वाले रह नहीं सकते है। हाकिम लोग उन का शोषण करना शुरू करते हैं।

"इस बात का मुतल्लिक तुम अंग्रेजी हुकूमत से ही जाकर पूछो तो अच्छा होगा, और खेती के अलावा तुम्हारे गोरू (जानवर) के कारण भी दरबार के जंगलों का अजहद नुकसान होता रहता है। यह बात याद कर लो कि आगे से तुम लोगों को हर हालत में अपने मवेशियों को अपने खूंटे पर रख कर पालो। जंगलों का नुकसान करने के लिए उनको वहाँ मत जाने दो, मवेशी चरान पर हम इसलिए टैक्स लगा रहे हैं।"[112]

गाँव के लोग हमेशा जंगल को बचाना चाहते हैं। जंगल को वे लोग अपना समझते, वहां पर जाने के लिए कुछ अधिकारी रोक लगाते हैं। गूजर लोग अपने मवेशियों को लेकर कुछ महीनों तक रूकने के लिए बुग्यालों में जाते हैं। वे फिर अपनी जगह वापस जाने के लिए निकल ते हैं तो उनका मन भर आता है।

चौमासा बारहनाजा होता है। चौमासा बीत गया था। घाटियों में लह लहाती फसलों के ज्यादातर अनाज काटे जा चुके थे। खुले खेतों में कही कहीं तोर की दाल खड़ी दिखाई दे रही थी। ज्यादा तर किसानों ने गेहूं की बुवाई भी निपटा ली थी। कुछ लोग अभी खेतो के अंदर बुवाई का काम करते दिखाई दे जाता। किसान, गूजरों से सड़कों के किनारों पर अपने खुलें, खाली खोतों के अंदर पड़ाव डालने के लिए कहते। जिस खेत में गूजर का डेरा पड़ेगा वहां ढेर सारा गोबर जमा हो जाएगा। वे धनशाली, पिलखी असेना, देवल, नंदगांव बडकोट, मालीदेवल, नैल, डडूर, नागणीसेरा, सेमल सेरा और हाडीसेरा के कटे, अधकटे या बोए खेतों के नजारे देखते हुए चले थे।"[113]

गूजर यही सोचते रहते है कि जब वे अगले साल लौट कर आएंगे तो इतने सुन्दर जंगल, खेत और खेतों में भर पूर फसल देख पाएंगे या नहीं।

पहाड़ों पर रहने वाले लोग जंगलों से लकड़ी लेकर आते हैं। पहाडों पर लकड़ी नहीं मिलती है। जंगल पहाड़ से दूर रहता है। जो भी लोग जंगल से धार पर आते हैं जंगल से लकडी लेकर आते हैं।

उत्तर बायां है उपन्यास में नौटियाल जी जंगल के बारे में लिखते हैं कि यहां खैर का यह घना जंगल अभी तक घना रह पाया इस का एक कारण है। उसकी लकड़ी बेहद वजन होती है। अपने भार के कारण उसकी लकड़ी के स्लूपर नदी के पानी में डालने पर तैर नहीं पाते। वे पानी में डूब जाते हैं। सब से नीचे की पर्त की पत्तियाँ पूरी तरह सड़ जाती है। उनसे खाद बनती रहती है। उस वन में बीज भी गिरते हैं। उन बीजों के भीतर से नए अंकुर जन्म लेते हैं। बड़े पेड़ की पत्तियां छोटे पौधों की खुराक बनाकर उन नये पौधों की नसें, शाखाओं - प्रशाखाओं मे भर जाती है। उसी खुराक के सहारे वे अंकुर नन्हे पौधे बन जाते हैं। फिर वे नन्हें पौधे धीर-धीरे दरख्तों में बदल जाते हैं। उनकी जड़े धरती में गहरे बैठ जाते हैं। बहुत अधिक उम्र होने पर पेड़ धरती में गहरे बैठ जाती हैं। बहुत अधिक उम्र होने पर पेड़ खुद भी गिर जाते हैं। घने वन में भी पेड़ की एक-एक शाखा सड़ती रहती है। उसके सड़ने से भी मिट्टी में खाद जमा होती रहती है।

वन विभाग में बनाया गया पौधशाला में अलेक प्रकार के पौधे, और पेड़ होते हैं। साग- सब्जी के अच्छे बीज और उन्नत किस्म की पौध तैयार की जाए और उसे आम जनता को उपलब्ध किया जाए। आस-पास के पेड़ों के चीड़ों की पत्तिया इन पौधों के ऊपर गिर कर पेड़ एवं पौधों को नष्ट कर रही थी। इसके बारे में नौटियाल जी लिखते है कि-"*यही ठेकेदार जब बड़े मालदारों के लिए जंगलों की बे रहमी से कटाई करते हैं, तब यह तर्क नहीं देते कि यह जंगल मोटर मार्ग से कोसों दूर है। वन विभाग जिन वनों की कटान के लिए नीलामी करवाता है उनमें से कई मोटर मार्गों से दूर दूर ही होते हैं। लेकिन वहां के मालका ढुलान बहुत आसानी से कर लिया जाता है। विगत तीनवर्षों से मैं लगातार कोशिशें करता रहा हूँ कि इस समस्या को स्थायी तौर पर सुलझाया जा सके।*"[114]

गाँव के निवासियों को कभी जंगलों से अलग किया नहीं जा सकता। व्यापार करने वाले लोग जंगलों पर वार करते हैं। बड़े बड़े किमती पेड़ों को मार

गिराते हैं। गाँव के लोग लगडी केलिए अपने जानवरों को चराने के लिए औप जंगलों का इस्तमाल करते है। जंगल उनके लिए देवता है।

6.8. पशुओं का वर्णन

गांव के लोगों को पशुओं के साथ लगाव रहता है। *झुण्ड से बिछुडा* उपन्यास में शान्ति बुढ़िया को अपनी भोली नाम के गाय से कितना लगाव है, इसका वर्णन करते हुए नौटियाल लिखते हैं -"*गाँव बस्ती के, इलाके के पशुओं के किसी तिजारती ने उसकी गाय का व्यापार कर लेने के इरादे से कभी शान्ति के आँगन में पाँव धरने का साहस नहीं किया। सब को मालूम रहता है उस गाय को शान्ति कभी बेच नहीं सकती। लोगों ने कई बार शान्ति को भोली से बातें करते सुना है। अपनी जिन्दगी की छोटी-बड़ी घटनाओं के बारे में बातें करती रहती है। अपनी भोली से। पूरा-पूरा हिसाब बुझाती रहती है उसके पास ऐसे ही जैसे कोई किसी आदमी से यो औरत से बातें कर रही हो। वह एपने मुँह से कोई जवाब नहीं देती। दे भी नहीं सकती। उस तरह नहीं दे सकती जिस तरह शान्ति उससे अपनी बातें कहती रहती है। लेकिन गाय सब जानती है, सब समझती है।*"[115]

गांव के लोग जानवर को जान से मारना पाप समझते हैं। बाघ जब शान्ति बुढ़या का गाय को मार देता है तो पूरा गांव शोक में डूब जाता है। लगता है कि गाय सिर्फ शान्ति की नहीं पूरे गांव की है। पटवारी श्रीधर प्रसाद शतरू को जंगली बकरे को लाने के लिए कहता है। श्रीधर प्रसाद अपने भाई की मौत पर जश्न मनाता है। शतरू जंगल जाने से इनकार करता है और घर पहुँचता है।

"*घर पहुँचते ही शतरू ने अपनी माँ से पूरा किस्सा बयान कर दिया। उसकी माँ ने कहा था-बेटे, तूने बहुत ठीक काम किया है। ऐसे मौके पर सेठ के आँगन में एक जंगली जानवर पहुँचा कर हम गांव वालों को क्या जवाब देंगे। किसी के घर में, मैं कहती हूँ, किसी और के साथ भी ऐसा न हो जैसा उस घर में हो गया है। गरीबी, भुखमारी की मार झेल रही यज्ञदत्त की माँ और विधवा कुछ वोल सकने की हालत में नहीं है। पर गाँव वाले तो पूछेंगे और ऐसे लोग जो कुछ भी नहीं है बोलेंग वे हमारे काम के बारे में अपने मन में तो सोचेंगे।*"[116]

गढ़वाली व्यापारी और भेड़ पालक मेलों, मंडियों से भेड़ बकरियाँ खरीदते और उन्हीं की पीठों पर छोटी छोटी चमेडे की थैलियों में कई-कई मन सामान भी

ढो लाते। व्यापारी अपनी भेड़-बकरियों के काफिले की पीठ पर श्रीनगरी किस्सा लेकर जाते और हिमालय के दूसरे हिस्सों की पैदावरों को उनकी पीठ पर लाद कर गढ़वाल ले आते।

पालसी को सबसे ज्यादा चिंता अपनी भेड़ों की रहती है। वह धार के ऊपर यानी पर्वतों के सबसे ऊँचे शिखरों पर रहने का आदी हो जाता है। गूजरकी भैंसों पर बाघ हमला नहीं कर सकता। वे भैंसे रहती भी झुंड में हैं। रात को सोते वक़्त वे खुद ही एक गोल घेरा बना लेती है और अपने नव जात और कम उम्र के बच्चों को उस घेरे के बीच में रख लेती है। उस मजबुत घेरे को तोड़ कर बाघ उन बच्चों तक पहुँच ही नहीं सकता।

"बुग्यालों में पहुँच जाने के बाद भैंसे अपने मालिकान गूजरों के डेरों के पास नहीं रहती। वे जंगलों में बुग्यालों में, वीरान चारगाहों में चरते-चरते जहाँ रात पड़ जाय वहीं रात्रि वास कर लेती है। अपने चारगाहों में पहुँच ने के बाद गूजर अपनी भैंसों की ओर से बेखबर हो जाता है। वह अपने धोड़ों को बुग्यालों में चरने की खुली छूट दे देता है। घोड़े जहाँ चाहे घूम लें। अपनी थोडी सी बकरियों, गायों और उनके बछडे -बछियाओं को गूजर अपने डेरे के काफी पास, अलग झोंपडियाँ बना कर उनके अंदर रखता है। वहां उनके कुत्ते पशुओं के उन बच्चों की हिफाज़त करने में मस्तैद हो जाते हैं।"[117]

गूजर की भैंस बन्धन हीन होकर रहती है। उसे कभी बांधा नहीं जाता। उसका कोई खूंटा नहीं होता। उसके गले में किसी रस्सी से, किसी दांवे से बांधे जाने के कोई निशान नहीं होते। ये भैंस खुले बुग्यालों में दूर-दूर तक फैलकर घास चरती रहती है। नीचे के इलाकों में रहने वाले स्थानीय ग्रामवासी भी बरसात के दिनों अपने मवेशियों को ले कर ऊंचाइयों पर स्थित जंगलों में चले आते हैं। इन जंगलों में उनकी पुश्तैनी छानें बनी रहती है।

भोटिया कुत्ते का वर्णन करते हुए नौटियाल जी लिखते हैं कि *"बहुत सी जातियों के कुत्ते बाघ की गंध पाकर दुम दबाकर लुकने लगते हैं। पर ये भोटिये कुत्ते हैं। सच्चे रक्षक। लड़ाकू। खूंखार दुनिया का कोई भी हिंसक जानवर इनके इस स्वभाव से टतरा नहीं सकता। वे जीते ही इसलिए हैं कि दूसरों की रक्षा करें। भेड़ पालक अपने कुत्तों को प्यार करते हैं। कुत्तों के जीते जी उनकी भेड़ों की कोई हानि नहीं हो सकती।रात में मालिक सोता है,कुत्ता जागता है। भोटिया कुत्ता। भेडवालों का सबसे महत्वपूर्ण, एक सच्चा जीवन-साथी। बाघ अक्सर अकेला आता*

है। दो बाघ मिलकर हमला करने नहीं आते। लेकिन अगर कभी ऐसा भी हो उठे,अगर दो-दो बाघ एक साथ आ जाएं तो एक अकेला भोटया कुत्ता बाघों के जोट से भिड़ जाने की क्षमता रखता है और उसमें क्षमता हो, न हो, अपने साहस के बल पर वह उनका मुकाबला कर सकता है। बड़ी चीज शक्ति नहीं, साहस है। भोटिये कुत्ते के स्वाभाव और उसकी हिम्मत का दूसरी नस्ल का कोई और कुत्ता मुकाबला नहीं कर सकता।"[118]

बाघ धार पर नहीं जाता। पहाडों के बुग्यालों में छोटे छोटे पौधे रहने के कारण बाघ कही छुपा रह कर वाल नही कर सकता। बाघ बुग्यालों में और करने वाला शौकीन जानवर नहीं होता।

बाघ के बारे में वर्णन करते हुए नौटियाल जी लिखते हैं -"*सीधे गाँव के अंदर चला आया था वह बाघ। गधरे के दोनों तटों पर नदी-तल से आकाश की ऊँचाइयों तक मीलों - मील फैले हए लम्बे-चौड़े घने जंगल थे। उस वक़्त वहाँ अनगिनत पशुओं के झुण्ड चर रहे थे, और स्थायी तौर पर वहीं निवास करने वाले वनैले पशुओं की हरकतों पंछियों की चह चहाटों -आवाजों से भी जंगल गूँज रहा था। लेकिन उन सब की अनदेखी कर उन सब को जंगल में छोड़ कर वह बाघ गाँव के अंदर चला आया था। उसे औरों से नहीं, अपने मतलब से रहता था। "*[119]

गाँव के लोगों को पता ही नहीं चलता कि सवेरे उस गाँव में बाघ आया है। खेत के पास। डरे बिना आकर बाघ ने गाय पर हमला किया।

" *बाघ ऊपर था और गाय उसके नीचे थी। उसने मज़े में घास चराती गाय को दबोच लिया। गाय को पहले कोई आभास ही नहीं हो पाया कि क्या होने वाला है। अचानक हो उठे उस भयानक हमले से गाय अपने को मुक्त करने के लिए वह छटपटा ने लगी थी। लेकिन बाघ ने उसे मुक्त करने के लिए नहीं दबोचा था। उस ने छट पटाती हुई गाय के शरीर के ऊपर बैठ कर बहुत फुर्ती से अपने तीखे दांतों से उसके गले में एक गहरा छेद कर लिया था। उस छेद से ताज़ा खून का फौव्वारा फूटने लगा था। उस फ़ौव्वारे पर अपना मुँह चिपका कर बाघ वहाँ से निकल रहे ताज़ा स्वादिष्ट खून को पीने लगा था।"*[120]

बाघ बहुत कम गाँव में आता था। जंगलों में रहने वाला बाघ दिन में गाँव में, दिन में आने से पूरा गाँव कांप उठा था।

केदारनाथ और गंगोत्री तीर्थधामों के बीच टिहरी-गढ़वाल रियासत के

शान्त वनों, बुग्यालों की चारागाहों में गूजरें घोड़े इकट्टा करते थे। घोडों को इस बात की जानकारी नहीं होती कि वन विभाग ने उनके मालिकान के नाम चरान-चुगान के जो परमिट जारी किए हैं उसकी सीमाएँ कहाँ शुरू होती और कहां खतम होती। घोड़ों को घास चरने से मतलब रहता है। वे बुग्यालों में स्वच्छंद रह कर घास चरते हैं। जिधर हरियाली देखते हैं उस ओर लपकते हैं।

"मस्ती में घूम रहे उन घोड़ों को गूजर पकड़ पकड़ कर इकट्ठा करने लगे थे। जो पकड़ में आ जाता उसे बांध लिया जाता। दो-तीन महीनों तक गूजरों ने उन घोडों को यों ही खुला छोड़ दिया था। अब उन्हें जबर्दस्ती पकड़ा और बांधा जा रहा था। दर असल बुग्यालों में मस्ती में घूमते-दौड़ते घोड़े यह बात भूल ही गाए थे कि वे पालतू घोड़े है और कि उनका कोई एक निश्चित ड़ेर-ठिकाना भी होता है या मालिक भी है।"[121]

घोड़ो को पकड़ ने के लिए गूजर जत्ये बनाकर जाते हैं। मस्ती में घूमते हुए घोड़े को पकड़ना अकेले आदमी के वश की बात नहीं होती। गूजर जानवरों के बिना नहीं रह सकता। जहां गूजर होता है वहां उसके साथ जरूर जानवर होते हैं। जानवरों के बिना वह एक पल भी नहीं रह सकता। गूजर जहां पर भी जा वहां अपने जानवरों को लेकर चलता है। एक जगह से दूसरी जगह जाते समय

"अपनी गाय-भैंसों के नवजात शिशुओं को वे अपने कंधे पर उठाकर कदम -कदम अपनी राहें पार करते। अपने छोटे छोटे बच्चों को हमेशा की तरह वे अपने समझदार वफ़ादार घोड़ों की पीठ पर, वहां रखे सामान के ऊपर रख देते। ऐसे रख देते जैसे कि वह भी एक अदद सामान हो। छोटा सा तुतलाता बच्चा वहां अपने को खुद ही थाम ले। घोड़ों की जिम्मेदारि है कि वह बच्चा उसके पीठ से नीचे न गिरने पाए। घोड़े को अहसास रहता है कि उसकी पीठ पर एक बच्चा भी धरा गया है। वह घोड़ा धीरे-धीरे चलता है। इतन संभल संभल कर चलता है कि उसकी पीठ पर धरी जिन्दा गठरी अपनी जगह पर ठीक हालत में कायम रहे। वह अजीब नज़ारा कि गूजर के बच्चों को जानवर ढो रहा है और पशुओं के बच्चे गूजरों के कंधों पर सवार है।"[122]

पल्लीधार और उसके आस-पास की बुग्यालों में बाघ नहीं आता। उन फैले हुए सुरक्षित चारागाहों में घोड़े खुले घूमते हैं। हरी, नर्म, बुग्गीदार, बदन को शक्ति भर देने वाली दूब और घास को चरते चलते हैं। एक धार से दूसरी धार। एक बुग्याल से दूसरी बुग्याल। घोड़े दिनभर चरते हैं और रात में कहीं आराम करले ते

हैं। तरह-तरह की औषधियों से भरपूर पौष्ठिक घासों को चरते-चरते उनके अंदर एक नई ताकत भरने लगती है।

बारिश के दिनों में जोंके पैदा होती है। जोंक का पूरा बदन मुड़ता रहता है। वह आदमी के बदन पर अपने लिए खास स्थान चुन लेती है। वहां अपने मुख से खाल पर छेद कर देती है। फिर उसी छेद के सहारे, शरीर परस्थिर होकर वह आदमी का खून पीती रहती है। खून पीते-पीते वह मोटी हो जाती है। अक्सर गाँव वालों को इन जोंकों से संभाल कर रहना पड़ता था। रात में बाहर निकलता है तो वे लोग सोच कर कदम धरते थे।

"जोंके पानी में भी रहती हैं। आदमी या पशु पानी पीता है, उस वक़्त छोटी-सी जोंक उसे दिखाई नहीं देती। उसके नथुनों के रास्ते जोंक उसके शरीर के अंदर प्रवेश कर जाती है। बरसात के बाद जड़ों के मौसम में खूंटे पर बंधी गाय-भैसें अक्सर अपनी नाक से छीं छीं छीं छीं ज़ोर की आवाज़े करने लगती हैं।" [123]

खेतों में घास काटने वाली औरतों को हमेशा जंगली जानवरों से डर लगता रहता था। खास कर भालू से। भालू कभी भी औरतों पर वार करता था। अकेली औरत जब घास काट रही हो तो भालू उस पर हमला कर लेगा। यज्ञस्थल पर बंधा हुए कुत्ते के बारे में नौटियाल जी लिखते हैं कि"*यज्ञ स्थाल पर पहुंचे तो वहां एक खंभे पर एक कुत्ता बंघा हुआ पाया। पारंपरिक रस्म को जिंदा रखने के प्रयोजन से एक प्राचीन युग के ऋषि, महर्षि अगस्त्य की स्मृति में संपन्न किए जा रहे सामूहिक यज्ञ में बलि पशु की तरह एक नर-रावन को खंभे से बांध कर उसकी लगातार उपस्थिति को बाकायदा दर्ज करते रहने का क्या मतलब ! वह बकरे की तरह मिमिया नहीं सकता, कुत्ता है। लेकिन भूंक भी तो नहीं रहा है। चुपचाप बंधा है और उस बंधन से मुक्त होने की भी उसकी ओर से कोई चेष्टा नहीं की जा रही है।"*[124]

कुत्ता गाँव वालों को परेशान करता था। जिसके घर में चाहे उसके घर में जाकर जो चीज मिले वह चीज खा कर उस घर की औरतों को परेशान करता था। इसलिए उसको यज्ञस्थल पर बांधा गया था।

सूरज सबका है उपन्यास के बाधासिंह के परिवार में विल्ली, कुत्ता, घोड़ा अपना अनुशासन का पालन करते हैं। बाघा गाँव वालों पर अपना हक जमाकर रखता था। उसके कुत्ता, बिल्ली भी गांव वालों पर अनुशासन करते थे। भोटू कुत्ते का नाम और सिएँ बिल्ली का नाम।

जब घर पर कोई सदस्य मौजूद न रहे और सिर्फ भोटू और सिएँ बिल्ली वहाँ पर हो, उस समय प्रभारी अधिकारी होने के नाते भोटू जो चाहे करें, सिएँ की मजाल नहीं कि वह म्याऊँ तक कर सके। भोटू और सिएँ के लिए, उछलने कूदने के लिए, खाने-पीने के लिए पूरा सोनी गांव पड़ा है। आम तौर पर भोटू जमीन पर चलता है और सिएँ मकानों की छतों को लांघती चलती है। इस तरह सभी घरों के ऊपर से नीचे तक का विस्तृत क्षेत्र भोटू-सिएँ की कारवाइयों की परिधि में आजाता हैं। भोदू-सिएँ जहाँ चाहें बे रोक-रोक आ-जा सकते हैं। जिस घर में चाहे स्वेच्छा पूर्वक, मन पसंद ठोस, तरल पदार्थ खा-पी सकते हैं। वे जिस घर में चाहें, जरूरत पड़ने पर भोंक भी सकते हैं और गुर्रा भी सकते हैं।

बाघा के घोड़े के बारे में नौटियाल जी लिखते हैं कि"*बाघा का घोड़ा, बाघा परिवार में आने के बाद, लाद* वगैरह *नहीं ढोता। वह तबियत के अनुसार खेतों में गेहूँ जौ या मजबुरी में* ऑफ सीजन *में जंगलों में घास-पत्ती चरता है और हाकिम के सामने गरदन झुकाकर अदब से खड़ा हो जाता है। अब यह घोड़ा देखने में तन्दरूस्त लगता है। उसे देखते रहने को जी करता हैं। घोड़ा नहीं तुरंग है। सोन गांव में और इलाके में, बाघा परिवार के सदस्यों के अलावा और लोग इस घोड़े को* लाट साहब *कह कर पुकारने लगते हैं।"*[125]

गाँव ऐसा कोई घर नहीं होगा कि उनके घर में कोई जानवर न हो। गाय और भैंस के बिना गाँव के लोग रह ही नहीं सकते थे। उनका पालतू जानवर से इतना लगाव हो जाता कि घर के सदस्यों की तरह ही वे लोग जानवरों से प्यार करते हैं। हमेशा जानवरों का खयाल रखा करते हैं।

4.3. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में आर्थिक परिस्थितियाँ

प्रत्येक युग का सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक जीवन किसी न कीसी प्रकार से आर्थिक मूल्यों से प्रभावित रहा है। अर्थ पर ही समाज का विकास आधारित है, यह एक सर्व मान्य सत्य है। भारतीय धर्म के अनुसार अर्थ को मोक्ष प्राप्ति का साधन माना गया है। डॉ.राधाकृष्णन भी अर्थ को जीवन के लिए महत्वपूर्ण मानते हैं। लेकिन वे व्यक्तीगत लाभ को उचित नहीं मानते " *इस जीवन का मूल उद्दश्य केवल वैयक्तिक लाभ न होकर एक अत्यावश्यक तत्व है। संपत्ति में स्वतः कोई पाप नहीं है।ठीक वैसे ही जैसे गरीबी में स्वतः कोई पुण्य नहीं है। किसी व्यक्ति के अपने संपत्ति को बढाने के प्रयत्नों से दूसरे लोगों को आर्थिक या नैतिक हानि पहूँचती है तो अवश्य ये प्रश्न उठ खड़ा होता है कि क्या ऐसे उपायों*

से संपत्ति एकत्रि तकरना,जिसके परिणाम ऐसे हों भला है या नहीं। हिन्दू शास्त्र का आग्रह है कि उसका उद्देश्य वैयक्तिक लाभ न होकर समाज सेवा होना चाहिए,एक को गंवा कर दूसरे को नहीं।"[129]

प्राचीन युग से आधुनिक युग तक आते-आते भारतीय समाज की अर्थ विषयक धारणा में काभी परिवर्तन आया है। अर्थ आज के जीवन में नया मूल्य बनकर उभरा है। मनुष्य का अर्थ के प्रति दृष्टिकोण बदल गाया है। अब वह उसके प्रति अधिकाधिक प्रयत्न भी करता है। इस आर्थिक दोड में कोई पिछडता नहीं चाहता। अर्थ प्राप्ति के लिए वह नैतिक -अनैतिक सभी प्रकार के कार्यों को करने के लिए तत्पर रहता है। अर्थ प्राप्त के लिए हर प्रकार का संघर्ष जायज हो गया है।

आज अर्थ के बिना जीवन की सत्ता ही संभव नहीं है। व्यक्ति को आज पगपग पर यह एहसास होता है कि सबसे बड़ी चीज दुनिया में पैसा है, पोजिशन है, रूतबा है और बाकी सब बकवास है। जिसके पास पैसा है उसके पास सब कुछ है। किसी भी व्यक्ति की सामाजिक प्रतिष्ठाका निर्णय आज उसकी आर्थिक स्थिति से निश्चय किया जाता है। आज ऐसे लगने लगा कि ईश्वर और धर्म को भी प्राप्त करना होतो उससे पहले अर्थ की पूजा करनी होगी। आज अर्थ ही सकल सृष्टि का भगवान बन बैठा है। आर्थिक विवशता ने मनुष्य के स्वप्नों को भी सार कर जीवन में एक निरर्थकता का अहसास भर दिया है।

आजादी के वर्षों बाद भी देश की अर्थ व्यवस्था पर पूंजीवादी, शक्तियों का ऐसा शिकंजा बना हुआ है कि जम साधारण की अभावग्रस्त स्थिति में कोई सुधार नहीं आया। उलटे आर्थिक विषमता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इससे जनता बेरोजगारी, महँगाई, भ्रष्टाचार और रिश्वत खोरी का शिकार हो रही है। समाज की इनसारी आर्थिक समस्याओं का यथार्थ चित्रण *विद्यासागर नौटियाल* जी के उपन्यासों में मिलता है।

सामान्य व्यक्ति जिस आर्थिक भार से आज अपने जीवन की निर्वाह को भार समझ रहा है, उसका विविध आयामी चित्रण नौटियाल जी के उपन्यासों में हम देख सकते है। सामान्य व्यक्ति यही सोचता है कि अर्थाभाव सिर्फ निम्न स्तरीय व्यक्ति को ही होता है, लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है। समाज के उच्च वर्ग, पूंजीपति वर्ग को भी आर्थिक विषमताओं को भोगना पडता है। विद्यासागर नौटियाल जी के उपन्योसों में व्यक्ति की आर्थिक समस्याएँ भूख, गरीबी और विभिन्न प्रकार के अर्थाभावों का बहु आयामी चित्रण कर आज के सामाजिक परिवेश

की गहरी पहचान स्थापित किए है।

समाज की परिस्थितियों को बारे में समाज की स्थिति को प्रभावित करने वाले अंशो में आर्थिक परिस्थितियाँ प्रधान रूप लेती हैं। समाज में लोगों का जीवन विधान अधिकतर उनकी आर्थिक परिस्थितों पर ही निर्भर रहता है। समाज जो चाहे राजा को पालन हो, अंग्रेज का पालन, हो उनक शासन को भी आर्थिक स्थितियाँ प्रभावित करती ही है। मुगल कालीन शाहजहाँ के समाज से लेकर श्रीनगर की रानी का समाज, अंग्रेजों की पान से लेकर बडीदादी के समाज तक आर्थिक स्थितियाँ लोगों को प्रभावित करती ही रही।

श्रीनगर पर अपना हक कायम रखने के लिए मुगल बादशाह शाहजहाँ नजावत खाँ को फौजदार बनाकर तीस हजार घुड़सवार, तीस हजार पैदल सेना को भेजा था लेकर नजावतखाँ अपनी सेना के साथ एक-एक कर श्रीनगर के आस-पास सब इलाकों पर अपना पैर जमाया। श्रीनगर के देहली पर खडे हुए दुश्मन को देख कर रानी कर्णावती सक-पका गई। रानी दूत को भेज दिया और बादशाह की हुकूमत मानलियी और पंद्रह दिन की मोहलत पूछी थी। नजवतखाँ इस प्रस्ताव को कबूल किया।

पंद्रह दिन की मोहलत की मियाद पूरी हो गई। इन पंद्रह दिनों में फौजी लशकर ने खूब जश्न मनाया। फौरन कोई लडाई लड़ने का खयाल नजावतखाँ भूल गया था। जहां तक गढ़वाल का सवाल था उसे नजावतखाँ मुगल हिन्दुस्तान का एक हिस्सा मान चुका था। सिपाही हमला करने के लिए श्रीनगर आए तब से उनको ठीक से खाना मिल नहीं रहा था। सिपाही कभी ऐसे सोचे नहीं थे कि वे रानी को पंद्रह दिन का मोहलत देंगे। सिपाहियों को भर पेट खाना नहीं मिल रहा था। सिपाहियों के पास पैसा तो नहीं होता, वे जो चाहे वे चीजे खरीदने के लिए। सिपाहियों को नदी के किनारे ठराया गया है। वहाँ कोई गाँव का या इनसान का नामों निशान तक नहीं था। उनको सिर्फ नदी का पानी पीकर प्यास बुझाना था। मुगल बादशाह के राज में अपने घर पर अच्छा खासा खाने वाले सिपाही भूख से लग रहे थे।

" *चौदहवे दिन की रात को खाना बाँटा गया तो हर एक सिपाही को सिर्फ दो-दो रोटियां दी गयी खाने से पहले ही सिपाहियों को यह बता रहे थे कि शाही फौज की रसद खत्म होने पर आ रही है और अगर फौरन रसद की कोई नही खेप नहीं पहुंचती तो फौज के भूखे मरने की नौबत आ जाएगी। सिपाही इनामुल्ला*

ने रोटी बाँटने वाले से कहा कि उसे कम से कम बारह रोटियों की जरूरत है। इसे से कम मिलेंगी तो अच्छा नहीं होगा। उसकी बात अनसुनी कर दी गई।"[126]

सब सिपाहियों के पेट में भूख की आग जल रही थी और जो दुश्मनों से लड़ते हुए मरने -मारने को तैयार रहते थे, वे लोग फौजीदार के खिलाफ लड़ने के लिए तैयार हो गए। सिपाहियों को यह बात समझ में नहीं आ रही थी कि नजावत खाँ क्यों रानी को पंद्रह दिनों की मोहलत दे दिया। इस मोहलत की वजह से सिपाहियों को भरपेट खाना नहीं मिल रहा था।

सिपाही भूख से बुरी तरह पीड़ित थे। कुछ दिन पहले खाद्य सामाग्री घटने लगी। तब से उस बँटवारे को लेकर कभी पहाडी और मैदानी फौजी टुकडो में झड़पे होती, कभी वे हिन्दू और मुसलमान बनकर आपस में लडने लगते। शाही फौज के बल्ष्ठ, लेने तगड़े, भूख से व्याकुल सिपाही अपनी ताकत भरपूर इस्तमाल अपने ही साथियों पर करने लगे थे। फौज में आपसी दोस्ती और भाईचारे के खुशबुदार फूलों की जगह दुश्मनी की विषैली बेलों के जल फैल रहे थै। फौज भूखी थी, गंगाजल पी-पी कर अपने को जिंदा रखने की कोशिशें कर रही थी।

हर सिपाही को अपने घरकी याद आने लगी। घर पर उन लोगों को कैसी कैसी रोटियाँ बनाकर खिलाया जाता था। यहां गोश्त तो दूर की बात है सब्जी भी बहुत कम मिलती है।सिपाहियों को तीन दिन से भूखा रखा गया है, वे लो गरोटी के सपने देखने लगे। शाही के फौजी लोग रोटी के लिए तडपने लगे थे। उनके पास घोडे हैं, तलवार है, लडने के लिए हिम्मत है, पर खाने के लिए रोटी नहीं है। करीम जो शाही फौज का सिपाही यो वह भी तीन दिन से भूखा था, उसके पास सोचने के लिए बहुत समय था। *"गढ़वाल को जीतने के बाद हमारे शाहंशाह के पास कितनी दौलत बढ़ जाएगी? क्या करेगा वह उस दौलत से? इनसान को जिंदा रहने के लिए, जिंदगी बसर करने के लिए कितना चाहिए ? राजा बादशाहों की कितना पान की हवश होती है, ज्यादा, और ज्यादा, और ज्यादा हासिल करके वे क्या करते हैं? बहुत ज्यादा खाने से तो आदमी का पेट खराब हो जाता है। वे कई-कई औरतें, लौंडियाँ रखते हैं हर रोज नई -नई, कमसिन, कुँवारी लडकियों को अपने साथ सुलाते हैं। एक आदमी की और तबाजी हवश को पूरा करने के लिए हजारों बे गुनाह गरीबों का मारा जाना कहां का व्याय है? अपने जवान पतियों के घर लौटने का इंतजार करती हजारों बेकसूर,*

खूबसूरत, पतिव्रता पत्नियों का जबर्दस्ती विधवा बना दिया जाना कहाँ का इन्साफ है ?"[127]

शाही सिपाही करीम का अंतर्द्वंद महज उसका न हो कर हर भूखे एवं ठहरे हुए लोगों का द्वन्द बन जाता है। जिसे न रोटी मिली है, नहीं युध्द के लिए ही कहा जा रहा है। जिसका पेट भरा है वह मंदिरों और मस्जिदों में भगवान एवं अल्लाह की तलाश करने जाता है। भूखे के लिए तो रोटी में ही भगवान के दर्शन हो जाते हैं। करीम से भी नहीं रहा गया, वह भी रोटी के लिए व्याकुल था।

रानी कर्णावती ने दूत घुरख्या कठैत से कह भेजा था कि शाही सिपाहियों के लिए रसद तैयार है वे लेकर जा सकते है, फौजी खुश थे वे रोटी के भर पेट खाने के सपने देख रहे थे। रसद लेकर सिपाही लौट रहे थे तो उनपर पत्थरों से वार किया गया। बहुत सारे सिपाही उन पत्थरों के नीचे दब गए। जो बचे सिपाही थे वे आकर पूरा किस्सा नजावतखाँ को सुना दिया। इस बात को नजावतखाँ कान तक नहीं लिया। घुरक्या कठैत की बातों पर विश्वास किया और दुबारा सिपाहियों को रसद ले आने के लिए भेजा। दुबारा भी इसी तरह होने से नजावतखाँ को ही नहीं सब सिपाहियों को गुस्सा आ गया। सिपाही लडना चाहते थे। जंग में अपना सर कटवाना पसंद कर रहे थे। ठीक तरह रोटी न मिलने के कारण सिपाहियों के पास लड़ने की ताकत नहीं थी।फिर भी वे लड़ाईकरने के लिए तैयार थे। सिपाहियों में अनेक लोग पत्थरों के मार से मारे गए, कुछ लेग घायल हो गए। जो बाकी बछे वे लोग दिमागी तैर से अपने घर को, माता, पिता को, पत्नी को, अपने बत्तों को याद करने लगे। भरपेट खाने के लिए तरसने लगे। आखिर वे लोग रानी के बंदी बन गए। पूरी फौज बँट गयी थी। जो रानी के सिपाहियों के हाथ आते उनको रानी के पास ले आते और उनकी नाक कटवाई जाती थी। कीम सोचने लगा हम हार क्यों हार गए ? दुश्मन से कहीं हमारी मुठभेड होने की नौबत ही नही आयी। हमारे फौजदार को रानी ने एक जाल में फँसादिया। जिस तरह हम चंडीघाट से आगे आकर बढ़ते जा रहे थे, अगर हमको रानी ने रास्ते में धोके से न रोक लिया होता तो अब तक हम फतह का परचम कंधों पर उठाए आगरेकी तरफ जा रहे होते। किसी जंग को जीतने के लिए सबसे बडी जरूरत अक्ल की होती है और हमारे फौज दार के पास रत्ती भर भी अक्ल नहीं है वरना इतनी बडी फौज इस तरह शर्मनाक शिकस्त का सामना करना पड़ता। बहुत देर तक माथा पच्ची करने के बाद सिपाही करीम इस नतीजे पर पहुँचा कि शाही फौज की पराजय का मुख्य कारण मिर्जा शुजअ की न तर्जुबेकारी और न समझी है।

नजावतखाँ तो अपना नाक बचा कर शहशांह के पास गया है, लेकिन शहंशाह की तो नाक कटगई वह सोचने लगा कि सर कटाकर आते तो उनको बहुत खुशी होगी। सिपाही वापस तो आगए। लेकिन रानी से किये गये कर्म को वे कभी भूले नहीं। करीम जैसे सिपाही तो रानी के चाल को थोडा पहले ही समझ गए थे। लेकिन फौजी सरदार सिपाही के बाते मानने को कहाँ तैयार रहते और उनको मामूली सिपाही से सलाह लेने की आदत भी नहीं होती। जो भीहो जैसा भी हो। शाही फौज हार कर दुम दबा कर आगए पहँच गयी।

कई सोलों बाद अंग्रेजों ने भारत पर कब्जा कर लिया। मध्य हिमालय में फैले एक सौ चार गढ़ों के भड़ों को परास्त कर उनकी सार्वभौमिकता को विलीन कर किस तरह गढ़वाल का गठन किया गया था। सभी भड़ों ने आसानी से हथियार नहीं डाले थे। उन्हें वश में करने, परास्त करने के लिए षड्यंत्रों का छल कपट का सहारा लेना पड़ा था।

भड़ राज करता था पर ऐश नहीं करता था। उसके राजसी ठाटबाट नहीं होते थे। उसका निवास किसी महल में नहीं होता था। वह अपने गढ़ के आस पास रहता था। बेहद वजनी वखूब लंबे चौड़े, पत्थरों के एक-दूसरे के उपर रख कर चिनाई कर दी जाती। उन पत्थरों के आकार को देखकर लगता वे किसी भड़ ने चिने होंगे। भड़ जो करता था अपने लोगों के सामने और उनकी जानकारी में करता था। खुले आम करता था। गाढ़ कोई दुर्ग नहीं होता था। वह मात्र मिलन केंद्र होता था। चुपके -चुपके हमला करना भड़ के स्वभाव के विपरीत होता था। ऐसा ही भड़ याकाफू चौहान। उस को धोखे सेपकड लियागया और उसको मार दिया गया। काफू चौहान के मरने के बाद गढ़वालियों पर मुसीवत आने लगी। गोरखें आकर उन पर अत्याचार करने लगे और गढ़वालियों को दास-दासी बनाकर मंडी में बेचने लगे।

गढ़वाली अपने घरों, गाँवों में और छानों में भी रहता था। छानें-वर्षाकाल में मवेशियों-मनुष्यों के निवास के लिए चरागाहों में बनाई गई खुली झोंपडियाँ। गढ़वाली अपने गांव-घर में भी ऐसे ही रहता था जैसे छानों में रहता आया था। वह आम तौर पर खुले में रहना पसंद करता था। वह भेड़ों की तरह रहता और आम गढ़वाली अपने को किसी भड़ से कम नहीं समझता था।

"चंद परवारों को छोड़कर नेपाल की अधीनता किसी गढ़वाली ने स्वीकार नहीं की। तब गोख्यर्याणी मची। विजेता गोरखों ने बे - पूछे अत्याचार करने शुरू

कर दिए।हर आततायी का पहला हमला औरत पर होता है। गोरखों के आने की खबर सुनते ही गांव के गांव खाली हो जाते थे। लोग जंगलों में भाग जाते। सोना, चांदी, नकदी दौलत को पीतल या ताँवे के बंठों -गागरों के अंदर भर कर उन्हें कहीं खेतों के किनारें पर।पोड़ों के तले, जंगलों-वीरानों में गाढ़ देते। दौलत दुश्मन के हाथ नहीं पड़नी चाहिए। उससे लड़ने की सामर्थ्य बढ़ती है। कभी जिंदा रहे और अपने गाँव में वापस आनेका सौभाग्य प्राप्त हो गया तो घरती के गर्भ में गाढ़ी गई दैलत आड़े वक्त पर काम आएगी। नहीं तो कोई आनेवाली पीढ़ी उसे भोगे गी।"[128]

गाँव के लोग मक्कारी कर रहे हैं। वे रूपया पैसा नहीं बना रहे हैं एक-एक तिमासी जमा करना मुश्किल हो रहा था गोरखों को। गांव-गाँव में विद्रोह (ढंडक) हो रहा था। गोरखा फौज का गढ़वाली जमीन पर टिके रहना मुश्किल हो रहा है। उनका राजा लड़ाई में मारा गया है पर आम गढ़वाली अपने को हारा हुआ नहीं मान रहा है।

"गढ़वाल पर नेपाल के शासन को स्थायित्व को स्थायी तौर पर गढ़वाल में रख दिया गया था। पाँच कंपनियों की एक बटालियन। सौ सिपहियों की एक कंपनी। इन तमाम फौजियों के वेतन व अन्य खर्च गढ़वाल के गाँवों से बसूल किए जाएँ - नेपाल से ऐसी राजाज्ञा जारी की गई थी। गढ़वाल के कुल गाँवों को इन्हीं खर्चों की वसूली को दृष्टिगत रखते हुए पल्टन को अलग -अलग टुकडियों के बीच बाँट दिया गया था। लूटो और खाओ। खाओ और दबाओ। किसी को सर मत उठाने दो। "[129]

गोरखों का हुक्म चलने लगा, जो रकम अदा नहीं करता उसको मंडी में बेच दिया जाने लगा। आम जनता घबरा गई। खेतीबाडी करनेसे जो पैसा आता वह तो खाने के लिए काफी नहीं होता।वैसे में गोरखें सिपाहियों को कहाँ से पैसा लाकर अदाकरें। पूरा गाँव काँपने लगा। सिपाही तो ऐसे थे रकम बसूल किए बिना या उस घर के औरत या मर्द को अपने साथ लिए बिना वापस जाने वाले नहीं थे। पुलमा जैसे औरते खुद को बेच कर अपने पति को बचा लेती हैं, ऐसे सपने देखने लगती कि एक दिन उसका पति सेठ को पैसा दे कर उसे खरीद लेगा। आर्थिक स्थितियाँ ने रिश्तों को भी दूर करने लगे। अपने ही सामने मां से बच्चे को अलग होते हुए, पति को पत्नी से अलग होते हुए देखना पड़ता था। ऐसा भी होता था कि सिपाही लोग हाकिम से प्रार्थना करके अपने पसंदीदार औरत को रखैल बनाकर रखलेते थे। गंगा के किनारे दासों की मंडी थी।

"उस दिन जो खरीदार आए थे वे करीब -करीब सभी इलाकों के लोग थे। कुछ लोगों को मर्द दासों की जरूरत थी। उनसे आजीवन जानवर की तरह काम करवाया जा सकता था। सिर्फ जिंदा रहने लायक खाना देने की जरूरत रहती। कुछ दासियों को खरीदने आए थे। कुछ लोग अपनी दैलत से कुँवारी लड़कियों को खरीदने आए थे। एक सौदागर ऐसा भी था जिसे ब्राह्मण कुल में उत्पन्न बालक की जरूरत थी। जिसे वह धर्म पुत्र बनाकर अपने घर पर रख सकता। पुसू और ऐत्वारी दोनों पति-पत्नी को एक ही खरीदार ले गया। वह उन्हें अपनी जमीन पर रख कर उनसे खेती का काम करवाना चाहता था। वे दोनों उसकी जमीन पर पति -पत्नी बनकर रहें उसे कोई ऐतराज नहीं था। पुसू-ऐत्वारी की जोड़ी का उसने एक सौ रूपया मोल दिया था।"[130]

हुँकरू की पत्नी बहुत सुन्दर थी। गोरखों को उस बात का पता लगने पर हुँकरु के घर आए। उसकी पत्नी को बाहर बुलाने के लिए कहा। हुंकरू को यह पसंद नहीं था हूँकरू अपनी पत्नी से वादा लिया कि उसे कुछ भी हो जाने दे वह बाहर नहीं आएगी। सिपाही उससे पूछने लगे अब भी समय बाकी है तेरी पत्न को बाहर बुला हम तुझे छोड़ देंगे। हुंकरू नहीं माना और उनलोगों के साथ चलागया मंडी में बिकने के लिए।

मंड़ी में औरतों की बोली लगने लगी एक औरत कहने लगी कि-"*उसके साथ जो दूसरी औरत थी वह भी उसके साथ चलेगी।दोनों को एक ही जगह भेज दें। आगे कहने लगी यहाँ से जाने के बाद हमें कभी अपनी गंगा माई के दर्शन नहीं करने हैं, अपने पहाड़ नहीं देखने है, अपने लोग नहीं देखने हैं। हम दोनों एक साथ रहेंगे तो कम से केम आपस में* ***बातें तो कर*** *सकेंगी। तुम्हारी भी माँ-बहने होंगी। अगर राजा गढ़वाल जीत जाता और गढ़वाली तुम्हारी माँ - बहनों को इस तरह बेचने लगते तो तुम्हें कैसा लगता? हम औरतों ने कोई कसूर नहीं किया है। हमारा कसूर सिर्फ इतना है कि हम लड़ाई के मैदान में खुद नहीं गई।*

- तुम जाती तो तुम्हारा राजा जीत जाता ?

- शायद हाँ । और न भी जीतता तो हमें अपने राजा की तरह वीरगति तो प्राप्त हो जाती। गंगा के तट पर हमारी इस तरह बोली तो न लगाई जाती ?"[131]

यह एक औरत की नहीं पूरी दासियों की आवाज थी। कहाँ तक न्याय था कि गढ़वालियो को दास दासी बनाकर बेछ देना। गढ़वाली जो जानवरों को प्रकृति

को अपना मान कर जीवन बिताने वाले, गंगाका दर्शन करके अपना जीवन शरू करने वाले, पहाड़ों में जीवन बिताने वाले, प्रकृति में एक होकर जीवित रहने वाले गढ़वालियों का ऐसा हाल था। गढ़वाली बिकने लगे। अपनों से दूर जाने लगे। आर्थिक परिस्थितियों ने उन्हें परास्त कर दिया। दास -दासी बनकर वे लोग मंडी की और चले गए।

कई सालों के बाद अंग्रेज आए, गढ़वाल के लोग गोरखों पर विजय प्राप्त किए। बारह साल की गुलामी से मुक्त हुए। अंग्रेजों ने तो गढ़वाल को जीतने के बाद जितना मुम्क देना था उतना नहीं दिया। नाम मात्र के इलाके देकर पूरे गढ़वाल को अपने कब्जे में रखलिया।

बडीदादी आज तो नहीं है। लेकिन बडीदादी के आदर्श आज भी सोनी गांव में जीवित है। एक अकेली औरत सारा गाँव को अपना मानती हुई चलने वाली, उसका खेत और जायदाद बाघसिंह जैसा क्रूर इनसान हडपने पर भी उस ओर कुछ ध्यान नहीं देने वाली, अंत में जो पैसा उसके लिए आया था उन पैसों से गाँव वालों का पैणा चुकाने वाली बडीदादी पैणा बांट कर प्रतिकूलताओं में भी जीवन का संदेश देती है। निश्चय ही परस्पर विरोधी घटनाओं का निरुपण एवं उनका कलात्मक समन्वय नौटियाल जी की पहचान है।

उत्तर बायाँ है, इस उपन्यास में विद्यासागर नौटियाल जी ने घुमंतू और सामंत लोगों के जीवन का प्रामाणिक वर्णन किया हैं। हाशिए पर पड़े लोगों के अनवरत संघर्ष गरीबी, उनके सपने, सभ्य तथा कथित विकसित समुदायों द्वारा उनका बाहरी-भीतरी विनाश। इन सब की कहानी विद्यासागर नौटियाल जी हमारे सामने पेश करते हैं। अनपढ़ होने के कारण वे लोग साहुकार या कोई पटवारी के कहने पर अपना अंगूठा छाप देते हैं। वे इतना तक नहीं जानते कि उस कागज पर क्या लिखा हुआ है।

रैमासी एक लम्बा-चौड़ा गाँव है। एक ओर नदी बहती है। दुसरी दिशाओं में पहाड़ खड़े हैं। रैमासी के ज्यादा तर निवासी खेती के अलावा और कोई काम करना पसंद नहीं करते। उसके चारों ओर ऊंचाइयों पर जो भी गाँव है उन गांवो के निवासी भेड़-बकरियां पालते हैं। वहां धान पैदा नहीं होता। वहां मारसा, कोटा या फाफरा होता है। वही उनके खाने के अनाज हैं। गेहूं या चावल के लिए वे सब रैमासी पर निर्भर रहते हैं। नमक भी रैमासी से खरीदा जाता है।

"रैमासी एक गाँव नहीं, एक बाजार है। एक पूरा बाजार। जिनकी दुकानें नहीं वे भी बाजार में रहते हैं। भेड़ पालक दूर -दूर से रैमासी आएंगे। कोटा, फाफरा, मरसा लाएंगे। रामजा की दाल लाएंगे। आलू लेकर आएंगे। कभी अपनी पीठ पर कभी अपनी भेड़ों की पीठ पर। ऊनी पंखी लाएंगे। काती जाने वाली खुली ऊन लेकर आएंगे। बकरे की ऊन की बुनी दरी लाएंगे, जिसे वे कौंट कहते हैं। अपने जंगलों में बड़े बड़े दरख्तों पर लटक रहे लम्बे-लम्बे छत्तों से बहुतायत से जमा की गई शाहद लाएंगे। भैंसिया घी लाएंगे और गाय घी भी लाएंगे, जो दवा के काम भी आता है और ज्यादा महंगा बिकता है। वे पहाड़ी बांस-रिंगाल से बनाई गई चटाई-मुरेठी लाएंगे और पूरे खलिहान था किसी खूब बड़े कमरे के फर्श को ढंक देने लायक बड़ा पाल लाएंगे।रिंगाल से बनाई गई बड़ी-छोटी टोकरियाँ और घिल्डे लेकर आएंगे, जिन्हें अपनी पीठ पर लगा कर औरतें खेतों में गोबर डालने जाती है और जंगल जाती है तो जरूर तौर पर अपने साथ ले जाती है। रैमासी के हर व्यापारी को पता है कि चांदी और दूसरे गांवों की आखरी सीमा रैमासी है। अपने अनबिके माल को ढोकर वे वापिस अपने गाँव नहीं ले जा सकते। रैमासी से आगे बढ़ जाने का उनका सामर्थ्य नहीं होता। उनके पास उतना समय भी नहीं रहता। रैमासी वाले इस बात को अच्छी करह जाने ते हैं। इसलिए आम तौर पर, अन्त में,भाव वही तय होगा जो रैमासी वाला बोल दे।"[132]

दिन रात अधिक परिश्रम करने वाले चंदवालों की कमाई तो सदियों से रैमासी वाले हड़पते आए हैं। चांद गाँव वालों के सारी चीजें बेचने के लिए रैमासी जाना पड़ता है।वहां उनका फायदा उठाते हैं रैमासी वासी।ये गाँव के अनपढ लोग कुछ नहीं कर पाते।बहुत कम दाम में चीजे उन्हें सौंपकर वापस आना पडता है।इस तरह चांद गाँव वालों की आर्थिक परिस्थितियाँ दिन पर दिन बिगडती जाती है।हर छोटे काम के लिए चांदवासियों को रैमासी आना पड़ता है।

विवाह के लिए तो गूजरों में लडके वाले लडकी वालों को पैसा देना पडता था। अगर गूजर की लडकी सुन्दर होती तो उसका दाम और भी बढ़ जाता था।अच्छे दाम आने तक अपनी लडकी की शादी नहीं करते।इसका एक उदाहरण हम देख सकते है-*"वहीद के बाप रफीक ने एकाध मर्तबा आयशा के बाप सुल्तान से वहीद और आयशा के रिश्ते की बात छेड़ी थी।सुल्तान को रिश्ता मंजूर था।पर वह कहता था कि आयशा जैसी हसीन लडकी कहीं मिल नहीं सकती।उसे अपने घर ले जाना है तो आधा दर्जन भैंसे और दो हजार रूपये नकद देने पडेंगे।रफीक*

के पास इतनी दौलत नहीं थी।रफीक का बेटा वहीद,बाप की गरीबी के कारण कुंवारा रह गया था।आयशा,अपने मन में,वहीद पर फिदा थी।पर अपने बाप की शर्तों के आडे आकर यों ही उसके साथ भाग जाने की वह हिम्मत नहीं कर सकती थी।"[133]

पैसों के लालच में तो गूजर बूढ़े से भी अपनी बेटी की शादी करने के लिए तैयार हो जाते थे।लडकियाँ कुछ नहीं कर पाती।करणू एक पालसी है जिस को टिहरी जाना था,वह बुग्यालों में भेडों का पालन कर रहा था,अचानक उसको पता चला कि उसके खिलाफ केस दर्ज किया गया है तो उसको टिहरी जाना पड़ा।बहुत लंबा रास्ता था,उसके पास पैसे नहीं थे इसलिए पैदल वे जाना पड रहा है।पहाडों को पार करते हुए वह अपना रास्ता नाप रहा था।उसके साथ उसका भाई हुक्म भी था।उन्होंने कुछ खाया नहीं। एक तरफ बर्फ गिर रही थी, थंड बढ़ रही थी फिर भी ये लोग कही रुके नहीं।

जब करणू घर पहुँचता है तो भी उसको पता नहीं चलता कि उसका गलती क्या है इसका पता लगाने के लिए टिहरी जाना तो जरूरी है।अपनी जमीन गिरवी रखकर नत्यू पैसा लाकर करणू को देता है, टिहरी जाने के लिए तो जामिनों की जरूरत थी उनको ले जाने के लिए बहुत पैसा खर्च करना पडा करणू को।वे दो लोग इसका पूरा फायदा उठाते हैं।

गरीब लोग ये पालसी घर से इतनी दूर जा कर भेड बकरियों की देखबाल करते हैं, छोटी-छोटी खुशियों के मौके पर भी घर से लंबे समय तक दूर रहते हैं। ऐसे बेबस लोगों पर जब गलत केस रखा जाता है, वे कुछ नहीं कर पाते,वे लोग जेल से बहुत डरते थे,पता नहीं कितने साल तक अंदर रहना पडेगा, इसलिए कर्ज या सूदपर पैसा लेकर बाहर आने की कोशिश करते हैं। टिहरी जाने के बाद करणू को वकील साहब फीस पूछता है तीन हजार। तो करणू दंग रह जाता है।आखिर वह दो हजार रुपए लेने के लिए राजी होता है। करणू वकील से बहुत देर तक प्रार्थना करता है कि वह बेकसूर है,उसने कभी दूध नहीं बेचा और भेड बकरियों की देखवाल करता है,दूर के बुग्यालों में,लेकिन उसका सुनने वाला तो कोई है नहीं।

वकील तो मानने वाला नहीं *"वापसी में टिहरी सेसवारी बस से चले तो करणू के मन में सवालों केबादल उमड़-घुमड़ रहे थे। सवाल पर सवाल।माता*

प्रसाद कौन है? कहां का रहने वाला है? उसने मेरे खिलाफ एकदम बेबुनियाद रिपोर्ट क्यों दी? वकील की फीस दो हजार। आना जाना अलग और इन जामिनान को दुबारा टिहरी पहुंचने की समस्या। घर पहुंच कर अपने बास से क्या कहूँगा?हमारा परिवार इतना पैसा कहाँ से लाएगा?हम गरीब लोगों का कोई सुनने वाला है ?"[134]

अनपढ़, ईमानदार करणू की बात सुनने वाले कोई है नहीं, वकील, साहुकार, सेठ पढ़े-लिखे होने पर भी हमेशा गरीबों का खून चूसने लगते। तरह तरह के रास्ते ढूंढते रहते हैं कि गरीब और बेबस इनसान को किस तरह फसाया जाए,पटवारी लोग तो ऐसी चाल चलते है कि अपना काम निकल जाए, दोनों तरफ बात करते है, एक उदाहरण हम देख सकते है-रैमासी गांव के है, नत्थू रावत, बैसाखू बिस्ट किसी छोटी बात के लिए दोनो तरफ बात करते है,एक उदारण हम देख सकते है-रैमासी गाँव के है, नत्यू रावत, बैसाखू बिस्ट किसी छोटी बात के लिए दोनों दोस्तों में झगडा हो गया और एक दूसरे को दोषी मानकर केस दर्ज किए थे।

पटवारी इसका फायदा उठाना चाहता और पहले नत्यू रावत को ही अपने पास बुलवा कर कहता -"*मैंने इसलिए तुम्हे बुलाया है रावत जी ऐसे आदमी के खिलाफ संभाल कर रहना चाहिए। तुम ठीक समझो तो अब की बार टिहरी जा कर अपने वकील साहब से पूछ लो और एक आर्जी एक सौ सात सत्रह की भी लगा दो।जांच के लिए मेरे पास आ जाएगी तो मैं उस बिस्ट का दिमाग सही कर दूंगा। फौजी दारी केस की बात ही और होती है उसमें हम को पावर होती है। उस दिन शाम के वक्त पटवारी ने बैसाखू बिस्ट को बुलवाया। उसे चाय पिलाई। फिर ऐसी सलाह दी कि वह अबकी बार टिहरी जाए तो नत्यू रावत के खिलाफ शान्ति -भंग की आशंका की अर्जी परगनाधिकारी की अदालत में पेश कर दे।"*[135]

इस तरह पटवारी गाँव में रहने वाले लोगों को किसी न किसी बहाने जेल भेजने का डर दिखा कर अपना काम पूरा करवा लेते हैं।

एक तरफ इस तरह इनकी आर्थिक स्थिति बिगडती जा रही थी तो यह ठोगों के जंगल के जानवरों से भी हमेशा संभल कर रहना पडता है, कभी कभी बाघ गाँव में भी आ जाता है। घास के लिए औरत जंगल जाती है तो सब औरतों मिलकर जाते हैं, और साथ में ही वापस आती हैं। वहाँ उन लोगों को भालू का सामना करना पडता है। जानवरों का हमला करने से कभी-कभी जान निकल

जाती, बड़ी मुश्किल से बचपाते कभी। एक तरफ मरीज अपने जीवन से लडती रहती, दूसरी तरफ डॉक्टर लोग इनका फायदा उठाना चाहते और उनसे पैसा लूटते हैं।

करणू डॉक्टर की तलाश में निकलता है, उधर छंछर पीड़ा के मारे तडप रही थी उस पर भालू वार किया था। सब लोग अस्पताल में डॉक्टर का इन्तजार कर रहे थे। डॉक्टर किसी पार्टी में था, उसको ढूंढते हुए करणू वहां पहूँचा। उसने डॉक्टर को पहचान ने के कोशिश कर रहा था, वहां तो बहुत लोग थे।वहाँ करणू गौरी से मिल कर डॉक्टर के बारे में बताता है कि -"*अति लोभी है करणसिंह।तुम अपने मरीज को ठीक करवाना चाहते हो तो ऐसा करो।डॉक्टर के घर जाकर उसे अलग से मिलो।वह जितना मांगे उतनी रकम उसे अदा करो।वपना तुम्हारा मरीज तडपता रहेगा और डॉक्टर टालबराई करने लगेगा।मरीज की पीड़ा का उस पर कोई असर नहीं होता।अपने मरीज को जिन्दा रखना है तो उसकी कीमत अदा करनी पडोगी।वैसे डॉक्टर ऐसा है कि उसके हाथ में जस है। जिस मरीज के बदन पर हाथ लगा देता है उसें मरघर से लौटा लाता है।*"[136]

गाँव के लोग तो अनपढ़ होते है, ऊपर से छोटी-छोटी मुसीबते तो हरदिन झेलना पडता है। अनपढ़ होने के कारण कोई भी कागजाद पढ़ नहीं सकते, ये लोग तो सिर्फ अंगूठा लगाना जानते हैं, उस में क्या लिखा है इन लोगों को पता ही नहीं चलता। ठीक से खाने के लिए खाना नहीं रहता, फिर भी सूद पर पैसा लाकर जामीन मंगवालेते हैं,तरह-तरह की आर्थिक परस्थितियाँ इनका पीछा रकती रहती हैं।गांव के कुछ गिने-चुने लोगों के अलावा हर आम आदमी की आर्थिक परिस्थितियां उनका पीछा करती रहती हैं।गांव के कुछ गिने-चुने लोगों के अलावा हर आम आदमी की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं रहती थी।नये-नये मुसीबत तो उनका पीछा करते ही रहतें हैं।थोडा बहुत पैसा होतो पैसा इन्ही मुसीबतों के पीछे लगाना पडता था।कभी जामीन लेने केलिए,कभी डॉक्टर का फीस,कभी पटवारी को ऐसा कई गांव का आदमी था ही नहीं जो इस मुसीबत से परे हो।

इस प्रकार चंदवासियों की कमाई पर राजकीय कर्म चारियों, अधिकारियों, कन्हैया, देवी प्रसाद, धन्नसिंह और रयीसेठ जैसे लोग संकट पैदा करते हैं।आम आदमी को इन सारे संकचों से गुजरना ही पडता है। ये साहुकार,पटवारी लोग गरीबों से मुफ्त में काम करवाना चाहते हैं। अगर किसी ने उनका काम करने से मना कर दिया तो कोई न कोई बहाना बनाकर उसको जेल भेजने में कामयाब हो जाते। जेल जाने से बचने के लिए तो उनको किसी सेठ के पास जाकर सूद पर पैसा लेना पडेगा, थोडी बहुत जमीन हो वह छीन ली जाएगी, जामीन के लिए पैसा

भरना वकील को तो मुंह मांगा दाम देना पडता है। उस केस में ये लोग हारेंगे या जीतेंगे पता नहीं।लगा तार कछरी के पास चक्कर काटते रहते हैं, इतना कुछ पैसा जाने के बाद ऐसा भी होता है केस में हारकर जेल जाना पडता है।पैसा तो वापस लौट कर आएगा नहीं। हाथ खाली हो जाते हैं। आखिर वह इनसान को जेल जाना ही पडता है,आर्थिक स्थिति इस तरह रहने का प्रधान कारण शिक्षा का अभाव है। अनपढ होने के कारण ही इन पर इस तरह के आत्याचार चल रहे है। ईमानदारी की कोई इज्जत नहीं होती। इस तरह हम इस उपन्यास में आम लोगों की आर्थिक परिस्थितियों का विश्लेषण कर सकते हैं।

आकाश को बांधे रहते है पहाड़। सदियों से स्थायी तौर पर एक दूसरे के आमने -सामने खड़े। उनके बीच ज़मीन से आसमान तक का फासला निश्चित है। अपने तल पर वे दोनों एक दूसरे के करीबतर रहते आये हैं। लेकिन ज्यों-ज्यों आकाश की ओर बढ़ते हैं, उनके बीच फासले बढ़ते जाते हैं। समाज में रहने वाले सामान्य लोगों की भी यही स्थिति रहती है। अपने बचपन में या बालकपन में, जब वे अपनी जड़ों के करीब रहते हैं,वे पास-पडोस के हम वयस्क बालकों के अभिन्न बने रहते हैं। लेकिन उम्र के बढ़ने के साथ उनके बीच के फासले बढ़ने लगते हैं। आमने सामने खड़े दो पहाड़ों की चोटियों की तरह उनके बीच की आपसी दुरियाँ विस्तारित होती जाती है और जो बड़े होकर आर्थिक तौर पर अन्य लोगों की स्थिति से ऊपर हो जाते है,वे उनसे उतने ही दूर भी होने लगते है। तब वे अपनी निराली दुनिया के निवासी बन जाते हैं। दुसरे लोगों से उन्हें कोई वास्ता नहीं रह जाता। अपने बचपन,बालकपन की योदों को भूलाने की कोशिश में लग जाते हैं।यह एक सामान्य नियम है-जो जैसा-जौसा बड़ा होता जाता है अपने लोगों से उतना ही दूर छिटकता चलाजाता है। जिसका सर बेहद ऊँचा हो जाता है, उसकी नजरें बाहरी दुनिया की ओर देखने लगती है। दोनों पर्तत अधबीच में एक बिन्दु पर आपस में मिलते हैं। वहां कुदरती तौर पर बनी हुई घोड़े की पीठ की तरह एक सँकरी घाटी दिखायी, देती है। लोग उस घाटी को रिखागैर नाम से जानते हैं। उस सँकरी घाटी की राह पर ख़डे हो कर पहाड़ के दोनों ओर के नज़ारे देख लो। दोनों ओर की घाटियों के ऊपर से नीचे तक के नज़ारे और वहां से,सिर्फ वहीं से,उन पहाड़ों की चोटियों को पार किया जा सकता है। वहां से बाहर निकला जा कसता है घर की ओर लौटा जा सकता है। रिखागैर पहुँच जाने के बाद उन दोनों पर्वतों के पीछे की ओर उतरा जा सकता हैं।

" बेशक,इस उप्यास (झुण्ड से बिछुडा) का कथा-फलक बहुत छोटा है।लेकिन पहाडी लोगों के जीवन में बाघ के आतंक का, यदि कीसी आलोचक को,इस उपन्यास को पढ़ते हुए अमेरिकी उपन्यासकार हेमिंग्वे की अमरकृति 'इन द आफ्टरनून' का स्मारण होता है तो बिलकुल सही है क्योंकि यहाँ शिकार के शिकार नहीं बल्कि कला, रोमांच और जीवन की गतिशीलता का प्रतीक भी है। विडम्बना यह हे कि 'दुशमन' जैसे शिकारी शेर से तो भिड सकते हैं लेकिन व्यवस्था उन्हें तोड़ डालती है।"[137]

बाघ ने खेत के किनारे घास चरती हुई गाय को मार दिया।बाध ने खेत के किनारे घास चरती हुई गाय को नहीं गिराया,उसने जलधारा से अपने सर पर पानी भरी पीतल की पतेली से कर चढ़ाई की सँकरी बटिया पर धीरे धीरे सँभल-सँभल कर अपने घर की ओर चलती आ रही शान्ति को गिरा दिया था।गाय शान्ति की माँ थी।गाय उसकी बेटी थी और गाय बेटा भी थी।कमाऊ पूत।वह असहाय बुढ़िया उस मर्मान्तक पीड़ा को सहन नहीं कर पाई थी। असहाय शान्ति बुढिया के जीवन में गाय की मौत का वह घाव कभी भर नहीं सकता था।इतनी बडी दुनिया में शान्ति का उस गाय के अलावा आब और कोई बाकी नहीं बचा था।

शान्ति यह सोच ती रहती थी कि दुनिया से विदा होने से पहले वह जीते जी अपना गोदान भी करवाना चाहती। वह अपने जीवन को किसी डिब्बे की तरह, ठीक तरह से कसकर ढक्कन लगाकर, बन्द कर देना चाहती थी। जीवन का कोई भरोसा नहीं। न जाने किस दिन साँस पूरी हो जाय। साँस को एक न एक दिन पूरा होना है। यह दुनिया का नियम है।

" लेकिन गरीबी बहुत बुरी चीज होती है। वह गाय तो उसका सम्बल है। एकमात्र सहारा। गाय को अपने घर से विदा कर देगी तो उसके बाद उसके पास अपने गुजारे का कोई सहारा बाकी नहीं बचेगा। गुजारा भी टूटेगा और गाय का साथ भी छूट जायेगा। गाय के दूसरे घर के खूँटे पर चले जाने के बाद वह खुद कैसे जिन्दा रह पायेगी ? खायेगी क्या ? शान्ति गाय को नहीं पालती, कायदे में यह भोली है जो उसका पालन कर रही है। उसका स्वभाव देख कर भोली नाम रखा था बुढिया ने अपनी बठिया का एक छोटी सी मासूम नजरो वाली, प्यारी - प्यरी बछिया,जो अब गाय बनगयी थी। सचमुच भोली थी। कुछ साल पहले इसी खूँटे पर जन्मी थी भोली। भोली क माँ नहीं रही। शान्ति की जिन्दी के अकेले पन को दुरकर देती है भोली। उसे देखने मात्र से वह अपना अकेला पन बिसर जाती

है। भोली को बेच कर किसी दूसरे घर भेज देने की बाते शान्ति के दिमाग में कभी ठीक तरह से जम ही नहीं पाई। "[138]

एक दिन शान्ति बीमार हो गयी थी और, बीमारी के कारण घर से बाहर निकल नहीं पाई। उसे वैसी हालत में देखकर परमा की बहू उसे के लिए धारा से पानी का बर्तन भर लायी थी। शान्ति ने लाख मना किया था। लेकिन वह जबर्दस्ती पानी लेने चली गयी थी।शान्ति जो कभी ऐसी बातें किसी से नहीं करती थी, उस दिन कुछ हिल -सी गयी थी -"*ब्वारी ! इस जिन्दगी में,जब तक साँस चल रही है, क्या नहीं चाहिए? नमक, तेल, जीरा-धनिया, कपडा-लत्ता। उन सब के अलावा अनाज। चाहे कितना ही मोटा-झोटा अनाज क्यों न इस्तेमाल कर लिया जाय। गेहूँ का आटा और चावल जितने दिन भी मिल जाय वही ठीक। लेकिन जब न मिले तो पेट पालने को कुछ न कुछ तो चाहिए। गेहूँ -चावल न सही, कोदा -झंगोरा, कौणी-कँडाली ही सही। मोटे अनाज वैसे स्वादिष्ठ नहीं होते लेकिन उनसे भी पेट भरता है। वे भी आदमी को जिन्दा रखते हैं, और रहने के लिए अलका घर चाहे वह जैसा भी घर हो, और घर है तो उस घर को ऐसा तो होना ही चाहिए कि आकाश पानी बरसाने लगे तो वह पानी सीधा घर के अन्दर दाखिल न हो सके। इन तमाम चीजों को रोज, हर रोज़ मेहनत करके, हाड-माँस खपा कर, कमाना पडता है। अपने आप कई चीज हासिल नहीं हो सकती।आसमान से कुछ नहीं टपकता।"*[139]

अनाज कमाने का काम करोगे तभी तो मिलेगा अनाज। फसल दर फसल कमाना पडता है अनाज। अनाज के साथ दाल की,किसी भी तरह के साग की भी जरूरत पडती है। घर के भीतर पहुँचा लिया गया बह अनाज तो चबाया नहीं जा सकता,उस अनाज को पकाने के लिए आग की, चुल्हे में जल रही आँच की जरूरत होती है। जंगल में जाकर वहाँ से पीठ पर या सर पर ढोते हुए लकडियाँ लानी होती हैं। घर के अन्दर दूर से पानी लाना होता है। बदन में शक्ति हो, चाहे न हो। जिन्दा लोगों के घर के अंदर ये तमाम चीजें मौजूद रहनी चाहिए। आग भी और पानी भी और अनाज भी। और कूटा-पिसा भी। जल तक इस खाल के अन्दर साँसे चल रही हैं। जिसके आगे कोई आस-औलाद न हो उसे अपने शरीर को जिन्दा रखने के लिए सब कुछ खुद ही कमाना होता है। चाहे जैसे भी कमाले। आदमी की जो जीवन मिली है तो उस जीवन की रक्षा करनी पड़ती है। ऐसा नहीं हो सकता कि घर के अंदर कुछ है नहीं तो आराम से भूखे मर जाओ। भूखा। नहीं मरना चाहिए। चाहे जैसा भी हो जिन्दगी को खींचते रहना चाहिए। तब तक

खींचते रहना चाहिए जब तक वह खुद ही खत्म न हो जाय। उस रोग -बीमारी से भी अपने भरसक लड़ते रहना चाहिए। जो नहीं लडेगा उसके बारे में कहा जायेगा उसने आत्महत्या करली। अपनी जान अपने आप गाँवा दी। आखिरी बगत पर दुनिया के कायदे के खिलाफ काम कर गया। मर जाने के बाद कहेंगे लोग ऐसा। कौन कहेगा, कि दुनिया कहदी। दुनिया का मुँह कौन रोक सकता है ? किसने रोका है आज तक।

जग्गू जो दुश्मन के पिता, एक जाना माना तोपची। अपनी जान को दाँव पर लगा कर गाँव की रक्षा करने वाला एक बहादूर तोरची। जब जगगू के घर चारों तरफ से लोग आने लगे है। लोग हैरान होकर देखने लगते थे मरे हुए बाघ को। देखने वाले तमाम लोग जगगू के साहस, बहादूर और निशाने की तारीफ करते नजर आते हैं। जग्गू ने उस खतरनाक बाघको हमेशा के लिए सुला दिया है।

" *और शिकार के बाद कमाई ? कमाई के नाम पर कहीं एक धेला नहीं। ऐसा तो कभी नहीं हुआ कि अपनी जान हथेली पर रख कर उसके आदमी ने पूरी बस्ती के लिए बेहद खतरनाक हो उठे किसी बाघ का सफाया कर दिया तो बस्ती के लोगों के आपस में मिलकर कोई चंदा इकट्टा कर दिया हो और उसे रुपयों की कोई थैली भेंट करदी हो-जग्गू सिंह, अपने वच्चों का पालन करलेना। बाघ मार दिया गया तो तोपची के हिस्से क्या आयेगा? कुछ भी नहीं। उस मरे हुए बाघ की खाल, मख और चर्बी को खुछ छँटे हुए दलाल हराम के भाव खरीद कर ले जायेंगे। उसने बाघ को मारना था,सो मार दिया। लेकिन अगर उस मुटभेड में तोपची को बाघ ने मार गिराया? तब? तब उसकी अनाथ विधवा और बच्चों का लालन-पालन करने तो कोई नहीं आयेगा? तमहारे विन लोग तो तब भई उसके अनाथ बच्चों का तमाशा देखते रह जायेंग।*"[140]

नौटियाल जी समाजिक स्थितियों के साथ-साथ उनकी आर्थिक स्थितियों का भी वर्णन किया है। उपन्यास पढ़ते हुए लगता है कि हम खुद उस गाँव के निवासी है, हम उन लोगों के बीच है। जो घटनाएं गुजर रही है हमारे सामने ही घट रही है। उपन्यास के शुरू से लेकर अंत तक अनेक उपकथाओं, लोगों का जीवन विधान हमें जानने को मिलता है। इस उपन्यास में कुछ ऐसी घटनाएँ होती है हम खुद महसूस करते ही नहीं, उस पात्र में हम अपने को रखकर देखने लगते हैं।

बाघ के हाथों गाय के मार दिये जाने के बाद लोगों को अपने भविष्य की

चिन्ताएँ सताने लगी थीं। लोग खेत के किनारे पर घास चरती शान्ति बुढिया की गाय की जैसी मौत नहीं मरना चाहते थे। वे अपने बच्चों के जीवन, उनके भविष्य के बारे में चिन्तित हो उठे थे। बाघ ने उन्हें चेता दिया था कि वह बस्ती के भीतर घुस कर भी वारदातें कर सकता है। दिन के मौके पर भी हमला कर सकता है। शान्ति बुढ़िया की भोली गाय तो चली गयी। गाँव के लोगों के दिमागों में आपस में चन्दा करके उसके बदले शान्ति बुढ़िया के आँगन में एक नयी गाय बांध देने की कोई बात नहीं उठ रही थी। ऐसी कोई बात किसी के भी दिमाग़ में नहीं उठ रही थी। उस, बे सहारा शान्ति को सहारा देने के बारे में, किसी के मन में कोई खयाल ही नहीं आया।

" *यह बात सबको मालूम थी किगाय की मौत शान्ति बुढ़िया के जीवन केलिए घातक हो उठेगी। उसे सिर्फ मानसिक आघात नहीं लगा है, सीधे-सीधे उसकी रोजी पर हमला हो गया है। गाय उसके पेट का पालन कर रही थी ।किसी घर के अन्दर जिस तरह रोटी कमाने वाले की मौत से विकट समस्या खड़ी हो जाती है शान्ति बुढिया के सामने वैसी ही विकराल समस्या खड़ी होगयी थी। लेकिन इस बात को जानते हुए भी गांव के लोगों का ध्यान उस ओर नहीं था। उनका ध्यान इस बात पर केन्द्रित हो गया था कि वह खतरनाक बाघ, जिसने गाय को गाँव के भीतर घुस कर मार दिया, उसका सफाया कैसे किया जाया।*"[141]

अपनी कामधेनु के चलेजाने से पैदा होने वाली समस्याओं से अब शान्ति बुढ़िया को खुद ही निपटना था। अकेले निपटना था। उसकी गाय की मौत के बाद की स्थिति से उभारने की बात से गाँव में किसी का कुछ भी लेना-देना नहीं था। शान्ति बुढ़िया जैसा चाहे वैसा करले। जो चाहे सो कर ले। शान्ति बुढ़िया का भविष्य शान्ति बुढ़िया का भविष्य होगा। वह गांव की चिन्ता का विषय हरगिज़ नहीं हो सकता था। हर आदमी को और हर औरत को, अपने, अपने और अपनों के जीवन को कायम रखने की और कायम रखने के साथ-साथ उसे निर्विघ्न रख सकने की चिन्ता सताने लगी थी।

लोगों को बाघ का मुकाबला करना था। बाघ को खत्म कर देना जरूरी हो गया था। बस्ती के कुल लोग मिलकर, अपनी सामूहिक ताकत के बल पर बाघ का सफाया महीं कर सकते थे। यह कोई रस्साकशी में जोर आजमाने की बात नहीं थी। एक अकेला बाघ एक तरफ एक पूरी बस्ती एक तरफ एक बाघ की शक्ति के सामने एक पूरी बस्ती अक्षम हो उठी।बड़े बड़े ताकत वर लोग। आम

आदमी को, गाँव की जवान-बहु -बेटियों को अपनी हरकतों से आतंकित कर देने वाले बस्ती के बलवान मुस्टण्डे-सुरेन्द्रसिंह, बीरसिंग और दर्शनसिंह गाँव के गरीब, बेसहारा निवासियों पर धौंस जमाने वाले, उनकी कमाई की लूट करने वाले साहुकार-चण्डी प्रसाद, देराम, चम्दनसिंह, हरीराम सिर्फ बडे-बडे सेठों, ठेके दारों, दुकानदारों, तिजारतियो, जंगलात के मालदारों को अपनी रकमें उधार देने वाला, शहर में रहने वाले बडे-बड़े हाकिमान और वकीलों का मुँह-लगा, इलाके का मान्यवर श्रीधर प्रसाद रियासत के जमाने से सरकारी जंगलों की लकड़ी काटन, तिजारत करने वाला मालदार दामोदर सिंह। गांव का पुश्तैनी सयाणा दिगम्बरसिंह।वे सभी लोग, जोग्रम वासियों को हमेशा से, टिहरि-गढ़वाल रियासत के राजाओं के जमाने सेदबा कर रखते आये थे। रोबीले ठाकूर मतवाले थोक दार।

"बाघ की एक हरकत से सब चीजें आपस में घुल -मिल गयी थी।पाखा गाँव में इस वक्त कोई बड़ा या छोटा नहीं रह गया था।कोई ऊँच या नीच नहीं दिखाई दे रहा था। सब -के -सब एक बराबरी पर खड़े हो चुके थे।कालिया को ली और ठाकुर जट्टू सिंह।बाघ ने आतंक मचा देने वालों को भी इस बात का अहसास करवा दिया था कि आतंक क्या चीज होता है और आतंक की स्थिति कैसी स्थिति होती है कि जिसे आतंकित किया जाता है उसे कैसे -कैसे कँपाने,हिला देने वाले हालात से होकर गुजरना पड़ता है।"[142]

संभवतः नौटियाल जी आज हिन्दी के एक मात्र ऐसे प्रतिष्ठित कथाकार हैं जिन्होंने पहाड को ही नहीं, पहाडी जीवन के संघर्ष को भी गहरी ललक एवं आत्मीयता के साथ देखते हुए एक बेहद उल्लेखनीय मार्मिक औपन्यासिक आख्यान बनाया है।नौटियाल जी के लेखन में पारंपरिक किस्सागोई तो है ही,दिलचस्प बात यह है कि आज हिन्दी पाठकों के बीच से तेजी से खिसकती पठनीयता की जमीन को बचाने का भी पर्याप्त साक्ष्य उपलब्द है।

घने, दुर्गम जंगलों में रहने वाले शान्त लोगों के बीच, अन्दर ही अंदर बेचैनी और असंतोश के बढ़ने और फैलते जाने की खबरें पहुँचती रहती हैं। रियासती सरकार की तरफ से वनों में चशन-चुगान पर, रिआया द्वारा वन उपज के इस्तेमाल पर लगाई जाने वाली नई कानूनी पाबंदियों की खबरें जाने कैसे हवा में उडती हुई वहां तक पहूँच जाती है और तब बहुत छोटे-छोटे गाँवों से बेचैनी फैल जाने के आविश्वसनीय, अशुभ समाचार हाकि मान के कोनों में गूंजने लगते हैं। उन्हें सुनकर उनका दिमाग झल्लाने लगता है। रियासत के दूसरे इलाकों में रहने वाले प्रजा जन को चौंकाने, हिलादेनी वाली खबरें। कभी फतेपर्वत से, कभी

बंगाण से, कभी नागयात-जौनपूर से, कभी गोडर-खाटल से कभी पंचगाई के जखोल-लिवाड़ी -फिताई से। खास खुफिया खबर यह आई है कि दांगुड़गांव, निसणी, पिंडकी और मधेरा गाँवों के निवास, जो कि चरगाहों के क्षेत्र संबन्धी अपने-अपने हकूक के लिए अर्सा कदीम से, प्रशन-दर-प्रश्न, आपस में ही लडते-भिड़ते रहते थे, वे सब भी रियासती हुकूमत के कुछ खास अहलकारों के खिलाफ एक जुट होने लगे हैं।

जेठ महीने के शुरू होते-होते यमुना घाटी की चोटियों पर बसे गांवों के निवासी अपनी भेडो को लेकर बुग्यालों में जाने की तैयारी करने लगते हैं। ऊँचे डांडो पर बर्फ पिघलने के साथ यमुना और उसकी सहायक नदियों में पानी की मात्रा बढ़नेलगती है। तब लगता है, जाडों में अलसाई धरती अंगड़ाई लेने लगी है। टिहरी रियासत में यमुना और उसकी सायक कमल नदी के बीच की घाटी में एक अजीब, अपनी ही किस्म की धरी फैली है। धान की ऐसी बहुताय में पैदावर मुल्क हिन्दुस्तान में और कहीं नहीं दिखाई दे सकती। अपने इस धान की उपज पर यहां के बशिंदे रवांल्टे गर्व करते आये हैं।

"नरेन्द्र नगर में अपवाद स्वरूप अकाध छोटे -छोटे, किसी भी गिनती में न आ सकने वाले भूभागों को छोडकर, उस चिपकदार, लालमाटी का कहीं पर एक अंश भई दिखाई नहीं दे सकता नीचे से ऊपर तक गिट्टी और छनी हुई, साफ बजरी के ढेर पर खडा, घने वनों से ढका हुआ एक पहाड़। पहाड़ी लोग हमारों वर्षों से पत्थरों के बने अपने भवनों की चिनाई लाल मिट्टी से करते आए हैं। उस मिट्टी में ऐसी चिपक होती है कि दीवारें वज्रु बन जाती हैं। फल स्तर और भीतर के फर्श की लिपाई करते समय उस मिट्टी में गोबर भई मिला लेते हैं। गोबरी का वह लेप एक मारा खान है,जहां से शहर की औरतें अपने चूल्हे-चौके में दैनिक इस्तमाल के लिए कुटले से खोद कर मिट्टी ले जाती रहती हैं। भवनों की लिपाई-पुताई भी उसी मिट्टी से की जाती है।'[143]

बदरी विशाल रियासत की राजधानी को टिहरी से हटाकर नरेन्द्रनगर लाने की कोशिश कर रहे थे। ओडाथली में बसाया जा रहा है नरेंद्रनगर और राजा ने यह हुक्म दे दिया कि *"आब से आगे ओडाथली को ओडाथली बोलनी जुर्म माना जाएगा, ऐसा हुक्म आया है। उसकी जगह अब नरेन्द्रनगर बोलना होगा। सबसे पहले ऋषिकेश से राजधानी तक मोटर सडक बनाई जाएगी उसकी खुदाई करने के लिए गाँव के हरेक मर्द को दशमी पैता (विजयादशमी के दिन पंद्रह दिनों क अपना बरा(राशन) बांधकर ऋषिकेश में हाजिर होना है। जो हाजिर नहीं हो पाएगा उस पर जुर्म ठोक दिया जाएगा।"*[144]

राजा प्रभु है। ईश्वर की तरह उस प्रभु की सेवा भी मुफ्त में करनी होती है-किसी भी तरह की मजूरी पाए बगैर। जिन्दगी में पहली बार नरेन्द्रनगर पहुँचने वाले रवांल्टों को पला सड़ा में गवर्नर के स्वागत के मौके पर, अपने बोलांदा बदशी महाराज की एक झलक भी देखने को मिली थी। अपने जीवन में पहली बार अपने राजा के दर्शन करते ही वे रवांल्टे अपनी लंबी, कष्टमय यात्रा की थकान बिसर जाते। बूढ़े लोग अपने को धन्य मान रहे थे कि उन्हें ऐसा सौभाग्य मिला कि वे आँखों से अपने महाराजा साहब का दर्शन कर सके। बुजुर्गों के अलावा नौजवान तो कुछ ज्यादा ही जोश में आगए थे। पट्टी गोडर-खाटल के कंडारी गांव का शिवसिंह, खबाटी का बालम और निसणी का देवीसिंह पट्टी गिट्टी ठकराल के किसान ग्राम का चंदन और पट्टी बनाले के कुणी ग्राम का बचनसिंह-ये सब के सब नौजवान थे। कुछ दूरी से अपने तमाम लोगों के साथ उन्होंने भी अपने महाराज के दर्शन किए और अपने जीवन को धन्य माना। हालंकि राजा ने उनकी ओर एक बार भी आँख उठाकर नहीं देखा।

रात के मौके पर रवांल्टे लाट साहब की दावत वाली जगह के पास पहुँच कर वहां के नजारे देखने को उत्सुक थे। कुछ नौजवान एक अलग जगह पर बैठ कर आपस में बात करने में व्यस्त थे।

शिवसिंह अपनी बात यों शुरू की - "*कहते हैं कि जो खा लिया और जो पहन लिया। वही अपना है। पर आज की बात यह है कि जो अपनी आंखों से देख लिया वही अपना है.*

वीरसिंह - आज तो महाराज के दर्शन कर लिए ,साक्षात बदरीनाथ को अपनी आंखों से देखलिया।

रामचन्द्र - यार सुना है, आज रात में अंग्रेज लाट साहब को जहां खाना खिलाया जाएगा वहाँ बहुत सजावट की गयी है।

चंदन - उस जगह पर जाने की भी मरजी है? हमें तो कोई उधर मुख भी नहीं करने देगा।"[145]

रवांल्टे बेहद थके हुये थे और अब वे जमीन पर लेटकर अपनी पीठें सीधी करना चाहते थे। अचानक जोरका पानी बरसने लगा। उस नगरी में निजी भवन तो नहीं थे। पानी थमने के बजाय धीरे धीरे तेज होने लगा। जरा भी कम होने का नाम नहीं ले रहा था। जाड़े का मौसम।तेज,मूसलधार बरखा। भयानक अंधकार।ऊंची नीली, ढलुवां जमीन। उस पर ...कहीं ढंग से लेटने की जग़ह भी नहीं बनाई जा सकती थी दिन के छिपने से पेशतर वे लोग मोटर सडक के एक समतल हिस्से

पर अपनी पंखिया बिछाकर वहां डेरा डालने की कोशिशें करने लगे थे।

"उस शासन को इस बात की कतई चिन्ता नहीं थी कि उसके द्वारा सैकड़ों मील दुर से बुलाये गये, थकान से चकनाचूर कुछ ग्रामीण चरवाहों को उस अलका नगरी में कहीं पीठ टिकाने के लिए ढंग की जमीन भी मयस्सर नहीं हो पा रही थी या नहीं। धरती का एक सपाट टुकड़ा। उसकी परेशानी तो बस, यह थी कि भेडों की डार कीतरह दिखाई देरहे उन रवांल्टों पर उस हालत में कहीं आते-जाते अंग्रेज मेहमानों की नजर न पड़जाए।"[141]

रामचन्द्र को जोर से पेट दर्द होने के कारण वह दर्द से कराहत रहा। *"मेरी यमुना घाटी की सैणी (समतल) फैली हुई धरती छूट गई है, बडा। इस बक्त तुम्हारी गोद ही मेरे लिए रवांई की सैणी धरती है। मुझे इस ऊबड़ -खाबड़ जमीन पर अपने प्राण गांवाने पड रहे है...."*[146]

चंदर और देवीसिंह बरसते पनी में इधर से उधर भटकने लगे थे। वे धक्कों के वश चलने लगे थे, जैसे उनकी निरीह भेड़े बाघ के अपने करीब आजाने पर बिदकने लगती है। वे किसी हाकिम या डॉक्टर की तलाश नहीं कर पाए। काफी देर तक वैसे ही भटकते रहने के बाद वे तलाश नहीं कर पाए। काफी देर तक वैसे ही भटकते रहने के बाद वे निराश होकर अपने झुंड में लौट आए। वहां रामचन्द्र मरचुका था।

निपट अंधियारे में किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि हो क्या रहा है। पानी का लगातार बरसना जारी पा। लोगों को अपना सर छिपाना तक मुश्किल हो रहा था। यमुना घाटी के बर्फीले शिखरों की सर्दी में मजे में जिन्दगी काटने वाले रवांल्टे ओडाथली में अकटने लगे थे। अपने दो-दो साथियों की मौतें हो जाने के बाद बेबस रवांल्टों को वह काली रात उनके शवों की जग्वाल करते रहने में गुजारनी पडी।

"उनके बीच के कई राजभक्त बुजुर्ग ऐसे भी थे जिनके मन में उतनी उपेक्षा, तिरस्कार और अमानवीय व्यवहार झेलने के बाद भी आशा की एक नन्ही सी किरण अब तक टिम टिमा रही थी। उन्हें यकीन था कि सुबह हो जाने के बाद कोई न कोई सरकारी मुलाजिम उनकी सुध-बुध लेने वहां जरूर जहँचेगा और उनको ढाढास बंधाएगा। पिंडकी का शेर बार-बार रट लगए था कि मारज सुन लेंगे तो पता नहीं कितने डॉक्टर भेज देंगे हमारे पास।डॉक्टरों का ढेर लग जाएंगे यहां पर।"[147]

इस तरह रवांल्टे अपना जीवन दाँव पर लगाकर भी महाराज की सेवा

करना चाहते हैं। उनके पास खाना नहीं है फिर भी राजा के लिए बिना पैसे ही काम करने केलिए मजबूर हो जाते हैं।

सरकारी अमला लाट साहब के लश्कर की सेवा करने में ही जुटा रहा। रवांल्टो की जीन्दगी और उनकी मौत से उस शासन को कोई सरोकार नहीं था। उनके और कोई देखने भी नहीं आया। गैर-सरकारी लोग उस बस्ती में थे ही नहीं और दुसरे लोग, जो उनकी तरह दूर के देहातों से बहां तलब किए गए थे, वे सब भी अपनी-अपनी जगहों पर अपनी ही समस्याओं से घिरे हुँए थे।

"उस वक्त एक पटवारी और एक सुपरवाईजर उनके बीच आए। रवांल्टे टकर की लगाकर, आशा भरी नजरों से उनको अपनी ओर आते देखने लगे थ। इससे पहले कि रवांल्टे कुछ कहने के लिए अपना मुंह खोल पाते, पटवाली सुपरवाइजर ने दीवान साहब की और से जारी हुक्म उन्हें सुना दिया - दीवान हुजुर का हुक्म यह है कि जब तक गवर्नर साहब की गाडियों नरेन्द्र नगर से वापस नहीं चली जाती तबतक तुम लोग यहां से हिलोगे नहीं। यहीं पर बैठे रहना। सड़क के आस पास मत आना।"[148]

पटवारी और सुपरवाइजर की बाते सुन कर गुस्सा आने पर भी रवांल्टे कुछ नहीं कर सकते थे उन्होंने उन लोगों से कहा कि हमारे दो आदमी रात में मर गए इन्हें ऋषिकेश ले जाने की इजाजत दीजिए, फिर भी वो लोग नहीं माने।

"लोग सन्न रह गए।दीवान साहब का हुक्म,दरबार का हुक्म हम बगैर हथकडियाँ लगाए कैद हो गए हैं। हम यहां से खिसक भी नहीं सकते। अपने मुर्दों को दाह -संस्कार करने के लिए भी नहीं ले जा सकते। यह बेहुदा बात उनमें से हर आदमी को अखरने-चुभने लगी थी, लेकिन उनके पास उस हुक्म को मान लेने के अलावा कोई दूसरा चारा नहीं था। दरबार के हुक्म की लक्ष्मण रेखा को कौन लांघ पाया है आज तक ?"[149]

कीर्ती नगर डिप्टी कलेक्टर के दफ्तर में दो चपरासी हैं,कचहरी के उठजाने के बाद वे दोनों रोज मलेथा जा धमकते हैं। नियमपूर्वक दो-तीन चार - दोस्तों को भी अपने साथ ले जाते हैं। किसी भी घर में पहुँच जाएंगे। जिस घर की तिवारी में पहुँच कर अपना चपरास का पट्टा खोल देंगे, वहां के पाहुने हो गये वे दोनों, वे दोनों भी और उनके संगी-साथी भी। उस घर में आदरपूर्वक उनको बकायदा पाहुनों जैसा सत्कार मिलना चाहिए। इज्जत का भोजन भी । वह इलाके के मशहूर संपन्न सेठ घीरसिंह भंडारी जी का घर होचाहे-निहंग गरीब आदमी नुरचू का घर। जो कोई खाना खिलाने में हील-हवेली करे या कि स्वागत-सत्कार में किसी प्रकार की कमी करे, उसके खिलाफ अगले दिन कोर्ट में एक झूठा केस पेश

कर दिया जाना निश्चित है। कोर्ट के समय तामील होते ही हाजरी, जमानत, मुचलके देने का सिलसिला फिर लंबे समय तक पेशियां और आखिर में भारी जुर्माने की सजा सुना दी जाएगी।

"इन दो चपरासियों के अलावा मलेया के निवासियों को स्थायी तौर पर उसी गाँव में रहने वाला पटवारी भी डराता-सताता रहता है। पटवारी की पूजा किए बगैर गांववाले अपने जंगल से खेती के औजार या कुटले,दरांती के बेंट तक की लकडी नहींकाट सकते। हल-तांगल या ओखली के मूसल तक के लिए किसी पेड़ की शाखें काट लेना तो बहुत दूर कीबात यों कानूनी तौर पर इस तरह की लकड़ियां लेना गांव वालों के पुश्तैन की सरकारी फेहरिस्त में शामिल है।"[150]

नए हाकिमत आकर कुछ नए संस्करण लाते हैं, इससे आम आदमी घबरा उठता है। हरिकृष्ण रतूड़ी के रवाई पहुंचने का समाचार सुनते ही आम आदमी घबरा उठता है। हरिकृष्ण रतूड़ी के रवाई पहुँचने का समाचार सुनते ही आम आदमी के अन्दर एक खुशी की लहर दौडने लगी। सब के मन खुशी से भरगए सब सोचने लगे कि हमारे घर-घर की बात जानने वाला पुराना, तजुर्बेकार हाकिम... वजीर ने बहुत शात होकर, ध्यानपूर्वक लोगों की बातें सुनी।

"जिसके पास दस भैंसे हैं उसे सिर्फ एक भैंस रखने की इजाजत होगी, यह कानून कैसे माना जा सकता है, साब ?"

"देवदार पेडों का रवन्न खत्म हो जाएगा तो हम घरों से बाहर खुले आसमान के नीचे तो नहीं रह सकते हुजूर ?"

" दरबार के जंगलों की रक्षा करना भी जरूरी हो जाता है, जजमान लोगों ! रियासत के पास जो कुछ दौलत है वह अपने जंगलों की देन है। अपने जंगलों के अलावा आमदानी का और कोई जरिया नहीं है"

जंगल की रक्षा तो हम करते हैं साब, जंगल तो हमारे माँ - बाप हैं हूजूर जंगल नहीं रहेंगे तो परजा कैसे जिएगी हुजूर ?""[151]

गाँव वालों ने अपनी बात हरिकृष्ण रतूडी के सामने रखदिया जंगल और पशु के बगैर तो गाँव का आम आदमी अपना जीवन कैसे बिता सकता है। जंगल से और पशु से दूर रहने की बात मन में आते ही उनका मन बुरी तरह से घायल हो चुका था। गाँव वालों की पूरी बात को सुनकर रतूडी ने कहा कि *"नहीं भाई, ऐसी शान्ति नहीं। इलाके में ऐसी शान्ति दिखाई देनी चाहए। जैसी यमुना जी के*

जेल में दिखाई देती है। हम सब यमुना जी के किनारे बैठे हैं। हम हल्ला मचा रहे हैं,यमुना जी तो शोर नहीं मचा रही हैं। यमुना जी को किसी ने कभी हल्ला मचाते सुना है ? तो तुम भी अब कुछ ऐसा करो कि इस उम्र में मेरे यहाँ आने की भी इज्जत रह जाए। अपने भीतर का गुस्सा पी जाओं।"[152]

रतूड़ी की मीठी -मीठी बातों ने लोगों को अपने दिलों के भीतर भरा शेष पी जाने को मजबुर करदिया। वे ठंडे पड़ने लगे। उन से कहा गया कि जब तक श्री महाराजा साहब विलायत से लौटते नहीं, रवांई के लोग कोई ढंढक नहीं करेंगे, और हुकूमत की ओर से तबतक नया वन कानुन लागू नहीं किया जाएगा। रतूडी जब जाकर सब कुछ चक्रधर को सुनाता है तो वह आग बबूला हो उठता है। गाँव वालों से तो चक्रधर का कोई मतलब ही नहीं है, उसको तो जंगल पर हक जमाना है, गांव वालों को जंगल से अलग करना है पर जो जंगल के बगैर सपने भी नहीं देख सकने वाले गांव वालों को जंगल से अलग कैसे कर सकते हैं। जंगल ही तो गाँव वालों को अन्न देने वाली जननी।

भरदार में होने वाले यज्ञ में शामिल होने के लिए और खासकर नौटियाल जी उस क्षेत्र से जुडे रहने के कारण उन्होंने इस यात्रा में पहाडों पर जीवन बिता रहे लोगों के बारे में हमें बताया है। बहां के लोगों की आर्थिक स्थिति,जीवन विधान हमें उनके उपन्यासों में देखने को मिलता है। कुल मिलाकर सब की एक ही मांग है कि उनको चलने के लिए मार्ग चाहिए।

धारी गांव में आगे-पीछे, ऊपर-नीचे बने मकानों में बसी आबादी का क्षेत्र खतम हो गया। मीलों तक फैली हुई इस गाँव की समतल धरती को सिंचाई करने के लिए पानी की व्यवस्था नहीं थी। वहाँ का नाला एक दम सूख गया था। बारिश न होने के कारण उस नाले में एक बूंद पानी तक नहीं। इक्कीसवी सदी में छलांग मारने का कोशिशें कर रहे हमारे राजनेताओं - शासकों की जमात को कभी इस तरह की राहों की ओर ध्यान नहीं जा सकता। वे बड़े काम करें कि छोटे -छोटे महत्वहीन नालों -खालों में अपने को उलझा दें ? बडे पुल बनाए कि छोटी पुलिया बनाने में देश-प्रदेश का पैस खर्च कर दें।

नौटियल जी पुराने भवन पहुँचे। वह भवन बहुत पुराना था। उस भवन के बाहर पेड क नीचे मास्टर जी बच्चों को पढ़ा रहे थे। नौटियाल जी उस भवन के बारे में लिखते हैं - *"एक कमरे के खंडहर के भीतर टीन की चादरें संभाल कर*

रखी गई थी। निर्जन खंडहर से चोरी करने वाला कोई महावीर तस्कर अभी उस बस्ती में पैदा नहीं हुआ था। चादरों को उस छत से पवन कब उडा ले गया होगा, वे कितनी कितनी दूर तक जा पहूँची होंगी और किन परेशानियों का सामना कर गांव वाले उन्हें जंगल के अंदर से उठा-उठा कर इस खंडहर में लौटा लाए होंगे- यह तो किसी शोध-प्रबंध के लिए अच्छा विषय प्रतीत हुआ।"[153]

गाँव वालों की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं है कि वे नया भवन बनाये। शिक्षा विभाग मात्र नौ हजार देने को तैयार या मरम्मत करने के लिए। गांव वाले जानते थे कि मरम्मत करने के लिए वह पैसा काफी नहीं होगा। बच्चों की पढ़ाई के लिए भी शिक्षा विभाग मदद नहीं कर रहा था। नौटियाल जी को रास्ते में रतूडी जी मिल गाए। वे अपने बेटे को नौकरी में लगाने के लिए कहते। वहाँ बहुत सारे लोगों को अपने नवजवान बेटों की चिंता है। पढ़े लिखे लडके है, कुछ ढंग का काम नहीं मिलता नौटियाल जी लिखते है - *"मैं भी ऊपर की ओर बढ़ा । कुछ देर तक मेरे दिमाग में उन बेकार नव युवकों और नवयुवतियों के चेहरे घूमते रहे। जिन की नजरों में कहीं काम मिलने की चाह रहती है। उनके माता - पिता के आत्मीयता भरे स्वर में उलाहने - विधायक जी !आप इतना छोटा सा काम भी नहीं करवा सकते ? सिर्फ एक बेटे की नौकरी लगानी है।"*[154]

बहुत सारे लोग ऐसा भी करते हैं कि नौटियाल जी विधायक है विधायक जी के पीछे जाने से कही न कही लगा देंगे, जा तू उनके पीछे जा। अपने नवजवान युवकों को नौटियाल जी के पीछे भेज देते हैं।

एक-एक कर हजारों युवाजवान बेकार है। हर पिता के सामने एक दो बेटे-बेटियों की समस्या होती है। हमें लगता है पूंजीवाद के कायम रहते क्या बेकारी को दूर किया जा सकता है।

चलते चलते नौटियाल जी सेरा से धारी तक बनाई जा रही नहर के पास पहुँचे। सालों से उसका काम चलता ही रहा। नहरो के निर्माण के लिए मंजूर हुआ पैसा भी खर्च हो गया। निर्माण विभाग के द्वरा मीलों लंबी लाइनों के निर्माण के लिए कुछ-कुछ दूरी के छोटे -छोटे जॉब, उनके टेंडर के हिसाब से, मंजूर किए जाते हैं। कुछ ठेकेदारों ने अपने -अपने जॉबों पर कटाई का काम किया होगा। कुछ ने कई कारणों से काम शुरू ही नहीं किया। कुछ आधा काम करने के बाद उसका भुगतान न होने पर काम को अध - बीच में छोड कर चले गाए। जहाँ धारी नहर खोदी जा रही थी, एक भी दरख्त मौजूद नहीं। कोई झाडी तक नज़र नहीं

आती। तेजसिंह जो एक जीवित शरीद है, सन् 1948 ई. की जनवरी की 11 तारीख को टिहरी की राज शाही का तख्ता उखाडने के लिए अलकनंदा के तट पर कीर्तिनगर में जो लोग जमा हुए थे, उनमें तेजसिंह भी था। तेजसिंह को गाली लगी। उस समय के स्थितियों को याद करते तेजसिंह के आंखों में आँसू आगए अपनों को खोया था उसने। उसके सामने ही कितनों को गोली लगी थी।

तेजसिंह कहता है " *मेरे सात बेटे और दो बेटियाँ हैं। बेटियों का विवाह कर लिया है। बेटों में कोई नौकरी पर नहीं है। आठ-आठ, दस-दस दर्जे तक पढ़े है। सबसे छोटा बेटा तेरह -चौदह साल का है। वह सौंरा स्कूल में पढ़ रहा है।*"[155]

तेजसिंह फूट फूट कर रोने लगा। आर्थिक स्थिति ने उसे पस्त कर दिया है। स्वतंत्रता सेनानियों के नाम पर शहीदों ने क्या-क्या फायदे नहीं उठाए ? लेकिन तेजसिंह जैसा का तैसा है। आजाद हिन्दुस्तान पर शासन कर रहे राजनेताओं ने उसके एक बेटे को भी नौकरी पर लगाना तक उचित नहीं समझा।

नौटियाल जी लिखते हैं "*तेजसिंह, गोविन्दसिंह, धूमसिंह और छीलू धनाई ने जो करना था, वह उन्होंने कर दिया, दादा दौलतराम एक आंदोलन के अंग थे। देवीदत्त तिवाडी हमें छोड़कर जा चुके है। उन्होंने अपना जीवन कठिनतम परिस्थितियों में गुजारा। उनके परिवार को भी कोई पेंशन नहीं मिलती यह सब लोग आजीवन टिहरी की आजादी के लिए संघर्ष करने की कीमत चकाते रहे। मैने इनमें से कइयों को तिल -तिल कर मिटते देखा है। शाहदे लोग, जिनका आजादी के आंदोलन से दूर -दूर का रिश्ता नहीं था, हमारी नजरों के सामनें स्वतंत्रता सेनानी बने घूमते हैं। असली सेनानी अभी भी सम्मान पाने से वंचित हैं।*"[156]

जो शहीद यों आजादी के लिए अपने प्राण कुर्बान कर बैठे,उनको सरकार की तरफ से आर्थिक सहायता मिली नहीं।गाँव के प्रधान जोशी के दुकान में आग लगी थी,करीब पच्चीस हजार तक नुकसान हुआ।सरकार की तरफ से उनको कोई आर्थिक सहायता नहीं मिली। क़र्ज लाकर उन्होंने दूकान फिर से शुरू कर दिया है।सब से कह कर वे थक चुके थे आखिर अपनी व्यथा की कथा नौटियाल जी को सुनाए थे। गांव के लोगों को एक तरह अपनी घर की आर्थिक स्थिति सताति तो दूसरी तरफ वे ऐसी जगह रह रहे हैं जहाँ से ठीक तरह रास्ता ही नहीं है, मोटर मार्ग तो दूर की बात है।कितनी बार सरकारी अफसरों से कहा लेकिन उन लोंगों को सहायता मिली नहीं। जोशी कहते है " *मोटर सड़क नहीं, तो हमें पैदल चलने के लिए तो रास्ता बना दें। आपने देखा है, सेरा से यहां तक*

आने के लिए कोई ढंग की बटुया भी नहीं है। कम से कम एक रास्ता ऐसा तो हो जिस पर खच्चर चल सकें। सेरा से यहां तक कोई अपना खच्चार लाने को भी तैयार नहीं होता खुशामदें खाकर किसी तरह तैयार होता भी है तो मुहमांगे दाम मांगने लगता है। आपने दूसरी राह भी देखी हैं। सौंराखाल से भी स्यांरी आये हैं। सौंराखाल से भी यहां आने के लिए कोई ढंग का रास्ता नहीं है। हम बीच में फंसे हैं। ऊपर सौंराखाल नहीं जा सकते, नीचे सेरा नहीं जा सकते।"[157]

एक जोशी ही नहीं पूरा गांव बडीदिक्कत में है। छोटे काम के लिए भी नीचे आना पड़ता तो रास्ता ठीक नहीं होता। कांटों में फसकर आगे जाना पडता है।कही पर पैर फिसल जाए तो किसी का कोई ठिकाना नहीं।

नौटियाल जी लिखते हैं "*रास्ते में धारा पड़ती है। थारे पर बर्तनों का अंबर लगा था। स्यांरी वासियों के कथानानुसार यह पानी भी भीम ने उपजाया था।काली नदी की जलधारा है। काली कहीं दूर, केदार घाटी में है। मंदाकिनी की सहायक। गाँव में एक मात्र यही एक पानी है, जो पूरे गाँव की आशा पूर्ती कराता है। यों एक पाइप लाइन भी बिछाई गई है पर उससे ग्रामवासियों को सुख कम मिला। वह जिस क्षेत्र से लाई गई, वहां मूल पर ही विवाद हो गया। गाँव में किसी ने मुझे ताना मारते हुए कहा भी था कि यह पानी आप के गुरूजी (पंडित वाचस्पती जी पंत) के घर से इधर नहीं आता। गाँव वाले पांडवों का पानी पीकर काम चला रहे थे।*"[158]

गाँव वालों को पीने के पानी के लिए ही इतना तरसना पड़ रहा तो खेती बाडी दूर की बात है। यहाँ धान की फसलें उपजा नहीं सकते। कोई दूसरा फसल उपजाना है तो सुअरों की टोली से डरना पड़ता है। सुअरों की टोली आकर खेत को ऐसा रौंद के चला जाता। उस जगह में कुछ बचता भी नहीं। पूरा श्रम पानी में फेरना पडता था। पानी के लिए कई मील दूर तक जाना पडता था। सुबह होते ही औरतें गागरें और बंठे लेकर निकलती थी। कुछ धाराएं ऐसी होती थी गर्मियों में पानी नहीं निकलता। नलें भी सूख जाते थे इकी वजह से उनको पानी के लिए और भी दूर जाना पड़ता था। गाँव में पानी लाने की कोशिश लगातार चलती रहती,लेकिन कोशिश सिर्फ कोशिश बन के ही रह जाती। कभी अमल नहीं होता। अगर काम शुरू भी हो जाए उसमें अनेक बाधाएं उत्पन्न होती है।इन सब चीजों से गांव वालें तंग आ चुके हैं, वे जितना भी दूर हो, जाकर पानी ले आते। आशा तो रहती थी कि मार्ग बनेगा और पानी भी मिलेग। कलिया सौड़ के दूकान में नौटियाल जी चाय पी रहे थे, उनको लगा कि चाय में मीठापन थोडा ज्यादा ही है

उन्होंने कुशाल सिंह जो दूकान का मालिक था उससे पूछा कि पानी मिलेगा क्या, कुशाल सिंह जवाब में कहाता है कि पढो क्या लिखा है। वहाँ लिखा है *"यहां पर पानी दस पैसे लीटर और दूध पर्याप्त मात्रा में उपलब्द है।"*[159]

कलिया सौड के लोगों को भी पानी के लिए करीब दो किलो मीटर दूर जाना पड़ता था।गांव वासियों को हर दिन इतना दूर जाकर पानी ले आना बहुत मुश्किल हो रहा है। पानी के लिए सारे मंत्री, राजनेता, ऑफिसर वादा कर जाते हैं। पर योजना बनती नजर नहीं आती।

पानी के बारे में अपने साथी से जब नौटियाल जी विस्तार रूप से बात करते जा रहे थे, उनके पास से गुजर रही कुछ माहिलाए नौटियाल जी के बाते,ध्यान से सुनने लगे थे,उनमें से एक माहिला ने कहा *"यह धरती कभी नहीं बदलेगी। न यहां कभी पानी आएगा, न हमारी भूख मिटेगी।"*[160]

उन महिलाओं की व्यथा ठीक ही तो है। पानी आने की योजनाएं बनायी जाती, वादे किए जाते लेकिन वे कार्य रूप नहीं ले सकते। उससे पहले ही कुछ न कुछ झगडा होता। बात बीच में ही रूक जाती। इसलिए गाँव वालों को सरकारी आफसरों पर बिलकुल भरोसा नहीं। पानी की समस्या,शिक्षा की समस्या,नौकरी की समस्या,मार्ग की समस्या,हर गाँव में एक जैसी ही समस्याएं हैं। यवा लोगों को करने के लिए काम नहीं है। बच्चों के लिए स्कूल ठीक से बना नहीं उनको पेड़ों के नीचे बैठ कर पढ़ाई करनी पड़ती है। जीवन तो हर हाल में जीना ही पड़ता है। लेकिन गाँव वालों को इन मौलिक चीजों की सहायता की जाए तो वे चैन से जीवन बिता सकते हैं।

4.4. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में राजनीतिक परिस्थितियाँ

आज के राजनीतिक परिदृश्य की सबसे बडी विसंगति राजनीतिक व्यवस्था का भ्रष्ट होना है। संसद से सडक तक प्रत्येक स्तर पर पग-पग पर भ्रष्ट व्यवस्था दिखाई पडती है। पहले भारत में ऐसे नेता होते थे जो जनता और देश के हित के लिए सोचते थे, आवाज उठाते थे। लेकिन आज समय इतना बदल गया है कि इस गांधी के देश में ही ये राज नेता गाँधी के नाम पर उन्हीं के स्वप्नों और आदर्शों की खुल्लम खल्ला हत्या कर रहे हैं।

आज के राजनेता लोक सेवा से अधिक अपने लिए चुनाव का जुगाड

करते,वोट और कुर्सी हथियने में ही लगे रहते हैं। चुनाव में साम, दाम दण्ड, भेद जाति-पाँति सभी अस्त्रों का प्रयोग कर वोट प्राप्त करना ही उनका मुख्य काम बन गया है। चुनाब जीतने के बाद कोई कुर्सी, विशेषतः मंत्री पद हथियाना, फिर सत्ता के केन्द्र में बने रहने के लिए विविध रूप में प्रयत्नशील रहना आदि आज-कल के राजनीतिज्ञों के जाने -पहचाने पैंतरे बन गए हैं। ये राजनेता, मंत्री आदि जन सेवा के नाम पर जो लोलुपता, स्वार्थपरता,जनता को दोनों हाथों लूटने आदि का आचरण कर राजनीति व्यवस्था को कलंकित कर रहे हैं।

जन-प्रतिनिधि, जनता के सेवक कहे जाने वाले ये राजनीतिज्ञ आज जनता की पहुँच से बहुत दूर जा चुके हैं। इन्होंने अपनी चोरों ओर ऐसी दीवार खडी कर दी है कि इन तक पहुँचा नहीं जा सकता, अपनी फरियाद सुनाने की बात तो बहुत दूर की है। जो जितना बड़ा प्रतिनिधि होता है वह जनता से उतना ही कटा हुआ रहता है। संसद में सदस्य बन जाने पर नेता। घोषणा तो यही करता है कि आम आदमी से उसका संबंध और ज्यादा गहरा हो गया है। किन्तु वास्तविकता यह है कि हर नेता ऊँचाई पर पहुँच कर नीचे नहीं देखता। वह सिर्फ अपने स्वार्थ के बारे में ही सोचता है,साधारण जनता के दुःख दर्द के बारे में ही सोचता है,साधारण जनता के दुःख दर्द के बारे में सोचने के लिए उसके पास वक्त होता ही नहीं।लेकिन इस क्षेत्र में ऐसे भी लोग हैं जो आम जनता को न्याय दिलाना चाहते है, लेकिन सत्ता में आने के बाद यदि कोई विधायक या सांसद सत्य का पक्ष लेकर सच्ची बात कहने का दुस्साहस करता है तो वह कुर्सी या पद द्वारा खरीद लिया जाता है।अपनी सत्ता का अस्तित्व बनाए रखने के लिए राजनेता विपक्ष से ही नहीं अपने दल के असंतुष्ट नेताओं से भी त्रस्त रहते हैं और उससे बचने का उपाय करते रहते हैं।किन्तु आश्चर्य की बात यह है कि जनता इस भ्राष्टाचारी राजनीतिज्ञों के बारे में जानते हुए भी चुनाव में इन्हीं को बार-बार जिता देती है।

इन सब भ्रष्टाचारों का सटीक चित्रण आज की कहानियों में प्राप्त होता है। इस भ्रष्ट राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न रूपों को नौटियाल जी ने अपने उपन्यासों में पूर्ण सच्चाई के साथ चित्रित किया है, और तो और जन सेवा की आड़ में राजनेता किस प्रकार गुलछर्रे उड़ाते हैं इसका चित्रण नौटियाल जी के उपन्यासों में हमें देखने को मिलता है।

समाज को प्रभावित करने वाली स्थितियों में राजनीतिक स्थितियाँ प्रधान

भूमिका निभाती हैं। सत्ता के लिए नेता लोग या कूट नीतियाँ अपना कर सत्ता हासिल कर लेते हैं। मुश्किलों का सामना आम जनता को करना पडता है।राज बदलेगा, या सत्ता बदलेगी, लेकिन आम इनसान की जिंदगी में कुछ बदलाव नहीं आएगा। सत्ता बनने तक आम जनता का इस्तेमाल किया जाता है। उनका शासन शुरू होते ही,या सत्ता हासिल करते ही जनता की कोई परवाह नहीं करता।

मुगल बादशाह शाहजहाँ श्रीनगर पर भी अपना हक कायम रखने के लिए नजावत खाँ को फौजीदार बनाकर श्रीनगर पर हमले के लिए भेजा था। इस बात का पता लगने पर श्रीनगर की रानी घबरा गई। वह चाहती थी की दुश्मनों के कदम पवित्र धरती पर न गिरे। रानी ने अपने दूत को भेजा था नजावतखाँ से अपनी बात कहने के लिए। घुरक्या कठैत जो कर्णावती का दूत था उसने रानी की ओर से तीन बातें कहीं। *"पहली- श्रीनगर मुल्क अपने को मुगल साम्रज्य के अधीन कबूल कर रहा है। हिंदोस्तान में मिलने को तैयार है।*
दूसरी- श्रीनगर की हुकूमत की शहंशाह को दस लाख रुपया नजराना पेश करने की मंशा है।
तीसरी- श्रीनगर को नजराने की रकम चुकाने के लिए दो हफ्ते की मोहलत दी जाय और मुगल सेना को गढ़वाल से बाहर हटा लेने की मेहरबानी फरमाई गई।"[161]

नजावतखाँ किसी सरदार की बात नहीं सुनी। उसने रानी की बातें मानलिया। उसने इस बात का मना कर दिया कि शाही फौज वापस चले। नजावतखाँ चाहता है कि फौजी रकम लेकर ही वहाँ से आगरा वापस चलेगी। नजराना लिए बिना जाना शाही फौज के खिलाफ होगा। घुरक्या कठैत तो यही चाहता था। फौज को तो रोकना ही था, घुरख्या कठैत जैसा सोचा वैसे ही हुआ। नजावतखाँ को यह समझ में नहीं आ रहा था कि घुरक्या कठैत इतना खुश क्यों जा रहा था। नजावतखाँ ने घुरक्या कठैत से एक सवाल पूछा था कि उन लोगों को पत्थरों की लुढ़कने की आवाज सुनाई देती है। घुरक्या कठैत जवाब में कहा कि कच्चे, रेतीले पहाड़ है, मामूली हवा चलने पर भी गिर जाते हैं। नजावतखाँ उसकी बातों पर बिश्वास कर लिया। यह सवाल नजावतखाँ किसी से पूछा नहीं ता। उसकी जानकारी लेना जरूरी भी नहीं समझा। अगर पत्थरों की लुढ़कने के बारे में जानकारी लेते तो कुछ और होता खा। नजावतखाँ को पूरा यकीन था कि श्रीनगर पर अब मुगल का हक रहेगा। नजावतखाँ आगरा वापस जाना चाहता था।

" नजावतखाँ से यह कहने की किसी की हिम्मत नहीं हुई कि वह अपना आगरा जाने का जल्दबाजी में तैयार किया गया कार्यक्रम स्थगित करदे। पर फौज में बगावत के कैसे हालात पैदा होने लगे।लोगों का अंदाज ता कि यह भी हो सकता है कि रानी की यह भी कोयी चाल हो और वह हमें रास्ते में तंग-परेशान करने की फिराक में हो तो,ताकि बगैर लड़ाई किए हमारी फौजों की लड़ने की ताकत खत्म की जा सके। ऐसे मौके पर नजावतखाँ का मौके से गायब होना बेहद नुकसान पहुँचा सकता है।लोगों को अपने फौजीदार की अक्ल पर गुस्सा आने लगा।"[162]

कर्णावती की संधि प्रस्ताव की सूचना बादशाह को भेजी गई थी। उसमें यह भी लिख डाला कि शहंशाह को माकूल जँचे तो श्रीनगर के नाबालिग महाराजा के एवज में उसकी माँ रानी कर्णावती को हुकूमत चलाने का हुक्म जारी कर दिया जाए,और उन लोगों को राजमहल में रहने की इजाजत और सहूलियतें भी देदी जाएँ।घुड़सवार हरकारे खत लेकर निकला। रास्ते में उन पर पत्थर बरसे और एक सिपाही की मृत्यू हो गई। बाकी सिपाही आगरा निकल गए। इस बात का पता चलने पर भी नजावतखां सतर्क नहीं हुआ था,वह सोचने लगा कि हवा की वजह से पत्थर गिरने लगे।इस मामले में बादशाह को भी खबर नहीं दी थी।

घुरक्या कठैत रानी से मिलाया। वह सारी बातें रानी को बताई - *" दिन -दिन भर धुल उड़ती रहती है। नजावतखाँ घुरक्या कठैत से कहा था। कर्णावती वह बातसुनी ते वह चौंक गई। उसने आदेश जारी कर दिया था कि पत्थर रात में भी कभी-कभी लुढ़कते रहने चाहिए ताकि किसी को कोई सुबहा न हो पाए। तब से उन पीछे के पहाडों पर, सलाण के पहाड़ों पर, रत-दिन पत्थरों के लुढ़कते रहने का शोर सुनाई देने लगा था।"*[163]

देवप्रयाग में अलकनंदा से मिलने के बाद भागीरथी गंगा बन जाती है और बेहद शान्त हो जाती है। कर्णावीती को अलकनंदा बेहद प्रिय थी। उसने अपनी नदी का स्वाभाव आत्मसात कर लिया था। वह कम बोली थी। शान्त और गंभीर। अलकनंदा के जल की तरह उसके दिल की गहराई पहचान लेना कठिन था।

जैसा रानी ने सोचा वैसा ही हुआ। शाही फौजी चौदह दिनों तक मन में युध्द की बात आने नहीं दिए थे। वे लोग यही सोच रहे थे कि रानी रकम पेश करेगी तो आगरा की तरफ प्रस्तान करेंगे। लेकिन उस फौजी को भरपेठ खाना नहीं मिल रहा था। उनका खाने का रसद खतम हो चुका था। सिपाही लोग भूख

से तडपने लगे। धुरक्या कठैत नजावत खाँ के पास जाकर और पंद्रह दिन की मोहलत के लिए नजावतखाँ से हाँ कहलवाया।

हाकिमान की मौजूदगी में महारानी ने समर्थ गुरू राम दास को पूरे हालात की जानकारी दी। समर्थ गुरू रामदास छत्रपति शिवाजी के गुरू ते।उनसे विचार-विमर्श करने के बाद उनकी मौजूदगी में रानी ने अपने हाकिमन को आवश्यक निर्देश जारी किया -

"पहला- शाही फौज के लोग गाँवों में रसद खरीदने पहुँचे तो उनके साथ अच्छा बर्ताव किया जाए। वाजिब दाम लेकर उन्हें खाद्य सामाग्री दे दी जाए।

दूसरा-खाद्य सामाग्री लेकर जो सिपाही फौजीपड़ाव की ओर चलें बस्ती से बाहर जंगलों मे पहुँचने पर उन पर हमला किया जाय। रसद लूट ली जाए और घोड़े छीन लिए जाए।

तीसरा- हंवल नदियों के संगमों और देव प्रयाग के बीच भेलों में शाही फौज को आगे-पीछे आने-जाने से रोकने के लिए उन पहाड़ों की चोटियों पर पत्थर जमा करने की जिम्मेदारियाँ अलग-अलग गाँवों के किसानों को सौंपी जाएँ।"[164]

रानी के कहे मुताबिक नजावतखाँ के सिपाहियों को रसद खरीदने और नदी पार करने में गाँव वालें और रानी के सिपाही नजावतखाँ के सिपाहियों की सहायता की। फौजी को लगा कि रानी ने सचमुच शहंशाह की मातहती में रहना कबुल कर लिया है। फौजी को श्रीनगर का रास्ता ठीक-ठाक पता नहीं था।गढ़वाली लोग उनको रास्ता भी दिखा दिया। फौजी लोग खुश थे।वे लोग जंगल में खाना बनाकर खाया। इतने में उनके ऊपर मोटे-मोटे पत्थर बरसने लगे थे। सब लोग इधर-उधर हो गए। उन लोगों से कहा गया कि अपने घोडे और सामान छोड़ कर चलेजाए।हथियार अपने साथ लेकर जाए। उपन्यास का एक पात्र सरदार वलीखाँ इस घटना के बारे में बताता है -*"पत्थर गिरने लगे हुजूर। भारी-भरकम पत्थर।वे पत्थर खुद ही नीचे नहीं लुढ़क रहे थे उन्हें ऊपर से लुढ़काया जा रहा था। पत्थरों की मिकदार को देखकर लग रहा था कि वे ताजा-ताजा उखाड़ कर नीचे नहीं गिराया जा रहे हैं, वहाँ पत्थरों का जखीरा है। पहले से जमा न किए जाएँ तो इतने सारे पत्थर एक साथ नीचे नहीं लुढ़क सकते। जो लोग आगे चल रहे थे वे अपनी जान बचाने के लिए पीछे की तरफ मुड़े। हमारे पीचे की तरफ भी पत्थर लुढ़काए जा रहे थे। हम न आगे जा सकते थे न पीछे जा सकते थे। हमारा काफिला पूरी तरह घिर गया था। घोडों क बिदकने से भी हमारे कई लोगों को चोटें आने लगी थी। रास्ता सँकरा या और वहाँ पर घाटी*

और भी सँकरी थी। हमारे दाहिने हाथ की तरफ जो पहाड़ था वह एक दम खड़ा पहाड़ था।"[165]

शाही फौज को अलग करने में रानी कामयाब हो गई। रानी को पता था कि पंद्रह दिनों तक भूखे रहे सिपाही के दिमाग में युध्द करने की कामना नहीं रहेगी अगर वह युध्द करने के लिए आने पर जियादा देर युध्द नही कर सकता। शारीरक तौर पर तो कर्णावती के सिपाही बादशाह की फौज पर वार किया। अब वे लोग दिमागी तौर पर भी उनको परास्त करना चाहते थे। पहले से ही बुने हुए जाल में फौज को फसाना चाहते थे। रानी के कहने पर कुछ सिपाही श्रीनगर के सिक्के लेकर नजावतखां के पास पहुंचे और सिक्कों की गिनती के लिए कुछ पौजी लोग भी गिनौती का हिस्सा लेकहे थे। बाकी सिपाही थोडे दूर खडे होकर इनलोगों को ताक रहे थे। बाकी सिपाही थोडी दूर में खडी होकर इनलोगों को ताक रहे ते। गणना करते हुए सिपाही फौजी सिपाहियों से ऐसे बात करने लगे जिन बातों से उनकी भूख और भी बढ़ने लगी, अपने परिवार की याद आने लगी। फौजियों में किसी को भी युध्द करने का मन नहीं कर रहा था, व लोग बस, यही सोच रहे थे कि जितनी जम्दी हो सके सिक्कों को लेकर वे आगरा पहुँच जाए।

रानी के गणक बहुत धीरे से एक-एक सिक्के की गिनती कर रहे थे। सिपाही लोग अनमने भाव से वहां बैठे थे -"*जमीन पर बैठ तकर चाँदी को रूपयों की खन-खन की बोली सुन-सुनकर वे बेचैन होते जा रहे थे। उनकी बेचैनी की ऐसी स्थिति थी कि वे लड़ाई लड़कर अपनी जिंदगी या उसके ठहराव से निजात पाना चाहते थे या ऐसे मौके की तलाश में थे कि गड़वाली लोग वहाँ से हटें तो वे फिर से जमीन पर अपनी पीठ ठीक कर सकें। उनकी शरीर के अंदर बैठे रहने की ताकत बाकी नहीं थी। वे उस वक्त अपनी शर्म को छुपाने के लिए ,एक फौज के रुप में अपनी सामूहिक शर्म को छिपाने के लिए बेहद मजबूरी में, बहुत ही अनमने भाव से जमीन पर बैठे हुए थे। दुश्मन के सामने पस्तहिम्मत होकर एक पूरी पौज जमीन पर लोटने लगे,इस से बुरी बात और क्या हो सकती थी। "*[166]

इस बार भी रानी ने वैसे ही किया जैसे हर बार फौजी सिपाहियों के साथ होता था। सिक्कों के साथ जा रहे सिपाहियों पर पत्थर बरसने लगे। आखिर रानी जीत गई। अपने कार्य में कामयाबी हासिल की। बादशाह को संदेश मिला कि उनकी फौज हार गई। परास्त करने वाली रानी औरत थी। अंग्रेज ने मुगल भारत पर अपना अधिकार कर लिया था। वह ललचाई नज़रों से हिमालय के उस हिस्से

को ताकने लगा था जि, पर कभी मुगलों की सत्ता कायम नहीं हो पाई थी।जब नेपालियों ने कुमायूँ की पहाडियों पर काबिज राजा को परास्त कर उस पर अपना अधिकार जमा लिया तो अंग्रेज बेहद खुश हुए। इस घटना के तेरह साल बाद उसने गोरखा फौजों को कुमायूँ के रास्ते गढ़वाल की ओर बढ़ते देखा। उसने गढ़वाल के राजा को युध्द में मारे जाते देखा और देहरादून के मैदानी बाग तक। आंग्रेजी भारत के निकटतम पड़ोस सहारनपुर के पास तक गोरखाली शासन कायम होते देखा।

"उस दौरान जब भूकंप की भयावाह मार से त्रस्त गढ़वाली, गोरखा फौजों का मुकाबला करने में असमर्थ हो रहे थे,पड़ोस में बैठा अंग्रेज चुप ता। वह किसी की तरफ नहीं था, न कुमाँउनियों की तरफ, न नेपालियों की तरफ, न गढ़वालियों की तरफ।वह एक दम तटस्त था। गढ़वाल और कुमायूँ पर काबिज नेपनली से उसने हाथ मिला लिया, अंग्रेज ने गोरखा सिपाहियों की बहादुरी की तारिफ की गुड़, वेरी गुड़ टुम बौट अच्छा लड़ता।"[167]

कई साल बाद गोरखों पर गढ़वाली हमला बोलदिया। अंग्रेज को पता चला कि गढ़वाली जीतने वाले हैं तो उसको अब गढ़वालियों का साथ देना है। गढ़वाली उसका एहसान को नहीं भूलेंगे। अंग्रेज को अलकनंदा नही के पूरख का हिस्सा, गंगा के पूरब का हिस्सा और मुनी-की रेती के आगे ऋषिकेश सहित समूची दूर घाटी और हरिद्वार आदि के क्षेत्र दे दिए जाएँगे। महाराज गढ़वाल को बाकी बचा गढ़वाल दिया गया और उसके राज्य का नाम बदलकर *टिहरी-गढवाल रियासत* नाम रखा गया।

अंग्रेज अपनी कूट राजनीति के बल पर अधिकार कायम करलिये थे। हर प्रदेश को अलग-अलग टुकडों में बाँटकर उसका शासन करते रहे। अधिक भाग अपने पास रखते थे, बाकी थोडा राजाओं को देकर उससे ज्यादा पैसा वसूली करते थे। अंग्रेज चाहते थे और हमेशा उसकी कोशिश रहती थी कि अलग-अलग लोग आपस में भिडें, अंग्रेजों से न लड़ें। वे गढ़वाल में भी ऐसा ही गणित लगा रहे थे। एक बार गढ़वाल की असली ताकत-गढ़वाली राजा को हराया जा सके, चाहे नेपाली ही हरादे,तो बाद में विदेशी आक्रांता गोरखों से गढ़भूमि को मुक्त कराने के लिए जो भी शक्ति जागृत होगी उसकी पीठ पर हाथ रखकर समूचे गढवाल पर कंपनी बहादुर काराज स्थापित किया जा सकता है। अंग्रज लोग भविष्य की ऐसी कल्पनाएँ कर रहे थे।

"जीतने वाले शासकों ने गढ़वाल के कमीजों सयाणों को कहाकि सिर्फ राजा

बदला है और राजधानी बदली है और कुछ नहीं बदला कि वे प्रजा सेकर बसूल करते रहें। उसमें से सयाणाचारी की अपनी चुंगी काटते रहें। राजकोष श्रीनगर में जमा किए जाने वाले राज कर की धनराशि कांतिपुर(काठमांडू)भेजा करें। जिस तरह से महाराज गढ़वाल की सेवा करते आए है ठीक उसी तरह महाराजा नेपाल की सेवा करते रहें। जो सेवा करेगा उस का कुछ नहीं बिगडेगा। सयाणे अपने - अपने गाँवों पर शासन चलाएँ। किसानों को दबाकर रखें जैसा कि वे सदियों से उन्हें दबाकर रखते आए हैं।"[168]

इस तरह अंग्रेज हमेशा जीतने वाले और बलवान राजा पर नज़र रखते थे, उसकी मदद करते और अपनी सत्ता को कायम रखते थे। कभी गढ़वाल का साथ कभी गोरखों का साथ। उनको न किसी से लगाव होता था। सिर्फ सत्ता के लिए, रिश्ते रखे थे। अधिकार हासिल करने अपने राजसत्ता कायम रखने के लिए राजा कितना क्रूर राजनीतिक चाल चलते काफू चौहान जैसे भड़ को धोखे से किस तरह परास्त करते हैं, इसकी जानकारी के लिए हमको अजयसिंह और काफू चौहान के बारे में जानना जरूरी है। इन राजाओं के पीछे अंग्रेजों का हाथ तो था ही। काफू चौहान एक भड़ था। अंग्रेजों को मालूम था मध्य हिमालय में फौले एक सौ चार - गढ़ों के भड़ों को परास्त कर, उनकी सार्वभौमिकता को विलीन कर किस तरह गढ़वाल का गठन किया गया था। सारे भड़ो ने आसानी से हथियार नहीं डाले थे। उन्हें वश में करने के लिए षड्यंत्रों का, छल कपट का सहारा लेना पड़ा।

काफू चौहान जैसे भड़ के सामने खडे होने की हिम्मत भी किसी सिपाही में नहीं थी। काफू के बारे में पता लगाने के बाद राजा ने अधिकारियों से सलाह लिया तो उसे पता चला कि काफू को देवी का वरदान प्राप्त है जब तक उसके सर पर जदूली रहेगी काफू को कोई परास्त नहीं कर सकता। राजा अपनी चाल चलने लगा, एक ऐसे इनसान को भेजा उसने रोता हुआ गाँव में गया और विलाप करने लगा और सबको समाचार दिया कि राजा ने काफू चौहान को मार दिया। सुनते ही काफू के कुल की सब औरतें चौहान की चिता जला दी। राजा की फौज को खदेड़ रहे चौहान को इस बात का पता चला। काफू ने उनकी याद में अपनी जटा कटवा दी। काफू को धोखे से पकड लिया।

"उसके चेहरे पर भय था। आशंकित मौत के खतरे की चिंता का कोई निशान नहीं था। हाँसता हुआ, जगमगाता मुख। उन्होंने से राजा के सामने खड़ा कर दिया। एक ऊँते सिंहासन पर बैठे राजा ने उसे क्षमादान करने की बात कहीं।

काफू क्षमा याचना को तैयार हो त न ? किस बात की माफ? षड़यंत्रकारियों से भड़ का समझौता?जो समझौता करले वह भड़ कैसा ?"[169]

शेर किसी और के द्वारा किए गए शिकार की जूठन नहीं खाता। काफू साफ दिल का भड़ था। हाँसता हुआ अपनी जान दे दिया। आज भी गढ़वाली लोग अपने वर काफू के बारे में गीत गाते ही रहते। उसको याद करते ही रहते। सोनी गाँव का बाघसिंह गाँव के लोगों पर अत्याचार करता रहता। कुल परिवार ही ऐसा है। बाघसिंह के सामने बोलने की किसी की हिम्मत नहीं होती थी। बाघसिंह के बेटे गाँव की लडकियों के साथ बदतमीजी करने पर भी बाघसिंह उनको नहीं डांटता ,उन औरतों को और उसके परिवार वालों को डाँटता है। बाघसिंह को बड़े बड़े दफ्तरों से शक्ति प्राप्त है। अपनी उस शक्ति के बल पर बाघा जिसे चाहे जमीन पर गिरा सकता है, धूल चटा सकता है।

"पटवारी, कानूनों, तहसीलदार की सेवाएँ करते -करते बाघा भी आधा - अधूरा कानुन का विशेषज्ञ बनगया था। अपने उसी कानूनी ज्ञान और हाकिमान की दोस्ती के बल पर उसने बडीदादी की कुल जायदाद पर न सिर्फ कब्जा कर लिया था बल्कि सरकारी कागजात में उसकी इन्दराजी भी अपने नाम करवा ली थी। सरकारी कागजात में बडी दादी जिंदा नहीं थी। वह कबकी मर चुकी थी और उसकी कुल संपत्ति पर बाघसिंह काबिज था।"[170]

सारे गाँव को इस कुटिल राजनीति के बारे में पता था। गाँव में किसी के पास इतनी हिम्मत नहीं थी कि बाघसिंह के खिलाफ कुछ कहे। बाघसिंह की माँ फजीती ने आत्महत्या कर लिया। पंडित घाट पर आने के लिए मना किया। पंडित के बगैर कुछ काम होता नहीं। खुद बाघसिंह जाकर पंडित को बुलाने पर भी वह आने के लिए राजी नहीं था। अंत में बडीदादी के खेत का कुछ हिस्सा उसके नाम करदेने पर वह घाट पर पहूँचने के लिए तैयार हुआ। रास्ते में पटवरी मिला। उसको भी बाघा के माँ के बारे में पता था। वह भी लाभ उठना चाहता था। कुटिल राजनीतिक चाल चलने में पटवारी कर्णासिंह कोई कम नहीं था। वह बाघसिंह से कहता है कि *"खेत तो ठाकुर जी, बडीदादी का है। तुम भी जानते हो। पर मैं वायदा कर रहा हूँ मैं अपनी ओर से कोई कार्रवाई नहीं करूँगा। तुम्हें बचाने की पूरी-पूरी कोशिश मेरी होगी। लेकिन कोई मुखबिर चुपके से हाकिमान के कान में कोई बात कह आए तो मैं क्या कर सकता हूँ ? बोलो मुझे भी तो अपने बाल-बच्चे पालने हैं। आजकल जमाना खराब हो गया है। समाज में नेतागिरी फैल गई*

है।"[171]

बड़ी दादी फजीती की आत्महत्या से, फजीती की लाश को डॉक्टर के पास ले जाने से रोकने के लिए उसकी अपनी जमीन में से एक -एक खेत पंडित सदानंद को और कर्णसिंह पटवारी के साले को दिए जाए के तत्यों से एकदम बेखबर है। उसे इन चीजों से कोई मतलब नहीं। उसकी जमीन किस के कब्जे में रहे, इससे उसका कोई सरोकार नहीं।

परगनाधिकारी देवीदत्त को इस बात का पता चला कि बडीदादी की जमीन बाघसिंह के कब्जे में है। बड़ीदादी को जीते जी मृत घोषित कर दिया गया। इस प्रश्न की तह में जाना भी निरर्थक है। प्रशासन जैसा चल रहा है वैसा ही चलेगा। बडीदादी का समाचार दर असल ऐसा नहीं था जिससे आमराजकीय अधिकारी उस तरह विचलित हो सकता जैसे देवीदत्ता हो गया था। इस तरह की सूचनाओं से देवीदत्त सरीखे लोग बेवजह परेशान हो जाते हैं। आम राजकीय अधिकारी इसे फालतू चिंता का विषय मानते हैं। बडीदादी जो आजीवन जिंदगी की मुसीबतों से, समाज की बाधाओं, संदानंदो, कर्णसिंह की ओछी हरकतों से संघर्ष करती आई और अब मौत से संघर्ष कर रही है। मौत उसे नहीं ले जाती तो वह स्वयं भी नहीं जा रही है।

देवीदत्त जैसे लोग यह जानते थे कि गाँव में राजनीति की हद कहां तक पहुँची है, अगर इसको सुधारना चाहेंगे तो वे गरीबों की भलाई नहीं कर सकते इसलिए देवी दत्त खुद आकर बडीदादी की सहायता करता है।

मानवीय पक्षों को उभारने के अतिरिक्ति नौटियाल जी में एक खास किस्म का नशा चढ़ता है जो देर से उतरता है। वह जिन रन्ध्रों में घुसता है, घुसता ही चला जाता है। फिर जैसे कुछ याद आता है और पुनः अतीत की ओर लौट पड़ता है। निःसंदेह यह नौटियाल जी की भावुकता एवं सहज संवेदनशीलता का द्योतक है।

उत्तर बायां है इस उपन्यास में नौटियाल जी सब पहलुओं को छू कर गुजरते हैं। उपन्यास में तो हम पालसी, भैंसवाल, गूजरों के सारे किस्से जान पाते हैं। इन पर किस तरह पटवारी, अधिकारों का हमला होता है इनसब का वर्णन हमें इस उपन्यास में मिलता है।

गूजर हर साल अपने पशुओं को लेकर बुग्यालों के पास आ जाते। गार्मियों के मौसम की शुरुआत के साथ अपने पशुओं के लिए भी परिमिट लेना जरूरी होता है। हाकिमान को कुछ तोफे देकर परमिट लेना पडता है। वरना गूजर को बुग्यालों पर रहना मुश्किल हो जाता है।

"टिहरी गढ़वाल रियासत में फिरका परस्ती के मामले में पूरी तरह अपना चैन था। पंद्रह अगस्त 1947 के बाद रियासत के रियासती प्रजा की लोकप्रिय लडाकू संस्था प्रजामंडल के नेतृत्व में रियास की सामंती हुकूमत को जड से उखाडकर स्वतंत्रता प्राप्ति का आन्दोलन पूरे जोर से जारी हो गया था। आन्दोलनकारियों का सामन्ती शासन ने क्रूरता पूर्वक दमन करना शुरू कर दिया था। भारत के आजाद हो जाने से रियासत के सामन्ती शासन की स्वैच्छाचारिता पर कोई प्रकट असर पड़ता नहीं दिखाई दे रहा था। वह शासन स्वतंत्र भारत के देहरादून जिले के पडोसी क्षेत्र सकलाना -मुआफी में शुरू हो गए प्रचण्ड स्वतंत्रता आन्दोलन को अपनी हथियार बन्द पुलिस के बल पर और भाडे के गुण्डों की मदद से दबाने में जुट गया था। थानों के अन्दर भी सत्याग्रहियों को यातनाएं दी जाने लगी।"[172]

हिन्दुस्तान के अंदर, उसके शहरों और देहातों में मुसलमानों की बेकसूर औरतों, बहू -बेटियों से जबर्दस्ती की जाने लगी थी। पाकिस्तान में जो हिन्दू अल्प संख्यक थे उनको भी इसी तरह किया जा रहाथा। बडी संख्या में लोग शरणार्थी बनकर टिहरी शहर पहुँचने लगे और मुसलमानों के बारे में अमानवीय आपबीती की कहानियां सुना -सुनाकर स्थानीय हिन्दू निवासियों में घृणा, वैमनस्य, सांप्रदायिक उन्माद और उत्तेजना फैलाने का काम करने लगे थे। स्वतंत्रता मिलते ही टिहरी की स्थिति बहुत गंभीर थी। आम जनता का हाल बुरा था। लोग खुश थे कि हिन्दुस्तान आजाद हुआ है, लेकिन यह बात मुसलमानों की समझ में नहीं आ रही थी कि उनको पाकिस्तान जाना है और वहाँ पर बस जाना है। पाकिस्तान के हिन्दुओं को हिन्दुस्तान आना है। कल तक भाई -भाई कहने वाले हुन्दू - मुसलमानों के बीच अपना मजहब आगया।

" देश का और देशवासियों का बंटवारा हो गया है। मुसलमानों का एक अलग देश पाकिस्तान दे दिया गया है। इसलिए मुसलमानों को चाहिए कि वे भले ढंग से, अपने पांवों से चलकर, अपने देश पाकिस्तान चले जाए। पाकिस्तान के अंदर जो हिन्दू भाई किसी तरह अभी तक जिन्दा हैं वे भी अपने अलीशान घरों को छोडकर वहाँ से हिन्दुस्तान आते जा रहे हैं। मुसलमानों को चाहिए कि वे यहाँ रहने का मोह त्याग दें और अपने वतन पाकिस्तान में जाकर रहना शुरू कर दें। बंटवारे के बाद हर मुसलमान पाकिस्तानी हो गया है। यहां जो कुछ है हिन्दू भाइयों का है। मुसलमानों का हिन्दुस्तान कुछ भी हक नहीं बनता। लिहाजा मुसलमान को मारना और अपने देश से मार भगाना हिन्दुस्थान की ईश्वर- प्रिय धार्मिक जनता का राष्ट्रीय कर्तव्य है।"[173]

पाकिस्तान से बचकर भारत पहुँचने वाले शरणार्थी उस दौरान आग में घी का काम करने लगे थे। उनको सुनकर हिन्दुओं को बहुत बुरा लगता था और वे लोग यहाँ के मुसलमानों से बदला लेना चाहते थे। एक तरह से कहा जाए तो उन पर भूत सवार था, वे लोग बेकसूरों को भी कष्ट पहूँचाने लगे। सोचने के लिए उनके पास समय नहीं था। सब लोग नफ्रत की आग में जल रहे थे। आजादी मिलते ही इस तरह की परिस्तितियों का सामना करना पड पहा था। सब से बुरी हाल तो आम आदमियों की थी। एक जगह से दूसरी जगह जानेवाले गूजरों की हालात तो एक दम बुरी थी। कब किस प्रकार का हमला होगा, हर पल ये लोग डर के साए में ही अपना जीवन निर्वाह कर रहे थे। जान हथेली में रखकर वे बुग्यालों से नीचे उतरकर मैदानी जगह पहुँच रहे थे।

"मुलक हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों अपनी आजादी की आखरी कीमत चुका रहे थे। भारत में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के कार्यकर्ता महात्म गांधी को अपनी घृणा का निशाना बनाने लगे थे। संघ की शाखाओं में महात्मा गाँधी के खिलाफ उन्माद फैलाया जाने लगा था। नेहरू को भी गालियां दी जातीं। सिर्फ सरदार पटेल की तारीफ की जाती। देश के अंदर धार्मिक उन्माद फैलाने के षडयन्त्र की शुरूआत हो गयी थी।"[174]

बुग्यालों में इस तरह की परिस्थितियाँ नहीं होती थी। वहाँ न हिन्दू न मुसलनान कोई भेद नहीं होता था। वहाँ परतो सिर्फ इनसानियत काम आती है। वहाँ के लोग आपस में एक दूसरे की मदद कर लेते थे। अगर किसी इनसान को वह जानते तक नहीं फिर भी उसका मदद कर देते। गूजर बुग्यालों से अपनी जगह पर चलने के लिए लंबा रास्ता काटना पडता है, उसका वर्णन करते हुए नौटियाल जी एक जगह लिखते हैं कि *"अपनी गाय -भौंसों के नवजात शिशुओं को वे अपने कंधे पर उठाकर कदम-कदम अपनी राहें पार करते। अपने छोटे -छोटे बच्चों को हमेशा की तरह से वे अपने समझदार, वफादार घोडों की पीठपर, वहाँ रखे सामान के ऊपर रख देते। ऐसे रख देते जैसे कि वह भी एक अदद सानान हो। छोटासा तुतलाता बच्चा वहाँ अपने को खुद ही थाम ले। घोडे की जिम्म्दारी है कि वह बच्चा उसकी पीठ से नीचे नगिरने पाए घोड़े को अहसास रहता है कि उसकी पीठ पर एक बच्चा भी धरा गया है। वह घोड़ा धीरे -धीरे चलता है।इतना संभल संभल कर चलता है कि उसकी पीठ पर धरी जिन्दा गठरी अपनी जगह पर ठीक हालत में कायम रहे। वह अजीब नज़ारा कि गूजर के बच्चों को जानवर ढो*

रहा है और पशुओं के बच्चे गूजरों के कंधों पर सवार है।"[175]

गूजर जिस तरह परिवार से प्यार करते हैं उसी तरह अपने पशुओं से भी प्यार करते है, कुछ ज्यादा ही प्यार करते हैं। पशुओं के बिना गूजर का गुजारा नहीं चलता। गूजर जहाँ भी जाए अपने पशुओं को साथ लेकर जाता है। गाँव के लोगों पर एक तरफ हाकिमान, पटवारी,सेठ के जुल्म तो होते ही रहते हैं बीच में कही से कोई न कोई अधिकारी लोगों को तंग करने के लिए आता ही रहता है। ग्राम सेवक अधिकारी आता है और प्रधान के पास से रजिस्टर लेकर पढ़कर कहता है " *इसमें तो ऐसा लिखा है कि सारा गांव बंधकर टिहरी चला जाएगा एक छोर से, एक ही डोर पर। पूरी सरकार आदमी के बढने को रोकने के काम में जुटी है। कारवाई में ऊल-जलूल लिख दिया है। इस गाँव में फेमिली पलान नहीं चलना चाहिए। वोलो, यह कोई कारवाई रजिस्टर में लिखने की बात है ? एक - एक बच्चा बंधकर टिहरी चला जाएगा। किसी के छूटने का सवाल ही नहीं। एस.डी. एम. साहब को खबर लग गई तो टिहरी से हथियार बन्द पुलिस की टुकडी भेज दी जाएगी। बताओ प्रधान जी, सच-सच बताओ ऐसा कोई पछतौं (किसी की मौत पर शोक प्रकट करने को गढ़वाली में पछतौ देना कहते हैं।) पास हुआ था ग्राम सभा की बैठक में।"*[176]

आधिकारी लोग तरह-तरह के षड्यंत्र तो रचते हैं लोगों को धोखा देने के लिए हर बार कोई न कोई छोटी गलती हो जाने पर भी जेल का डर दिखा देते हैं और कहते कि बताइए आपकी पूरी जवानी जेल की सलाखों के पीछे काटनी है क्या,लोग बेहद डर जाते थे और उनके पैर पकड लेते और उनको शान्त करने के लिए तरह-तरह के मार्ग ढूँढते हैं। किसी को चावल के बोरियाँ भेजना पडता तो किसी को घर-घर जाकर आलू इकट्टा करके उसको उनके घर तक पहुँचाना पडता।

देवीप्रसाद जैसे लोग पहले से ही लोगों की जरूरत जानते थे इतना ही नहीं पहले देवीप्रसाद जरूरत मंद लोगों के सामने इस तरह बात करता है कि वह बिलकुल उनकी मदद नहीं कर सकता,लेकिन यह सुनकर बे बेबस लोग बेहद घबराजाते उनके पैर पकड लेते पैसा उनको कितना जरूरी बतादेते, ऐसे मौके का फायदा उठाता है देवी प्रसाद। उनकी जमीन हडपलेता बिक्रीनामा पर उनके हस्ताक्षर करवा लेता हैं और पैसा बहुत कम देता है बेबस एवं गरीब कुछ कर नहीं सकते जितना मिला उतना पैसा लेकर चुपचाप वहाँ से चले जाते हैं। करणू जब जामिन के साथ रैमास वापस लौटता है तो वह घनसिंह को देखकर दंग रह जाता

कि वह किस तरह कोर्ट में झूठ पर झूठ बोलता जा रहा है।

"अदालतों में जब -जब जामिन की जरूरत पडी है पटवारी धनसिंह को बुलाकर उसके खाते की नकद बनाकर उसे सौंप देता है और मुलजिमान के साथ उसे टिहरी भेज देता है। मुजिम भी खुश, धनसिंह भी खुश। गाँव में वह एक उत्साही गवा भी है, जो हर वक़्त टिहरी जाने की तैयारी में रहता है। उसके पास जो भी पहले चला जाय वह उसी की ओर से गवाही दे देगा और गवाही ऐसे कहकर देता है कि वकीलों के पसीना छूट जाता है पर वे उसे तोड़ नहीं पाते।"[177]

करणू जैसा एक मामूली आदमी ऐसे लोगों को देखकर मन में सोचता कि ऐसा क्यों करते है लोग, सारे आम झूठ बोलता जा रहा है और वकील इसी का तरफदारी कर रहे है। "*उस केस में अदालत ने बीस पेज वम्बा फैसला दिया था। उसने करणू को दो अपराधों के लिए दोषी पाया था। पहला-फुड इंस्पेक्टर को दूध न देना और बर्तन को उलट कर दूध का नमूना लेने की कोशिश में रुकावट डालना। दूसरा, बगैर वैध लाइसेंस के दूध की बिक्री करना। मजिस्ट्रेट ने फैसले में लिखा था कि अपने कर्तव्य का निर्वाहन करने के सिलसिले में जिले के ठेठ अंदरून भाग के एक आखरी गाँव में गए हुए एक राजकीय कर्मचारी फुड इन्स्पेक्टर और उसके मातहत कर्मचारी के बयानों की सच्चाई पर विश्वास न करने का उसे कारण नहीं दिखाई देता। देहाती क्षेत्रों में दूध जैसे जीवन रक्षक पदार्थ में मिलावट करके आम जनता के स्वास्थ के साथ खिलवाड न किया जा सके इसके लिए अदालतें दुर्गम स्थानों पर साहस पूर्वक पहुँच कर अपने कर्तव्य का निर्वाहन करने वाले राजकीय कर्मचारियों के एक-एक वाक्य को स्वर्णिम वाक्य माने, उन पर शब्दशः विश्वास करें और उसी विश्वास के आधार पर अपना निर्णय दें यह आवश्यक प्रतीत हो रहा है।"*[178]

इस फैसले से करणू को बहुत दुःख होता है क्योंकि करणू ने न कभी दूध बेचा, वह किसी इन्स्पेक्टर को जानता तक नहीं था। वह याद करने लगा था कि उस दिन जब उसने पशुओं को लेकर बुग्यालों की ओर चल रहा था तो ग्राम सेवक अधिकारी जिसे गाँव वाले, भेल डबलू साब बुलाते थे उसकी आलू की बोरिया उठाकर उनकी जगह तक पहूँचाने के लिए करणू इनकार किया था। इसलिए ग्राम सेवक आधिकारी ने करणू पर झूठा इल्जाम लगाकर केस कर दिया। करणू बहुत कोशिश किया लेकिन उसको न्याय नहीं मिला। एक साल तक वह बहुत सारा पैसा कछेडी में लगा दिया था। अब जामीन के लिए बहुत पैसा भरना

पडेगा। करणू घर वालों को और भी दुःख देना नहीं चाहता था। उसने तो फैसला कर लिया कि जेल चला जाऊँगा। गाँव का एक बेबस गरीब करणू कर भी क्या सकता था। वहाँ उसकी इमानदारी काम नहीं आयी। कछडी में तो कोई उसकी बात सुनने वाला नहीं था। करणू को यही लगा कि इस तरह के लोगों के बीच में रहने से बेहतर यही कि जेल चला जाए। करणू जेल जाने के बाद वह ग्राम सेवक आधिकारी को भी वही जेल आना पडता है, वहाँ उसको करणू के कहने पर चलना पडता है। इसका वर्णन नौटियाल जी ने बहुत ही बेहतरीन ढंग से पेश किया। ग्राम सेवक अधिकारी बहुत बुरी तरह से अपने को कोसने लगता, वह करणू की आँखों में देख नहीं पाता। करणू कुछ भी नहीं कहता। बस इतना कहता कि साब आप इस आलू की बोरिया को उठाकर वहाँ ले जाइए। ऐसे बहुत वर्णन मिलते हैं उपन्यास में। जेल अधिकारियों और कैदियों का और वहाँ काम करने वाले कर्म चारियों का वर्णन हमें उपन्यास में पढने को मिलता है।

"उसके ह्रदय के अंदर अपराध-बोध भी पैदा होने लगा है। उसने अपराध किया है। उसे एक सरकारी कर्मचारी भेल डबलू का आलू का बोरा अपनी पीठ पर ढोकर चांदी से रैमासी पहुँचाना चाहिए था।उसे हुकम उद्वली नहीं करनी चाहिए थी।उसे अपने को आजाद नहीं मानना चाहिए था। आजादी देश के कुछ लोगों को मिली है। खडवाला तो कभी आजाद हो ही नहीं सकता। पालसी हमेशा पालसी रहेगा। जिन लोगों का इस देश पर राज चल रहा है वे चाहते हैं कि उनकी आज्ञा का पालन होता रहे। हरेक आज्ञा का पलन। कोई भी आज्ञा कैसी भी आज्ञा। एक भी आज्ञा का उल्लंघन होने पर वे कुछ भी सजा दे सकते हैं। कोई भी सजा दिलवा सकते हैं। अदालत उन्हीं की हैं। उन्हीं की सुनती हैं। पूरे देश पर एक खतरनाक महातंत्र फैला है। अदालत-कचहररियों में बैठने वाले हाकिमान सबके सब उसी महातंत्र के अंग है।"[179]

करणू पूरी कहानी डिप्टी जेलर से बताता है जेलर कहता कि तुम तो बेकसूर हो तुम ने यह बात जज साब से नहीं बताइ तो करणू कहता कि वकील ही बात कर रहे थे। मुझे चुप रहने को कहा। जेलर को भी करणू पर तरस आता है एक बेकसूर इन्सान जेल में जा रहा है, पर वह भी कुछ कर नहीं सकता। करणू जेल में अपना भाई हुक्म से मिलता है, हुकम के पास कुछ नशीली चीजें मिलती हैं, इसके पीछे बडे लोगों का हाथ रहता है अपना नाम बाहर न आए इसलिए ,वे लोग हुक्म को जेल में अनेक सुविधाएँ प्राप्त करवाते हैं। जेलर से लेकर वहाँ के साफ करने वाले कर्मचारी तक हुकम की मदद करते हैं। हुकम को

पैसों के साथ जेल में अच्छा खाना भी मिलता है। उसको वहाँ किसी की कभी नहीं लगती वह यह सोचता कि अगर वह घर पर रहेगा तो भी इतना अच्छा खाना नहीं मिलेगा। सिर्फ घर वालों की कमी है, बाकी सब ठीक है। वहाँ हुकम आराम से अंदर घूम सकता है। बाकी कैदियों से एकदम अलग है हुकम। हुकम को देखकर लगता नहीं कि वह मुल्जिम है।

शतरु की स्थिति राजसत्ता की छात्र छाया में पहले वाले गाँव के ताकतवर लोग ही नहीं पटवारी और अन्य सरकारी कर्मचारियों के लिए भी एक बड़ी चुनौति है ,क्योंकि शतरू में उसके स्वर्गीय तोपची पिता की जिद ही नहीं प्रबल अहंकार भी है जो किसी के सामने झुकना नहीं चाहता। लेकिन उपन्यास की कथा को स्थानीय राजनीति का दाँव - पेच आगे बढ़ाता है।

श्रीधर प्रसाद के चचेरे भाई यज्ञदत्त की मौत हो जाती है, गाँव में सब लोग मातम मना रहे थे। यज्ञदत्त की विधवा थी और उसकी घाट पर जाने को तैयार बैठी माँ थी। यज्ञदत्त की विधवा,परम्परा को तोड़कर,सब यात्रिकों के साथ खुद भी घाट पर चली गई थी। साधनों के घनघोर अभाव में वह बेवा अपने स्वर्गीय पति के जीवन काल में उसका उपचार नहीं करवा पाई थी। अपने खेत में जमा लकडियों के चोर गट्ठों को एक -एक कर अपने सरपर ढोते हुए उसने घर तक दो चक्कर खुद ही लगाए थे श्रीधर प्रसाद था उसके परिवार का कोई सदस्य शव यात्रा में शामिल नहीं हुआ था। गाँव की दो औरतों ने भी घाट पर लकडियाँ पहुँचाने में यज्ञदत्त की बेवा की मदद की थी। एक-एक गट्ठर वे भी पहुँचा। आयी थी। यज्ञदत्त की बेवा अन्त तक घाट पर मौजूद रही। चिता के जलते हुए उसे अपनी जिन्दगी के पिछले तमाम दिन याद आते रहे। कुल भले और बुरे दिन और अपने लोग, जिससे आजीवन सम्पर्क रहता आया। सब कुछ याद आ रहा था। घाट पर।

"घाट से लौटकर, परम्परा के अनुसार, शवयात्री यज्ञदत्त के आँगन में जमा हो गए। रस्म के मुताबिक पहले से वहाँ रखे गये बर्तन से वे अपने -अपने उपर गौमूत्र के छींटै लेने लगे।उन्होंने देखा कि श्रीधर प्रसाद हाथ में खूब लम्बी छुरी लिए हुए दोनों आंगनों के बीच में खड़ा है। वह बहुत खुश और असहायत मालूम हो रहा था। वहाँ खड़े डैंकण (पहाडी नीम) के पेड़ की एक शाखा पर एत ताजा कटे बकरे का पूरा शरीर झूलता हुआ दिखाई दे रहा था। उसके ठीक नीचो जमीन पर एक बड़ी कढ़ाई रखी थी, जिस पर बकरे के धड़ सेटपकता ताजा खून जमा हो रहा था। श्रीधर प्रसाद बकरे के शरीर से उसका एक रान काट कर ज़ोर

से आवाज़े लगा रहा था।"[180]

निकटतम पडोस, और अपने सगों के बीच हुई उस मौत के बाद पूरे पाँच दिन तक श्रीधर प्रसाद ने खुलकर जश्न मनाया था। यज्ञदत्त की विधवा और उसकी माँ को शोक प्रकट कर दिलासा देने आयी शतरू की माँ को श्रीधर प्रसाद ने आवाज़ दे कर अपने पास बुलाकर कहता है कि शतरू को उसके पास भेज दो, शतरू माँ की बात सुनते ही श्रीधर प्रसाद के पास पहूँचता है। श्रीधर प्रसाद कहता है कि *"बात ऐसी है शतरू मैंने परसों एक बकरा मंगवाया था। वह आज खत्म हो रहा है। निपट ही गया है,करीब-करीब। डैंकण के पेड़ पर लटका सामने दिखाई दे रहा है। व जो दिखाई दे रहा है,इतना ही बचा है। घर के अंदर शिकार के नाम पर अब और एक टुकड़ा भी बचा नहीं है। यह आज रात में या हद से हद कर कल सबह तक काम दे पाएगा। मेरे मन में यह बात आती रहती है कि घर के बकरे के माँस में वैसा मजा नहीं आता जैसे जंगली जानवर की शिकार में आता है। इसलिए बुलाया था तुझे।"*[181]

दुश्मन अपने मन ही मन सोच रहा था कि इसके परिवार में गम हुई है। इसकी दुश्मनी मरने वाले के साथ थी। अब उसके मरजाने के बाद यह सेठ उसके बे सहारा माँ और बेवा से बदला लेने लगा है। ग़मी की रस्म में रस्म में शामिल होने के बजाय मृतक सगे चचेरे भाई की माँ और बेवा का दुःख बढ़ाने की गरज से समाज के डर से एक दम बे परवाह होकर, यह आदमी खुले आम इ तरह काजश्न मना रहा है। शतरू ने श्रीधर प्रसाद से कहा कि वह ऐसे में शिकार पर नहीं जा सकता। श्रीधर प्रसाद धमकाने पर भी शतरू नहीं मानता। दुश्मन सेठ के घर से लौट आते समय सुनता कि बहां बैठ लोग कहने लगे तीन कौड़ी का आदमी। कितनी अकड़ दिखा रहा है।

" शतरू के उस व्यवहार से श्रीधर प्रसाद ने अपने को बहुत आहत महसूस किया था। उसी दिन से (उसी रात से)वह दुश्मन को अपना व्यक्तिगत दुश्मन मानने लगा था।श्रीधर प्रसाद के मन में बात चुभ गयी थी।शतरू ने कहा था ऐसे में जंगल जाना मेरे वश की बात नहीं। वह शतरू को सचमुच बेबस कर देना चाहता था।ऐसा बेबस, कि वह जंगल जा ही न पाये। जंगल जाने के काबिल ही न रहे। वैसा करने की तदबीरें सोचने लगा था। उसके हाथ में बन्दूक नहीं रहेगी तो उसे जंगल जाने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। वह किसी तरह शतरू की बन्दूक को जब्त करवाने की धुन में रहता था। बन्दूक नहीं रहेगी तो सारी हेकडी भूल

जाएगा।"[182]

श्रीधर प्रसाद के जीवन में एक ऐसा मौका आता है कि परगना मेजिस्ट्रेट से उसकी अच्छी जान -पहचान हो गयी। वकील राघवेन्द्र ने परगनाधिकारी सरेन्द्र कुमार को रात्री भोजन पर अपने घर आमंत्रित किया था। वकील साहब की बैठक में रकम खर्च करने वाले श्रीधर प्रसाद को भी बैठा दिया गया था। शहर वासियों को और अदालत में पहुंचने वाले मुस्तागियों को भी राघवेन्द्र और हाकिम परगना सुरेन्द्र कुमार के बीच दिनों दिन बढ़ती जा रही निकटता के किस्से मालूम थे। राघवेन्द्र ने धीमी से उस रात के लिए निश्चित खास मुद्दे का ज़िक्र छेड़ दिया। श्रीधर प्रसाद को उस गाँव का एक शिकारी हर वक़्त तंग करता रहता है, और धमकाता रहता है। वह शिकारी ऐसा निड़र किस्म का है कि बाघ से भी नहीं डरता बहुत खतरनाक किस्म का आदमी है। गाँव की रक्षा के लिए उसके हथियार को जब्त किया जाना जरूरी है।

" *परगना हाकिम ने वकील साहब को यह सलाह दी थी कि श्रीधर प्रसाद की ओर से एक अर्जी पेश करवा दी जाय। बाकी काम अदालत की मर्जी पर छोड़ दिये जायें। कुछ दिन बाद अपनी धुन के पक्के श्रीधर प्रसाद ने फिर शहर जाने का कार्यक्रम बनाया। उसके दिल के भीतर तो हमेशा आग जलती रहती थी। शतरू की बन्दूक को जब्त कर दिए जाने की अर्जी उसने अदालत में अपने वकील राघवेन्द्र के द्वारा कायदे से पेश करवाई थी। उस अर्जी पर खुनवाई की तारीख तय करते हुए अदालत ने शतरू के नाम उस तिथि पर हाजिर होने का समन भेज दिया था। शतरू पर तामील करने के लिए समन पटवारी के पास भेजा गया था। पटवारी को उसके बारे में पहले से सब कुछ मालूम था। सोची समझी तदबीर के अनुसार, अपनी चुंगी बसूल लेने के बाद, पटवारी ने समन पर यह रिपोर्ट लिख भेजी थी कि मुल्ज़िम समन को लेने से इन्कार कर रहा है। उस लिखित का गवाह अँगूठा-छाप भेल को बनाया गया था। हल्का पटवारी से प्राप्त रिपोर्ट पर गौर फरमाने के बाद निष्पक्ष न्यायप्रिय हाकिम ने शतरू की बन्दूक को, अलग आदेश होने तक, जब्त करने का आदेश पारित कर दिया था। साथ ही शतरू की गिरफ्तारी के लिए और जमानती वारंट भी जारी कर दिया गया।"*[183]

इस बात की जानकारी मिलते ही श्रीधर प्रसाद जश्न मनाना चाहता ऐसा जश्न उसने दो साल पहले अपने चचेरे भाई यज्ञदत्त की मौत के बाद मनाई। शान्ति बुढ़िया की भोली गाय के मारेजाने के बाद की वह पहली रात श्रीधर प्रसाद

ने बाघ के आतंक और शतरू की बन्दूक को जब्त किये जाने की अर्जी से उपज रहे कैटीले नतीजों की पीड़ा के डर के बारे में सोचते-सोचते बिता दी। लेकिन उस कमरे में बाकी सभी लोगों को उसने चैन की नींद सोते हुए पाया। एक बार बिस्तर पकड लेने के बाद रात में एक पल के लिए भी किसी की नींद नहीं टूटी।

"श्रीधर प्रसाद को लगा कि बाघ के शान्ति बुढ़िया की गाय पर नहीं,सीधे-सीधे उसी के ऊपर हमला बोल दिया है। इस मौके पर इस दुष्ट बाघ उसे सताने और उसके बैरी की मदद करे आ पहुँचा है उसके आँगन में। ऐन मौके पर आ पहूँचा वह शतरू की मदद करने। उसके आँगन के पास बारदात कर बाघ ने पुरे ताने -बाने में ही उलट-फेर कर दिया है। उसने तो जश्न मनाने के लिए दो कोमल मेमने मँगवालिये थे, जिनकी कुल बोटियों कोकरचा ही। चबाया जा सकता है।पर बाघ के हमले ने पूरा हिसाब -किताब गड़बड़ा दिया है। बाघ में और तोपची में वैसे भीकोई ज्यादा फर्क नहीं होता। इस वक्त वे दोनों एक बाघ और एक तोपची, अपना वैर भाव भूलकर, मिल जुलकर उस पर हमला करने लगे है।"[184]

श्रीधर प्रसाद अत्यंत भयभीत हो गया था और अपने मन के अन्दर रात भर खेत के एक कोने पर पड़ी हुई उसी मड़ी की याद करता रह गया। उसका दिल घबराने लगा। उसके मन के अन्दर रात भर खेत के एक कोने पर पड़ी हुई उसी मड़ी की याद करता रह गया। उसका दिन घबराने लगा। उसके मनके अन्दर बहुत बुरे-बुरे, अनबन भाँति के, डरावने किस्म के विचार भरने लगे थे। आने वाले समय की अवश्यम्भावी घटनाओं की काली, भुतहा परछाइयाँ, अजीब अजीब किस्म की जिन्दा, हिलती-डुलती शक्लें। इस नाजूक मौके पर अब कोई उसकी रक्षा कर सकता है तो सिर्फ शतरू है। सिर्फ शतरू। शतरू, जिसे दुश्मन भी कहा जाता है।

विकराल बाघों का सामना करने वाले शतरू पर अपनी जिन्दगी में कभी उस तरह का हमला नहीं हुआ था। किसी विकराल, आदम खोर बाघ केहमले से भी ज्यादा ज़बलदस्त हमला। गोली की मार से भी ज्यादा तेज़ मारा ऐसी पटकनी कि बह ज़मीन से उठ तक न सके। पटवारी के मुँह से निकलने वाली बातों को सुनते ही, खूँखार बाघों का आसानी से शिकार कर देने वाला तोपची बुरी तरह गबरा गया था। अपने मन के भीतर वह काँपने लगा था। हुक्म सुना दिया गया था। अन्तिम आदेश।उसे पटवारी के पास अपन बन्दूक जमा करनी है। उस हुक्म की फिलहाल गाँव के अंदर कोई अपील नहीं हो सकती थी।"[185]

गाय के मार दिये जाने के कुछ ही देर बाद शाम का धुंधलका शत में बदल गया था। वह जगह जहाँ पर बाघ ने गाय मारा था। श्रीधर प्रसाद के घर के खुले बरामदे से एकदम सामने दिखाई देता था वह खेत। इतना नज़दीक कि लगता है सेठ के घर का आँगन हो।घना अंधकार अपनी काली चादर फैला चुका था और उसके साथ -साथ गाँव के श्रीमान लोगों के दिल भी भीतर -बाहर फैले अंधकार में डूबने लगे थे। श्रीधर प्रसाद,इलाके का बडा आदमी माना जाता है। लेकिन बाग आदमी नहीं। वह तो एक जानवर है। आदमियों के बीच के छोटे-बडे लोगों को नहीं पहचानता। किसी बडे या छोटे में वह कोई फर्क नहीं करता। उसके सामने तो कुल मुनष्य बराबर हुए। सब को एक समान नज़र से देखता है बाघ।

श्रीधर प्रसाद, मालदार दामोदर सिंह और दर्शन सिंह तीन लोग, जिन की गाँव के मान्य और बलवान लोगों में गिनती होती है सब एक साथ जमा होगए। भयंकर संकट के इस मौके पर उन में से किसी का भी दिमाग़ काम नहीं कर पा रहा था।वे सब अपने-अपने मन में, अपने-अपने ढंग से, गाँव की, खासकर अपनी और अपने बाल बच्चों की सुरक्षा के उपायों पर गम्भीर विचार-विमर्श करने लगे थे।

श्रीधर प्रसाद ने थेलसिंह को भी कहा था कि आज की रात उसको उनके घर रूकना पडेगा। कहीं इधर - उधर जाने की जरूरत नहीं। वह कोई समस्या नहीं। श्रीधर प्रसाद आम तौर पर गाँव में किसी से बात नहीं करता। किसी से बात करने की उसे कोई जरूरत ही नहीं पड़ती थी। गाँव के अन्दर उसका अपना रूतबा भी किसी बाघ से कम नहीं था।

"श्रीधर प्रसाद को थेल का उस तरह बक-बक करना बेहद नागवार गुजरा। उसे गुस्सा भी बहुत आ गया था। इसे किसने पूछा इस मामले में इससे कौन राय ले रहा है ? और किसी वक्त की बात होती तो सेठ उसको तुरंत वहाँ से बाहर निकल जाने का हुक्म जारी कर दिया। अपनी आदत के मुताबिक शायद उस पर एकाध हाथ था, जो उसके सब काम कर रहा था। जो आतंक के उस माहौल में उसके और उसके परिवार के जीवन का संबल बना हआ था। समय पलटा खाता है तो वह बहूत मामूली लोगों को इज्जत दार बना देता है और सामर्थ्यवान मान्यवर लोगों को धूल चटाने लगता है। मौके की नाजूक स्थिति को भाँपते हुए उसे अपना गुस्सा पी जाना पड़ा। "[186]

पटवारी से शतरू की बन्दूक लौटा देने की बात कहना,जो श्रीधर प्रसाद

नहीं कर सकता था।वह नहीं करना चाहता।वह अपने को अलग रख कर गाँव की रक्षा और भलाई के नाम पर इन दोनों भरोसेमन्द लोगों को पटवारी के पास जाने का सुझाव देने की बात सोच रहा था। श्रीधर प्रसाद के आंगन में बकरी के दोनों मेमनों की कातर आवाजें सुनाई दी। उनका बेवक्त मिमियाना किसी भी तरह थमता नहीं लग रहा था और पता नहीं क्यों, सेठ के मन में यह डर बैठने लगा कि वे दोनों रात के मौके पर बाघ के आने का आमंत्रण दे रहे है। अपशकुनी मेमने। दामोदर सिंह श्रीधर प्रसाद से कहता -" *गाय की मड़ी तुम्हारे घर से इतना नजदीक न होती तो इस मामले में हमें कोई मतलब ही नहीं होता। गाँव वाले जायें चूल्हे -भाड़ में। कोई अपने को जैसे चाहे बचाले।*"[187]

बहुत गम्भीर विमर्श के उपरान्त यह निर्णय लिया गया कि कल सुबह पटवारी के पास जाकर शतरू की बन्दूक उसे लौटाना चाहिए। श्रीधर प्रसाद अपने साथ दामोदर सिंह और दर्शनसिंह को लेकर पटवारी चौकी पर जा पहूँचा। जो कुछ होगा। आज होगा। आज की रात बाघ अपनी मड़ी पर आयेगा।उसके वहाँ पहुँचने से पहले शतरू को मौके पर मौजूद रहना चाहिए। अपनी बंदूक के साथ, पूरी तैयारी के साथ, उसे वहाँ पर होना चाहिए। पटवारी मौके का फायदा उठाना चाहता है।

" *हे साहब ! जो थोड़ा बहुत कोटी में वकील, पेशकार, चपरासी वगैरह की या मौका आ जाने पर, हुकम के अनुसर,खुद साहब की सेवा-पानी भी करनी पड़ेग वह भी कर दी जाएगी। सेवा-पानी करते रहने के लिए हम लोग आप के साथ है न डिप्टी साहब को पता लगेगा कि मैंने जब्त कर दी गयी बन्दूक सतरू को वास कर दी है तो मेरी नौकरी पर कलम नहीं चलेगी सेठजी, कुल्हडे की मार कर दी जायेगी। कुल्हडे की स चोट से चटक कर मैं पता नहीं किस गहरे गड्ढे में जा गिरूँगू और तब सेठजी। दिन के उजाले के कायम रहते -रते आपके पड़ोस में घास चरती बेबस गाय पर हमला कर उसे मार गिराने वाला वह दुष्ट बाघ मरे न मरे, मेरे बेकसूर, मासूम बच्चे भूखों मरने लगेंगे।*"[188]

श्रीधर प्रसाद चाहता था कि शतरू को पटवारी के घर बुलायेगा और बात करेगा, लेकिन पटवारी मना करता है और कहता कि हमें उसके पास जाना पडेगा।

अपनी जिन्दगी में शतरू अब तक कुल तीन बाघों का शिकार कर चुका है। बाघ एक चालाक, खूँखार, बेहद ताकतवर और खतरनाक जानवर होता है। अपने शिकार पर शुरू में वह कभी सामने से हमला नहीं करता।हमेशाछुप कर,

घातलगा कर हमला करता है। उसके शिकार को ज़रा भी आभास न हो पाये कि उस पर हमला होने वाला है। कई बार ऐसा भी होता है किवन में मज़े से घास चर रहे पशु,मसलन किसी गाय, बैल, बछडे या बकरे को यह आभास तक नहीं हो पाता कि बाघ बहुत दूर से उसके पीछे -पीछे या अगल बगल में, उसके साथ - साथ चलता आ रहा है। उस वक्त बाघ अपने को पूरी तरह छुपा ही नहीं देता, वह अपने चलने से या हिलने -डुलने से किसी तरह का शोर या शब्द भी पैदा होने नहीं देता।

सतरू के घर जाने के लिए पहले श्रीधर प्रसाद राजी नहीं होता तो हीरालाल कहता कि *"मुझे पांच लाख प्रजा के मालिक,इतनी बडी रियासत के हमारे महाराजा बहादुर नरेन्द्रशाह जी की याद आ रही है। जनवरी सन् उन्नीस सौ अड़तालीस में अपनी शाही मर्यादया को छोड़कर, चालीस मील की दूर पर बसी राजधानी नरेन्द्र नगर से रात के अँधियारे में ऊबड़ -खाबड़ ,कच्ची, संकरी सडक पर, किसी डायवर या सेवक तक को साथ लिए बगैर, अपने हाथ से कार चलाते हुए महाराजा को खुद ही चले आना पड़ा था। टिहरी शहर पर कब्ज़ा कर रहे प्रजा मंण्डली बागियों के बीच। उन्हें अपनी हुकूमत को थामें रहने की आस और लालसा थी।"*[189]

श्रीधर प्रसाद की ठुक-ठुक कर हिलती उसकी गर्दन बता रही थी कि उसे रियासती आजादी की रात की वह घटना खूब अच्छी तरह याद है। उस ऐतिहासिक घटना के बारे में हीरा लाल जो बोल रहा है, सच बोल रहा है। उस घटना की बात सुन कर और उतने बड़े महाराजा की याद दिलाए जाने के बाद वह अपनी हतकडी भूल गया। आखिर में पटवारी हीरा लाल तय करता है कि *"हम दोनों को जाना पडेगा आज शतरू के घर पर। तुम्हे भी और मुझे भी और इसके बाद,अब से आगे जो कुछ भी किया जाना है सिर्फ उसकी मौजूदगी में किया जा सकता है। यह हमारा अपनी मर्जी का फैसला नहीं है सेठ जी यह उस दुष्ट बाघ का लादा हुआ फैसला है हमारा ऊपर। बाघ ने शान्ति बुढ़िया की गाय पर छलाँग नहीं लगाई,उसने हम सबकी मान मर्यादा को दबोच कर रख दिया है।मैंने कहा न यह आपतकाल है।"*[190]

गाँव भर में अपने-आप यह खबर आग की तरह फैलने लगी थी कि सेठ श्रीधर प्रसाद शतरू की बन्दूक उसे वापस कर देने के लिए पटवालरी को मनाने लगा है। उसकी खुशामदें कर रहा हैं जब कि पटवारी वैसा करने को तैयार नहीं हो रहा है। लोगों में यह चिन्ता फैलने लगी थी कि अगर बन्दूक आज ही नहीं

लौटायी जाती तो फिर उस बाघ को मारना बहुत मुश्किल हो जाएगा। मारा नहीं जा सका और जिन्दा रह गया तो वह किसी पर भी और कहीं भी हमला करने लगेगा। जंगल में, बस्ती में। गाँव में जगह-जगह पर जमा हूए लोग आपस में तरह-तरह की बातें करने लगे थे।

श्रीधर प्रसाद, शतरू के घर पर झेपता हुआ सेठ,जैसे दाँत और नख के तोड़ देये जाने के बाद कोई बाघ पालतू बना लिया गया है, जो कुत्ते की तरह अपनी दम हिलाने लगे। तीन कौडी के शतरू के घर में कोई ऐसा कायदे का आसन भी नहीं था, जिस पर सेठों के सेठ श्रीधर प्रसाद को बैठाया जा सकता। आँगन में खडे,घर पर पधारे मान्यवर मेहमानों से दुश्मन ने अपने सोने के कमरे में चलने का आग्रह किया। वह उन सब को आदर पूर्वक अपनी खटिया पर बैठने की सोच रहा था। लेकिन पटवारी और उसके साथ आये वे सभी लोग मकान के आँगन में पहुँच पर खुद ही दीवार के सर्द पत्थरों के ऊपर जम गये। उस पश्चिम-मुखी घर के आँगन में आधा दिन बीत जाने के बाद भी अभी तक सूरज की किरणों की आमद नहीं हो पाई थी।

पटवारी हीरालाल ने अपने चपरासी बचनसिंह की और इशारा किया-शतरू भाई की बन्दूक उसके पास बिझा दे। शतरू ने हाथ जोड़ लिये ऐसा मत करो पटवारी जी।आदालत के हुक्म से एक बार जब्त करदी गयी बन्दूक को अपने पास रखलेने पर मैं पकडलिया जाऊँगा। वहीं, शतरू के आँगन की पत्थरों की दीवार के ऊपर बैठ कर पटवारी सेठ की ओर से मामले को खत्म कर देने की अर्जी के कागजात तैयार किये। उन पर शिकायत कर्ता सेठ और गवाहान सब ने अपने अपने हस्ताक्षर किए।उन सब के उस घर से निकलने से पहले दिगंबर सिंह ने अपनी बात कही।

"बेटा शतरू, अब तू जैसा ठीक समझे वैसा कर, पर यह बात याद रखना कि पूरे गाँव की रक्षा करने का भार अब तेरे ऊपर है। उस बाघ को तू अकेला जा कर मार ले चाहे किसी और तोपची को साथ ले कर अकेला जा, तेरी मर्जी।"[191]

एक षड़यंत्र के तहत लोग शतरू की बन्दूक जब्त करवा देते हैं क्योंकि वह शान्त न रह सके। लेकिन जब बाघ गरीब और असहाय बुढ़िया शान्ति की गाय को सेठ के घर के करीब ही दबोच लेता है तब सेठ को खतरा अपने दरवाजे पर दस्तक देने लगता है। बाघ का आतंक सरकारी तंत्र और सेठ के आतंक से भी बड़ा महसूस होता है। ऐसी स्थिति में घटनाक्रम अचानक बदल जाता है और

वही शतरू जिसकी बन्दूक को सेठ ने कभी जब्त करा दिया था, अब सरकारी मुलजिमों से आग्रह करता है कि जिससे अचानक शतरू फिर हीरो बनजाता है। यही शतरू बाघ को मारता है और गाँव वाले निश्चिंत होते है।जिस हिम्मत सिंह के भरोसे गाँव कभी सुरक्षित महसूस करता था। उसको बध्वा लग गया है। जब कि शतरू की गोली से बाघ कब का मर चुका था।

सरदार सुन्दर सिंह पिछले तेईस वर्षों से वह टिहरी गढ़वाल की सेना में सेवारत था। उसने कई शासकों को सत्ता के तख्त पर चढ़ते और उतरते देखा। गर्दन झुकाकर खामोश रहने वाले कई आला हाकिमन को उसने शासक की नजरों में चढ़ते ही सत्ता के मद में बौखलाते, ऐंठते और बेडौल तरीके से मोटा होते देखा। रियायत में सुन्दरसिंह की नियुक्ति महाराजा कीर्तीशाह के शासन काल में सन् 1907 ई,में हुई थी। उसकी नियुक्ति के छः बरस बाद सन् 1913 ई में अप्रैल की 13 तारीख को महाराजा कीर्तिशाह की मौत हो गई। विद्वानों का सदैव आदर सहायता व सेवा करने को उत्सुक और तपस्वियों-योगियों की संगत में जमने -रमने वाला वह राजा महज उनतालीस बरस की कच्ची उम्र में मृत्यु को प्राप्त हो गया था।

" *उस वक्त वारिस टिक्का नरेंद्रशाह नाबालिग था। टिक्का साहब की बेवा मां राजमाता नेपालिया ने तेहरवीं के गुजर जाने के बाद 25 अप्रैल 1913 को कौंसिल आफ रीजेंसी के चेयरमैन का पद-भार ग्रहण किया और हुकूमत चलाने लगी ।लेकिन अपने खराब स्वास्थ्य के कारण उसे जल्दी ही राजपद छोडने की घोषणा कर देनी पड़ी। 20 अक्टूबर 1914 ईं को राजमाता पदमुक्त हो गई और उसी दिन से अंग्रेज के हुक्म पर रियासत के प्रशासन काकाम काज एक् अंग्रेज रीजेंट आई.सी.एस. सिम्यौर चलाने लगा था। सिम्यौर की मृत्यु के बाद एक अन्य अंग्रेज आई. सी. एस हाकिम म्यौर उत्तराधिकारी बना।*"[192]

सन् 1815 ई. में गोरखा युध्द की समाप्ति के बाद, गढ़वाल को विभाजित कर तत्कालीन महाराजा ने अलकनंदा नदी का पूर्वी भाग चुपचाप अग्रेजों को सौंपना कबूल कर लिया था। तब गढ़वाल की राजधानी श्री नगर में थी, जो कि -अलकनंदा के पूर्व में पडता है। लंबी अवधि तक-पूरे बारह बरसों तक - सत्तायुक्त रहने के बाद भी सुदर्शनशाह के दिमाग में यह बात शायद नहीं आ पाई होगी कि इस समझौते के फौरन बाद अंग्रेजों ने अपने परम भक्त उस मित्र राजा

को हुक्म भेज दिया था कि वह श्रीनगर को तत्काल खाली कर दे।

"सन् 1919 ई में बालंग हो जाने के बाद अंग्रेजों से राजसत्त हाथ में लेते ही नरेंद्रशाह रियासत की राजधानी को टिहरी से हटाकर ओडायली में एक नया नगर नरेंद्रनगर बसाने की योजना बनाने में लग गया था। नई राजदानी बनाने की बात तो उसके दिमाग में न जाने कबसे पनप रही थी। कितने ही बरसों से उसके बाप दादा ने -पिता कीर्तिशाह और दादा प्रतापशाह ने -भी अपने अपने नाम से नगर बसाए थे। कीर्ती नगर और प्रताप नगर। लेकिन वे अपनी राजधानी स्थायी तौर पर कभी उन नगरों में नहीं ले गए। राजधानी टिहरी में ही कायम रही। "[193]

चक्रधर पद्मदत्त के साथ मिलकर जंगल को हडपना चाहता है। गाँव वालों पर तरह तरह की पाबंदिया रखता है। जंगल से जुड़े लोग इससे घबराने लगे।

चक्रधर ने सुन्दरसिंह पर निशाना साधने की ठान ली। सुन्दरसिंह पिछले बीस वर्षों से रियासत की सेवा में तैनात था।जब वह अंग्रेजी हुकूमत में सेवारत था तो चक्रधर से बहुत ऊँचे रैंक का आफिसर था।इस रियासत में अपने जुगाड़ भिडाते हुए पुलिस सुपरिटेंडेंट राय बहादुर चक्रधर होम मेंबर के पद पर पहुँच गया था। सुन्दरसिंह की सेहत पर इससे कोई फर्क नहीं पडता। ले.कर्नल सरदार बहादुर सुन्दर सिंह की उसके सिविलियन रूतबे को सैल्यूट नहीं करता। वह महा राजा के अलावा रियासत के किसी दूसरे हाकिम को सैल्यूट नहीं करता। चक्रधर इसे बे अदबी मानता है।

बरसों पहले सन् 1857 की गदर के दौरान उसके पुरखे महाराजा सुदर्शनशाह ने विपदा के भंवर में फंसे अंग्रेजों के सामने दुम हिलाकर और विदेशी गुलामी के खिलाफ आर -पार का संघर्ष कर रहे बागियों पर भौंक कर अपनी असीम स्वामि भक्ति का परिचय दिया था। अपने दैनंदिन तुच्छ भेदभावों को भूल कर, हिन्दुस्तान भर के बेचैन बाशिंदे फिरंगियों के खिलाफ एकजुट होने लगे थे। पडोसी रियासत नजीबाबाद के नवाब ने टिहरी गढवाल के महाराजा सुदर्शन शाह को गोपनीय पत्र भेजकर उसे साथ आ जाने को ललकारा था,ताकि फिरंगी को भारत भूमि से बाहर खदेड़ा जा सके। सुदर्शनशाह ने नवाब को जवाब में लिख भेजा कि वह अंग्रजों को दगा नहीं दे सकता। उसके साथ देने के बजाय राजा ने उल्टे यह सलाह दे डाली कि नबाब को अंग्रेज सरकार से माफी मांगलेनी चाहिए।

"गदर के दौरान सुदर्शनशाह ने अंग्रेजों की हर तरह से चमचागिरी, जी-हुजूरी और सेवा-टहल की थी। वह हर तरह से उनकी सुरक्षा करने में जुटा रहा। अपने

राज्य से कई तगड़े नौजवानों को उसने अंग्रेजों की अस्थायी फौज में भर्ती होने के लिए भेजा। कई अंग्रेज परिवारों को रियासती खजाने से मोटी धनराशियाँ अदा कर उन्हें आर्थिक इमदाद भी दी। अंग्रेजों के अनेक परिवार उस दौरान अपनी जान बचाने के लिए मसूरी के पहाडों में आकर छिपने लगे थे।सख्त अंदेशा रहता था कि बागी लोग देहरादून के रास्ते मसूरी पहुंचकर उन पर वहां भी हमला कर सकते हैं। ऐसे में अंग्रेजों की हिफाजत और सेवा-टहल करते रहने केलिए महाराजा ने दो सौ हथियारबन्द सिपाही टिहरी से मसूरी भेज दिये थे ।देहरादून व मसूरी के बीच अंग्रेजी राज में स्थित राजपुर की पहाडियों पर उन सैनिकों का शिविर स्थापित किया गया था। एक देशी राजा खुल्लम खुल्ला अपने ही देशवासियों के खिलाफ हो गया और अंग्रेजों का पहरेदार बन बैठा।"[194]

होममेंबर बनते ही चक्रधर ने इस बात की मुकम्मल व्यवस्था कर ली थी कि रियासत के अलग -अलग स्थानों से शक के घेरे में आए लोगों की हरकतों के बारे में पूरी-पूरी खबरें उसके पास पहुँचती रहें। सरदार सुन्दरसिंह और टिहरी शहर के बारे में खबरें पहुँचने की जिम्मेदारी टिहरी के एक ब्रह्मण पंत को सौंपी गई है।

" *महाराज का दाहिना हाथ बन बैठ चक्रधर की बेचैनी भी बढ़ती जा रही है। वह हरदम अपने जासूसों और छोटे कर्मचारियों से हाकिमन के मारफत रवाई से मिलने वाली खबरों का सूक्ष्म विश्लेषण करने में लगा रहता है।अध-पढ़े जासूसों की टूटी-फूटी भाषा में भेजी हुई उन रिपोर्टों से उसके शरीर का रक्तचाप और दिमागी हैरानी बढ़ने लगती है।अनपढ़ अंगूठा-छाप,निपट गवांर पशुपालक परंपरागत राजनीतिक शब्दावली को तोड़ मरोड़ कर उसके सर्वामान्य अर्थों में भारी उलट फेर करने लगे हैं।"*[195]

इस खतरनाक प्रवृत्ति को बहुत गंभीरता से समझने की जरूरत पड़ने लगी है। रियासत का जवान होने के नाते उसे महाराजा को आगाह करना पडा है कि अगर इस प्रक्रिया के उगते हुए अंकुरों को समय रहते तोड़ कर निर्मूल नहीं कर दिया जाता तो रियासत का अस्तित्व ही खतरे में पड सकता है। अपने अस्तित्व को कायम रखने के लिए इन कोंपलों को जबरन, निर्दय और निर्भिक होकर तोड देना होगा। उसे महाराजा को, किसी कूटनीतिक शब्दावली का प्रयोग किये बगैर बहुत साफ जुबान में यह अफसोस-भरी जानकारी देनी पड़ रही है कि रवांल्टे अपने को *मुलक* मानने लगे हैं और रियासती सरकार को दरबार।वे किसी भी समय अपनी अलग सरकार बनाने की, अपना अलग, एक नया शासक नियुक्त कर

दिये जाने की घोषणा कर सकते हैं। गाँव-गाँव में रवांल्टे खुलेआम ऐलान करने लगे हैं कि इस मौके पर जो कोई मुल्क के खिलाफ जाएगा, देव मंदिर में उसकी गर्दन उडा दी जाएगी।

"नरेंद्रनगर से जाने से पेशतर नरेंन्द्रशाह ने अपने दीवान से रियासत के अंदरूनी हालात पर अकेले में गंभीर विचार-विमर्श किया। अपने विश्वासपात्र दीवान को अपनी अनुपस्थिति में पूरे अधिकार सौंपते हुए उसने स्पष्ट आदेश देदिया कि किसी भी प्रकार के ढंढक से पूरी सख्ती से निपटा जाए और अंत में कोई नाजूक स्थिति उपस्थित हो जाने पर, अपने अनुपस्थिति में अपने हाकिमों कर्मचारियों के बीच वितरितकिए जाने के लिए उसने अपने हाथ से कागज पर एक 'अतिगोपनीय' संदेश लिखा और हस्ताक्षर करने के बाद उसे दीवान चक्रघर के हाथों में सौंप दियाः stand on duty until disabled - N. shah."[196]

सुन्दरसिंह के पीछे की ओर से लपकते आ रहे एक चपरासी ने सर झुकाकर नमस्कार किया। वह अपने दाहिने हाथ में एक लंबा लिफाफा लिए था। लिफाफा उसे थामकर चपरासी एक तरफ को होगया। उसने लिफाफा खोला और खडे खडे पढ़ने लगा।

17अप्रैल सन् 1930 ई. चीफ जाज बाबू गंगा प्रसाद ने सुन्दर सिंह को एक आदेश भेजा था। 'मुताबिक हुक्म कौंसिल, जो जनाब दीवान साहब ने फोन के जरिये कहा, आपको हुक्म दिया जाता है कि आप मय अपनी अमलदारी के फौरन 24 घंटे के भीतर यहां से नरेंद्रनगर को रवाना हो जाएं और वहाँ चार्ज देकर अपने मकान को जा एंगे। जो कली-खच्चर दरकार हों,पटवारी ट्रांसपोर्ट से मांग लेवें या रिपोर्ट देंग। 12 कुलीव 12खच्चरों के लिए चेयरमैम साहब ट्रांसपोर्ट, को लिखा गया है।"[197]

सुन्दरसिंह तो जानगया है कि ये चाल तो चक्रधर का है चौबीस घंटे के भीतर रियासत टिहरी-गढ़वाल की सरजमीं से बाहर निकल जाने का हुक्म उसकी जेब के अंदर छिपा पडा है। नत्थूसिंह को चार्ज देकर सभी को अलविदा कह कर चला जाता है।

यमुना घाटी में ढंढक के थमने के आसार नजर नहीं आ रहे थे। वहां से खबरें मिलने लगी थीं कि टिहरी दरबार की हुकूमत को ठेंगा बताते हुए नगाण गाँव के हीरासिंह,कंसेरू के दयाराम,खमुडी गौड़र के दयाराम और किशनदत्त के नेतृत्व में रवांल्टों ने अपनी अलग समानांतर सरकार कायम करली है। ये कोई

राजा नहीं,मंत्री नहीं,मेंबर नहीं हैं। भड़ भी नहीं हैं। बहुत मामूली लोग हैं। लेकिन इलाके में अब उनका राज चलने लगा है। कुछ दिन पहले चांदाटोखरी में जमा लोगों ने अपनी आजाद पंचायत की सथापना करते हुए यह ऐलान कर दिया था कि रियासत के वन-संबन्धी नए कानूनों को नहीं माना जाएगा।

"जगह जगह पर खुली मीटिंगे होनो लगी हैं, कभी चांदाडोखरी,कभी बडकोट कभी ठडियार, कभी राजतर में। खाई से बाहर के लोग भी रवांल्टे बनने लगे हैं। जौनपुर की पट्टियों दशव्युला, छैज्यूली, लालूट, इडवालस्यूं के अलावा भागीरधी घाटी की दशमी और हातड़ पट्टियों में भी पटवारियों की नहीं सुन रहे हैं। बहाँ ह आदमी की जुबान स एक ही सवाल पूछे जाने लगा है - किशनदत्त क्या बोल रहा है ? या हीरासिंह ने क्या कहा है ?हाल ऐसे हो गए हैं कि यमुना घाटी से शुरू होने वाली यह आग रियासत के हर हिस्से में,चौतरफ फैलती नजर आने लगी है।"[198]

रियासती फौज के कमांडेर सुंदरसिंह की बर्खस्तगी के कुछ ही दिन बाद चीफ सेक्रेट्री देवेन्द्र दत्त रतूडी के नाम से प्रकाशित एक इश्तहार रवाईं जौनपुर के अपढ़ प्रजानन के बीच बांटा जाने लगा।

गाँववालों ने चक्रधर के अत्याचारों के खिलाफ एक रजीष्ट्री, भेज दी, हूजूर कोर्ट के मारफत कौंसल को अर्ज पहुँचने के बाद उस गाँव में जांच के लिए दो लोगों को अर्ज पहुँचने के बाद सुरेन्द्रदत्त नौटियाल और डिप्टी ने राजगढ़ पहुंचे। पद्मदत्त से कहा गया कि फौरन रवाईं पहुँचो। गांव वाले यह जान नहीं पाए कि उनके पीछे षडयंत्र रचाया जा रहा है।

हाकिमान का अदब करते हुए उस वक्त उस जगह पर मौजूद रवांलेटों ने उनके आते ही अपनी गर्दनों को घुटनों तक झुकाकर उन्हें नमस्कार किया था। उनके नमस्कार करलेने के बाद हाकिमान एक तरफ कोबढ़गे थे, जहां उनके लिए कुर्सियाँ, बिछी थीं। सुपरबाईजर और पटवारी ने उस भीड़ के बीच खडे जमनसिंह और रूद्रसिंह से नजरें मिलाकर अपनी गर्दनें हिलाई तो वे दोनों गद्गद् होगए।

"अपने नाम पुकारे जाते सुन वे दोनों-जमनसिंह और रूद्रसिंह करीब-करीब दौड़ते हुए हाकिमान के सामने जा पहुंचे। उन्होंने सर झुकाकर फिर नमस्कार किया और गर्दनें झुकाकर हाकिमान के मुंह से किसी शुभ बोल के निकलने का इंतजार करने लगे। उन दोनो की ओर देखे बगैर डिप्टी ने बात शुरूकी। तुम दोनों को टिहरी चलना पड़ेगा।कौंसिल से ऐसा हुक्म आया है कि

सुलह-वार्ता करने के लिए तुमहे टिहरी आने को कहा जाए।"[199]

वन विभाग के हाकिम ने रामप्रसाद और दयाराम को रूद्रसिंह, जमनसिंह के साथ टिहरी चलने के लिए कहा। उनके वहां से कुछ दुर चले जाने के बाद पदमदत्त ने सुरेनद्रदत्त से अंग्रेजी में कुछ कहा। उनकी बातें हमेशा अंग्रेजी में ही होती थी। रवांल्टों की समझ में नहीं आ सकता था कि वे आपस में क्या कुछ बोलते जा रहे हैं, लेकिन राम प्रसाद समझ जाता था कि क्या कहा जा रहा है। राम प्रसाद तब तक दूसरे लोगों के साथ काफी आगे जा चुका था। इस मौके पर पद्मदत्त ने सुरेन्द्रदत्त से जो बात कही,उसके बाद वे दोनों भी रवांल्टों के पीछे-पीछे टिहरी की ओर चलने लगे।

पदमदत्त के कठोर बोल सुनते हुए चारों मुलजिमान उस तंग रास्ते पर एक दूसरे के आगे -पीछे खामोशी में बढ़ते जा रहे थे। हथकडियों में जकड़े हुए मुल्जीमान को दमदत्त आज अपने मन की बात पूरी तरह समझा देना चाहता था। मुलजिमान बहुत खामोशी में पदमदत्त के बोल सुनते जा रहे थे।

जब गांव वालों को इस बात का पता चला कि पदमदत्त ने रवाल्टों को टिहरी जेल ले जा रा है सब के मन में क्रोध का भाव पैदा हुआ और सब गांव वाले पदमदत्त का पीछा करते हुए उसके पास पहुंच ही गए।

" *पदमदत्त ने उन्हें बहुत गलत समझा था। वे गीदड़-धमकियां सुनकर थम जाने वाले लोग नहीं थे। पदमदत्त देखता रह गया। वे नीचे से ऊपर की ओर लपकते ही चले आ रहे थे। उसके गर्जन का उनकी चाल पर कोई असर ही नहीं पाया। अपने बेकसूर साथियों की धोखे से की गई गिरफ्तारी की खबर सुनकर उस वक्त उन सबके दिलों के भीतर भडकते जोश के शोले को कौन बुझा सकता था ? अग्नी की वे लपटें उनके ह्रदय से बाहर निकलकर किसी महायज्ञ के हवनकुंड की विराट ज्वाला का रूप धारण कर चुकी थीं।"*[200]

सब गांव वाले पदमदत्त के कूटनीति के बारे में जानचुके जो जाल उसने बिछाया रवांल्टे को जेल भेजने के लिए उसका पर्दापाश करने सारे गांव के लोग इकट्टा होकर पदमदत्त के खिलाफ खडे होते हैं।

" *राढे के डांडे पर नीचे जमीन पर लेटे दो शहीद। दो घायल रवांल्टे,एक*

घायल डिप्टी। रात का मौका। निपट अंधकार इस वक्त वे सब एक ही स्थान पर इकट्ठे थे। परिस्थितियों न उन सब को - प्रबल विरोधियों को, जबर्दस्ती आपस में मिलादिया था। डिप्टी सरेन्द्रदत्त नौटियाल को इस मौके परउन लोगों के अपने पास मौजूद रहने से सहारा मिलने लगा था। सहारा,चूंकि वे जंगली जानवर नहीं थे,मनुष्य थे-आदमी के बेटे।आदमी को आदमी के अपने पास होने का सहारा।"[201]

तिलाडी,मैदान को तो यमुना के तमाम तटों का सिर मौर माना जाता है। उस मैदान में भीड़ जमा थी और वह बहुत ध्यान पूर्वक पलटन को आते हुए दिखती जा रही थी। उन लोगों के पास कोई हथियार नहीं थे। लेकिन उनकी ओर से कोई हिलने तक की कोशिश नहीं हो रही थी। इतने सारे अनगिनत दुश्मनों,रवांल्टों की भीड़ को तिलाड़ी मैदान में बेखैफ जमकर बैठे देख चक्रधर के मन के अन्दर एक भय जागने लगा था। तो ये लोग हैं,जो राजनीतिक शब्दों की परिभाषा बदलने लगे है ? महाराज के विलायत से लौट आने से पेशतर रियासत के एक बहुत बड़े हिस्से पर अपना अलग राज कायम कर लेने के सपने देखने वाले दरबार के दुश्मन ढंढकी। रियासत की पलटन में चार सिपाही ऐसे थे, जिन का जन्म रवाईं में हुआ था। आँफिसरों ने उनचारों को अपने पास बुलाया। उनको इस हिदायत के साथ भीड़ के बीच भेज दिया कि वे लोगों को समझाएं कि वे शान्ति से काम लें और हुकूमत के खिलाफ कुछ न करें।

"बड़कोट के उठाकर बर्षिय गुलाबसिंह को चार साल की सजा सुनाई गई थई। अपनी सजा पूरी करने से पेशतर बाईस बरस की भरी जवानीं में वह जेल के अंदर ही मर गया। जुर्माना आदा न कर पाने के कारण, बाकी तमाम रवाल्टों की तरह, राजा ने उसकी जमीन -जायदाद की भी कुड़की निलामी करवा दी थी। जेल में मोल्या ओजरी, गुंदरू ढकाड़ा, ज्वाला पातर बगैरह काफी आदमी हैजे से भी मारे गए। सावन में सजा हुई, असौज में बीमारी की मार पड़ी थी।"[202]

यमुना के उन बागी बेटों ने काफू चौहान से याचित वरदान के अनुरूप, अपने स्वाभिमानी सिर हमेशा ऊँचा रखे। इतने ऊंचे कि वनवासी,पर्वतवासी उन पर सदैव अभिमान कर सकें।

आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियों को प्रभावित करने में राजनीतिक परस्थितियों की प्रधान भूमिका होती है। समाज के लोगों पर पालन या सुधार इसका आधार रानजीति के लोगों पर ही होता है। *भीम अकेला* में यात्रा वर्णन करते हुए जीते जागते लोगों का जीवन विधान का वर्णन करने वाले नौटियाल जी

राजनीतिक स्थितियाँ लोगों के जीवन विधान में कहाँ तक बाधा बनती है और कहाँ तक सुधार लाती है इन सबका वर्णन किया।

नौटियाल जी रास्ते में पुराने भवन के बाहर शिक्षा प्राप्त कर रहे विद्यार्थियों से मिले।मास्टर जी बच्चों को भवन के बाहर बिठाकर पढ़ा रहे थे। *"कुछ विद्यार्थी टाट के टुकडों पर आसीन थे। जिन्हें वे अपने -अपने घरों से लाए थे।रोज लाते थे और ले जाते थे। हमारे शिक्षा मंत्री जी के विधान सभा में सालोंसाल प्रस्तुत किए जाने वाले वार्षिक, पूरक या अनुपूरक बजटों की प्रक्रिया से गुजरने की कोई सुगंध उनसे नहीं आ रही थी।"*[203]

तीन गाँवों के बच्चे वहाँ पढ़ाई कर रहे थे। हुंगरा, मरगाँव और भिऊंपाणी। भवन के अंदर एक भी कमरा ठीक नहीं था।भवन का छत ही नहीं था। दीवारे गिरी हुई थी। " *इसके मरम्मत के लिए शिक्षा विभाग मात्र नौ हजार रूपयें की राशी देने को तैयार था, जिसे गांव वालों ने लेने से इंकार कर दिया। उतने में मरम्मत करवालेना किसी भी तरह संभव नहीं था। गाँववाले इस संकरे स्थान से हट कर एक नए चौड़े स्थान पर एक नया भवन बनवाना चाहते हैं। नए भवन के बनवाने लायक धनराशि शिक्षा विभाग देना नहीं चाहता।"*[204]

मंत्री लोग चुनाव जीतने से पहले वादे करते हैं,जीतने के बाद कोई भी वादा पूरा नहीं करते, अगर करना भी चाहा तो कोई न कोई बाधा उनके सामने आ ही जाती है। किसी युग में गुरू पेडों के नीचे बैठ कर शिष्यों को विद्या देते। बच्चे गुरू की आज्ञा का पालन करते थे। इक्कीस्वी सती के बच्चे आज भी पेड़ के नीचे बैठ कर गुरू जी का पाठ ध्यान से सुन रहे हैं।

धारी गाँव का एक बुजर्ग नौटियाल जी से साफ साफ कहता है कि - *"मैं राजनीति वालों से तंग आ गया हूँ नौटियाल जी। सैकडों घूमते हैं। राजनीति वालों की मैं सूरत तक नहीं देखना चाहता। इसीलिए मैंने आपकी उपेक्षा की थी। "*[205]

गाँव में अनेक नौजवान है उनको करने के लिए कोई काम नहीं। पढ़े लिखे लोग हैं।राजनेता आकर कहते तो है युवकों को नौकरी मिलेगी, लेकिन इतने सालों से किसी का कुछ भला ही नहीं हुआ था।

सेरा से धारी तक जहर बनाई जा रही थी। एक साल से वहां काम चल रहा है। वहा पर जो काम चल रहा है उसकी शुरूआत बीच से की गई है। पहाड के बीच में खुदाई कर रहे थे लोग। उस खड़े पहाड़ पर कोई कृषिकार्य नहीं किये जाते, इसलिए वह वन-क्षेत्र की परिभाषा के अंतर्गत आता है। फलस्वरूप केंद्रीय

शासन की स्वीकृति के बगैर नहर के एक मीटर पर भी कार्य आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। नौटियाल जी के अनुसार -"*वे एक निठल्ले, कर्मभीरू सत्पुरूष के विचार थे। वे वचन मुझे याद हैं, सिर्फ मुझे। कहने वाले को करीब साल भर पहले कही गई उस बात की शायद याद भी नहीं होगी। नहर जिस रूप में है, मैं देख रहा हूँ। नक्शे पर देखने के लिए राज्य की राजधानी लखनाऊ में सिंचाई मंत्रीजी मौजूद हैं। वे उसे देख लेंगे। जब विधान सभा में इस नहर के लिए अतिरिक्त,अधिक धन की मांग की जाएगी तो हमारे सर्वज्ञ मंत्री जी नहर को एक कागज पर देख कर सब कुछ समझ जाएंगे। इस निर्माण कार्य को स्थूल नहीं सूक्ष्म (नहीं !नहीं ! अंतर की) दृष्टि से देखने की जरूरत है।*"[206]

जनता के हाल-चाल जानने के लिए मंत्रियों के पास समय ही नहीं होता अगर लोगों के लिए कुछ काम शुरू भी किया तो अगर काम बीच में रूक जाने पर उनको पता तक नहीं चलता, और वे लोग उस ओर ध्यान नहीं दे पाते। मंत्री जी ही उस ओर ध्यान नहीं देंगे तो बीच में जो लोग हैं वे ठीक से काम क्यों करते हैं,अनेक कमियां दिखाकर काम रोकना चाहते हैं। कोई यह नहीं सोचता कि काम पूरा होने से उस इलाके के लोगों के कष्ट दूर होंगे।

नौटियाल जी टिहरी में वकालत का काम करते थे। विधायक चुने जाने के बाद उन्होंने वकालत का काम करना छोड़ दिया। वे कभी-कभी अपने दोस्तों से मिलने के लिए टिहरी कोर्ट जाते थे।एक दिन वे अपने दोस्त वचनलाल अग्रवाल के पास बैठे थे। एक आदमी आकर नौटियाल जी पर बरसने लगा। उनको कुछ कहने का मौका नहीं दिया। क्रोध के आवेश में वह बकता जा रहा था। आखिर मैं नौटियाल जी उनसे कहा कि में तुम्हारे पत्र का जवाब भेजा हूँ।पत्र अभी तक तुम को मिला नहीं होगा। वह आदमी चला गया। नौटियाल जी का मित्र एकदम आश्चर्य में डूबा और कहने लगा विद्यासागर यार इतना शान्त तो मैं ने तुम्हें कभी देखा नहीं। नौटियाल जी ने कहा " *हाँ विधायक घर - घर जा कर जुड़े हाथों से वोट की याचना करने वाला एक दयनीय जीव होता है। वोट मांगते वक़्त जिसका मुंह देखने को जी नहीं करता, उसका पिछवाड़ा देखना पड़ता है। अपने मतदाताओं के सामने उसे हमेशा सर झुकाकर, विनीत मुद्रा में रहना पड़ता है। अपने मतदाताओं से वह सिर्फ निवेदन कर सकता है, कभी आदेश नहीं देसकता (अगर अगले चुनाव में उसे अपनी,या अपनी पार्टी की ओर से उठाए गए उम्मीदवर की, जमानत जब्त न करानी हो)*"[207]

स्यांरी गांव में सिर्फ ब्राह्मण ही रहते हैं, जोशी और पंत। वे मेल से नहीं रह पाते। आपस में लड़ते रहते हैं। यत्रा के अवसर पर दोनों का मेल हो गया है। यज्ञ में नौटियाल जी को एक जीवित शहीद मिल गया। पंडित जी से बताए गए भीम कथा भी सुनने को मिला। तेजसिंह को देखकर नौटियाल जी को लगता है, तेजसिंह भीम है।

नौटियाल जी पौधशाला देखने गए। घूमने के बाद वहां के कुछ चीड़ के पेड़ों के कारण पौधे नष्ट हो रहे थे। वह पेड़ हटाने के लिए कोई तैयार नहीं। इस समस्या पर नौटियाल जी कहते हैं -" *यह स्थान किसी भी मंत्री या अधिकारी ने कभी देखा ही नहीं है। इस स्थान पर या इस तरह के दूसरे दुर्गम क्षेत्रों में जाने की कोई क्यों तकलीफ करे। बिना अपने देखे वे समझ भी कैसे सकते हैं ? जिला उद्यान अधिकारी टिहरी के कार्यालय से भी बड़ी मुश्किल से पत्रावली जिलाधिकारी के पास नरेंद्र नगर भिजवाई गई। जैसे कि वह भी विधायक का कोई निजी मामला हो। अब वह पत्रावली वहीं धूल फांक रही है। जिलाधिकारी से मैंने इस मामले के बारे में खुद भी कई बार बात की। जिलाधिकारी ने कभी मना नहीं किया। हमेशा वादा किया जाता रहा कि कार्यवाही हो जाएगी। लेकिन फाइले नीचे की ओर सरकती नज़र नहीं आती।* "[208]

नौटियाल जैसे विधायक लोगों के लिए कुछ करना चाहते हैं तो भी दूसरे मंत्री कही न कहीं उनके कार्यों पर रोक लगाना चाहते हैं। ऊपर दिया गया वक्तव्य से इस बात का पता चलता है। इस पौधशाला की रक्षा करने से गरीब लोगों तक वित्त पहुँच सकता है।अगर ऐसे छोड दिया तो पौधे और पेड़ ज्यादा वित्त नहीं दे पाएंगे। बीज अधिक मात्रा में न मिलने से कोई खेती बाडी कर नहीं सकता है। किसान को बस हाथ धर के बैठना पड़ता है। नौटियाल जी भरदार के शहीद मोलू भरदारी के बारे में भी हमें बताते हैं। मोलू भरदार कीर्ति नगर के राजशाही के विरूध्द लडते हुए मारे गए शहीदों में से एक था। मोलू भरदारी की पत्नी चौदह साल में ही विधवा हो चुकी थी। "*राज बदल गया। टिहरी -गढ़वाल रियासत की प्रजा,जनता बन गई। राजनेताओं ने रियासी प्रजा की मुक्ति के लिए बड़ने वाले देशभक्तों के संगठन प्रजामंडल को भंग कर दिया। उसे कांग्रेस पार्टी कहा जाने लगा।आजादी के लिए संघर्ष करने वाले भूतपूर्व प्रजामंडलियों को नई सरकार ने मोटर परमिट,सरकारी दुकानों के लाइसेंसे बांटने शुरू कर दिए।*"[209]

सुरमा भरदारी को पच्चीस साल बाद पेंशन देने के लिए उत्तर प्रदेश की सरकार राजी हो गई। किसी ने उत्तर प्रदेश की राज्य सरकार के पास अज्ञात पत्र भेजा, जिसमें लिखा था सूरमा भरदारी ने अपने देवर से बच्चे पैदा की है। परगनाधिकारी रिपोर्ट लिख कर भेज दिया कि बात सही है। जिलाधिकारी टिहरी गढ़वाल की रिपोर्ठ प्राप्त होते ही उत्तर प्रदेश शासन सरकार ने तत्काल निर्णय लिया कि सूरमा भरदारी की पेंशन रोक दी जाए। इस पर नौटियाल जी आक्रोश प्रकट करते हुए लिखते है -" *मैं उन मुख्यमंत्रीयों के नाम जान -बूझ कर नहीं लिख रहा हूँ जिनके जिन -जिनके, सूरमा भरदारी के क्षेत्र, देव प्रयाग क्षेत्र का विधायक होने के नाते, मैने सूरमा भरदारी के बारे में पत्र भेजे और लिखा - पढ़ी की। प्रदेश और देश की जनता उनमें से कइयों के नाम भूल चुकी है और बाकी के नामों को भी इतिहास अपने कंधों पर हर्गिज नहीं ढोने वाला है। वे कहीं रास्ते में बाहर गिर जाएंगे। कोई आज, कोई कल।"*[210]

भरदार पट्टी में शहीद मोलूभरदारी के नाम से वर्षों के बाद एक विद्यालय खोला गया था। उसका खर्चा सूरमा भरदारी ने अपनी पेंशन से अदा किया।राजनीतिक भेद भाव के कारण अब उस स्कूल से उस शहीद का नाम ही हटा दिया गया है। शहीद नागेंद्र सकलानी के नाम से कहीं कोई स्कूल, अस्पताल, सड़क, पुल या भवन नहीं बनाया गया। ऐसा घृणित भेदभाव इसलिए किया जाता रहा कि ये लोग कम्युनिस्ट थे। इनका संबंघ कभी कांग्रेस से नहीं रहा। टिहरी में स्वामी रामतीर्थ पी.जी. कॉलेज छात्र संघ के तत्कालीन अध्यक्ष्य जगदंबा प्रसाद रतूड़ी ने अपने कार्य काल में एक सभागार का निर्माण कर उसका नाम *नागेंद्र हॉल* रखा। उसके अगले वर्ष नागेंद्र स्मृति दिवस पर कॉलेज प्रशासन की उस भवन में सभा करने की अनुमति नहीं दी गयी।

नागेंद्र सकलानी और मोलू भरदारी शहीद हो गए है। उनके नाम से स्कूल - अस्पताल बनें या न बनें इससे उन्हें कुछ नहीं मिलने वाला है। सूरमा भरदारी ने अपना वैधव्य और नीरस जीवन कीब -करीब काट ही लिया है । लेकिन अपने शहीदों का अनादार करने वाला समाज पतने वाले समाज का नेतृत्व लाज़मी तौर पर उन्हीं लोगों के हाथ में जाएगा जो आजादी के आंदोलन का अपनी पूरी ताकत से विरोध करते थे और अब तथाकथित पवित्र परंपराओं को जीवित रखने के नाम पर सती प्रथा को पुनर्जीवित करना चाहते हैं।

अगर सच्चे मन से कहा जाए तो नौटियाल जैसी विधायक बहुत कुछ करना चाहते हैं। लेकिन उस पर कहीं लड़ते रहे। सच्चाई का पक्षा लेकर उन्होंने लड़ा। लोगों की छोटी छोटी कामनाएँ और उनके जीवन में बाधा डालने वाले समस्याओं को दूर करना तो हर मंत्री का काम है। लोगों को सिर्फ वोट देने के लिए इस्तमाल करना और पाँच साल तक उस क्षेत्र की ओर नहीं जाना आजकल सभी मंत्री करते हैं। आगे भी शायद करते रहेंगे। हम नौटियाल जी जैसे नेताओं की आशा तो कर सकते हैं। आज कल जन कल्याण के नाम पर स्व कल्याण करने वाले लोग बहुत मिलते हैं, लेकिन नौटियाल जैसे लोग कहीं एकाध ही दिखाई देते हैं। ऐसे नेता मिलना मुश्किल है। सही अर्थों में नौटियाल जैसे व्यक्ति ही समाज सेवा कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 35
2. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 44
3. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 75
4. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 121
5. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 11
6. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 13
7. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.14
8. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.15
9. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 16
10. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.17
11. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 25
12. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 37
13. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 39
14. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 79-80
15. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.103
17. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.16-17
18. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.20
19. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 54-53
20. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 107
21. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.108
22. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 7-8
23. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 51
24. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.83
25. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 8
26. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नोटियाल, पृ. 96
27. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.101
28. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 88
29. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.87-88

30. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 31
31. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 34
32. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 60-61
33. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 83
34. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 89
35. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 96
36. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.105-106
37. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 279
38. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 270
39. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 280
40. उत्तर बायां है ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 280
41.उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 280
42. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.280
43. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 280
44. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 281
45. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.140
46.हिन्दी भक्ति साहित्य में लोकतत्व ,रवीन्द्र भ्रमर, पृ.6
47. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 282
48. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 283
49. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 283
50. व्यावहारिक हिन्दी कोश, श्यामलाल कान्त वर्मा, पृ.145
51. धर्म और समाज, डॉ.राधाकृष्णन, पृ. 45
52. उत्तर बायां, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 265
53. उत्तर बायां, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 292
54. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 81
55. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 296
56. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल,पृ. 15
57. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 198
58. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 16
59. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नैटियाल, पृ. 88

60. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 50
61. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 51
62. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 130
63. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 51
64. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 59
65. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 60
66. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 60-61
67. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 61
68. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 51
69. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 259
70. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 48
71. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 100
72. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 111
73. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 151
74. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 287
75. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 289
76. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 59
77. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.46
78. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.68
79. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.55
80. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 48
81. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.66
82. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.115
83. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.74
84. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 291
85. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.33
86. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.84
87. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 58
88. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 62
89. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.77

90. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 38
91. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.62
92. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.79
93. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 19
94. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 24
95. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 74
97. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 75
98. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 35
99. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.119
100. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 7
101. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नोटियाल, पृ. 17
102.झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 14
103. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 35
104. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 18
105. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 19
106. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.19
107. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 96
108. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 55
109. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.18
110. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.17
111.यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटिया, पृ.52-53
112.यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.66
113.उत्तर बायां, विद्यासागर नौटियाल, पृ.36
114. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 98
115. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 34
116.झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 81
117.उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 15
118. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 18
119. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 27
120.झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 28

121.उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 25
122.उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 35
123.उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 66
124.भीम अकेला ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 95
125.सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 93
126. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.72
127. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.91
128. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 18
129. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.19
130. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.22
131. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.26
132. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.81
133. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.27
134. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 98
135. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.114-15
136. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.147
137. आर्यकल्प, सं. अवधेश नारायण मिश्र, पृ.71
138. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.33
139. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.35-36
140. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.56-57
141. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.64
142. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.67-68
143. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.32-32
144. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.33
145. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 58
146. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 59
147. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 61
148. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 61.
149. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 62
150. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 77-78

151. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.89-70
152. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 91
153. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.32
154. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.39
155. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.60
156. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.122
157. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.90-91
158. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.94
159. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.19
160. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.26
161. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.65
162. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.66
163. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.71
164. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.78
165. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.81
166. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.103
167. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.127
168. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.17
169. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.15
170. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.110
171. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.112
172. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.34
173. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.35.
174. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.35
175. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.35
176. उत्तर बायां है ,विद्यासागर नौटियाल, पृ.54
177. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.101
178. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.160
179. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ.168
180. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.78

181. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.79-80
182. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.81
183. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.82-83
184. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.87
185. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.74
186. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.83
187. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.85
188. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.90
189. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.91-92
190. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ.92-93
191. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 96
192 यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.14
193. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 31
194. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.48
195. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 69-70
196. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 73
197. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.85
198. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.86-87
199. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.94-95
200. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.99
201. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.101
202. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ.128
203. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 29
204. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.32-33
205. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.34
206. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.43
207. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 46
208. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.98-99
209. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.115-116
210. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ.119

5.1. विभिन्न कालों में नारी की स्थिति

नारी और पुरूष सृष्टि के महत्वपूर्ण अंग है किन्तु ये दोनों दो प्रकार के प्राणी हैं जो मानव जाति में प्रजनन की प्रक्रिया के आधार पर विभाजित है, इसकी विषमता का आधार लिंग भेद है। नारी की मानसिकता पुरूष की मानसिकता से कई प्रकार से भिन्न पाई जाती है। नारी को शान्ति, कोमलता, सहिष्णुता और स्नेह का प्रतीक माना जाता है। पुरूष आक्रामक और अधिकार प्रिय होता है।

नारी सामाजिक और आर्थिक संरचनाओं से बने हुए इस संसार में संघर्ष कर रही है। अतः स्त्री की मानसिकता के लिए उसकी समग्र स्थिति भी उत्तरदायी है। समाज कई प्रकार की रूढियों से नारी का शोषण करता है जिससे उसकी मानसिकता बदलती है। नारी के व्यक्तित्व विकास में बचपन के वातावरण का गहरा प्रभाव पडता है, जिससे उसकी मानसिकता में पुरूष की मानसिकता में बदलाव का कारण सिर्फ जैविकी संरचना नहीं बल्कि यह उस समाज या जाति पर भी निर्भर है जहाँ उसका जन्म हुआ तथा जहाँ वह निवास कर रही है, अतः सामाजिक संरचना का कारण बनती है।

विभिन्न युगों में नारी स्थिति को देखने से हमें यह ज्ञात होता है कि शारीरिक भिन्नता के अलावा नारी और पुरूष में जो भी भिन्नता दृष्टव्य है वह विभिन्न परिवेश और स्थितियों की उपज है और मानवीय भावना व मानसिकता के स्तर पर नारी पुरूष से बिलकुल भिन्न या निम्न नहीं थी।

1.1. आदिकाल

यह माना गया कि आदिम काल में नारी की दशा इतनी सोचनीय नहीं थी जितनी कि आज है। यह आदिम साम्यवाद की अवस्था भी जहाँ सभी मिल जुल कर रहते थे और सम्पत्ति सम्मिलित थी क्योंकि स्त्री और पुरूष के सम्मिलित श्रम से सम्पत्ति प्राप्त होती थी इसी कारण इस युग में नारी और पुरूष में भेद नहीं माना जाता था।सामाजिक और धार्मिक जीवन में नारी को विशेष अधिकार प्राप्तथे।

इस युग से ही नारी पुरूष के आकर्षण और प्रेरणा की वस्तु रही है। उसने सभ्यता के मौलिक तत्वों को प्रतिष्ठित करने के लिए कृषि कर्म का आविष्कार किया। बर्तन बनाए, गृह निर्माण किया जबकि उसका साथी पुरूष जंगल में, पर्वतों के ऊपर, समुद्र के किनारे खोज कर अपना और अपने परिवार का पेट भरता था। घर, यज्ञ, आखेट, समूह सभी जगह उसको उचित सम्मान और महत्व

दिया गया। नारी को शिक्षा के सभी अवसर प्राप्त थे। गुरूकुल आश्रम में रहती थी। वेदाध्यायन भी करती थी। खासकर नारी को देवी के रूप में माना गया जैसे धन की देवी लक्ष्मी, ज्ञान की देवी सरस्वती शक्ति की देवी दुर्गा।

इस युग के अंतिम दौर में आर्थिक विकास और नारी से अधिक बलवान होने के कारण पुरूष ने स्त्रियों के अधिकारों को प्राप्त करना आरंभ किया। स्त्री से विवाह करने का उद्देश्य नारी सम्पत्ति और अधिकार को छीन लेना मात्र था। मातृ सत्तात्मक समाज पितृसत्तात्मक समाज में बदल गया। बहुपत्नी और अनुलोम विवाह के कारण स्त्री का दर्जा हीन हो गया। विधवा विवाह का निषेध होने लगा। पतिव्रता धर्म ही सर्वोच्छ धर्म और स्वर्ग प्राप्ति का साधन समझा जाने लगा। नारी को तप, त्याग, नम्रता, पति-सेवा आदि गुणों से विभूषित किया गया।" *स्त्री का निरंतर ह्रास होने लगा। इस प्रकार देवी मानकर पूजी जानेवाली नारी बन्धनों की श्रृंखलाओं में जकडती गई। इस तरह उसकी स्थिति अत्यंत सोचनीय हो गई। व्यक्तिगत संपत्ति के प्रादुर्भाव के साथ साथ वह स्वयं भी उसके अंतर्गत परिणत होने लगी। यह नारी जाती की महान पराजय थी। यहीं से व्यक्तिगत संपत्ति पर आधारित पितृ सत्तात्मक व्यवस्था का आरंभ माना गया।"*[1]

पितृसत्ता का विजय न तो आकस्मिक कोई घटना थी और ना ही किसी हिंसक क्रान्ति का परिणाम। मानवता के प्रारंभिक दिनों से ही पुरूष ने अपनी जैविक विशिष्टता की जगह से हमेशा स्वयं अपने स्वतंत्र्य अस्तित्व का कुछ हिस्सा ही प्रकृति और स्त्री के लिए आदिमयुग में त्याग दिया था किन्तु कृषि युग के बाद उसने वापस अपनी संपूर्णता हासिल कर ली।

1.2. मध्यकाल

इस काल में विदेशी आक्रमणकारियों की गिद्ध दृष्टि पडी। उनका शासन के दौरान देश की नारियों का अपनाम होता था।

"इस काल में नारी की स्थिति में क्रमशः गिरावट आ गई। पुरूष नारी को सहधर्मिणी, सह कर्मी के रूप से वंचित कर दिया और समाज भी उसकी सह भागिता से वंचित हो कर नीति नियम व चारित्रिक निष्ठा से गिर गया। इस एक हजार वर्ष की अवधि में भारतीय समाज में नारी की सामाजिक स्थिति जितनी गिरी उतनी इसके पूर्व हजारों वर्षों में नहीं। इस काल के सामन्त जीवन में जनता को अपनी सुन्दर लडकियों को वैध या अवैध रूप से रानिवास में भेज ने के लिए

भी तैयार रहना पडता था। कई राज्यों में नवविवाहिता की सुहागरात भी सामंत के लिए रिजर्व थी, चाहे वह हाथ से छू कर ही छुट्टी दे दें।" [2]

मुगलों के आने से भारत में स्त्रियों की स्थिति और गिर गई। लडकियों की शिक्षा समाप्त हो गई, लडकी घर से बाहर निकलना बन्द, पर्दा प्रथा का विकास हुआ। स्त्री घर की चार दीवारों तक सीमित हो गई। सती प्रथा चरम सीमा तक पहुँच गई। स्त्री के समस्त अधिकार छीन लिए गए। हिन्दू कन्याओं को संपन्न मुसलमान अधिकांश संख्या में क्रय करके अपने घरों में रखलिया करते थे। समाज में बहुविवाह या पुनर्विवाह की प्रथाएँ प्रचलित थी। स्त्रियों को पुरूषों जैसा स्तर या सम्मान प्राप्त न था। भारत की इस पराजय व गुलामी का भारी मूल्य भारतीय नारी ने ही चुकाया है। मुगल शासन के पतन के बाद राज्य संरक्षण समाप्त हो जाने पर महलों में रही नारियाँ को वहाँ से निकल असुरक्षित और असह्य अवस्था में आ जाना पडा। समाज में उन का संरक्षण न होने से मजबूर होकर उन्हें दूसरे समृध्द व्यक्तियों के हाथों बिकना पडा। विभिन्न क्षेत्रों में व्यावसाय, वेश्याओं के विभिन्न नाम व प्रकार यहीं से विकसित हुए।

मध्यकाल में नारी ने अपनी शक्ति और कलात्मक रूचि का भी अद्‌भुत परिचय दिया। इस काल में नारी को सभी कवियों ने अपने मार्ग में बाधा डालने वाली के रूप में देखा। रीतीकाल में तो नारी को खिलौने के रूप में देखा गया। जिसका वास्तविक रूप कुछ भी नहीं, ना ही उसके लिए मनोविनोद की वस्तु है।

इस प्रकार हम देखते है कि, प्राचीन भारत की अस्त्र शस्त्र धारी नारी घुडसवार वीरनारी किस तरह घोडे से उतर कर पालकी और परदे में आ गई। शस्त्रार्थ करने वाली विदूषी महिला धीरे धीरे अशिक्षा के अंधकार में डूबती चली गई। आम स्त्री स्वतंत्र्य प्रेम व चुनाव का अपना अधिकार खोकर मानसिक गुलामी और शारीरक शोषण का शिकार हुई। अंत में वह भोग्य बन कर रह गई।

1.3. आधुनिक काल

भारत को स्वतंत्रता मिलने के बाद नारी की स्थिति में सुधार आया, नारी को लेकर विभिन्न साहित्यकारों ने विभिन्न रूपों में रचनाएँ की है। उनके साहित्य में नारी की विभिन्न दशाओं को देख सकते हैं। आधुनिक काल में कविता के साथ गद्य की अनेक विधाएँ साहित्य की श्रीवृध्दि करने लगी। नाटक, कहानी, चम्पू, उपन्यास आदि विधाएँ कथा साहित्य के सशक्त माध्यम सिध्द हुए और कविता के समानांतर

कथा साहित्य मानव-मन की अभिव्यक्ति को स्वर देने लगा।

उपन्यास की प्रारंभिक अभिव्यक्ति नारी की पर्दा प्रथा, सती-मर्यादा, विधवा-विवाह निषेध विषय ही रही। सुधार आन्दोलनों का प्रभाव नारी पर पडा। सामाजिक कुरीतियों को जैसे बाल विवाह, विधवा विवाह आदि का खंडन किया गया। सृजन के केंद्र में नारी को रखकर साहित्य यात्रा विकसित हुई। पहले नारी का काव्य में ही चित्रण हुआ। मनोविज्ञान के विकास के साथ -साथ नारी को भावुक, रोमांटिक और संवेदनात्मक धरातल से उठाकर तर्क सम्मत बनाने का प्रयास किया गया।

उन्नीसवी शताब्दी तक आते-आते भारतीय नारी सामंती मूल्यों, मर्यादाओं में इस कदर जकड चुकी थी कि उनसे मुक्ति के प्रति भी शायद नारी सोचने समझने की स्थिति में नहीं रह गयी थी। वह पुरूष की जीवन संगनी न रहकर उसके व्यक्तित्व की छाया मात्र मान ली गयी थी या बना दी गयी थी।

महादेवी वर्मा ने नारी की इस अधःपतन स्थिति के कारणों पर बडे ही संतुलित ढंग से प्रकाश डाला है। "*स्त्री को अपने अस्तित्व को पुरूष की छाया बना देना चाहिए और व्यक्तित्व को उस में समाहित कर देना चाहिए। इस विचार का कब आरंभ हुआ, यह निश्चय पूर्वक कहना कठिन है, परन्तु इसमें संदेह नहीं कि यह किसी आपत्ति मूलक विषवृक्ष का ही विषमय फल रहा होगा जिस अशान्त वातावरण में पुरूष अपने इच्छा और विश्वास के अनुसार स्त्री को चलाना चाहता था। उसमें इस भ्रमात्मक धारणा की स्त्री स्वतंत्र व्यक्तित्व से रहित पति छाया मात्र है। सिध्दान्त का रूप दे दिया गया इस भावना ने इतने दिनों में कितना अपकार कर डाला है, इस जाति के युगांतर तक भंग न होने वाली निद्रा और निश्चेष्टता देख कर ही जा सकता है।* "[3]

हिन्दू धर्म की भूमिका भारतीय समाज के संदर्भ में चाहे जितनी भी उच्च कोटि की हो किन्तु कालान्तर में विशेष कर पुराणकाल में आकर यह लग भग एक विषमय वृक्ष के रूप में तबदील हो चुका है। इसका सर्वाधिक कटु अनुभव भारतीय नारी समाज को ही भोगना पडा। राष्ट्रीय आजादी और स्त्रियों के संघर्ष में स्त्री पुरूषों के समान भागीदारी समानता के स्तर पर भागीदारी और देश की आजादी के साथ ही भारतीय स्त्रियों को मिले समानाधिकार।

आधुनिक काल में रूढियों की श्रृंखलाओं में बंधी नारी अपने पर ढापे गये अत्याचारों का विरोध करती है। पहले नारी अंधविश्वास, निरक्षरता और अज्ञानता के ढाँचे में बँधी हुई थी। लेकिन सामाजिक तौर पर सुधार लाया गया। सामाजिक

सुधारकों ने स्त्री शिक्षा पर बल दिया। विधवा विवाह पर जोर दिया। पर्दा-प्रथा का खंडन किया। सामाजिक ढाँचे में नारी का स्वतंत्र और गौरव पूर्ण स्थान स्वीकृत हुआ। भारत में नवीन विचार धारा तथा अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से नारी स्वातंत्र्य की भावना आई और नारी को शोषण से मुक्त करके उसको समानाधिकार दिया जाने लगा। नारी में राष्ट्रीय चेतना देश भक्ति की भावना को विकसित किया जाने लगा।

"प्रत्येक परिस्थिति में नारी की स्वभावगत दुर्बलता ही उसे समस्याग्रस्त और पतनोन्मुख बनाती है। सर्वेक्षणों से सिध्द है कि पूर्ण स्वतंत्रता किसी नारी को संतुष्ट नहीं कर पाई। भय और असुरक्षा की भावना से मुक्ति असंभव है। नारी का कामिनी भाव जब तक उसमें विद्यमान है,मुक्ति आन्दोलन का कोई अर्थ नहीं।"[4]

नारी को नारी से मानव होने के लिए बौध्दिक स्तर पर विकास भी करना होगा। राष्ट्रीय व समाज के कार्यों में भागीदारी बढाने के लिए स्वयं को तैयार करना होगा। वैचारिक शक्ति का संबल लेकर सुनियोजित ढंग से सामाजिक बदलाव के लिए निरंतर नारी को प्रयत्नशील रहना होगा। अतः धीरे-धीरे पश्चिम के आदर्शों एवं आचरणों से प्रभावित सुधार की आवाज मुट्ठी भर शिक्षित मध्यम एवं उच्च वर्ग की स्त्रियों व नेकी दिल पुरूष समाज सुधारकों ने उठाई। इस तरह से एक नई चेतना सामाजिक अधिकारों एवं समानता की एक नई आकांक्षा संचारित होने लगी थी।

5.2. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित नारी

मानव सभ्यता के विकास के इतिहास के विचार करते हुए हम देख सकते हैं कि समय -समय पर अन्यान्य कारणों से विभिन्न ज्वलंत मुद्दे एवं वस्तु स्थिति की व्याख्या में लगातार बदलाव आता रहा है। स्पष्ट ही इसके पीछे सरोकारों की महत्वपूर्ण भूमिका हुआ करती है। कार्ल मार्क्स ने कहा- जो महाजन के लिए धन है वही कर्ज लेने वाले के लिए ऋण है। चूँकि दोनों के निजी एवं वर्गीय सरोकार भिन्न भिन्न होते है इसलिए वही पैसा एक के लिए धन है तो दूसरे के लिए कर्ज।

इस दृष्टि से यदि विभिन्न ज्वलंत सामाजिक मुद्दों को ऐतिहासिक धारावाहिकता में रखकर देखा जाए तो स्पष्ट होता है कि इन मुद्दों को लेकर समय समय पर जो व्याख्याएँ सामने आती रही हैं वे हर समय स्त्री पुरूष दोनों के लिए समान रूप से सही साबित नहीं हो सकती। स्त्री-पुरूष के बीच जैविक धरातल पर जो भेद है उसका आधार प्राकृतिक है किन्तु सामाजिक व्यवहार में जो भेद दिखाई

पडता है वह कतई प्राकृतिक नहीं है।

मार्क्सवादी विचारधारा ने केवल स्त्री से संबंधित विभिन्न सामाजिक मुद्दों पर अलग से विचार करने की कोई प्रविधि विकसित नहीं की। समाजवाद नारी मुक्ति की संघर्ष यात्रा का अंत नहीं बल्कि एक नई शुरूआत है।

मानव संवेदना जब धर्म, जाती, लिंग, रंग और रहन-सहन की प्रणालियों में बंट जाती है तो वह किसी भी समाज के लिए दुर्भाग्य की बात होती है, क्यों कि तब आदमी आदमी नहीं रहता। झुंड का प्राणी मात्र बनकर रह जाता है। यहाँ हिन्दू की पीडा मुसलमान की पीडा नहीं बनती और न मुसलमान की पीडा हिन्दू की पीडा। यह दृष्टि स्त्री-पुरूष संबन्धों में भी आ गई है। हालां कि स्त्री पुरूष एक दूसरे के अर्धांग है और एक के बिना दूसरे का जीवन अधूरा रह जाता है। स्त्री की अस्मिता का सवाल उसके अस्तित्व एवं मनुष्यत्व को स्वीकार करने का सवाल आज मानवता का सब से बडा सवाल है। सदियों से स्त्री की पहचान को नकारा गया है और आज भी नाना प्रकार के कुतर्कों से उसे नकारने का प्रयास चलता रहा है। पर स्त्रियाँ इन सब के बावजूद आज अपने पैरों पर खडी होने के काबिल बन गई।

स्त्री स्टृष्टि की ही नहीं समाज का भी महत्वपूर्ण अंग है शारीरक कमजोरी के अलावा विभिन्न् परिवेश और परिस्थितियों के कारण उसकी मानसिकता पुरूष से अत्यन्त भिन्न है अपनी इस अलग मानसिकता से उसने विकास की सीढियों को पार किया और अनेक कठिनाइयों का सामना किया।

मनुष्य, समाज और संस्कृति का उत्थान पतन उस समाज में नारी की स्थिति पर निर्भर है। समाज में उसकी स्थिति के अनुसार ही साहित्य में उसकी स्थिति में परिवर्तन आना स्वाभाविक है। सभ्यता के आरंभ से आज तक की उस स्थिति पर पहुँचने के लिए वह लंबी यात्रा पार कर चुकी है। जहां उसे कई कठिनाइयों का सामना करना पडा था। कहीं उसका दर्जा ऊँचा था तो कहीं नीचा, उसका रास्ता कही सीधा रहा तो कहीं टेडा मेढा। सारी सृष्टि को स्त्री पर टिके रहने के बावजूद स्त्री ने समाज में बहुत अधिक कष्ट झेले है। नारी के जीवन का प्रथम लक्ष्य पत्नीत्व तथा अंतिम लक्ष्य मातृत्व माना जाता रहा।

सभ्यता के विकास के साथ साथ विभिन्न परिवेश में नारियों की स्थिति में परिवर्तन होना स्वाभाविक था। सभी साहित्यक विधाओं का इससे प्रभावित होना कोई नई बात नहीं थी। खासकर उपन्यास, जो कि आधुनिक साहित्यक विधाओं में एक सशक्त माध्यम है। समाज में नारी की बदलती स्थिति, उसकी बदलती

मानसिकता को उपन्यास में स्थान मिला और उसके यथार्थ चित्रण में उपन्यास ही उपयुक्त और समर्थ तथा प्रभावशाली विधा मानी गई थी।

आज वैज्ञानिक युग में स्त्री ने हर क्षेत्र में प्रवेश किया है। वह पुरूषों के बराबर काम कर रही है। पर उसे घर के चार दीवारों के बाहर भी निकलने को इजाजत नहीं थी। समकालीन कथा साहित्य में देखा जाए तो नारी चेतना का स्वरूप बडी तेजी से आगे बढ रहा। जिस को आगे बढाने वाले महत्वपूर्ण महिला लेखिकाएँ हैं, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, सुधा अरोडा, ममता कलिया और मंजुला भगत, राजीसेठ, मृदुला गर्ग, सूर्यबाला और मृणाल पांडे और मैत्रेयी पुष्पा, नासिरा शर्मा आदि के माध्यम से साहित्य जगत का निरंतर विस्तार हुआ है। साहित्य में स्त्री के अहसास का धरातल गहरा हुआ और नए नए आयाम उद्घाटित हुए हैं।

स्वतंत्रता के उपरान्त हिन्दी उपन्यास में नारी के तीन रूप दिखाई देते हैं। अपने पहले रूप में वह सदियों से चले आ रहे शोषण और अत्याचार की स्थितियों की शिकार है, दूसरे में वह नई परिस्थितियों से पैदा हुई नई समस्या से जूझ रही है और तीसरे रूप में आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी होने से परंपरागत नई संहिता के जकडन को चुनौती देने और राजनीतिक दिशा में अग्रसर होने के लिए संघर्ष कर रही है। आज के दौर मुख्यतः आठवे दशक के बाद या उससे कुछ पहले प्रकाशित उपन्यासों में हमारा ध्यान ऐसी स्त्री की ओर गया है जो अपने सामने उपस्थित चुनौतियों को धैर्य के साथ सामना करना स्वीकार करती है और अपने किसी निर्णय के लिए पुरूष की सहायता नहीं लेती।

राजी सेठ की वसुधा, मैत्रेयी पुष्पा की मंदाकिनी, प्रभाखेतान की प्रिया और सोमा, सुरेन्द्रवर्मा की वर्षा, चित्रा मुद्गल की नमिता, उषा प्रियंवदा की वाना, अजय नावरिया की वंदना और संगीता, विद्यासागर नौटियाल की सकीना और हसीना आदि अपनी खुशी मुक्त अधिकारों की प्राप्ति या अस्मिता की रक्षा के लिए साहस पूर्ण कदम उठाने की हिम्मत रखती है, प्रश्न चाहे जीवन साथी चुनने का हो या कोई क्षेत्र चुनने का हो वे अपना निर्णय खुद लेती है। सजग आत्म चेतना और आत्म निर्णय से लैस हो कर वे न केवल सामंती परिवेष और परंपरागत मर्यादाओं के गढ तोडती है, बल्कि सकारात्मक ढंग से अपने व्यक्तित्व का निर्माण भी करती है।

2.1. नारी की सामाजिक स्थिति

मनुष्य की मनुष्यता उसके सामाजिक होने में ही निहित है। यही बात नारी पर भी लागू होती है क्योंकि वह अपने विवाहिता एवं माता रूप में परिवार की आधार होती है। परिवार को एक सामाजिक इकाई के रूप में ही स्वीकार किया जा सकता है। परिवार को स्त्री ही संभलती है और इस प्रकार सामाजिक जीवन को एक दिशा प्रदान करती है। आधुनिक युग में परिवार मूलतः दम्पति और उनकी संतान से बनता है। इसी अर्थ में परिवार की तरह दम्पति को भी सामाजिक इकाई माना जाता है और इनकी व्याख्या उसी वर्ग और जाति के आधार पर की जाती है। समाज के साथ नारी का पत्नी रूप अधिक जुडा होता है। यदि दंपति अपनी समानता वाले सामाजिक समूहों से जुडे होते हैं तो उसका श्रेय पत्नी को ही अधिक जाता है। बाह्य जगत की व्यवस्था के अभाव में वही सामाजिक औपचारिकता में सक्रिय होता है।

अपना घर दूसरों को दिखाने की खुशी हो अथवा अपने रूप प्रदर्शन की वृत्ति हो इनकी प्रासंगिकता समाज में प्रशंसा पाने से ही जुडी है। वस्तु, आभूषण और प्रसाधन सामाग्री स्त्री की जिस मानसिकता को जिस प्रकार रीति रिवाज भी ऐसे ही बनाए गए है जिस से स्त्री का अधिक आत्म प्रदर्शन हो और साथ-साथ उस पर शासन भी बना रहे। मनुस्मुति में लिखा गया है -"*पिता रक्षति को मारे, भ्रता रक्षति यौवने, रक्षति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वतंत्रम हार्त। इसका अर्थ है कुमारी अवस्था में नारी की रक्षा पिता करेंगे यौवन में पति और बुढापा में पुत्र, नारी स्वतंत्रता योग्य नहीं है। पिता, पति और पुत्र के पिंजडे में नारी को बंदी बनाए रखने का कौशल शास्त्र को खूब अच्छी तरह आता है।*"[5]

नारी समाज में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। कर्तव्य परायणता एवं दायित्व बोध उसकी विशेषताएँ है। वह सदैव अपने कर्तव्य के प्रति समर्पित रही है। प्राचीन काल में नारी की स्थिति काफी सम्मान जनक थी, मध्यकाल में नारी की अवस्था में परिनर्तन आए। वह विलास की वस्तु मात्र बन गई लेकिन समय के बदलाव के साथ ही उसकी सामाजिक दशा में सुधार आता गया। समाज में नारी की स्थिति में आने वाले यह सुधार कभी सम्मान का विषय बना तो कभी वह विलास की वस्तु मात्र बन गई, लेकिन समय के बदलाव के साथ ही उसकी सामाजिक दशा में सुधार आता गया। समाज में नारी की स्थिति में आने वाले यह सुधर कभी सम्मान का विषय बना तो कभी हेय का, इस में कसूर नारी का नहीं

वरन् तत्कालीन समाज का है। लेकिन उसने विषम से विषम परिस्थितियों में भी अपने साहस और वीरता का परिचय दिया है।

समाज में नारी का शोषण और उस पर अत्याचार बहुत तरीकों से एवं हमेशा होता आया है। यह शोषण कहीं अतीत में शारीरिक रूप से होता था आज मानसिक एवं शारीरिक दोनों रूप से हो रहा है, परिवार से लेकर समाज तक हर क्षेत्र में वह विभिन्न समस्याओं का सामना करती है। नारी ने अपने गुणें के आधार पर पुरूष से ज्यादा मान सम्मान कमाया है। आधुनिक काल में नारी की स्थिति मजबूत हो गयी है। उसने अपने आपको सामाजिक दृष्टि से काफी सुखद कर लिया है। आज की नारी उच्च शिक्षा प्राप्त कर वह पुरूष के साथ हर क्षेत्र में अग्रसर हो रही है। इस प्रकार अपने कर्मों के आधार पर सदियों से पिछडी स्त्री ने अपनी स्थिति के साथ ही समाज की सोच और विचारधारा को बदल दिया है। अब वह अपने विषय में स्वयं सोचती है। वह समाज की आधीनता से ऊपर है।

नारी की सामाजिक स्थिति व्दिपक्षीय अवस्था में है। एक तरफ वह इन सब के मूल्य चुका रही है। आज की नारी की अस्मिता असुरक्षित है-वह उच्च पदस्य शिक्षित एवं सुरक्षित है वही दूसरी तरफ जहाँ वह इन सब के कार्यालयों में, परिवार के विभिन्न संबन्धों के बीच, समाज के विभिन्न क्षेत्रों पर उसकी लडाई जारी है।

नारी शोषण एक ऐसी समस्या एवं सामाजिक विकृति है जो सदियों से चली आ रही है। समाज में नारी का शोषण हमेशा से होता आया है। कभी परिवार ने तो कभी समाज ने स्त्री पर अत्याचार किये है। समाज में नारी का शोषण मानसिक एवं शारीरक धरातल पर किया जा रहा है। शारीरक शोषण केवल मारपीट तक सीमित नहीं है। यह शोषण आज यौन शोषण बनगया है।

समाज के निर्माण के लिए एक दूसरे के पूरक दो रूप है पुरूष और स्त्री। मानव समाज में नारी का महत्वपूर्ण स्थान है। नारी मानव समाज का श्रृंगार एवं उसकी शक्ति का स्त्रोत मानी गयी। उसे शक्ति स्वरूप माना गया। नारी, मानव समाज का निर्माण और विकास करती है। प्रागैतिहासि युग में नारी स्वतंत्र थी। स्त्री की स्थिति पूरूष से श्रेष्ठ मानी जाती थी। उस समय समाज में स्त्री का अधिकार अधिक था, जिसे मातृसत्ता या मातृशाही कहते हैं।

मनु जाति व्यवस्था के कट्टर समर्थक थे। इसलिए उन्होंने शूद्रों के साथ

स्त्रियों को भी शूद्रों की पंक्ति में बिठा दिया, जिससे वह जन्म भर पिता, पति और पुत्र के अधीन रहने को कहते है। इतना ही नहीं स्त्रियों की स्वतंत्रता खुद की कुछ नहीं होती।

हिन्दू भारत के कोने कोने में बिखरे हुए थे। उनके रीति-रिवाजों में एक रूपता नहीं थी। कहीं मामा भानजी से शादी कर सकता था तो कही मामा, भानजी को पुत्री समझता था। रूढ परंपराएँ ही नियम से बन गये थे। मुस्लिम, इसाई व पारसियों के पारिवारिक, व्यक्तिगत कानून थे। यहाँ मुस्लिम को चार शादियों तक बंदिश थी तो ईसाई व पारसियों के साथ एक स्त्री से विवाह का कानून था। इस प्रकार भारत देश में स्त्री की स्थिति अलग-अलग थी। समाज में उच्चवर्ग की स्त्री को जिस प्रकार की इज्जत मिलती है उस प्रकार एक दलित स्त्री को नहीं मिलती क्योंकि उसके पीट पर निम्न जाति का पोस्टर होता है। इसलिए समाज में आम स्त्री की स्थिति अलग होती है तो निम्न वर्ग की स्त्री की स्थिति कुछ अलग होती है। सवर्ण स्त्री को घर बैठे खाना मिलता है तो दलित स्त्री को दिन-रात कष्ट किये बिना खाना नहीं मिलता। सवर्ण स्त्री को जितनी सुख-सुविधाएँ मिलती है, उतनी दलित स्त्री को मिलना मुश्किल है।

स्त्री दलित जाति की हो या गैर-दलित की, स्त्री मात्र के कुछ अनुभव ऐसे हैं जो जाति या वर्ग की दूरियों के बावजूद इन सीमा रोखाओं से परे हैं। प्रत्येक स्त्री पुरूष द्वारा जानवर की तरह प्रयुक्त होने से पीडित है। सारी दुनिया में स्त्री की स्थिति एक सी है। प्रत्येक जाति की स्त्री के पास पुरूषों की तुलना में काम के घण्टे अधिक हैं। वह श्रम के बाजार में सस्ते श्रम के लिये अधीनस्थ स्थिति में रहने के लिए बाध्य है। बलात्कार स्त्री के प्रति हिंसक प्रहार, मार-पीट, छीटा कांशी और रीति-रिवाज में अहेतु की हिंसा सभी वर्ग की स्त्रीयों को झेलनी पडती है। जाहिर है कि आदिकाल से लेकर आज तक स्त्रियों को समाज में निम्न स्थान रहा है। इसलिए भारतीय समाज में स्त्री की परिस्थिति कुछ अलग ही दिखायी देती है।

किसी भी लेखक की रचना स्त्री पात्र के बिना अधूरी ही रह जाती है। संसार में स्त्री के बिना तो पुरूष का अस्तित्व ही नहीं है। पुरुष जानता है कि नारी के बिना उसका आगे बढना मुश्किल है। लेकिन वह हमेशा नारी को दुःख पहुँचाने की कोशिश में लगे रहता है। एक तरफ घर के लोग दूसरी तरफ समाज के लोग नारी पर अत्याचार करने की कोशिश करते ही रहते हैं। गाँव की औरते कभी समाज से अलग नहीं रह पाती। सब मिलजुल कर ही काम कर लेती हैं। घास

काटने से लेकर पानी भरने तक वे लोग साथ ही रहती हैं। एक दूसरों के कष्ट में भाग लेती हैं। एक दूसरे के मदद करने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। किसला को दस साल तक बच्चे न होने के कारण खुणी जानती है वह सोचती है कि किसला जोल के पास जाकर मुक्त होकर आए।

"खुणी के मन में आ रहा है - हाँ किसला, आज तो इस पौणदी के साथ तू भी आबाद हो कर आना। मेरे देखने में तो तूभी अभी पौणदी ही है। औरत तो तू कभी बन ही नहीं पाई। आज तुझे भी तून आ गई लगती है। ठीक है, इस बेकाम आदमी के भरोसे कब तक बैठी रहेगी ? यह आदमी कोई आदमी है? दस साल पहले ब्याह कर लाया था छोटी सी किसला को। किसला है कि वह किसी से कुछ नहीं कहती। गाँव बस्ती में अपनी बात किसी से नहीं कहती। कुछ भी नहीं कहती। आज तूने सही फैसला कर लिया है किसला। तू एक दम ठीक जगह जा रही हो।"[6]

गाँव भर की औरतों को किसला के और उस बेकाम आदमी के बारे में सब कुछ मालूम है। किसला पौणदी को लेकर जा रही थी रास्ते में एक घोडा ने घडी को जबर्दस्ती पकड लिया घोडे की आताताई हरकतें शुरू हो गई हैं। घोडी बेबस हो गई है। बहुत ध्यान मग्न होकर एकटक देखते हुए किसला आनंद लेने लगी है। *"अपनी जिन्दगी में पहली बार उसे ऐसा आनंदमय दृश्य खुलकर देखने मिला है। कोई बस्ती नहीं, मनुष्य नामधारी कोई दूसरा नहीं जिसकी मौजूदगी के कारण खुलकर देखने में कोई बाधा उपस्थित हो सके, जरा भी शरम करनी पडे या नजरें बचानी पडें।"*[7]

गाँव में अपने रिश्तेदारों के बीच में भी झगडे होते रहते हैं। मर्द लोग तो सुबह या शाम में एक दूसरे का चेहरा देख लेते हैं औरते घर पर ही रहती हैं और बातों बातों में झगडे करती रहती हैं। यह तो उस समाज की आम बात है।*"भीमा रावत की घरवाली पुस्सी अपने आंगन में दिन के खाने के जूठे बर्तन धो रही थी। अचानक उसकी नजर दिवारीखोल की ओर गई। वहाँ उसके अनकटे खेतों के भीतर पहुँच गए गोरू मजे से उजाड खाने लगे थे। उसके तन बदन पर आग लग गई।अपने पूरे जोर से उसने पडोसिन को ललकारा-खडी फसल नहीं दिखाई दे रही है आँखों से जो वहां मवेशी छोड दिए? दिन दोपहार ही हो गई हैं ये आँखे कानी? सत्ता भी क्यों पीछे रहती। वह क्यों दबती? आवाज सुनकर कमरे के भीतर से निकली और अपने घर की सीढियों पर खडी हो गई। वहां से उसने अपने बाण*

छोडने शुरू कर दिए-आंखे तेरी होंगी अंधी। मवेशी तेरी फसल में नहीं, अपनी जमीन पर छोडे है। तुम्हे किसने रोका अपनी फसल को काटने से ? जान-बूझकर फसल नहीं काट रहे हो जिससे हमारे गोरू भूकों मरने लगें। खुद तो गोरू पाल नहीं सकती, हमारे धन-चौन को देखकर जलने लगती है रंडा।"[8]

मिल जुल कर रहने वाले गाँव वालों के समाज में ऐसी आमबाते होती रहती है। जितना झगडा करते हैं उतना मिल जुल कर रहते हैं।

नारी का मन जल्दी पिघल जाता है। पति या बेटा कितना भी कष्ट दे चुपचाप सहलेती है। अपनों को ही नहीं परायों को भी अपना प्यार बांट देती है।"*धनसिंग की माँ ने करणू से कहा है - जब तक सतगंगा तेरी राहें नहीं खोलती तू खाने के लिए इधर -उधर मत जाया कर। मैं जैसा धनसिंह के लिए बनाती हूँ तेरे लिए भी खाना बनाती रहूँगी। तू अपने मन में संकोच मत करना। यह हम सबकी विपदा की घडी है।"*[9]

करणू के बारे में इतना जान-पहचान न होने पर भी धनसिंह की माँ बहुत प्यार दिखाती है। वह मानती है कि इस समाज में जिंदा रहना है तो सब लोग मिलजुल कर रहना है। तभी सब सुखमय जीवन बिता सकते हैं।

सकीना अकेली बुग्यालों में फंस जाती है। वह उस रात सदरू नामक एक पालसी के साथ बिताती है। वहाँ वह बेहद सुरक्षित महसूस करती है।"*सकीना सदरू के डेरे की तरफ चली आई थी। जिन्दगी उसे उस दिशा में धकेल रही थी। अकेली, कुंआरी, हसीन लडकी। अपरिचित मर्द के पास अपने पांवो से चल कर जा रही थी। बौलिया गधरे ने उसकी आगे की तरफ जाने की कुल राहें बन्द कर दी थी।"*[10]

अजनबी होने पर भी सकीना को सदरू उसका मदद करता है। उसके डेरे पर रहने देता है।

नौटियाल जी के रचनाओं में पर्वतीय नारी की विविध रूप का वर्णन मिलते हैं जैसे खेतों में खलिहानों में जंगलो-चरागाहों में पहाडी की चोटियों में बस्तियों, वीरानों में जिन्दगी से लडती हुयी नारी आदि पर्वतीय नारी के अतिरिक्त वे बाहर क्षेत्र के नारी के बारे में चर्चा नहीं की इस का कारण वे उस परिवेश से जुडे नहीं थे। पहाड के घाटी से चोटी तक हर एक हिस्सा उनके भीतर छिपी हुयी है। वे हमेशा जो दोखा खाकर जबरदस्ती वेश्यालयों में भेजे जानेवाले, मजबूर

होकर अपना शरीर का व्यापार करने वाली नारी के विभिन्न रूपों को देखा न की आलिशान कोठियों, भवनो में जानबूजकर वेश्यावृत्ति करनेवाली। ऐसे औरतो के असीम खुशी के लिए समाज के कितने अभागिनियों का खुशी खुरबानी करते हैं।

गाँव में अगर कोई नई बांद आएगी तो खासकर औरतो को पता चलता है आगर बाँद को कोई ब्याह कर लाया या भगाकर लाया हो, पता तो तुरन्त गाँव के औरतों को लगता है। जो भी आए वह घर में बंद नहीं रहगी उसे एक न एक दिन बाहर आना ही पडता है। ऐसा नहीं कि वह घर में ऐश और आराम करे, आखिर वह औरत तो है, उसे घास, लकडि, पानी लाना पडेगा खेतों में काम करना पडेगा ही। कही न कही उस बांद को औरत लोग पहचान लेते हैं। एक दूसरों से उस औरत के बारे में बातें भी चलती हैं।

गाँव की औरतें सब मिल कर जंगल जाती हैं। नई बांद आएगी तो उसको भी साथ में ले जाते हैं। बांद के साथ स्नेहमय व्यवहार करलेते हैं। एक दूसरे की मदद करलेते हैं। ससुराल वाले या मायके के किस्से सुनते सुनाते हुए अपने काम में लगे रहते हैं। गाँव के सब बहुएँ एवं बेटियां घास काटने तो चलती ही हैं। जानवरों का पालन करना उनकी जिम्मेदारी है।कोई भी औरत अपनी गाय या भैंस को भूखा नहीं रहने देगी। घर के काम के साथ जंगल से घास ले आने का काम भी औरत ही कर लेती है।

झुण्ड से बिछुडा उपन्यास में यज्ञदत्त की पत्नी आचार के विरूध्द पति के मौत के बाद घाट पहुँच जाती। जब उसका पति जिन्दा था गरीबी के कारण उसका ठीक इलाज नहीं कर पाई। इस के कारण वह डर रही थी कि *"उसे बे सहारा राँड-मूँड औरत समझ कर, लोक लाज के मारे घाट पर जा रहे शवयात्री भी कही उसके पति के शव को घाट पर यों ही अधजला छोड कर लौट न आयें। अपने खेत में जमा लकडियों के चार गट्टों को एक-एक कर अपने सर पर ढोते हुए उसने घर से घाट तक के दो चक्कर खुद ही लगाये थे।"*[11]

गाँव की औरत लकडियाँ पहुँचाने मे मदद की थी। चिता के सामने खडे होकर अपनी जिंदगी के गुजरे दिनों को याद की और अंत तक घाट पर रही। यज्ञदत्त की विधवा की मदद गाँव वालों ने ही किया। रिश्तेदार बगल के घर में होते हुए भी कुछ मदद नहीं किया बेसहारा बेवा और माँ से बदला लेते रहे। यज्ञदत्त की मौत का जश्न मना रहे थे। अकेली औरत ने गाँव वालों के मदद से

पति का दहन संस्कार करवाया।किसी के पास जाकर आंचल नहीं फैलाई थी। जहाँ तक हो सके वहाँ तक उसने अपना फर्ज पूरा किया।

गाँव की औरतों को छुट्टी नहीं मिलती।सुबह होते ही अपने हाथों में या सरों पर अपने बंठे, गगरियाँ, पतीले लिए पानी के लिए जलधारा के पास जाती हैं।वे औरतें सामान्य ढंग से बातें करती जाती हैं और वापस लौटते समय में भी बाते करते हुई वापस अपने घर आ जाती हैं। त्यौहार के दिन पर भी वे अपने कामों में लगी रहती है।

दुश्मन का जन्म होते ही उसकी पिता की मृत्यु हो गई। उसकी माँ ने उसे दुश्मन कह कर पुकारने लगी थी।"*राजकुमार तो सिर्फ महाराजाओं के महलों में पैदा हो सकते हैं। राज घराने की रानियाँ जनती है राजकुमार। प्रजा के घरों के अंधेरे, दुर्गन्ध और सलीन से भरे ओबरों में सौणू, बैसाखू, जुठइया भादू, चोच्य, मुस्सा, फजीतू ही जन्म लेते रहेंगे और उन्हे हमेशा उसी तरह के नामों से पुकारा जाता रहेगा। उन्हे राजकुमार कैसे कहा जा सकता है। बाप जिंदा रहा होता तो बात ही कुछ और होती। बेवा, बेसहारा, बेबस, दुःख की मारी माँ को अपनी बिपददा की उस घडी में जो नाम सूझ पडा, वह उसे उसी नाम से पुकारने लगी थी। जिसे दुश्मन कहती है वही इतनी भरी-पूरी दुनिया में उसे सबसे प्यारा है।*"[12]

समाज में नारी को कई कठिन परिस्थितियों का सामना करना पडता है। अकेली औरत को ही सब कुछ संभालना पडता है। एक औरत पूरी रात अपने पति का इन्तजार करने लगी। पति काम के लिए जहाँ गया था वहाँ बाघ ने गाय को मारदिया।इस बात को सुनते ही उस औरत के होश उडगए। उस दिन घसियारिने जंगल से जल्दी घर लौट आयी थी। जो भी घर से गए सब वापस आगए। जब वह अकेली घबरा कर सब के घर गई और सब से पूछती रही। ऐसी मानसिक स्थिति में अपने आप को अकेली ही संभालती हुई सामना किया।

भीम अकेला उपन्यास में सूरमा भरदारी, जो एक शहीद की पत्नी थी, अपने चौदह साल की उम्र में ही विधवा बनगई, पच्चीस साल बाद उसको पंद्रह रूपयों का पेंशन दिया गया और उस पैसा को वापस भी लिया गया। इस वजह से कि सूरमा भरदारी अपने देवर के साथ संबन्ध रखी थी और उनसे बच्चे पैदा किया।

"सूरमा भरदारी को पेंशन उसके पति मौलू भरदारी की देश की स्वतंत्रता के लिए दी गई शहादत के लिए मंजूर की गई अथवा इस बात के लिए कि उस शहीद की मृत्यु के उपरान्त सूरमा आजीवन अपनी नारी देह को जला-जला कर खाक करती रहे? और अगर ऐसा हुआ होता कि सरमा अपने देवर के साथ या किसी भी मर्द के साथ औरत के तौर पर रहने लेकिन बच्चे जनने का अपराध न करती तब क्या होता? तब उसकी पेंशन यथावत जारी रखी जाती या नहीं? उसे किस अपराध के लिए सजा दे रही है हमारी सरकार? यदि उससे बच्चों का जनने का अपराध न हुआ होता तब तो उसे यह सजा नहीं दी जाती ?"[13]

सूरज सबका है उपन्यास में उप्पू गढ का भड काफू चौहान की मौत नहीं होने पर भी काफू की मौत का ढोंग रचा गया। इस समाचार को सच मानकर औरतें बहुत दुःख हो जाती है अपनी पूरी जिन्दगी काफू के लिए अंकित की हैं अब काफू के बगैर वे जीना नहीं चाहते उनके अनुपस्थिति में वे दुशमनों की शिकार नहीं बनना चाहती। इसलिए अपने आपको चिता लगाने के लिए तैयार हो जाती है। काफू नहीं तो गढ की और औरतों की रक्षा कौन करेगा। इस बे इज्जती को सह न कर मर ने के लिए तैयार होतीं हैं।

कितनी स्वाभिमानी औरते थी उस गढ की। अपने ऊपर किसी पराई मर्द की नजर होगी यह बात सोच कर ही वे लोग अपना प्राण त्याग दिए। जान से ज्यादा प्यार था उस राजा से। खुद से ज्यादा भरोसा था।

बडीदादी एक ऐसी औरत थी गाँव में किसी का ब्याह हो या कोई रस्म उसमें भाग लेती थी। बडीदादी कोई त्यौहार नहीं मनाती थी। घर पर अकेली ही रहती थी बडीदादी गाँव में सब की बडीदादी है। बच्चे से लेकर बूढे तक उस औरत को बडीदादी कह कर ही बुलाते थे। *"बडीदादी सब की बडीदादी है।पूरे गाँव की बडीदादी।वह किसी की माँ नहीं,किसी की चाची नहीं, किसी की ताई नहीं,किसी की बौ नहीं,किसी की सास,बुढिया सास नहीं।वह किसी की दादी, परदादी,झडदादी नहीं है। वह बडीदादी है। सब रिशतों के ऊपर एकच्छत्र फैली हुई।सब से ऊपर। सब से ऊपर।"*[14]

बडीदादी यमराज के लिए इन्जार करती रहती है। वह हमेशा यह सोचती

कि ज्यूंरा (यमराज) अपने दूत को भेजेगा। उसको अपने पास बुलालेगा। बडीदादी का पूरी जायदाद किसी ने हडपलिया, इससे बडीदादी को कोई लेना देना नहीं था। वह आत्महत्या करना नहीं चाहती। यमराज के बुलावे का इन्तेजार करती रहती। अपनी सहेली डुरी के पास जाकर अपना संदेश भी छोड आती है कि यमराज से कहदेना मुझे जल्दी अपने पास बुलाले।

कई पीडिया बदले फिर बडीदादी वैसी की वैसी ही है। उनके साथ जो थे अब कोई नहीं हैं। यहाँ तक की पेड पौधे, पहाड भी नहीं। वह और जीना नहीं चाहती उसके सामने कितने लोग जन्म लिए और मर भी गए फिर भी बडी दादी का बारी नहीं आता। पूरे उपन्यास में वह एक बडी संघर्षी के रूप में दिखाई देती है और वह खुद कहती है कि-*"मेरे साथ के पेड-पौधे भी जीवित नहीं है। मैंने छोटे-छोटे पौंधों को जन्म लेते, बढते देखा है। विशाल वृक्ष का रूप धारण करते देखा है। अगर किसी आदमी ने उसे नहीं काटा तो कुदरत ने उसे खुद ही जमीन पर गिरा दिया। मैने पहाडों को टूटते देखा है। उनके मिट्टी-पत्थरों को टूटते, बहते, नष्ट होते देखा है।"15*

इस तरह बडी दादी हर बात को याद करती रहती है। अपनी मौत का इन्तजार करती रहती है। ऐसे बहुत कम औरते होती है जो अपने मौत का इन्तजार खुद करती है। बडीदादी अपनी पूरी जिंदगी परंपरा के दायरे में बिताती है। आखिर पूरे गाँव की बडीदादी बनकर सब के दिलों में रहजाती है।

कर्णावती जो एक लाख मुगल सैनिकों को नाक कटवाकर वापस भेजने वाली रानी, नजावत खाँ जो सैनिकों को लेकर श्री नगर पर हमला करने आता है उससे कहती *"मैं तुम से सिर्फ एक सवाल पूछ रही हूँ। इसका ठीक -ठीक जवाब दो। कर्णावती थोडी देर खामोश रही। वह अलकनंदा की तरह शान्त थी। उसके ह्रदय की गहराई की थाह लेना कठिन था। बगैर किसी आवेश के उसने अपना वाक्य पूरा किया-सवाल यह है कि इतनी बडी फौज को लेकर हमारी तरफ आने की तुमने जूर्रत कैसे की? "*[16]

मुगल बादशाह सोचा था कि श्रीनगर पर हमला बोलना बहुत आसानी है, वहाँ का पालन एक नारी कर रही है। नारी को आसान से हरा कर अपने कब्जे में रख सकते हैं। लेकिन कर्णावती की सेना के हाथ घोर पराजय होकर अपना नाक कटवा कर फौजें वापस लौटती हैं। मुगल बादशाह कभी श्रीनगर की और आँख

उठाकर देखने की हिम्मत तक नहीं किया था।

राजा शान्तनू एक बार किसी मछुआरे की बेटी योजनगंधा को देखता है, और उससे शादी करना चाहता है। शान्तनू यह नहीं सोचता कि उस लडकी को वह पसंद है या नहीं। राजा जो करे प्रजा उसका पालन करे।

इस तरह नारी की स्थिति उस समाज के अनुरूप बदलती रही। कही नारी बाहर और भीतर संघर्ष करती हुई दिखाई देती तो कही नारी आर्थिक रूप से कमजोर रहती है। पती के साथ मिलकर काम करने पर भी रोटी नहीं मिलती। कहीं ऐसी नारियाँ होती ससुराल में किसी जीज की कमी नहीं होती लेकिन कठिन अनुशासन का पालन करना पडता है। जो पति कहता है उसी को मानकर चलना पडेगा अगर वह गलत होने पर भी। कभी कभी वह पति को सही रास्ते पर लाने की कोशिश तो करती है लेकिन सफल हो नहीं पाती। उसको जुल्म सहना ही पडता था। लेकिन नारी जो ममता की मूर्ती लगातार कोशिश करती ही रहती, पुरूष में बदलाव ले आने में एक न एक दिन वह जरूर सफल होगी।

5.2.2. नारी की नौतिक स्थिति

नैतिकता का आधार वैयक्तिक स्तर पर निर्मित होता है।नैतिकता के मूल में औचित्य और अनौचित्य संबन्धी धारणाएँ होती है। नारी की नैतिक स्थिति किसी विशिष्ट ऐतिहासिक पडाव पर उपर्युक्त धारणाओं द्वारा गढी गई। पितृसत्तात्मक व्यवस्था में वैयक्तिक संपत्ति की अवधारणा और वंशानुगत स्वामीत्व का वर्चस्व रहा है। इसके लिए यह आवश्यक था कि गर्भदान और संतान उत्पत्ति की सहज नैसर्गिक क्रियाओं को पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्थाओं के अनुसार वैधता प्रदान की जाए। पिता द्वारा कन्यादान की प्रथा भी पुरूष दृष्टि को प्रमाणित करती है।

नैतिकता समाज द्वारा प्रतिष्ठित अच्छाई एवं बुराई पर निर्भर करती है। मंगल एवं अमंगल की भावना व्यक्ति के सुख तथा दुःख से जुडी होती है। मनुष्य को कुछ ऐसी वस्तुएँ या व्यक्ति पसंद आती है जिससे उसे आनंद प्राप्त होता है। उन्हे वह स्वीकार करना चाहता है किन्तु पूर्ण रूप से स्वीकार करने में संकोच अनुभव करता है। अतः इसी पसंद एवं न पसंद से भिन्न एक नैतिक भावना की व्युत्पत्ति होती है। यही भावना सामूहिक स्तर पर एक सामान्य चेतना का रूप धारण कर समाज विशेष की नैतिक धारणा के रूप में विकसित होती है।

नैतिक चेतना से मुक्त व्यक्ति अपनी इच्छाओं के अनुसार अपने व्यक्तित्व

का निर्माण कर सकता है किन्तु समाज द्वारा स्वीकृति से सहमत या असहमत होता है। विजय मोहनसिंह के अनुसार *"प्रेम तथा नैतिकता को जोडने वाली अवस्था परिपक्वता है। एक परिपक्व व्यक्ति ही पूर्ण प्रेम करने में सक्षम होता है तथा एक व्यक्ति की परिपक्वता में निश्चित रूप से नैतिकता का पूर्ण विकास भी निहित है। साथ ही प्रेम को नैतिकता से पृथक करने वाली मनोवृत्ति उसके साथ जुडी हुई पाप की भावना है। पाप निश्चित रूप से अनैतिक है और प्रेम इसलिए पाप है कि उसमें यौन भाव सन्निहित है। मानवीय प्रेम भी इसी कारण पाप तथा अनैतिक है। केवल ईश्वर प्रेम पाप या अनैतिकता नहीं है। क्यों कि यह यौन भाव से मुक्त है।"*[17]

भारत में नैतिकता सामाजिक संरचना पर आधारित रही है। पुरूष के लिए भिन्न नैतिक मूल्य तता स्त्री केलिए भिन्न नैतिक मूल्य निर्धारित किए गए। भारतीय दर्शन एवं धर्म के आधार पर समाज में नारी की पवित्रता, कौमार्य एवं सतीत्व पर अधिक बल दिया गया है। नारी को नैतिक मूल्यों की रक्षा के लिए पुरूष के अधीन रहना पडेगा। *"भीम अकेला उपन्यास की सूरमा भरदारी जो चौदह साल में ही विधवा बन गई थी। मोटर परमिट और स्वतंत्रता सेनानी पेंशन बांटने वाले और उन्हें प्राप्त करने वाले महानुभावों ने कभी इस समस्या पर ध्यान देने की जरूरत नहीं समझी कि चौदह बरस की एक बेवा अपने जीवन साथी के बिछुड जाने के बाद अपना गुजारा कैसे कर रही होगी? उसकी आजीविका के कोई साधन है या नहीं है ? उसके पास कुल जमीन कितनी है। जिस पर वह अपना गुजारा करने को मजबूर है। आजाद देश में इस तरह की समस्याओं पर विचार करने की किसी को फुर्सत नहीं रह गई थी।"*[18]

वह स्त्री अपने देवर के साथ बच्चा पैदा किया था, जो कि उसका पति की मृत्यु के बाद। इसलिए उस नारी का पेंशन रूका दी गयी। वह आर्थिक रूप से स्थिर नहीं थी। काम करके अपना जीवन यापन कर रही थी। अगर एक पुरूष को इस तरह का काम करने पर कोई सरकार उसके पेंशन को नहीं रोकता है। सिर्फ नारी होने के कारण उस पर धब्बा लगाकर उसकी आर्थिक सहायता पर रोक लगा दी गई।सिर्फ नारी के लिए नैतिक मूल्य होते हैं पुरूष के लिए नहीं।

आयशा जो वहीद से बेहद प्यार करती है। वहीद के पिता के पास

जितना पैसा नहीं उतना आयशा के पिता जी मांग रहे हैं। इसलिए आयशा के लिए दूसरे रिश्ते देखने लगते हैं जो जितना ज्यादा दाम दे सकता है उसके साथ आयशा की शादी हो सकती है, वह बूढा भी हो दो बीवियों का पति भी हो कोई फर्क नहीं पडता। अगर फर्क होगा तो सिर्फ दाम पर। पैसों का जितना मूल्य है उतना प्यार का नहीं।अपनी बेटी की खुशियों से ज्यादा उनको पैसा चाहिए। आयशा अपने पिता के बात को टुकरा न सकती वहीद से भाग भी नहीं सकती । उसके लिए आनेवाले रिश्तों को देख कर दुखी होजाती है। वहीद की प्यार को याद करती हुए मन ही मन रोती है।

सकीना अकेली बुग्यालों में फंस जाती है। सदरू नामक पालसी के डेरे पर एक रात गुजारती है। वह सोचती थी कि सुबह खुलने से पहले ही वह वहाँ से चली जाए।किसी को पता न चले कि वह एक पालसी के डेरे रात गुजारा है। लेकिन सदरू जो पालसी था वह सकीना से कहता है कि-"*तू ने ऐसा कोई काम नहीं किया है जो अंधियारे में सर छुपाकर तुझे यहाँ से भाग जाना पडे। तू शान से, लाठी हाथ में लेकर रंगीन फूलों से भरी हुई बुग्यालों के बीचो बीच फैलीहुई राहों पर वैसे जा जैसे एक गूजर की बेटी जाती है, सर ऊँचा करके अपने घर पहुँच कर अपने भाई -भावजों को और अपने माँ -बाप को यह बताना कि कल रात मेरे कुत्ते के भौंकने की आवाज सुनकर आसरा समझ कर तू मेरे डेरे पर चल आयी थी। तू ने दिदा को उस दिन अपने डेरे पर बुलाया था। क्यों बुलाया था? तुम लोग और हम लोग इन पर्वतों के बेटे -बेटियाँ है। यही हमारा रिश्ता है। यह धरती माँ तुम्हे भी पालती है और हमारा भी पालन करती है।*"[19]

गूजर की बेटी सकीना सदरू के बातों से बहुत प्रसन्न हुई। उस पालसी पर आदर का भाव बढ गया। बुग्यालों से नीचे उतरते समय सदरू को याद करती रही। रास्ते में उसे एक तस्कर तंग करने निकला उस ने सकीना से पूछा "*सवेरे-सवेरे लौट आई है। वह भगवान कौन था। जिसने इस प्यारी हूर के साथ आज रात भर मजा उडाया? शायद पहली रात बिताई होगी। ज्यादा तकलीफ तो नहीं हुई।...किसी के साथ पूरी रात बिता सकती है और किसी के साथ दस मिनट भी नहीं? जरा बैठ जा। थोडी देर गप्प-शप्प हो जाय। कुछ अपनी कहलें, कुछ हमारी सुनले। हमे भी औरताना जिस्म की भूख लग जाती है प्यारी। "*[20]

तस्कर किशन सिंह की सोच गलत है। वह जो काम करता है वह भी गलत है। अकेली लडकी कितना लडने पर भी अपनी हवस का शिकार बना देता है। किशनसिंह को पत्नी भी है। ऐसे लोग हमारे समाज में आज भी है। नारी को तंग करते ही रहते हैं। नारी के नैतिक मूल्यों का तय करने वाले अपने बारे में नहीं सोचते। ऐसे लोग तो खुद की नजरों में भी गिरे हुए लोग होते हैं।

धारगाँव को पुलिस लोग घेर लेते हैं, उस गाँव के सब लोगों को गिरफ्तार करने लगे। हथकडियाँ पूरी न होने पर वे रस्सियों से बांधने लगे। गाँव के प्रधान पूछने पर दारोगा कहता है- *सिपाही प्रधान के आगे -पीछे खडे हो गए और उस पर बेभाव लाठियाँ बरसने लगी। जब वह जमीन पर गिर गया तो उस पर बूटों की ठोकरें मारने लगे। गालियाँ भी दे रहे थे-साला प्रधानगिरी की धौंस दिखाता है। ऑफीसरों से सवाल पूछेगा अपनी माँ का....तेरी बहिन की...।"*[21]

यहाँ सिपाही मार तो प्रधान जी को है, लेकिन गाली नारी को दी जा रही है। माँ, बहन के नाम पर गाली दी जा रही है।

चाँदी गाँव में किसी को संतान नहीं। गाँव भर में एक बच्चा रहता है। हर किसी की ख्वाइश थी कि उनके घर पर भी एक बच्चा हो। कितने कोशिश करने पर भी अपनी पीढी को बडा नही पाते। इसीलिए रोशना अपने पति के घर से भागकर धनीसिंह के पास जाती है, जब उसे पता चलता है कि वह माँ बनने वाली है तो फिर वह लौटकर वापस अपने पति के घर आती है।

उसका पति उससे कुछ नहीं कहा। वह रोशना को अपनाता है। गाँव वाले भी समझ कर चुप रहजाते हैं।

किसला जो शादी होकर दस साल होने पर भी माँ नहीं बनपाती। वह अपनी पौणदी को लेकर जोल के पास जाती है।वहाँ पट्टा ने पौणदी पर छलाँग मारा उस दृश्य को देख कर वह अपने बँधनों को तोड कर जोल के से माँ बनने की इच्छा प्रकट करती है तो जोल कहता है -*"मेरा तन साफ है, मन भी साफ है। मैं गाँव से अलग रहता हूँ, सबसे ऊपर रहता हूँ। एक भैंस सांड को लेकर रहता हूँ। पट्टे के अलावा इस दुनिया में मेरा और कोई नहीं। मैं इस देश का एक सामान्य, शरीफ आदमी हूँ, कोई सांड नहीं हूँ। छोटी विलायत रैमासी में उडने वाली अपवाहों से मेरा कुछ भी नहीं बिगड सकता। मेरी कोई संतान भी नहीं है। तेरे और मेरे बीच कोई सीधा रिश्ता नहीं। तू एक औरत, मैं एक आदमी। पर ऐसा*

तो नहीं होना चाहिए कि वे औरतें, जो मेरी माँ या बहनें या बेटिया नहीं उनके साथ मैं ऐसा रिश्ता कायम करने लगूं जो औरत-मर्द के बीच का रिशता होता है। तब मेरे इस सांड में और मुझ में क्या फर्क रह जाएगा? "[22]

पुलमा नामक एक औरत पातीराम के पास कुछ पैसा मांगने आती है क्यों कि उसके पति को गोरखे पकड कर ले जा रहे थे। पातीराम की पत्नी थी माया। पुलमा को देखकर माया को बहुत दुख हुआ। वह पति को समझाने की कोशिश करती है वह नहीं मानता और कटु शब्द बोलता है कि "*तू क्या करेगी उसके आदमी का? मूझे तो नहीं पता था कि तू उसे इतना चाहती है। बोल जरा ज्यादा कडवे थे।बेचारी माया घर के अंदर चली गई।वह लौट कर बाहर नहीं आयी। "*[23]

पातीराम जैसे लोगों की समाज में कमी नहीं है। उनके कुछ नैतिक मूल्य ही नहीं होते। जो लोग मजबूरी में है उसका फायदा उठाना चाहते हैं। इसके लिए वे लोग किसी भी हद तक गिर सकते हैं। अपने सुख एवं संतोष के लिए वे कुछ भी कर सकते हैं। नारी इतनी मजबूर हो जाती है कि खुद को बेचकर अपने पति को बचाना चाहती है। पातीराम जैसे लोगों की गुलाम बनजाती है। फजीती जो जिन्दगी के हसीन सपने देखा करती थी। जो सपना था उसका कभी पूरा न हो पाया। अपना पति हमेशा कष्ट देता रहा, बेटे भी कष्ट देते ही रहे। घर पर कठिन अनुशासन रहता था। फजीती अपने पति को अपनी बहु के साथ देख कर आत्म हत्या कर लिया। ऐसे परिवार में जिन्दगी भर की घुटन से फजीती ने मुक्ति हासिल करली थी।

अंबा जो शाल्व को प्यार करती है। लेकिन स्वयंवर में भीष्म ने शाल्व को पराजय करके अंबा को अपने छोटे भाई विचित्रवीर्य के लिए जबर्दस्ती राज भवन में लाई गई विचित्रवीर्य उसे पत्नी बनाना नहीं चाहता। अंबा को शाल्व के पास वापस भेजी जाती। शाल्व उसको ठुकराता है तो अंबा के मन में आया कि *"जिस देवव्रत का तुम अपने हथियारों का प्रयोग करने के बावजूद मुकाबला नहीं कर सके, उस अति बलशाली के चुंगल से मैं अबला खाली हाथों से अपनी रक्षा कैसे कर सकती थी। लेकिन यह बात उस से अपने मन के भीतर ही जज्ब करली। उसने बहुत अनुनय विनय करते हुए शाल्व के सामने चारित्रिक तौर पर अपने निर्दोष होने का हर प्रमाण रखा, लेकिन शाल्व ने अपना निर्णय नहीं बदला।"*[24]

जमदग्नी की पत्नी रेणुका जो पति का हर बात का पालन करती थी।

एक दिन गंगाजल ले आने के लिए वह नदी के तट पर पहुँची वहाँ राजा चित्रधर भगीरथी तट में अपनी पत्नी के साथ जलक्रीडा में रमा था। इस दृश्य का प्रभाव रेणुका के मन परर पडता है। देर होगा करके जानती हुयी भी वह अपने मन से उस दुश्य को हटा न पाती। अपने आश्रम जीवन उसको नस्सार लगने लगता है। वह उस मोह रंग में मग्न होती है। पूरा रास्ता उसी खयाल में रहती है।

रेणुका आश्रम में विलंब से पहुँची और ऋषी को विलंब का कारण बताने पर मुनि क्रोधित होकर अपने बेटे को बुला कर अपनी माता का वध करने के लिए कहा पुत्र परशुराम आज्ञा का पालन किया। ऋषि का यह कहना कि ऋषि पत्नी कामातुर गंधर्वों की जलक्रीडा देखने में लगी रही। इसके ह्रदय में अब भी वही कामंकुर मौजूद है।

सत्यवती जो एक मछली की पुत्री थी। जिसका पालन एक मल्लाह ने किया। सत्यवती के बदन से मछली की गंद आती थी। एक दिन पराशर मुनि सत्यवती से मिला। सत्यवती नाव पर लोगों को नदी पार करवाती थी। पराशर मुनि सत्यवती से कहता है कि नाव छोड कर मेरे पास आना। सत्यवती यह कथा भीष्म को सुनाती हुई कहती है कि उनके कोप से और शाप से डरती थी, कुपित ऋषि का शाप जीवन का सर्वनाश कर देता है, और डर मेरे अंदर बैठ रहता था। नाव को खेना छोड मैंने उसे यमुना की लहरों के हवाले कर दिया और डरती हुई ऋषि के पास चली गई। मुनि ने मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर कहा-सुन्दरी अपनी इच्छा पूर्ति के एवज में मैं तेरे तन की गंध को सुगंथ में बदल सकता हूँ। मैं अकबका गई। कुछ भी बोल नहीं पाई। अचानक वहाँ वातावरण में इतना धुंधलका छा गया कि वह सुबह रात में बदल गई। घटाटोप अंधकार ! नाव से बाहर कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। मैं अत्यंत भयभीत हो गई थी। सोच नहीं पा रही थी कि यह क्या हो रहा है और अपनी रक्षा कैसे करूँ?उस अंधकार के वातावरण में ऋषि ने मुझे अपने वश में कर लिया था। आगे कहती है -"*तेरे तन की दुर्गंध में बदल रहा हूँ। अब से आगे जीवन भर तेरे तन से मत्स्य -गंध के बजाय वसंत के ताजा फूलोंकी भीनी -भीनी सुगंध फैलती रहेगी। मेरे द्वारा स्थापित इस गर्भ को यमुना के द्वीप पर त्याग कर तू फिर से कन्या हो जाएगी...उस गर्भ से पाराशर के पुत्र महान योगी महर्षी व्यास प्रकट हुए बेटे,जो द्वैपायन के नाम से विख्यात है।*" [25]

सत्यवती जो शान्तनू की पत्नी थी। सत्यवती के पुत्र की मृत्यु हो गई।

उसकी कोई संतान नहीं था। सत्यवती भीष्म से कहती है- "*तुम मेरी इस बात पर विचार करो और अपना निर्णय दो। मैं खुद साफ -साफ सोच पाने में अपने को असमर्थ पा रही हूँ। मेरे मन में यह बात आ रही है कि अगर हम दोनों तुम और मैं मिलकर आग्रह करें तो शायद वह मान ले और तब तुम्हारे उस भाई की संतान हमारे राज्य की वारिस हो सकती है। वे अविवाहित होंगे माँ?क्या वे विवाह करने की स्वीकृति देंगे? उसे विवाह करने की जरूरत नहीं भीष्मा तुम्हारे मृत भाई की पत्नियाँ से वह संताने पैदा कर सकता है।*"[26]

श्रीधर प्रसाद अपना चचेरा भाई की मृत्यु होने पर जशन मनाता है। पूरा गाँव शोक में था। यज्ञदत्त की बूढी माँ और उसकी पत्नी को देखकर लोग दुःखित थे। यज्ञदत्त की पत्नी घाट तक लकडिया सर पर रख कर जाती है। जो औरतें यज्ञदत्त की पत्नी की मदद किए। अपने पति का चिता लगते समय वही मौजूद थी। "*यज्ञदत्त की बेवा और उसकी घाट पर जाने को तैयार माँ अपने गम में डूबे हुए थे।श्रीधर प्रसाद उस दौरान उनके गम में शरीक नहीं हुआ। लोक लाज के डर से दिखावे के लिए भी नहीं। शवयाभा में शामिल होने के बजाय उसने यज्ञदत्त की माँ और विधवा को दिखाते, सुनाते हुए रँगरेलियाँ मनाने की योजना बनायी थी ताकि उनका दुःख कुछ और बढाया जा सके। उस बेसहारा परिवार को उस हालत में देख कर और अपनी हरकतों से उनका दुःख कुछ और बढा लेने पर, सेठ श्रीधर प्रसाद को बहुत सुख और चैन मिलने लगता था।*"[27]

जब व्यक्ति अपना सुध बुध खो बैठता तो वह क्या कर रहा है वह जान नहीं पाता। उस के पास नैतिक मूल्य नहीं होते। किसी की मौत पर जश्न मनाने वाला का हृदय कितना कठिन होता है। वह इन्सान कहलाने का लायक नहीं होता।

5.2.3. नारी की आर्थिक स्थिति

भारतीय नारी सदैव आर्थिक रूप से परावलंबी है। शिक्षा, स्वातंत्र्य एवं संचित वातावरण के अभाव के कारण कमजोर है। वह घर से बाहर कदम रखकर जीविकोपार्जन में स्वयं को असमर्थ पाती है। उसकी यही असमर्थता उसे पुरूषों के अधीन रहने के लिए विवश कर देती है। शैशव में पिता के अधीन और जवानी में पति के अधीन वृध्दावस्या में पुत्र के अधीन रहने के उसे बचपन से उपदेश दिये जाते हैं।"*भारतीय स्त्री को अपनी संतान और पति को भर पेट खाना खिलाकर*

बाद में अपना खाना ही आदर्श गृहणी का धर्म माना जाता है। परन्तु ऐसा करके स्त्री स्वयं को अपने शरीर से अन्याय करती है। अपने अस्तित्व को समाप्त कर बैठती है। केवल दो वक्त की रोटी और तथा कथित मर्यादा प्राप्त करने के लिए वह जीवन भर पति की सेवा करती रहती है। उसे वह संतानसुख, कामसुख, परिवार की समस्याओं से मुक्ति प्रदान करती है। महादेवी वर्मा के शब्दों में यदि नारी आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करले तो पति नामक वस्तु की उसे आवश्यकता नहीं पडेगी।"[28]

जाहिर है कि नारी अपने हक की माँग को लेकर प्राचीन काल से लेकर आज तक बहुत संघर्ष करती रही। आज भी वैज्ञानिक युग में उसकी स्थिति में कोई सुधार नहीं आया, आया है तो शहर में एक प्रकार से दिखता है, गाँव में दूसरे प्रकार से। फिर भी शिक्षा की वजह से वह पहले से बेहतर बनी है। जीवन को कई कोनों से देखने की दृष्टि उसके पास है। आज हम देखते हैं पूँजीवादी व्यवस्था ने भी स्त्री का शोषण ही किया है। इसलिए चाहे वह पितृसत्तात्मक व्यवस्था हो या पूँजीवादी लग भग सभी ने स्त्री का शोषण ही किया है। परन्तु नारी आज अपनी स्थिति को समझ रही है।हर नारी को स्वतंत्रता देना है तो उसमें पुरूषों की भागीदारी चाहिए क्योंकि स्त्री और पुरूष दोनों जीवन के आधार है।दोनों को एक दूसरे की आवश्यकता है। जब तक पुरूष इस तथ्य को न समझे तब तक कुछ नहीं होगा। दोनों को भी अपने द्वन्द्व के बाहर आकर साथ चलना होगा। तभी स्त्री और पुरूष के अच्छे संबंध होंगे और दोनों की स्वतंत्रता रहेगी। स्त्री और पुरूष का व्दन्द्व एक अन्तहीन बहस का रूप लेलेता है। इस बहस में किसने किसको कितना और कैसा दिया है यह बार-बार दुहराया जाता है। सीमोनद बुउवार के अनुसार "*औरत कहती है कि उसने अपना सर्वस्व दिया,पुरूष विरोध में कहता कि औरत ने उसका सब कुछ छीन लिया,स्त्री ने,विनिमय सीख राजनीतिक अर्थव्यवस्था के एक मौलिक सिध्दान्त के अनुकूल ही अपनी कीमत नगण्य पाने पर वह अपने को बुरी तरह ठगी पाती है।"*[29]

स्त्री पुरूष के साथ अपने अस्तित्व का औचित्य जोडना चाहती है। अर्थशास्त्र की दृष्टि से देखा जाए तो स्त्री पुरूष का साथ-साथ बताया गया। समय मूल्य का नहीं होता ऊपरी तौर पर भले ही समान लग सकता है। किन्तु पुरूष जो क्षण स्त्री के साथ बिताता है वह अपने कैरियर और आजीविका संबन्धि कार्यों में लगा सकता था। अतः पुरूष के लिए समय का आर्थिक मूल्य होता है। उसके लिए प्रेम के अलावा पैसा, इज्जत और सुख भी जरूरी है। पुरूष का वश चले तो

सेक्स के अलावा स्त्री के साथ एक क्षण भी न रहे।

आर्थिक स्वाधीनता ही वास्तविक स्वाधीनता होती है। स्त्री को चाहे मतदान तथा अन्य अनेक राजनीतिक अधिकार मिल जाए किन्तु आर्थिक स्वाधीनता के अभाव में वह पराधीन ही कही जाएगी। परिवार में स्त्री, पुरूष पर आर्थिक रूप से निर्भर रहती है। मातृत्व या गृहणी धर्म द्वारा स्त्री को जीवन में संपूर्ण परितृष्टि नहीं मिल पाती। आर्थिक रूप में स्वाधीन व्यक्ति ही इस स्थिति में होता है कि वह अपनी आवश्यकताओं और इच्छाओ को पूरा कर सके। वर्तमान व्यवस्था में नौकरी एक प्रकार से गुलामी ही होती है। समाज में अधिकांश आर्थिक निर्णय पुरूष ही करता है। अर्थशास्त्र के लिए नारी के श्रम को सही तौर पर मूल्यांकन कर पाना एक जटिल समस्या रही है।

मार्क्सवाद जीवन में आर्थिक समानता को अधिक महत्व देता है। मार्क्सवादी दृष्टि में समाज में अधिक तर समस्याँ आर्थिक स्थिति को लेकर ही उत्पन्न होती है। आर्थिक अभाव के फलस्वरूप अनेक क्षेत्रों में नारी की प्रगति अवरूध्द होती गई। बीसवी शताब्दी में स्त्रियों ने आर्थिक क्षेत्र में अत्यधिक प्रगति की है। किन्तु आज भी स्त्रियों को न तो पूरी तरह से संतुष्ट कहा जा सकता है और न असंतुष्ट। विशेष रूप से पढी-लिखी और बाहरी समाज में रोजगार से जुडी स्त्रियाँ अपने आपको बीच की स्थिति में पाती है।

यदि स्त्री निरंतर श्रम पर और रोजगार पर ध्यान दे तो उसे मर्दाना कहा जाता और यदि वह अपने श्रृंगार का पूरा खयाल रखें तो कहा जाता है कि स्त्री अंततः स्त्री ही रहती है। स्त्री के लिए यह विवशता होती है कि वह आर्थिक दृष्टि से पुरूष की भूमिका निभाए और घर में स्त्री की भूमिका। "*एक ही समय में स्त्री और पुरूष दोनों की भूमिकाओं में जीने के कारण वह अपने काम को कई गुना बढालेती है नतीजा यह होता है कि थकान और ऊब।* "[30]

परिणाम स्वरूप स्वतंत्रता का भरम पालती हुई कई पढी लिखी और रोजगार करती हुई स्त्रियाँ भी वस्तुतः परतन्त्रता के अनुभव में छटपटाती रहती हैं। वास्तव में स्त्री को पुरूष सत्ता रूढियों से मुक्ति चाहिए। युग-युग से पीडित नारी की यह आत्मिक माँग है। स्त्री-पुरूष समानता और सहजीवन के बारे में आधुनिक स्वातंत्रेच्छु स्त्री राष्ट्र के सामने और पुरूषों के सामने कौन-सी विनती करती है यह रवीन्द्रनाथ के शब्दों में कहना समीचीन होगा -"*I am not goddess to be*

worshipped nor yet the object of common pity to be brushed a side like a moth with indifferent if you design to cute me by your side in the path of danger and daring .If you allow me to share the great duties of your life then you will know my true self. "[31]

अर्थात मैं देवी नहीं हूँ कि जिसकी सदा पूजा की जाय। क्रिमिकीटकों के समान पैरों के नीचे भी मैं कुचला जाना नहीं चाहती। मेरी सच्ची परीक्षा तभी होगी जब मुझे पुरूषों के कंधे से कंधा मिलाकर जीवन काल में झगडने की, कठिनाइयाँ झेलने की अनुमति प्राप्त होगी।

विद्यासागर नौटियाल भी आंचलिक कथाकार है -"*गढवाल क्षेत्र के। विद्यासागर नौटियाल को अपने आंचल से अपार प्रेम है। उनका लगभग सारा साहित्य गढवाल से संबंधित है। उनका साहित्य रेणु के साहित्य की तरह मोहक नहीं, विषमता विशेणतः आर्थिक विषमता और उससे उत्पन्न विषम जीवन स्थितियों की दारूणता भी प्रकट करता है। नौटियाल अपने क्षेत्र से केवल मोहग्रस्त नहीं, वे वहां की आर्थिक-सामाजिक कुरूपता से त्रस्त भी है।"*[32]

दांपत्य-प्रेम को आर्थिक स्थितियों और श्रमिकों के मनोविकारों से रहित करके साहित्य में नारी आदर्श प्रायः सरलीकृत ढंग से चित्रित किया जाता है। घासवालियाँ वन में स्वतंत्र होती है। उनके मुक्त सौंदर्य को नगर नहीं देख पाता। सीमाएँ, रूढियाँ, आर्थिक मजबूरी नगरवासियों को उनका सौंदर्य भोग सकता है क्यों कि वह उन्हें पराधीनता से, रूढियों से मुक्त कर देता है, आर्थिक विषमता को विस्मृत करा देता है।

पहाडी इलाकों में स्त्री को जानवरों की तरह सुलूक किया जाता हैं। इस तरह का बरताव हमारी भारतीय समाज में भी होता है। इस परंपरा का मुक्ति अभी तक नहीं हो पायी। स्त्री घर का पूर काम संभालती हुयी सारे जिम्मेदारियों को निभाती हैं। फिर भी उसको अपने पति का जायदाद पर कुछ हक नहीं होता। जब पति जिंदा रहता है तब वह पाबंदी जैसा जीती है उसके मर ने के बाद भी उसे और भी बेइज्जती झेलना पडता है। भारतीय कानून ही ऐसा बनाया गया है कि विधवा स्त्री भी दूसरी शादी करने के लिए पति के वारिसों से तलाक हासिल करना पडता है।

नारी न स्वयं गुलाम रहना चाहती है और न पुरूषों को गुलाम बनाना

चाहती है। वह जैविक भिन्नता के कारण मनवीय अधिकार जैविक निर्णय के अधिकार से वंचित रहना नहीं चाहती। दुनिया की तमाम नारियाँ चाहे बौध्दिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक एवं गृहिणी ही क्यों न हो सभी यह स्वीकार करं कि नारी को पुरूष के बराबर, अधिकार मिलना चाहिए। यही उस की मुक्ति है। आशारानी ब्योरा का कहना है कि -"*प्रत्येक परिस्थिति में नारी की स्वभावगत दुर्बलता ही उसे समस्याग्रस्त और पतनोन्मुख बनाती है। सर्वेक्षणों से सिध्द है कि पूर्ण स्वतंत्रता किसी नारी को संतुष्ट नहीं कर पाई। भय और असुरक्षा की भावना से मुक्ति असंभव है। सहारा देने और लेने के अंतर को मिटाया नहीं जा सकता। नारी का कामिनी भाव जब तक उस में विद्यमान है मुक्ति आन्दोलन का कोई अर्थ नहीं।*"[33]

नारी मुक्ति एक स्थिति है और स्थिति को धीरे धीरे प्रयत्न से आचरण आदर्श से आत्मविश्लेषण और सुधार परिष्कार से त्याग और साधना से ही लाया जा सकता है। पश्चिम और पूर्व की नारी की स्थितियाँ भिन्न है। भारतीय स्त्रियों और पाश्चात्य स्त्रियों के अधिकार प्रप्त का इतिहास भिन्न है। भारतीय स्त्रियों ने कभी किसी भी युग में पुरूष के विरूध्द खडे होकर अधिकारों की लडाई नहीं लडी। उन्हें इसकी आवशयकता नहीं पडी।

समस्या की जगह दरअसल नारी के भीतर छिपी असुरक्षा की भावना है। भारत में औरतों की गुलामी आज भी अधिक गहरी, व्यापक, निरंकुश और संगठित रूप में व्याप्त है। सीमित हद तक शिक्षा और जनवादी चेतना के प्रसार के बावजूद बहुसंख्यक नारी आबादी आज भी अधिक गहरी, व्यापक, निरंकुश और संगठित रूप में व्याप्त है। सीमित हद तक शिक्षा और जनवादी चेतना के प्रसार के बावजूद बहुसंख्यक नारी आबादी आज भी बर्बर निरंकुश दासता और मध्ययुगीन पुरूष प्रधान व्यवस्था के मूल्यों में जकडी गई है। भयानक अमानवीयता की शिकार है। साथ ही पूँजीवाद ने भी उसे जकड लिया है। इसके लिए नारी को स्वयं बदलना होगा। आज के विकासशील समाज में भी मनु द्वारा रचे विधान यहाँ है। मध्य वर्गी औरत को आज भी चूलहा -चोकट से बाँधा गया है। पति की सेवा, बच्चों का लालन पालन और घरेलू उपयोगों की चीजों के उत्पादन से अधिक कुछ नहीं करती। नौकरी वाली स्त्रियाँ भी घरेलू गुलामी से मुक्त नहीं। *झुण्ड से बिछुडा* उपन्यास की शान्ति बुडिया भोली नाम के गाय का पालन करती है अगर सच कहा जाए तो शान्ति का गुजारा तो भोली से ही होता है। गाय के दूध से ही वह अपना जीवन का गुजारा कर रही थी। अकेली बुढिया अपने भैंस के सहारे जिन्दा

है। शान्ति बुढिया भोली को गोदान में देना चाहती थी। उसके मरने से पहले वह बुढिया भोली को पंडित के हवाले करना चाहती थी।

"लेकिन गरीबी बहुत बुरी चीज होती है। वह गाय तो उसका सम्बल है। एक मात्र सहारा। गाय को अपने घर से विदा कर देगी तो उसके बाद अपने गुजारे का कई सहारा बाकी नहीं बचेगा।"[34]

शान्ति बुढिया अकेली ही रहती है। गरीब बुढिया उसका एक मात्र सहारा उसका गाय। गाय को एक बाघ मार देता है। यह पता चलने के बाद शान्ति अधमरा रहजाती है। ऐसे ही शान्ति की आर्थिक स्थिति बिलकुल ठीक नहीं अब गाय के मरजाने से उसका सहारा ही नहीं जिन्दा रहने की आशा भी मर जाती है। शान्तिबुढिया ब्वारी से कहती है कि *"ब्वारी ! इस जिन्दगी में, जब तक साँस चल रही है, क्या नहीं चाहिए? नमक, तेल, जीरा-धनिया कपडा-लत्ता। उन सबके अलावा अनाज। चाहे कितना ही मोटा-झोटा अनाज क्यों न इस्तमाल कर लिया जाय। गेहूँ का आटा और चावल जितने दिन भी मिल जाय वही ठीक। लेकिन जब न मिले तो पेट पालने को कुछ न कुछ तो चाहिए। गेहूँ-चावल न सही, कोदा-झंगोरा, कौण-कँडाली ही सही। माटे अनाज वैसे स्वादिष्ट नहीं होते लेकिन उनसे भी पेट भरता है। वे भी आदमी को जिन्दा रखते हैं और रहने के लिए एक घर, चाहे वह जैसा भी घर हो और घर है तो उस घर को ऐसा तो होना ही चाहिए की आकाश पानी बरसने लगे तो वह पानी सीधा घर के अंदर दाखिल न हो सके।इन तमाम चीजों को रोज, हर रोज मेहनत करके, हाड-माँस खपा कर, कमाना पडता है।अपने आप कोई चीज हासिल नहीं हो सकती। आसमान से कुछ नहीं टपकता।"*[35]

शान्ति बुढिया के जिंदगी में गाय सब कुछ थी। उसके मरजाने के बाद शान्ति बुढुया को अकेले ही जीना काटना पडा गाय को हर पल याद करती हुयी वह अपना जीवन बिताती है।

सरला जो एक तोपची की पत्नी थी। उसका पति अकेला ही बाघ से मुकाबला करता और गाँव वालों की रक्षा करता। गाँव वाले सब सरला के पति जग्गू का नाम सुनकर ही धैर्य महसूस करते हैं। आर्थिक तौर पर तो सरला गरीब ही है। पति के मृत्यु के बाद अकेली सरला ही अपने बेटे का पालन पोशन करती है। अपने बेटे को पति के जैसा तेपची के रूप में नहीं देखना चाहती। अपना बटे

को सैनिक में दाखिल कराना चाहती। उसके भविष्य के लिए हमेशा सोचती रहती है।

आखिर तक सरकार से लडनेवाली सूरमा भरदारी जो एक शहीद की बीवी थी, पति के मृत्यु के पच्चीस साल बाद उसको दो हजार रूपए सरकार से आर्थिक सहायता मिला, और उसको बापस करने के लिए भी कहा गया। इसलिए कि उसने अपने देवर के साथ संबन्ध रखा सुरमा भरदारी पत्र में लिखती है कि- "*तत्कालीन सरकार ने मुझे नकद दो हजार रूपए आर्थिक अनुदान दिया था। मैंने वह धनराशी जूनियर हाईस्कूल क्वीलाखाल की स्थापना में दान देदी। इसलिए मैं वर्तमान सरकार से विनम्र निवेदन करती हूँ कि रा.इ कॉलेज, क्वीलाखाल भरदार का नाम अमर शहीद श्री मोलूराम स्मारक ए.इ.कॉलेज किया जाए और मेरी पेंशन बहाल की जाए। मेरी अवस्था बासठ वर्ष की है और मैं अंधी हूँ।*"[36]

इस तरह सूरमाभरदारी को सरकार की ओर से जो सहायता मिली, वह वापस ली गयी। अकेली स्त्री ही मेहनत करके अपने बच्चों को बडा किया। आर्थिक समस्याओं को झेलती रही मगर कभी हार नहीं मानी।

करणू को अपनी घर की याद आती है *"उसे अपनी माँ, घरवाली, और अपने छोटे भाई की बहू की याद आई जिन्होंने आज तक टिहरी शहर नहीं देखा है। साल में एक बार रैमासी में देवता का मेला लगता है। सारी पट्टी के लोग मेला देखने जाते हैं। करणू के घर की औरतें कभी वहाँ भी नहीं जा पातीं। उसके पास इतना खर्चा नहीं होता कि उन्हें मेले में ले जा सके।*"[37]

रोशना कभी अपने पति से कुछ नहीं मांगती थी। सदरू की पत्नी भी घर की हालात को पहचान कर चुप रहती थी। आर्थिक स्थिति के कारण छोटी छोटी खुशिया भी पूरी नहीं हो पाती थी। छछरी जो भालू से भिड कर अस्पताल पहुँची। डॉक्टर ने उसका इलाज रोक देना चाहा, क्यों कि वह गरीब थी। पैसा देने पर ही वह इलाज करने के लिए तैयार था। बडे मुश्किल से उसके रिश्तेदारों ने पैसा डॉक्टर को दे दिया।

गरीब लोग अपनी जान बचाने के लिए डॉक्टर के पास भागते तो डॉक्टर लोग इनकी गरीबी का फायदा उठाते हैं। छंछरी को तुरन्त वैद्य करने के बजाय डॉक्टर ने पैसा वसूल करने में लगा रहता है। पैसे देने के बाद ही इलाज करते हैं और पैसे कम देने से इलाज भी कम करते हैं। दवाखाने के कर्मचारी भी अपने

हिसाब से लूटते है।

बडीदादी का पूरी जायदाद बाघसिंह हडप लेता है उसके बुढापे में बडीदादी की देखबाल करने वाले कोई नहीं थे। उसकी आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं थी। बडीदादी को अपनी जायदाद से कोई लेना-देना नहीं था। वह तो सिर्फ अपनी मौत का इन्तजार करने लगी।

बडीदादी गाँव वालों से कहती है - *"मैने जिंदगी भर इस गाँव के घर - घर से पैणा खाई है। मेरे घर में कभी कोई शुभकार्य नहीं हो पाया कि मैं गाँव का पैणा लौटा सकती। मैं धर्मराज के इन्तजार करते-करते थक गई हूँ अब मुझे लग रहा है कि मेरा बुलावा आनेवाला है। जाने से पहले मैं अपनी जिंदगी में एक बार तुम लोगों का पैणा लौटाना चाहती हूँ।"*[38]

सरकार ने बडीदादी को पच्चीस रूपयों की आर्थिक सहायता की। बडीदादी उन पैसों को अपने लिए खर्च नहीं किया वह गुड के ढेल मंगवाकर गाँव में बाँट देती है। बडीदादी की शारीरक स्थिति ठीक नहीं थी फिर भी उसने सरकार के पैसों का इस्तमाल अपने लिए नहीं किया। इसलिए वह गाँव वालों की बडीदादी बनजाती है। सबकी अपनी बडीदादी।

5.3. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित नारी शोषण

नारी को हर कदम पर कष्टों का सामना करते हुए आगे बडना पडता है। परिवार के लोग नारी को घर से बाहर निकलने की अनुमति नहीं देते। मजबूरी के कारण जब वह घर से निकलती तो उस पर पुरूषों की निगाहें उसके शरीर को निहार ने में तत्पर रहती है। अगर ऐसे लोगों के खिलाफ आवाज उठाना चाहती तो उस पर ही इल्जाम लगाया जाता है। खुद दूसरी नारियाँ भी यही पूछने लगती कि अकेली बाहर क्यों गई ? नारी को शारीरक एवं मानसिक दोनों रूपों से शोषण का शिकार होना पडता है।

उत्तर बायां है उपन्यास में सकीना बुग्यालों से अकेली अपने डेरे पर लौट रही थी रास्ते में एक तस्कर उसको तंग करने लगा। सकीना उससे नहीं डरी उसके हाथ से बंदूक छीन ली उसको डराती है गाली देती है। फिर भी वह मानता

नही आखिर सकीना ने बंदूक फेंक दी। *"अब सकीना के हाथ में न बन्दूक थी न लाठी। केशरसिंह उस पर चिपट गया था जैसे एक ताकतवर बाज किसी छोटी सी पक्षी पर झपट जाता है और पंखों से दबाकर उसे नोचने लगता है। केशरसिंह उससे जबर्दस्ती करने लगा था। हाथ में लाठी के रहते बाघ से भिड जाने वाली गूजर की जांबाज बेटी धरती की अस्मत के लुटेरे से भिड रही थी। अपनी पूरी ताकत के साथ वह उसका मुकाबला करने लगी थी। उसे रह रह कर सदरू नाम के उस पालसी की सूरत याद आ रही थी जिसके तिरपाल के तम्बू के नीचे शरण लेकर उसने अपने को बेहद सुरक्षित और सम्मानित महसूस किया था। तस्कर उसकी ताकत पर हावी होता जा रहा था। उस वक्त सकीना को अपना औरत के रूप में जन्म लेना बेहद अखरा रहा था।"*[39]

सकीना उस तस्कर की शिकार बन गई। जो घटना उस पर बीती उसमें उसका कोई दोष नहीं था। सकीना इस अत्याचार के बारे में कभी किसी से कहना नहीं चाहा।

आयशा के पिता एक दर्जन भैंस और दो हजार रूपयों के लिए उसकी शादी एक बूढे के साथ करना चाहता है। अब तक उस बूढे की दो शादियाँ हो चुकी है और दोनों पत्नियाँ इस रिश्ते से खुश है। आयशा सोचने लगती है "*एक दर्जन भैंसे आयशा को अपने सींगों पर उठाकर बूढे सईद के पलंग पर डाल देंगी। आयशा, गूजर की बेटी आयशा जिसने बचपन से भैंसों का दूध पिया था और उनके साथ जिन्दगी बिताई थी, उन्हीं भैंसों की खौफ महसूस करने लगी थी। एक दर्जन भैंसे उसके घर के अंदर दाखिल होकर आयशा को उसके बाप के घर से बेदखल कर देंगी। उन भैंसों का कडवा खयाल उसकी जिन्दगी के हसीन सपनों में बाधा पैदा करने लगा है।"*[40]

आयशा कुछ नहीं कह पाती।इस रिश्ते से उसके घरवाले सब संतुष्ट है। आयशा कुछ कहना चाहकर भी कह नहीं पाती। हिम्मत नहीं थी उसके अंदर वह सोचने लगती कि "*क्या मैं बिकाऊ माल हूँ? क्या ऐसा नहीं हो सकता कि मैं अपने बाप से कह दूँ कि मैं जा रही हूँ, मैं बिकाऊ माल नहीं हूँ? मेरे इतना कहते-कहते मेरा बाप मेरी जुबान बाहर नहीं खींच देगा ?"*[41]

इस तरह नारी चाह कर भी विरोध नहीं कर पाती शोषण सहती ही रहती है। बचपन से ही उसके मन में यह बात बिठायी जाती है कि घर में बाप के खिलाफ कुछ कहना नहीं चाहिए। पिताजी जो कहते हैं उनके आदेश का पालन

करना चाहिए। चाहे वह सही न भी हो फिर भी उनके आदेश का पालन करना ही पडेगा।

नारी को बाहर के लोगों का शोषण भी सहना पडता है। छंछरी खेत में काम कर रही थी एक तरफ मर्द लोगों से बचना पडता है तो दूसरी तरफ जानवरों से भी बचकर रहना है। खेत में घास काट रही छंछरी पर भालू वार किया। छंछरी हार नहीं मानी।भालू से भिड गई। हिम्मत के साथ भालू को भगा दिया। लेकिन छंछरी बुरी तरह घायल हुई। अस्पताल में ले आने के बाद बहुत देर तक डॉक्टर पहूँचा ही नहीं था। देर से पहूँच कर वह कहने लगता है कि -"*घायल औरत को देहरादून ले जाओ। भालू से भिड सकती है तो रोग से, घावोंसे, उन सबसे होने वाले दर्द से नहीं लड सकती? बहुत बहादुर औरत है। उसके अंदर सब कुछ झेलने की क्षमता है। और नहीं है तो उसे वह क्षमता हासिल करनी होगी।*"[42]

एक गरीब औरत पर मेहर्बानी दिखाने की बजाय डॉक्टर इस तरह की बात करना कहाँ तक न्याय है। लोग तो डॉक्टर को भगवान मानते हैं। इस देश को ऐसी ही वीरांगनाओं की जरूरत है जो अपने घावों से उठने वाली पीडा के साथ-साथ सरकारी तनख्वाहों पर पलने वाले डॉक्टरों का कटु व्यवहार भी आसानी से झेल सकें।सब कुछ पी जाए, मुँह से आह तक न निकले। भालू और डॉक्टर के हमलों को बर्दाश्त करे और सब कुछ अपने ही मन में समा सके।

किसला की शादी होकर दस साल होने पर भी उसकी कोई संतान नहीं थी। उसके पति अच्छा इन्सान था। उसके बारे में किसला कहती है "*उसका आदमी एक भला आदमी है। उसमें और कोई खोट नहीं। बस उसके अंदर कभी मर्दानगी नहीं जाग पाई। और तब पूरे दस साल बीतगए हैं। पंद्रह साल की कच्ची उम्र में ब्याही गई किसला के बदन पर अब पच्चीस साल जवानी का बेग सवार है। उस वेग को कोई संतुष्य करने वाला नहीं। अपने उस तगडे दिखाई देने वाले खूब सूरत मर्द के साथ उसे एक विधवा की जैसी जिंदगी बितानी पडती है।*"[43]

गाँव के सब लोग किसला के बारे में जानते हैं और उसके पति के बारे में भी। गांव की औरतें किसला के साथ कितना मजाक करने पर भी वह अपने पति के बारे में कुछ नहीं कहती। गांव में संपन्न होने वाले महाभारत का व्यास हरिमोहन कथा सुनने गांव के सभी औरतें वहाँ पहुँचते थे। व्यास हरिमोहन सब युवतियों की

तरफ देखता हुआ पाठ ऐसा सुनाता है कि महाभारत में घटी सारी घटनाएँ साधारण मुनष्यों के जीवन की घटनाएँ है। व्यास हरिमोहन बीच बीच में कथा रोक कर युवतियों की तरफ तिरछी नजर से देखता था। उसकी नजर कई बार किसला पर भी पडी थी। अगर कोई लडकी अपने ससुराल से भागकर मायके आती है तो मायके वाले उसे सहारा देने के बगैर उसे वापस उसी नरक में भेजना चाहते है। नारी एक हद तक चुप रह सकती है। यातनाएँ सह सकती है। लेकिन बार बार उसको कष्ट सहना पड रहा तो कहाँ तक वह अपने आपको काबू में रख कर उनकी सेवा करती रहेगी। शारीरक कष्ट के साथ मानसिक कष्ट को झेलना पडता है तो वह सह नहीं पाएगी। मायके वाले समाज के डर से उसे घर पर नहीं रख सकते।

रैमासी गाँव में एक बांद किसी और से प्यार करती थी इसलिए अपने पति के घर से भाग रही थी। बांद को और उस आदमी को पटवारी के पास लाया गया है। उसे कुछ पूछे बगैर उस की जिंदगी का फैसला हो रहा है "*झगडे की असली जड यह बांद है। वह पकड में आ गई है। मर्द लोग तो बेचारे बेकसूर होते हैं। नजरें तो औरत लडाती है। हँसी और फँसी कहावत पुरानी है। उसके मायके वालों के रैमासी न पहुँच जाने तक बाँद को रात में पटवारी चौकी पर उसे कौन रखेगा? औरत और पालतू पशु को किसी के हिफाजत के बगैर नहीं रखा जा सकता। अपने घर से भागी हुई बांद सिर्फ सरकार की हिफाजत में रह सकती है। सरकार माने पटवारी। उसके मायके वाले आजाएंगे तभी आगे की बात तय हो पाएगी। पटवारी चौकी पर लगी कछेडी आज की शाम बगैर कोई फैसला किए खत्म हो गई है। अपनी उबलती जवानी के बेसब्र जोश में बहुत वाचाल हो कर चटर-चटर करती जा रही छरहरे, गोरे बदन और जादूई नाक -नक्श वाली इस मोहिनी बांद के तीखे मिजाज और मखमली बदन की आज की रात पटवारी भी जरा जांच लेने की सोच रहा है।*"[44]

अगर लडकी किसी से प्यार करती है तो इसकी कीमत उसके घरवालों को ही नहीं उसको भी कीमत चुकानी पडती है। वह सोचती कि अपने प्रेमी के लिए वह कुछ भी करलेगी। पटवारी जैसे लोगों की शिकार बन जाती है। टिहरी जेल और कछडी का डर दिखाकर पटवारी लोग सब गाँव वालों को ठगते रहते हैं। जब औरत का मामला आया तो क्यों छोडेगा। एक तरफ पैसा मिल रहा है और दूसरी तरफ लडकी मुफ्त में मिल रही है। वह उस लडकी से अपनी मनमानी कर सकता है। किसी बन्धन से मुक्त होने के लिए नारी को किसी न किसी मर्द की

शिकार बनना ही पडता है।

नारी ससुराल में अपनी नई जिन्दगी शुरू करने के लिए आती है।वहाँ कोई उसके मन को जानना नहीं चाहता।बस नारी को इतना ही करना है जो ससुराल वाले कहे।बहू का आर्थ यही होता है कि उनके वंश की वृद्दि करेऔर लडके को जन्म देने से उसके सफलता मिलती है।नारी की इच्छाओं का कोई मूल्य नहीं होता बस जो सासूमा कहे या पति कहे आदर्श गृहुणी की तरह उसका पालन करना है तभी वह अच्छी बहु बन सकती है।

बिंदकी शादी के बाद सोने के लिए अपने पति के कमरे में नहीं जाती थी तो सासूमा कहने लगी "*दुल्हन उसे कहते है जो दूल्हे के सात रह सके। इसकी तरह सभी दुल्हनें रहने लगेंगी तो दुनिया बांझ हो जाएगी। कुछ देर बाद बिंदकी को अपने साथ वन की ओर ले जाने के लिए वहाँ पहुँची तो उनहें भी साथ यह कह कर लौटा दिया कि वन से उसका परिचय कराया जाता है जो वंश की उस वन की तरह वृध्दि करने को तैयार हो। जिसने अपना बदन खोलकर अपने आदमी के हवाले नहीं किया उसे वन भेजने की कोई जरूरत नहीं। आगे वह बुढियों के साथ यह कहती है कि गाँव के छोकरे इधर -उधर हाथ मारने लगेंगे। गाँव बर्बाद होने लगेगा। हमने तो इसके बाप के पास उसका मुहमांग दाम जमा किया, तब लाए इसे और अपनी याद करो, हमें कमरे में बन्द किया गया था तुम और हम कितनी कितनी बडी रही होंगी उस वक्त ?*"[45]

सासुमा बिंदकी को कही बाहर जाने नहीं देती इतना ही नहीं घर के अंदर कही घूमने नहीं देती। जानवर की तरह उसे एक ही जगह बिठाती थी चाहे वहाँ धूप आये छांव। वहीं पर खाना देती थी। रात में उसको सोने के लिए कमरे में भेज देती है। बिछाने और ओडने के लिए चादर नहीं होता उसको ऐसा ही सोने पडता है।

लडकी को समझने से पहले ही मायके वाले या ससुराल वाले किस तरह रहना है क्या क्या करना है सब का लिस्ट बनाकर औरत के सामने रखदेते हैं। उसकी भावनाओं का कोई कदर नहीं करता। औरत से कहा जाता है कि शादी होने तक मायका उसके लिए सुरक्षित जगह है। पति के साथ रहने से उसकी जिन्दगी आराम से कट जाएगी। अगर ससुराल वाले ठीक रहने पर ही औरत को सुरक्षा कहाँ से मिलती है ? एक तरफ आर्थिक परिस्थितियां, दूसरी तरफ गाँव के

ठेके दार या पटवारी की बुरी नजर से हमेशा अपने आपको बचाना पडता है। कभी कभी पति को बचाने के लिए खुद को बेचना पडता है।

पुलमा के पति शिव्वा को गोरखें हरिद्वार बेचने के लिए गुलाम बनाकर ले जा रहे थे। पुलना की मदद करने वाला उस गाँव में कोई नहीं था। पुलमा उस गाँव के भले आदमी पाती राम के पास गई थी पुलमा। वह जानती थी कि पाती राम उसको किस नजर से देखता है। फिर भी उसको दूसरा रास्ता नहीं था। *"पुलमा शिव्वा को प्यार करती थी। वह उसे अपने तन-बदन से ज्यादा चाहती थी। वह चाहती थी शिव्वा आजाद रहे, अपने घर पर रहे। अपने गढवाल में रहे।* पुलमा सेठजी से कहती है कि-

-सेठ जी तुम उनकी रस्सी खुलवा दो।
-उसकी रस्सी खुलवा हूँ तो मुझे क्या मिलेगा?
-तुम मुझे रख लो।"[46]

इस तरह पुलमा खुद को बेच कर अपनी पति को बचा तो लिया। लेकिन वह फिर अपने पति के साथ जा नहीं सकती थी। पातीराम उसके साथ कुछ भी कर सकता है। वह कुछ नहीं बोलती अगर कुछ बोलने से उसे भी हरिद्वार भेज देगा। पुलमा अपने आप को पातीराम को बेच देती है।

इससे पता चलता है कि औरत को कितना शोषण सहना पडता है। बार बार उस पर जुल्म किया ही जाता रहता। खूबसूरत होने से सब की नजर उसके ऊपर ही रहती है। किसी भी हाल में उस औरत को पाना चाहते हैं। अपनी हवस पूरा करने के लिए मर्द लोग किसी भी हद को पार कर सकते हैं। गिरी हुई हरकते करने के लिए भी तैयार रहते हैं। मौका पाते ही अपनी हवस का शिकार बनादेते हैं। औरत की मजबूरी के साथ मर्द सौदा करता है। औरत तो औरत ही होती है कभी-कभी ऐसी स्थितियाँ नारी के आगे खडी होती है कि जितना भी धन हो वह सुख नहीं रह पाती। उसके पास सब कुछ होता है लेकिन प्यार देने वाला पति नहीं होता। पति का सहारा नहीं होता तो उस ससुराल में औरत कितनी अकेली रहजाती है, आखिर वह रानी होने पर भीउसे महल में एक कैदी की तरह जीवन बिताना पडता है।

राणी कर्णावती का पति महिपतशाह दूसरे औरतों के साथ रहता है। रानी की पर्वाह नहीं करता। हमेशा औरतों के साथ ऐश करता रहता है। रानी जानती हुयी भी किसी से कुछ नहीं कहती, रानी होने के नाथे उसे अपना दुख को छुपाना पडता है। बाहर दुनिया के लिए वह रानी एक ऊँचे पद की है लेकिन अंदर राजा उसको कतर भी नहीं करता।

रानी के पास सब कुछ था।लेकिन उसका पति उसके वश में नहीं, उसको कितना दुःख सहना पडता था। रानी का मन हमेशा उन यादों से बोझिल रहता था। लेकिन अपने मन की बातें किसी से कह नहीं पाती। चुप-चाप शोषण सहती रहती थी।

सूरज सबका है उपन्यास में फजीती एक ऐसी औरत है बचपन से लेकर अंत तक शोषण सहती ही रही।"*बाघा परिवार में घर की सास नहीं है, वह बहुत पहले मर गई थी। लोग कहते हैं कि बाघा परिवार के कठिन अनुशासन के बंधनों की छटपटाहट में मरी। उसने अपनी नई, छोटी बहु छटाँकी के साथ अपने पति को देख लिया था। वह जबर्दास्ती नहीं कर सकी उसने आत्महत्या करली थी। वह हेंवल नदी के गहरे तालाब भैंस्यारी में कूद गई थी।"*[47]

बचपन से लेकर मरने तक फजीती कभी खुश नहीं रह पाई। बचपन में विमाता के साथ अनेक कष्ट सहती है। शादी के बाद भी वह कभी सुखमय जीवन बिता नहीं पाती। नारी अनेक कष्ट सहती है लेकिन अपने पति को किसी दूसरी औरत के साथ देख लेती तो अपने आप को संभाल नहीं पाती। वह अपना प्राण भी त्याग देना चाहती थी। औरत को सब जिम्मेदारियाँ निभानी पडती है। कौन कह सकता है कि उसका पति हमेशा उसके साथ रहेगा, कभी ऐसी स्थिति सामने आजाती है कि पति के बिना बच्चों को लेकर बिना सहारे का जीना पडता है। थोडी बहुत जायदाद है तो ठीक है वरना उस औरत को अपने बच्चों के पेट भर ने के लिए काम करना पडता है। वह भूखी रह कर अपने बच्चों को खिलाना चाहती है। किसी से मदद पूछने के लिए, कर्ज लेने से अच्छा, वह छोटा काम ही क्यों न हो वह काम करेगी, ऐसी धारणा हमेशा नारी के मन में रहती है। बच्चों की चिंता तो हमेशा हर माँ को होती ही है। अपने बच्चों को ऊँचा पद में देखना चाहती है। बच्चों के भविष्य के लिए हमेशा तत्पर रहती है। अपने बच्चों को देखकर खुश होती है। दुश्मन की माँ सरला अपने बेटा शतरू को पल्टन में भर्ती

करना चाहती है। लेकिन शतरू मानता नहीं।वह गाँव के औरतों से कहती है कि गाँव के सारे लडके पल्टन में भर्ती होने को गये हैं।मेरा बेटे को कितना समझाने पर भी नहीं जा रहा है, मैं क्या कहू ?वह हमेशा शतरू के बारेमें परेशान रहती है। ताकी वह बाप के जैसा न बनपाय।

हर माँ यही सोचती है कि अपना बेटा हमेशा खुश रहे। उसकी जिन्दगी में कोई दुःख न हो। अपनी संतान के खुशी के लिए माँ कुछ भी कर सकती है। एक माँ को यह ध्यान में नहीं रहता कि उसका पेट भरा या नहीं लेकिन वह हमेशा अपने बच्चों को भर पेट खाना देती है। चाहे उसका पेट भरे या न भरे।

नारी हमेशा खुद के बारे में नहीं सोचती।घर के सब दस्यों के बारे में सोचती है। पति शराब के नशे में उसको खूब पीटकर थक कर सोता है। सुबह होते ही वह पति के लिए खाना तैयार रखती है। वह इस तरह रहती है कि रात में कुछ हुआ ही नहीं। शोषण को चुपचाप सहती रहती है। वह कभी पति के खिलाफ कुछ नहीं बोलती। किसी से उसकी शिकायत तक नहीं करती। तभी वह एक अच्छी पत्नी या बहु बन सकती है। विद्यासागर नौटियाल लिखते है- "*मैंने पहाड को हमेशा आदमी से जोड कर देखा है। जिस रचना में आदमी मौजूद नहीं उस पहाड से मेरा कोई संबन्ध नहीं। पहाड के मर्दों के मुकाबले मुझे पहाड की नारी अधिक आकर्षित करती रही है। उसकी अंतहीन वेदना।*"[48]

समस्या की जगह दरअसल नारी के भीतर छिपी असुरक्षा की भावना है। भारत में औरतों की गुलामी आज भी अधिक गहरी, व्यापक निरंकुश और संगठित रूप में व्याप्त है। बहुसंख्यक नारी आबादी आज भी बर्बर निरंकुश दासता और मध्य युगीन पुरूष प्रधान व्यवस्था के मूल्यों में जकडी हुई है। भयानक अमानवीयता की शिकार हैं। मध्यवर्गीय औरतों को आज भी चूल्हा-चौकट से बाँधा गया है। पति की सेवा, बच्चों का लालन-पालन और घरेलू उपयोगों की चीजों के उत्पादन से अधिक कुछ नहीं करती। नौकरी करने वाली स्त्रीयाँ भी घरेलू गुलामी से मुक्त नहीं।

औरतों को अपनी मध्यवर्गीय मानसिकता से उभरना होगा और गरीब एवं ग्रमीण महिलाओं के साथ अपनी पहचान बनानी होगी। स्त्री को पुरूष सत्ता और रूढिवादी समाज से मुकाबला करना होगा आज वे अपने परिवार और बाहरी समाज से मुकाबिल हैं। अपने परिवार और बाहरी समाज से।

5.4.विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित नारी का आत्मविश्वासी

स्वरूप

नारी सामाजिक और आर्थिक संरचनाओं से बने हुए इस संसार में संघर्ष कर रही है। अतः स्त्री की मानसिकता के लिए उसकी समग्रस्थिति भी उत्तरदायी है। समाज कई प्रकार की रूढियों से नारी का शोषण करता है। जिससे उसकी मानसिकता बदलती है। जिससे उसकी मानसिकता में पुरूष की मानसिकता की अपेक्षा अधिक बदलाव आता है। इससे स्पष्ट होता है कि नारी की मानसिकता में बदलाव का कारण सिर्फ जैविकी संरचना ही नहीं है बल्कि यह उस समाज या जाति पर भी निर्भर है जहाँ उसका जन्म हुआ तथा जहाँ वह निवास कर रही है। अतः सामाजिक संरचना के साथ सामाजिक एवं सांस्कृतिक मान्यताएँ भी नारी के मानसिक विकास का कारण बनती है।

नारी एक तरफ से स्वतंत्र मालूम पडती है तो दूसरी तरफ बिल्कुल स्वतंत्र नहीं। बन्धनों में जकडी हुई नारी अपने आप में मुक्त नहीं हो सकती। नौटियाल जी की नारी डरनेवाली नहीं, खेत में काम करने वाली, स्वतंत्र जीवन यापन करने वाली नारी है। नारी अनेक कष्ट सहने पर भी अपना आत्मविश्वास खोना नहीं चाहती। भले उस पल के लिए वह टूटती जरूर। लेकिन वह आगे बडती भी जरूर। *झुण्ड से बिछडा* उपन्यास में सरला के पति की मौत और बेटे का जन्म एक ही दिन हुआ था। इस घटना का चित्रण उपन्यास में बडा ही मार्मिक डंग से किया गया। *"पुत्र के जन्म लेते ही पति की अचानक चले जाने के बाद प्रसूता विधवा अपने होश में नहीं थी। बच्चे की सूरत देख -देख कर रोती रहती थी। रोती थी और रोते -रोते फिर से उसकी सूरत देखने लगती थी। तब सहारे की एक क्षीण रेखा उसके दिल के किसी कोने में उभरने लगती और उसे धीरज देने लगती। बच्चे का नामकरण पण्डित ने नहीं किया था। बगैर किसी रस्म के उसकी माँ ने काम चलाने के लिए, पुकारते रहने केलिए खुद ही उसे एक नाम दे दिया था। गाँव की किसी औरत को यह पूछने का उत्साह या साहस नहीं हुआ था कि तेरे बेटे का नामकरण संस्कार किस दिन होगा। ऐसे मौके पर इस तरह का सवाल नहीं पूछा जा सकता।"*[49]

उस गाँव का श्रीधर प्रसाद अपने चचेरे भाई के मौत पर जश्न मनाता है तो पूरा गाँव ताज्जुब हो उठाता है, उसने शतरू को बुलाकर जंगल से दो बकरियों को लाने के लिए कहता है तो दुश्मन मना करता है। वह घर आकर माँ से पूरा किस्सा बयान करमे पर माँ बहुत संतुष्ट होती है और बेटे से कहती है कि

तू ने अच्छा काम किया। अगर ऐसा काम करने से गांव वाले बुरा मानेंगे। चाहे ओ कितना बडा इन्सान क्यों न हो लेकिन बेसहारा औरतों को इस तरह बेइज्जती करना बुरी बात है। ऐसे लोगों का बात न मानने से कुछ नहीं होगा।।हमें गाँव वालों के साथ देना चाहिए।

सरला गरीब औरत होने पर भी अपना आत्मविश्वास कभी खोई नहीं। पति की मृत्यु के बाद अकेली सरला ने अपने बेटे दुश्मन (शतरू) का खयाल रखा। उसको बडा किया। श्रीधर प्रसाद जैसे बडे लोगों से टक्कर लेना कितना मुश्किल होगा यह बात सरला अच्छी तरह से जानती थी। फिर भी वह पूरे आत्मविश्वास के साथ अपने बेटे का साथ देती है।

गाँव की औरतें घास के लिए हर दिन खेत जाती हैं। उनको पता है कि जंगल के पास ही अनेक जानवर रहते हैं। औरत को तो हर दिन जंगल जाना ही पडता है। अपने जानवरों को घास ले कर जाना है या खेती का काम करना है। तो एक दूसरे के साथ बाते करते हुए और अपना काम पूरा करलेती हैं। डर कर कभी जंगल से भागती नहीं। वह आपस में बातें करती है कि "*आदमी भी तो एक जानवर ही होता है बहना हम क्या कोई कम जानवार है ?अब बोलो, घास-लकडी की तलाश में हम वहाँ पहुँच जाती है जहाँ कोई बाघ-भालू भी नहीं जाते। यह बात सही है। बाघ-भालू और हम घसियारिनें एक ही जंगल में, एक जैसी खतरनाक जगहों पर रहते हैं।*"[50]

सूरज सबका है उपन्यास में छुन्ना जो सात साल की लडकी थी, वह बडीदादी को पैणा देने के लिए दादी के घर जाती है, देहली पर चढ पाना छुन्ना के लिए एक समस्या है। देहली बेहद ऊँची हैं *"देहली उपर है,छुन्ना नीचे है,छुन्ना को अभी सब से ऊँची चढाई पार करना बाकी है। छुन्ना खडी है। उसकी ठुड्डी उस दीवार को छू रही है जो देहली के बाहर है। बाहर की वह दीवार दहली से नीचे है और उसका एक हिस्सा सीढी के ऊपर है। दीवार एक है। आँगन से छत तक दीवार एक है।"*[51]

छुन्ना सीढी पार करने के लिए बार-बार कोशिश करती रहती है। वह हार मानना नहीं चाहती। वह अंदर जाना चाहती थी।लेकिन शीढी चड नहीं पाती।

हरिद्वार की मंडी में औरतों की बोली लगाई जा रही थी। एक औरत उठ कर खडी होकर कहती है उसके साथ जो दूसरी औरत उसको भी साथ भेज दे। उस औरत की बातों में एक प्रकार का त्रासदी का भाव झलकती है- "*हमें पता नहीं कहां ले जाया जा रहा है। यहां से जाने के बाद हमें कभी अपनी गंगा माई के दर्शन नहीं करने हैं, अपने पहाड नहीं देखने हैं। अपने लोग नहीं देखने है। हम दोनों एक साथ रहेंगी तो कम से कम आपस में बातें तो कर सकेगी। तुम्हारे भी कोई माँ -बहनें होंगी। अगर राजा गढवाल जीत जाता और गढवाली तुम्हारी माँ-बहनों को इस तरह बेचने लगते तो तुम्हें कैसा लगता ?हम औरतों ने कोई कसूर नहीं किया है। हमारा कसूर सिर्फ इतना है कि हम लडाई के मैदान में खुद नहीं गई।* "[52]

वह औरत जानती है कि कल तक अपने घर में,परिवार के साथ रहने वाली थी उसकी मंडी में आज बोली लगाई जा रही है तो वह डरी नहीं अपनी स्थिति पर आँसू नहीं बहाई। आत्मविश्वास के साथ आगे बढ गई। मंडी में किसी गुलाम को बोलने का हक नहीं होता, ऐसी स्थिति में भी वह औरत डटकर हाकिम के सामने खडी होकर उसकी बात हाकिम के सामने रखती है। इसीलिए औरत को कभी मुश्किलों से भागना नहीं चाहिए।उसका सामना करना चाहिए तभी वह समाज में आदर के साथ जिन्दगी बिता सकती है। नारी को अपनी आवाज उठानी चाहिए। रानी कर्णावती एक ऐसी औरत थी, मुगल सेनाएँ श्रीनगर पर कूद पडने से वह नहीं डरी। आत्मविश्वास को हारे बिना उसने जो चाल चली जिस से मुगल सेनाओं को नाक कटवाकर भागना पडा। कटे नाको को बादशाह को तोफे में भेजने को कहती है। एक लाख सैनिकों को कितन चतुरता से रानी मुकाबला की थी मुगल सैनिक सोच भी नहीं सकते थे। मुगल बादशाह ने यह सोचा कि अकेली औरत है बडी आसानी से हार मानेंगी। अंत में कटे नाक से आए सिपाहियों को देखकर बादशाह को लगा खुद की नाक कट गई। इस पराजय के बाद मुगल बादशाह कभी श्रीनगर की तरफ आँख उठाकर नहीं देखा।

बडीदादी की जमीन जायदाद बाघसिंह हडप लेता है। बडीदादी को इससे कोई शिकायत नहीं। वह यमराज से शिकायत करती है कि उसको लेने के लिए वह अभी तक क्यों नहीं आया। "*लेकिन वह अपने गले में अपने हाथ से रस्सी का फंदा नहीं डालेगी, किसी नदी में नहीं कूदेगी किसी ढंगार के ऊपर खडे हो कर वहाँ से छलांग भी नहीं लगाएगी और अपने कपडों पर आग लगाकर भी अपनी जान नहीं गाँवाएगी।*"[53]

बडीदादी आत्महत्या नहीं करना चाहती है। यमराज आकर उसको लेकर जाएगा। यमराज के निमंत्रण के लिए अंत तक इंतजार करती रहती है। मरने से पहले वह सब गांव वालों को गुढ की ढेलियाँ बाँट कर सब के बीच से बिदा लेती है।

अकेली गूजर लडकी सकीना जो रास्ता भूल कर भटक रही थी एक तस्कर उसका पीछा करने लगता और बन्दूक दिखा कर उसके साथ जबर्दस्ती करना चाहता है। लेकिन सकीना उसको लाठी से मार कर उसका बन्दूक को खींच लेती है और कहती है कि "*गूजर की बेटी हाड-मांस की बनी होती है, लोहे-पत्थर की नहीं। तेरी बन्दूक मैं बापिस नहीं दूंगी। इसे खौंखल्लया भेल में डाल दूंगी जिसे तल पर पहुंचने का कोई रास्ता है ही नहीं। किसी की बेटी की आबरू पर हमला करने की तुझे हिम्मत कैसे हुई? दिल को हथेली पर लिए घूमता है? तेरे सीने में दिल होता तो तुझे घर पर इन्तजार में बैठी एक औरत की याद आती।*"[54]

तस्कर की अत्याचार के बाद भी सकीना हार नहीं मानती वह अपना पूरा बल लगाकर घृणा के साथ एक लाथ मारती है। उस दक्के से वह चीखते हुए भेल के अंदर जा गिरता है। भेल की गहराई में गायब होचुका तस्कर का बदन को देख कर सकीना बहुत खुश होती है और शान से तस्कर की थैला और बंदूक को लेकर आगे बडती है। अकेली गूजर की लडकी हार नहीं मानती।समाज में नारी अक्सर एसे अत्याचारों के शिकार बनती हैं। कुछ लोग खुद भी खुशी करलेती हैं। फिर भी नारी आत्मविश्वास के साथ लडती हुयी आगे बड रही है।

रोशना की शादी हो कर कई साल होने पर भी उसको बच्चा नहीं हुआ वह उसके पति के दोस्त के साथ भाग जाती है। उसका पति भी अपनी पत्नी को उसके दोस्त के साथ देखकर कुछ कह नहीं पाता। जब रोशना को पता चलता है कि वह माँ बनने वाली है तो वापस पति के घर चली जाती है। गाँव वाले उसके बारे में कानाफूसी करते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि रोशना के बच्चे का बाप कोन हो सकता है। इसमें रोशना का क्या दोश है। उस बच्चे पर उस को भी हक नहीं है। कुछ दिन तक इसी खबर को लेकर चर्चा हुई थी। उसके बाद ताजी खबर आते ही इस को छोडदेते है। लेकिन जब रोशना ससुराल वापस आने पर किसी ने उससे कुछ नहीं कहा। करणू जो उसका पति था उसको अपनाया।

रैमासी गाँव में एक बाँद अपने ससुराल से किसी आदमी के साथ भाग जाती है। ससुराल वाले उस लडकी को वापस ले जाने के लिए आते तो वह इन्कार कर देती। वे लोग पटवारी के पास जाते हैं। पटवारी जो भी फैसला देगा उसका संबंध सीधे-सीधे उसकी निजी जिन्दगी से होगा। बांद कहने लगती कि उसे अपने पति के साथ वापस नहीं जाना है वह किसी और लडके से प्यार करती है।

"वह बान्द कमरे में किसी एक मर्द से धीरे से, शर्माते हुए, डरते-डरते चुपके-चुपके, डरी हुई औरत की जैसी दबी हुई जबान में अपनी बात नहीं कह रही है। ऐसे नहीं बोल रही है कि कुछ बोल लेने के बाद फिर कुछ देर तक रूक जाती हो। तब कुछ बोल नहीं पाती हो और आगे बोलने के लिए फिर कुछ सोचने लगती हो -अब क्या बोला जाए? दबंग होकर बहुत सारे मर्दों के सामने मुँह खोल कर बोलने लगी है। उसने लाज, हया सतगंगा में बहा दी है। निर्भिक, बेशर्म होकर बोलने लगी है। ऐसे बोल रही है जैसे अब से आगे सरकारी कछेडी उसी को चलाने हो। जननियों को कुछ ज्यादा ही आजादी मिल गई रियासत की आजादी के बाद। बांद बोल रही है -मैं उस घर में रहूँगी ही नहीं। जिससे जो हो सकता हो वह करके देख ले। पटवारी जी!तुम जबर्दस्ती मुझे वहाँ भेजोगे तो मैं फांस खाकर अपना जीवन समाप्त कर दूँगी। तब तुम्हें पकडा जाएगा मेरी मौत के लिए।"[55]

बांद किसी से डरती नहीं। जो उसको पसंद नहीं था वह उसके साथ नहीं रहना चाहती थी। हिम्मत के साथ सब के सामने अपना बात कह देती है। अपना जिंदगी खुशी से बिताती है। उसी तरह किसला भी डरे बिना अपनी मन की बात जोल से कह देती। किसला उसके पति को छोडना नहीं चाहती। सिर्फ बच्चे के लिए जोल के पास आती है। लेकिन जोल अपने पति के लिए दवा दे कर उस को घर पहुँचाता है।

नारी माँ बनना अपना सौभाग्य मानती है। बच्चा न होने से गाँव के लोगों के ताने भी सुनने को मिलते हैं। घर की हालात तो बता नहीं सकती। जिस औरत का बच्चा नहीं होता सब लोग उस औरत पर ही उंगली उठाते हैं, पति को कुछ नहीं कहते। यह जानते हुए भी कि पति का ही दोष है। अंबा जो शाल्व से प्यार करती थी, लेकिन स्वयंवर में देवव्रत उसके दोनों बहनों के साथ अंबा को भी अपने साथ ले आया दोनों बहनें तो देवव्रत के भाई से शादी की। अंबा ने शाल्व के बारे में देवव्रत से कहने पर देवव्रत अंबा को शाल्व के पास भेजा। लेकिन शाल्व ने अंबा

को नहीं अपनाया। देवव्रत अंबा से शादी नहीं कर सकता था। अंबा को भीष्म के प्रति विरोध भाव जागते है। उसको अपना स्त्री जन्म बेकार लगने लगा। अंबा भीष्म को मारना चाहती थी। अंबा अब किसी से डरने वाली नहीं थी। अंबा को पता है कि वह एक राजकुमार से टक्कर ले रही है। लेकिन वह अपना आत्म सम्मान खोना नहीं चाहती। देवव्रत पर बदला लेने की तैयारियाँ करने लगती है।

भीम अकेला उपन्यास में भीम को राक्षस के हवाले करने के बाद वह वापस नहीं लौटा तो पांडव विचार में डूब गए और यह मानलिया कि भीम उस राक्षस के हाथों में मारा गया। कुंती माता को विश्वास था कि भीम वापस आएगा। पांडवों के बहुत समझाने पर भी वह नहीं मानी। अंत में वह अपना बेटा भीम को पहचान ही लेती है। उसका विश्वास झूठ नहीं था। उसका बेटा उसको मिल गया।

इस प्रकार हम देखते है कि आदि से लेकर आज तक पुरूष की दृष्टि नारी के प्रति एक प्रकार से नकारात्मक ही रहा है। लेकिन नारी अपने स्वाभिमान के लिए कुछ भी त्यागने के लिए तैयार रही है।

5.5. विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित पराधीन नारी का स्वरूप

नौटियाल जी की रचनाओं में भैंस, दूध, घास आदि का वर्णन बहुत आता है। स्त्रियाँ घर का काम देखती हैं। पुरूष घर पर रहकर खेती मवेशी का जो काम करते, वे सारा काम स्त्रियां करती हैं। जहां तक काम करने का सवाल है, गढवाल में गरीब किसानों की स्त्रियां पुरूष समान होती है। इसके अनेक निहितार्थ है। उन्हें उन स्थितियों से गुजरना पडता है जिन से पुरूष गुजरते हैं। उन्हें बाहर निकलने की आजादी, जिम्मेदारी, विवशता झेलनी पडती है। पुरूष की स्थिति में काम करने वाली स्त्री को कुछ और स्थितियाँ झेलनी पडती है नारी-शरीर होने के कारण। घर की आर्थिक स्थिति की जिम्मेदारी उठाने पर नारी को अपने शरीर के कारण क्या-क्या झेलना पडता है-यह निहायत रोचक प्रश्न है। स्वतंत्रता उसे किन परिस्थिति में झोंक देती है-इसका अनुभव मीराबाई से लेकर आज की कामकाजी महिलाओं तक करती हैं।

"सामंती समाज में औरत और पशु के साथ एक जैसा व्यवहार था। दोनों का दरजा समान होता था। औरत को पशु की तरह बेचा था खरीदा जा सकता था। जिस तरह कोई जानवर बिक जाने पर अपने खूंटे से बेदखल करके किसी दूसरे खूंटे पर बांध लिया जाता है, तगडा मोल देकर खरीदी गई औरत भी एक घर से हटाई जाकर समाज से जटिल रीति-रिवाजों और राज्य के कानूनों की

सख्त डोर से दूसरे घर की चौहद्दी के अंदर, किसी दूसरे मर्द की चौकसी में बांध दी जाती थी। कुंआरी बेटी का विवाह किस घर में और किस मर्द के साथ किया जाए, इस बारे में उसकी अपनी कोई इच्छा-अनिच्छा नहीं हो सकती थी। उसके लिए घर और वर का निर्णय करने के मामले में मायके के मर्दों की दिमागी कसरत का अंत इस बिन्दु पर होता था कि उस खुले बाजार में उनको ज्यादा ऊँची रकम किस घर से हाथ लग सकती है। बेटी अविवाहित हो चाहे विवाहित, उसे जब-जब घर बदलना होगा, उसकी कीमत मायके वाले ही तय करेंगे।"[56]

उत्तर बायां है उपन्यास में किसी बांद को ससुराल में रहना पसंद नहीं तो वह वापस आसकती है। ससुराल वालों को बांद की रकम वापस करनी पडती है। बांद रात पटवारी के साथ बिताती है और पटवारी ऐसा ही करेगा जैसा बांद चाहती। मायके वाले सब जानते हुये भी वे लोग पैसों के लिए सोचते हैं।"*बांद को प्यार करता है तो शौक से प्यार करे। कौन रोक रहा है? पर उसे मुफ्त में भगाकर न ले जाय, खरीद कर ले जाय। वाजिब दाम का भुगतान कर दे।"*[57]

मायके वाले बांद का फिर से दाम लगाकर किसी के घर भेज सकते हैं। उस नारी से यह नहीं पूछते कि उसको लडका पसंद है या नहीं सिर्फ मायके वालों को इसका ही ध्यान रहता है कि कितना पैसा मिल रहा है।

"मोल के रकम के वापिस कर दिए जाने के बाद बांद पर अब ससुराल वालों का कोई अधिकार नहीं रह गया। वह फिर सेमायके वालों की जायदाद हो गई है। अपने कब्जे में वापिस लौट आई बांद नामक जायदाद का एक बार की विवाहिता बांद का फिर दुबारा मोल-भाव किया जाने लगा है। उसे नए आदमी के पास, पहले से दुगने भाव पर बेचा जा रहा है। उसके पहले विवाह के आज के दिन तक गाय-भैंसों और औरतों के भाव बहुत महंगे हो गए हैं। तब जिस मोल कुंवारी कन्या मिल जाती थी, आज उस भाव दो धरिया भी नहीं मिलती। जमाने की तासीर है, किसी का क्या दोष? बदन में खुन रहने तक इस बांद को इसी तरह बिकते रहना है।"[58]

इस तरह औरत को अपना खुद का जीवन से अलग करके उसको बेचा जाता है। सकीना बुग्यालों में अकेली फंस जाती है। जब वह अपनी जगह पहूँचने लगती है तो रास्ते में किसी तस्कर उस पर अत्यचार कर देता है। सकीना कितना लडने पर भी अपनी ताकत से तस्कर सकीना को अपना वश करलेता है।

हसीना अपने पति के साथ नहीं रहना चाहती थी। जब भी वह घर आता तो वह बीमारी का नाटक करती थी। बार बार उसको लेने पति आता, पत्नी का हाल देखकर वापस चला जाता। *"हसीना अपने बिस्तर पर लेटी थी। उसकी नजरें पचरा गई थी। गर्दन काँट दिए जाने के बाद जैसे बकरे की आँखे स्थिर हो जाती हैं, वैसे ही वह लगातार एक ही तरफ देखने लगी थी। देखकर लग रहा था कि वह किसी को भी पहचान नहीं रही है। अलादीन उसके पास बैठ गया। हसीना का हाथ अपने हाथ में लेकर वह उसे सहलाता रहा। बेजान हाथ।वह उसे छोडता था तो हाथ सूखी लकडी की तरह नीचे गिर जाता था।"*[59]

आखिर अलादीन को हसीना के साथ जबर्दस्ती करना पडा।तभी वह पति के साथ ससुराल गयी थी। सईद बूढा है उसकी दो बीवियाँ है बच्चा न होने के कारण सईद के दोनों बीवियाँ गुल्लो के पास जाकर उसकी बेटी आयशा का हाथ मांग लेते हैं। *"हम आपके पास एक फरियाद लेकर आई हैं। आप आयशा को हमारे कुनबे की बेगम बना दें, तो हम दोनों ताजिन्दगी उसकी गुलामी करती रहेंगी। हमारे दिलों का बोझ हल्का हो जाएगा। हमारे अरमान पूरे हो जाएंगे। सईद ने गुल्लों की लोभ में फांसा। आठ भैंसे, दो हजार नकद।"*[60]

आगे देखिए *"आयशा आठ भैंसों के लिए नहीं जा सकेगी मेरी बेटी कमसिन भी है, हूर भी है। सौदा एक दर्जन भैंसों पर और दो हजार रूपए नकद पर आकर पटने लगा।"*[61]

आयशा उस रात सोई नहीं थी। उसकी नजरों में वहीद का चेहरा घूमता रहा। एक हंसता हुआ वहीद उसके अंतर में बैठ गया था। आयशा वहीद से बेहद प्यार करती थी और बार बार उसे सईद की खिजाव लगी दाढी की भी याद आती रही। उसकी याद आते ही वह मुर्झाने लगी। आयशा यही सोचने लगती है कि भैंसों की तरह उसको भी बेच दिया जा रहा है। उसके माँ-बाप को उसकी खुशी से ज्यादा पैसे की अहमियन अधिक है, पैसे के लिए वे लोग बूढे सईद के साथ शादी करने के लिए हाँ कर दिए। आयशा बिकाऊ चीज बन गई।जो जितना मोल बढाए उसको खरीद सकता है।

सकीना सदरू के साथ हाँस कर बात कर रही है, वह जानती थी कि घर में उसके लिए कोई रिश्ता आएगा तो ज्यादा पैसा देकर सकीना को ब्याह कर

ले जाना है। लडके के पास कितना पैसा है और वह कितना दे सकता है इसी से लेना देना है, कम पैसा दे रहे तो लडका अच्छा होने पर भी रिश्ते को ठुकराया जाता है।

बेटी को राजी या नाराजी से-उसका जो पति छूट देगा वह उस रकम को पाने का अधिकारी हो जाएगा। रकम की अदायगी करने के बाद उसने उस औरत को खरीदा होगा। अब नए आदमी से सौदा तय करते हुए मायकेवाले निश्चित तौर पर इतनी रकम की मांग करेंगे, जिससे पिछले पति की दी हुई शुरूआती कीमत अदा कर लेने के बाद और तलाक के मामले को निपटा लेने के बाद, उनके अपने लिए भी कुछ बच जाए। नहीं तो बेटी को पालकर हमें क्या मिला? लिहाजा औरत जितना घर बदलेगी, उसका मोल उसी हिसाब से बढता जाएगा।

जिस हालात में शौहर हयात है और शौहर के हयात दम और औरत की छूट अमल में आए तो साफ है कि अपनी औरत का शादी खर्चा पाने का वही मुस्तहक होता है। जीवित पति अपनी पत्नी को छूट देगा तो अपनी दी हुई कीमत प्राप्त करने का अधिकारी होगा। लेकिन उस पति के न रहते हए यानी उसकी मौत हो जाने के बाद भी, उसकी बेवा को यह अधिकार नहीं हो सकता कि वह उस घर को छोडकर अन्यत्र चली जाए और किसी दूसरे आदमी को अपना पति बना सके। नरेंद्र हिन्दू लॉ के प्रवाधानों के अनुसार-

"मगर जब शौहर की अदम मौजूदगी में छूट अमल में आए तो हस्ब रेज्यूलेशन नं.43 के, संसुर(बाप शौहर के)सास(माँ शौहर की)ससूर का हकीकी भाई और उसके बेटे, देवर, देवरानी, जेठानी, बेटा, पोता, ससुर का बार(शौहर का दादा)या माँ(शौहर की दादी)। मुताबिक वसीयत के पा सकते हैं। इस में हकदारान शादी खर्चा का सिल सिला मुताबिक सिलसिला हक वरासत से समझना चाहिए, बल्कि यह कहना बेजा नहीं कि इन में से जिसको भी औरत के शौहर की जायदाद बतरीक वरासत पहुँचे वही मस्तहक इस किस्म के शादी खर्चा पाने का भी होता है, क्यों कि जिस औरत की कीमत दी जाती है वह खरीदने वाले की जरखरीद होती है जो शौहर की जायदाद में शुमार होती है और उसकी कीमत भी एक जुज जायदाद शौहर का है...।"[62]

कुछ बांदे बडी मनचली होती थी। घने जंगलों के अंदर खुले खेतों में गाँव या इलाके का जो युवक उनकी रंगीली नजरों में बैठ जाता था। वे अपने पति से अपनी छूट लेकर उसी के घर चली जाती थीं, चाहे उसके घर पर पहले से

कितनी ही बीरबानियां क्यों न मौजूद हों। कुछ औरतें काफी बडी उम्र तक अपने इन शौकों को पूरा करने में लगी रहती थी।

संतुष्ट" यह भी सच्चाई है कि जो बांद जितने अधिक घरों से छूट करवाती आती उसका टका (मोल) उतना ही ज्यादा बढता जाता था और समाज में उसकी प्रतिष्ठा भी बढ जाती थी। ऐसी बांदे कुछ मर्दों को इस कदर मोहित कर देती थीं कि वे उनके सपनों में लगातार घूमने लगती थी। उसे अपने घर पर बैठा लेने पर वे उसके पूर्व पति को नीचा दिखाने की अपनी तमन्न भी पूरी कर लेते थे। ऐसे नाक -नक्श वाली बांद किसी और के घर पर क्यों रहे? उसे अपने छज्जे पर बैठी देख लेने मात्र से उनके मन की प्यास बुझ जाती थी। देखले, अपनी नकाबिल से नहीं हो पाई !"[63]

आजीवन बिक-बिक कर मायके वालों की आमदनी में इजाफा करते रहने वाल उस बेटी के भी अपने अरमान होते थे। लाख गुलामी के बावजूद वह भी सपने देखने लगती थी। वह एक अच्छे वर और अच्छे घर की तलाश करने लगती थी। बांके-सजीले मर्दों से नजरे लडाकर वह उन्हें बेचैन करने लगती।

राजा के जमाने में ऋषि-मनियों का आदर होता था। समाज ऋषि-मुनियों के आदेशों का पालन करते थे। उनके उपदेशोंको सुनते हैं। ऋषि-मुनि उस युग में विशेषाधिकार प्राप्त अति विशिष्ट व्यक्ति होते थे। उस तरह के कांड से समाज में किसी भी तरह की हलचल नहीं होती थी। जो युवती अपने को किसी मुनि की जबर्दस्ती से न बचा सके वह जीवन-भर उसके बच्चे को ढोती फिरे। एक तरह से कहा जाए तो यह तो युवती पर अत्याचार करना ही है। राजा की बेटी हो या अति सामान्य गरीब युवती चाहे कोई भी हो मुनि पसंद किया तो उसके साथ बिताना ही पडेगा। कोई इसका विरोध नहीं कर पाते थे।

जंगल में घास काटने वाली नारियाँ वहाँ के हाकिम से हमेशा डरती हैं। *"जंगल के सबसे बडे हाकिम के जंगली व्यवहार से परेशान रहती हैं वनों में घास काटती घसियारिने। घरों की और पानी लेकर जा रही पनिहारिनें बहुत खौफ खाती हैं। उसके सफेद घोडे को लपकते आते देख औरतें इधर-उधर बिदकने-भागने लगती है।....उसकी तो औरत के बदन का नक्शा बदल डालने की भी हवस रहती है। उस के हिसाब से, किसी भी आदमी के लिए अपनी जन्मदात्री के अलावा दुनिया की बाकी तमाम औरतें एक होती हैं।"*[64]

नारी को कितना दुःख सहना पडता है। एक तरफ तो उसको बेचा जा रहा है,दूसरी तरफ उसके साथ जबर्दस्ती की जा रही है। जिसके साथ वह रहना नहीं चाहती उसी के साथ उसको रहना पडता है।कुछ बाँद तो घर से भाग जाती है। कुछ नारियां मजबूरन शोषण को सहती रहती है। बांद को बेचने से जो पैसा मिलता है वह मायके वालों को मिलता है। बांद को उन पैसों पर कोई हक नहीं होता। वह दूसरे पति के घर जाती है उसकी पसंद या न पसंद से किसी को मतलब ही नहीं होता। हरिद्वार में गुलामों की मंडी होती थी। वहाँ पर स्त्री एवं पुरूष दोनों की बोली लगाई जाती थी। पति को पत्नी से अलग कर देते थे, और अलग-अलग बोली लगाकर बेच देते थे।

सूरज सबका है उपन्यास में इस का चित्रण मिलता है।"*दासों की टोली के साथ चल रहे सिपाही बणबहादूर ने सुमा को अपनी रखैल बनाने की प्रार्थना अपने हाकिम से की और उसे मंजूरी मिलगई। सिपाही बणबहादूर दासो के झुण्ड के पास आकर खडा हो गया। उसने अपने हाकिम का फैसला दासों को सुनाया। फिर सुमा को इशारा किया कि-चल।सुमा रोने लगी। उसे अपने पति और पुत्र दोनों से जुदा किया जा रहा था। और देवरानी व देवर से भी।"*[65]

औरत के दुःख को समझने वाला कोई नहीं था। गोरखों का हुकुम था। किसी के पास इतनी हिम्मत नहीं थी कि गोरखों के खिलाफ जाए। औरत के पति के सामने ही उसकी बोली लगायी जा रही थी। पति कुछ नहीं कर पा रहा था।

गोरखों को बहादुरों से खतरा महसूस होता था। इसलिए वे लोग पहले ही गाँव के बहादुरों के बारे में पता लगा कर उनपर कुछ न कुछ इल्जाम लगाकर गुलाम बना देते थे। हुंकारू एक बहादुर था। उसका कोई कसूर नहीं था। उसको पकड कर ले जाने लगे सिपाही उससे कहते है कि तुम्हारी बीवी को बाहर बुला दो हम तुम्हे छोड देंगे-*"गोरखों ने हुंकारू को बांधलिया। हुँकारू की पत्नी घर से बाहर नहीं निकली।वह छिप गई थी।वह गाँव की सबसे खूबसूरत युवती थी।खतरा था कि गोरखों की उस पर नजर पड जाएगी तो वे उसे जबर्दस्ती अपने साथ घसीटे ले जाएँगे।एक तो औरत,फिर जवान और सब से बुरी बात-बहुत ज्यादा खूब सूरत।"*[66]

पति के लिए पत्नी किसी की रखैल बनजाती तो कहीं पत्नी के लिए पति गुलाम बन जाता था। पति को पता लगता कि वह उसके पत्नी से कभी नहीं मिल पाएगा। पुलमा जैसी पत्नी अपने पति के लिए गाँव के सेठ की रखैल बन जाती है। इन्सानों को चीज बना कर मंडी में बेच दिया जा रहा है।किसी ने उसका विरोध नहीं किया। गुलामों को खरीदने के लिए दूर-दूर से लोग हरद्वार पहँच जाते थे। अपनी पसंद के अनुसार स्त्री या पुरूष को खरीद लेते थे। एक खरीदार एक लडकी से पूछता है कि तुम कौन हो वह उत्तर देती है कि -*"मैं पंडित विश्वनाथ की बेटी हूँ। संस्कृत पढी हूँ। मेरा पितृकुल और ससुराल आचार्य कुल है। वह खरीदार जिसे एक ब्राह्मण बालक की जरूरत थी, अभी तक वही खडा था। उसने तीन सौ रूपे देकर उन दोनों दासियों को मोल ले लिया।"*[67]

गढवाली में बांद का अर्थ होता है खूबसूरत युवती। हर मामूली युवती बांद नहीं हो सकती। बांद उसे कहेंगे, जो बेहद खूबसूरत हो, जवानी के रस से लबालब, इतनी हसीन कि उसे देखकर मुंह में पानी आने लगे। औरत की बिक्री में मायके वालों की तरह राज्य का भी अपना हिस्सा होता था। राज्य का हिस्सा अदा किए बगैर घटिया तौर पर जो भी छूट दी जाएगी वह गैर कानूनी होगी। गुपचुप तरीक से ऐसी छूट लेने-देने के मामले में सभी संबधित पक्षों के अलावा गाँव का ऐसा सयाणा भी पकड में आजाएगा, जो उस गैर कानूनी मामले की सूचना दरबार को देने में गाफिल रहेगा।

औरत जब तक जिंदा रहे बिकती ही जाती है। कभी कभी अपने प्रेमी के साथ भाग जाने पर उस प्रेमी को लडकी के घर वालों को पैसा देना पडता है। बिना पैसा दिये भगाकर ले जाने पर उसको जेल में डाल देते हैं। पटवारी लिखा पडी करने के लिए तो हमेशा तैयार रहता ही है।

5.6.विद्यासागर नौटियाल के उपन्यासों में चित्रित नारी का स्वावलंबी स्वरूप

स्त्रीयाँ अभी भी पुरूषवादी सोच और धार्मिक अंधविश्वासों से जकडी हुई है। स्त्री अगर आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी हो तो उस पर जुल्म नहीं होंगे अगर होंगे भी तो कम होंगे। स्वावलंबी होने से औरत का स्वाभिमान बढता और उसका आत्मसम्मान भी। साथी ही वह प्रतिकूल परिस्थितियों और प्रतिबन्धो को नकारने की क्षमता हासिल करलेती है। वह समाज की संकीर्ण परंपराओं से परे मुक्ति की

राह पर चल सकती है। दरअसल औरत को कमजोर करने में उसके परजीवी होने के साथ साथ समाज की आचार संहिताएँ भी जिम्मेदार है।

"मध्यवर्गीय औरतों में उनकी कुण्ठा, निषेध प्रधान आचरण संहिता या यौन-शुचिता की ग्रंथि उन्हें अधिक कमजोर बनाती है। और उन्हे इस हद तक हीन भावना का शिकार बना देती है कि उनमें आत्म सम्मान या स्वाभिमान नाम मात्र भी नहीं बच पाता। आर्थिक तौर पर पुरूष आश्रित व्यवस्था भी उन को अधिक कमजोर कर देती है। पति के मरने पर ससुराल या मैके के परिवार पर पूरी तरह आश्रित हो जाती हैं।"[68]

स्वावलंबन उसे इन बेडियों से मुक्त करने का एक मजबूत आधार देता है। अक्सर घरेलू औरतों को यह कह कर हीन भावना का शिकार बना दिया जाता है कि "*वे क्या जाने कामाने वाले की तकलीफ, वे तो बस खाली-पीली खाना जानती है। कमाएँ तो पता चले।"*[69]

नारी पर इस हद तक पाबंदियाँ लगायी जाती हैं। वे बाहर भी अकेली जाने से कतराने लगती हैं। हमेशा उसके मन में डर बना रहता है कि कहीं कोई मर्द छेड न दे-कही कोई बुरी नजर से उन्हें देख न ले। ऐसी औरतें के मर्द भी अधिक शक करने वाले होते हैं और वे इस आधार पर हमेशा उन्हें पीटते रहते हैं। शक्की तो बाहर काम करने वाली औरतों के मर्द भी हो सकते हैं, लेकिन वे कमाकर लाती है और बोलने की हिम्मत रखती हैं। इसलिए वे उन्हें सह लेते है। रमणिका गुप्ता नारी की दशा के बारे में लिखती है कि *"मैंने कई बडे बडे पदों पर काम करने वाली औरतों को भी अपने पूर्वग्रह या परंपरावादी सोच वाले अपने पति से पीटते देखा है। समाज में बदनामी के डर से ऐसी स्त्रियाँ चुप रहती हैं। चूँकि उनकी मानसिकता अभी भी पुरूष प्रधान समाज से संचालित होती है। वे खुद को पति से हीन मानती है। इसलिए पति की उद्दंडता को उजागर करने की बजाय सह लेती है। समाज व प्रशासन अभी ऐसे पतियों को दण्ड देना शुरू नहीं किया। हालाँकि पत्नी-प्रताडना के लिए कानून बना हुआ है।"*[70]

स्त्रियों में चेतावनी की दरकाट है ताकि उनकी अपनी मानसिकता भी बदले। यह मानसिकता स्वावलंबी होने पर आसानी से बदली जा सकती है। ऐसी चेतना आर्थिक स्वावलंबन, शिक्षा और संघर्ष से ही आ सकती है। जिसका अभी नितांत अभाव है। इसलिए स्त्री सशक्तीकरण की तरफ अगर कोई ठोस कदम उटाया जा सकता है।

स्त्रियों को अपने अधिकारों की जानकारी होना भी नितान्त आवश्यक है। तभी उनकी हीन भावना समाप्त हो पाएगी। अभी तो स्त्रियाँ केवल अपने कर्तव्यों को ही जानती हैं, अधिकारों से वे अनभिज्ञ ही हैं। अनपढ औरत को साक्षर और जागृत करने के लिए विशेष आयोजन भी करना जरूरी है। ग्रामीण स्तर पर विकास और शिक्षा के कार्यक्रमों में स्त्रियों की भागीदारी सुनिश्चित करके उन्हें एक अच्छा नागरिक बनाने की प्रक्रिया भी चलानी पडेगी। अभी वे नागरिक नहीं बस औरत है-पहचान हीन व्यक्तित्वहीन, सम्मान हीन, स्वावलंबन से उनके व्यक्तित्व का विकास होगा जिससे उनमें आत्म सम्मान जागेगा, जो उन्हें शोषण से बचने के लिए प्रेरित कर सकता है। नारी सृष्टि का मूल है, यह धारणा दार्शनिक अथवा धार्मिक नहीं वरन् वैज्ञानिक भी है। साहित्य जीवन के जिस सत्य की अभिव्यक्ति करता है, वह नारी के बिना असंपूर्ण ही नहीं असंभव भी है। साहित्य की सभी विधाओं में स्त्री पात्रों की प्रधानता होती है। लेखक अपने दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने के लिए प्रायः नारी को ही केन्द्र में रखता है। प्रकृति ने नर-नारी की संरचना में शारीरक स्वभावगत और भावनात्मक स्तर पर अंतर अवश्य किया है, किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि नारी को सदा दीन-हीन समझा जाए। जीवन के अनेक क्षेत्र ऐसे हैं, जिनमें नारि की क्षमता और अभिरूचि पुरूषों से श्रेष्ठ है।लेकिन इस सत्य को मानने के लिए लोग तैयार नहीं है। हालांकि अब स्त्री के प्रति दृष्टि कोण बदल रहा है।

साहित्य में कमोवेश स्त्री को एक विलास की वस्तु की तरह चित्रित किया गया है। स्त्री के प्रति सजगता उसके होने का अहास,साहित्य के क्षेत्र में नवजागरण के समय में दिखाई देता है।

"आज यदि कोई राजा-महाराजा अपनी किसी विधवा कन्या का पुनर्विवाह करना चाहे तो राजान्नपोषित, सब पंडित व्यवस्था दे देंगे कि विधवा विवाह स शास्त्र है। परन्तु इन दु:खियाओं को कौन पूछता है? वस्तुतः पंडित ने विधवा विवाह का खंडन अपनी जीविका का हेतु बना रखा है। शास्त्रर्थ करके विधवाओं पर छुरियाँ चलाते है। हमारे देश के थोडे से लोग ऐसे है जो दिनरात धर्म की धाँय-धाँय करके मरमिटते है।"[71]

काल परिवर्तन के साथ नारी वही है, पर उसका स्वरूप बदल गया है। उसमें अस्मिता बोध उत्पन्न होने के कारण वह माँ, बहन, बेटी, पत्नी से पहले

सिर्फ औरत है। उसमें पुरूष के रू-ब-रू खडे होकर मानवीय संदर्भ में अपनी अस्मिता की पहचान की बेचैन कोशिश न्याय की दुहाई न देकर स्वयं न्याय छीनने की अतीत और वर्तमान की विसंगतियों को ध्वस्त कर सुखद भविष्य की नींव धरने की सुकून भरी चाहत पैदा हो गई है।

"कर्तव्य पारायणता का भाव सरसता, मानसिक वेग, और प्रेरणा का प्राबल्य नारियों में अधिक विद्यमान है। सामाजिक जीवन की जड लज्जा, सतीत्व, सदाचार और विश्वसनीयता में नारी ने अपने को बहुत प्राचीन काल से आदर्श बना रखा है। नशेबाजी, चोरी आदि दुर्गुणों में जितने पुरूष फंसते हैं, नारियाँ नहीं फँसती। स्त्रीयों में अंतरात्मा के आदेश बडे प्रबल होते है, पुरूषों के काम के समय तर्क का प्राबल्य पाया जाता है। मुसीबत में जितनी जल्दी पुरूष घबडाते और बन्धन तुडाकर भागना चाहते है, स्त्रिया उतना नहीं घबराती।"[72]

आज की नारी पडी लिखी है। पुरूष के बराबर हर क्षेत्र में अपना अस्तित्व दर्शा रही है। लेकिन उसकी स्थिति में पूरा बदलाव नहीं आया हैं। अत्याचार बढे, बगावत की भावना भी बढने लगी। कुछ इसी परिप्रेक्ष्य में नारी जागरण एवं नारीवाद से संबंधित रचनाएं साहित्य की विविध विधाओं में स्थान पाने लगी।

देवव्रत ने अपने छोटे भाई का विवाह करने के लिए युध्द करके तीन युक्तियों अपने साथ लेकर आया। यह जानकर सबसे बडी बहन अंबा देवब्रत से पूछती है -

"-मुझे खदेड ले आए।अब विवाह करने से क्यों मुकर रहे हो।

-मैंने तुम्हारा हरण अपने लिए नहीं किया।छोटे भाई के लिए किया था।

-यह बात मंडप में बताई जानी चाहिए थी।

-मैंने तो आजीवन विवाह न करने की प्रतिज्ञा की है।

-जिससे अब मेरा विवाह करना चाहते हो उसने तो मेरा हरण नहीं किया?मैं सिर्फ उससे विवाह कर सकती हूँ जो मुझे पसंद करे,पिता के घर से उठा लाया हो जिसके दिल में मेरे लिए जगह हो।"[73]

अंबा जो कहना चाहती थी बिना डर के देवव्रत से कहा। वह अपना स्वभिमान खोना नहीं चाहती। देवव्रत जो किया वह ठीक नहीं था। लेकिन किसी के पास इतनी हिम्मत नहीं थी कि देवव्रत से कुछ पूछे।सब लोग देवव्रत को

देखकर पीछे जाने लगे थे। अंबा शाल्व से प्रेम करती थी। भीष्म जबर्दस्ती अंबा का हरण कर ले गया इसलिए शाल्व अंबा को इनकार कर दिया। इस समस्या का जड तो देवव्रत था। अंबा के हृदय में भीष्म के प्रति प्रतिशोध की प्रबल भावना जागृत होने लगी। वह भीष्म को पराजित करना चाहती थी। बिना किसी कसूर किए अंबा का जीवन निस्सार बन गया था। वह भीष्म से मुकाबला की थी। सत्यवती, जिसका पालन एक मल्लाह ने किया था उसके साथ रह कर सत्यवती अपने पिता द्वारा नाव चलाना सीखा। पिता के साथ हाथ बटाने लगी। भगवान द्वारा प्राप्त बेटी को देखकर वह खुश रहता था यह सोचता था कि उसकी बेटी हमेशा खुश रहे। सत्यवती अपना परिचय देते हुए कहती-*"मेरे पोषक पिता नाव पर लोगों को नदी पार कराने का कोई शुल्क नहीं लेते थे। कहते थे, वे उसे धर्मार्थ चलाते हैं। मैं एक मछली की बेटी थी। पानी से डरती नहीं थी। बडी हुई तो पिता ने मुझे भी नाव खेना सिखा दिया। कई बार वे दूसरे कामों से घर से बाहर चले जाते या घर ही मौजूद रहते और मैं नाव चला कर लोगों को आर-पार कराती रहती हूँ।"*[74]

शान्ति बुढिया जो अपने गाय के साथ रहती थी। गाय उसका सहारा और वह गाय का सहारा। शान्ति बुढिया अकेली ही रहती थी गाय से बाते करती रहती थी। शान्ति ब्वारी से कहती है "*दुनिया को कुछ कहने का मौका नहीं देना चाहिए ब्बारी। अपने मर जाने के बाद भी नहीं। अपनी जान खुद ही नहीं गँवानी चाहिए। ऐसे नियम है इस संसार में।"*[75]

शान्ति बुढिया किसी से कुछ मांगती नहीं थी। वह काम करके अपना जीवन बिताती थी। वह मुफ्त की रोटियां खाना नहीं चाहती। जब तक सांसे चल रही तब तक काम करके खाना चाहती है। शान्ति बुढिया मरने से पहले अपनी गाय को दान में देना चाहती थी।

कर्णावती चार साल से राजकाज चला रही थी। अकेली रानी अपने पति के देहांत के बाद श्रीनगर को दुष्मनों का डर रहता था। उसका तो ग्यारह साल का लडका था। बालक पृथ्वी पतिशाह के एवज में श्रीनगर में बैठकर गढवाल देश के राज का संचालन कर्णावती करती थी। मुगलों के आक्रमण से बचने के लिए कर्णावती जो कदम उठाती है, वह माननीय है। कर्णावती किसानों से कह देती थी पहाड के पीछ पत्थरों का इस्तमाल करके मुगल सेना को भगा देती है। पंद्रह दिन की मोहलत माँग कर मुगल सेनाओं को रसद देना बंदकर देती है। सिपाहियों को इतना बेचैन कर देती है कि वे लोग युध्द नहीं कर पाते। अंत में सब लोग अपने

कटे हुए नाक हाथ में लेकर भाग जाते हैं। एक नारी ने अत्यंत धैर्य एवं आत्मविश्वास के साथ मुघलों का सामना किया था।

शहजहाँ ने हुक्म भेजा था कि नाकें कटाकर आगरा की ओर बढनेवाले सिपाही-सरदारों को उनके हिन्दुस्तान की सीमा में पहुँचते ही छुट्टी पर भेज दिया जाय। शाहजहाँ को कई-कई हजार नाक-कटे सिपाहियों के लश्कर का एक साथ, एक फौज के रूप में आगरा पहुँचने की कल्पना तक भयंकर लग रहा था।

देवीदत्त, जो परगणाधिकारी था, बडी दादी के बारे में सोचता है-"*उसके विचार से बडीदादी एक परमवीर महिला है।इस देश में राष्ट्रीय सम्मान पाने के लिए अगर कोई अर्ह पात्र है, तो वह बडी दादी है, जो आजीवन जिन्दगी की मुसीबतों से, समाज की बाधाओं, सदानंदों, कर्णसिंहों की ओछी हरकतों से संघर्ष करती आई और अब मौत से संघर्ष कर रही है। मौत उसे नहीं ले जाती तो वह स्वयं भी नहीं जा रही है।*"[76]

नारियों को समाज में शान्तिप्रिय नया सहृदय सामाजिक व्यवस्था का निर्माता माना जाता है। भारत में नारियों को प्रेम, बलिदान तथा विनम्रता के प्रतीक के रूप सराहा गया है। इसके बावजूद यह एक विडंबना है कि महिलाओं को जिन्होंने अपने परिवार तथा समाज के विकास के लिए वस्तुतः स्वयं को मिटा दिया। यौनबद्द विकास के पाँच दशकों के बाद भी उन्हें सामाजिक व्यवस्था में यथोचित स्थान नहीं मिला। वह सर्वाधिक उपेक्षित है उसे अपने वास्तविक रूप में आने और अपनी पूर्ण क्षमता दिखाने का अवसर नहीं दिया गया है। पुरूष प्रधान समाज ने काफी हद तक, अपनी घिसी-पीटी मान्यताओं को मजबूत किया है तथा नारियों के मानस को नियंत्रण किया है। गूजर स्त्रियाँ घर के काम के साथ-साथ जानवरों की देखभाल भी करलेती है। भैंसों का दुहने का काम तो नारी का ही होता है। चरागाहों में भैंसों को छोड कर वे लोग बहाँ से दूध लेकर आती हैं-"*गूजरों की बैंसें दिन में सिर्फ एक बार दुही जाती है उनसे रात में दूध नहीं लिया जाता। चरगाहों में सुबह के वक्त दुहने के बाद गूजर उन्हें अपने डेरे की तरफ नहीं लाते। वे उन्हें चरागाहों में ही रहने देते हैं। दुहने के बाद उन्हे वही छोड कर खुद दूध के बंठे उठाए अपने डेरे पर चले आते हैं। फिर अगले दिन सुबह ही उन भैंसों के पास जाने की उनकी दिनचर्या होती है। भैंसों के छोटे बच्चों को भी कभी-कभी वे चरागाह में ही रहने देते हैं।*"[77]

गूजर नारी कभी चुप नहीं बैठती। पति का हाथ बांटती है। हमेशा पति को मदद करती है। नारी जब मायके में रहती तो उनकी आमदनी बढती है। जब ससुराल आती तो वहाँ भी काम संभाल लेती है।

नौटियाल जी लिखते है कि- "नारी -जीवन की आदर्श स्थिति वह होगी जब नारी और पुरूष का भेद जीवन के प्रत्येक पहलू से मिटा दिया जाएगा,जिसमें निश्चित तौर पर अपना जीवन-साथीचुनने की स्वतंत्रता भी शामिल होगी।परिवार में कुल चल-अचल संपत्ति पर अधिकार भी समान होगा,बंटा हुआ नहीं।वह अधिकार पुरूष के पक्ष में इकतरफ झोंक नहीं खाएगा।"[78]

कामकाजी महिलाएँ, पुरूषों की अपेक्षा अधिक तनाव और दबाव झेल रही है। वे अपने लिए एक ऐसे आदर्श पुरूष की कल्पना करने लगी है जो घर की भूमिकाओं में भी अपनी भागीदारी सुनिश्चित करे। इन औरतों का दूसरा संघर्ष परिवार के सभी लोगों से है जो संपत्ति बडाने में सम्मिलित न हो जाने वालों से औरत का संघर्ष संयुक्त परिवारों में दूसरी तरह का है और एकाध परिवारों में दूसरे किस्म का। संयुक्त परिवारों में स्त्री काम से वापस आने के बाद भी परिवार की देखबाल करना उसका प्रमुख काम है। खाना पकाना, घर संभालना, बच्चों को ठीक-ठाक करना और बूढे लोगों की सेवा करना ही उस पर निर्भर है। कुल मिलाकर कामकाजी नारियों की पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों का जो परिदृश्य उभरता है उसे देखकर हमें स्पष्ट होता है कि कामकाजी महिलाओ की समस्याएँ और उनके संघर्ष बहुत अधिक हैं। लेकिन फिर भी महिलाएँ इन सब के बीच से अपना रास्ता तय कर रही है। नारी को अपने सामर्थ्य और क्षमता पर भरोसा है। जीवन के कई स्तरों पर सामंजस्य बनाकर स्त्री सामान्य से विशिष्ट बन रही है। यह उसकी अस्मिता की माँग भी है और युग की भी।

संदर्भ गंथ सूची

1. स्त्री उपेक्षिता, प्रभा खेतान, पृ. 85
2. हिन्दी काव्यधारा, राहुल सांकृत्यायन, पृ. 18
3. श्रृंखला की कडियाँ, महादेवी वर्मा, पृ. 13
4. नारी शोषण आइने और आयाम, आशा रानी व्योरा, पृ. 260
5. हंस, संपादक राजेन्द्रयाद ,पृ. 34
6. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 228
7. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 234
8. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 112
9. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 115
10. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 106
11. झुण्ड से बिछुडा , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 78
12. झुण्ड से बिछुडा , विद्यासागर नौटियाल,पृ. 39
13. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 121-122
14. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 69
15. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 86
16. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल,पृ. 121
17. आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में प्रेम की परिकल्पना, विजय मोहन सिंह, पृ. 53
18. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 116
19. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 122
20. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 123
21. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 171
22. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल,पृ. 268
23. सूरज सबका है ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 20
24. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 72
25. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 82
26. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ, 83
27. झुण्ड से बिछुडा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 79
28. नारी शोषण आइने और आयाम, आशारानी व्योरा,पृ. 260

29. स्त्री उपेक्षिता, प्रभा खेतान, पृ. 340
30. स्त्री उपेक्षिता, प्रभा खेतान, पृ. 321
31. हिन्दी मराठी नाटकों में नारी, डॉ.वसुधा जोशी, पृ. 44
32. आर्यकल्प, सं. अवधेश नारायण मिश्र, पृ. 32
33. नारी शोषण आइने और आयाम, आशारानी व्योरा, पृ. 260
34. झुण्ड से बिछुडा , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 33
35. झुण्ड से बिछुडा , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 35-36
36. भीम अकेला, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 1
37. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 96
38. सूरज सबका है , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 140
40. उत्तर बायां है,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 28
41. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 30
42. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 148
43. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 230
44. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 245
45. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 270
46. सूरज सबका है , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 20
47. सूरज सबका है ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 98
48. आर्यकल्प, सं अवधेश नारायण मिश्र, पृ.104
49. झुण्ड से बिछुडा , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 39
50. झुण्ड से बिछुडा , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 52-53
51. सूरज सबका है , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 27
52. सूरज सबका है , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 121
53. सूरज सबका है , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 112
54. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 126
55. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 245
56. बागी टिहरी गाए जा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 36
57. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 246
58. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 246-247
59. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 47

60. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 28
61. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 28
62. बागी टिहरी गाए जा, विद्यासागर नौटियाल,पृ. 38
63. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 281
64. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 52-53
65. सूरज सबका है ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 22
66. सूरज सबका है ,विद्यासागर नौटियाल, पृ. 24
67. सूरज सबका है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 26
68. स्त्री विमर्श - कलम और कुदाल के बहाने, रमणिकागुप्ता, पृ. 13-14
69. स्त्री विमर्श - कलम और कुदाल के बहाने, रमणिकागुप्ता पृ. 15
70. स्त्री विमर्श - कलम और कुदाल के बहाने, रमणिकागुप्ता, पृ. 16
71. आलोचना-कुर्मेदु शिशर, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 93
72. आलोचना-कुर्मेदु शिशर , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 95
73. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल,पृ. 69
74. यमुना के बागी बेटे, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 82
75 झुण्ड से बिछुड, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 36
76. सूरज सबका है , विद्यासागर नौटियाल, पृ. 134
77. उत्तर बायां है, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 31
78. बागी टिहरी गाए जा, विद्यासागर नौटियाल, पृ. 213

उपसंहार

साहित्य जो हमारे जीवन के भावबोध से जुडा है, जो समाज से संबन्धित है और समाज में जो कुछ घटना चक्र चल रहा है, उसके विचार और जीवन का सार, उससे जूझने की प्रेरणा, क्रान्ति और समाज कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है,क्योंकि साहित्य अपने समय का प्रतिबिम्ब होता है। जो भाव और विचार लोगों के हृदय को स्पंदित करते हैं, वे ही साहित्य पर अपनी छवि छोडते हैं। जिसका व्यापक रूप हमें साहित्य की कई विधाओं में देखने को मिलता है।

साहित्य केवल मन बहलाने की चीज नहीं है। मनोरंजन के सिवाय उसका और भी कुछ उद्देश्य है। जैसे जीवन की समस्याओं पर भी विचार करना है, उन्हें हल करना है। समाज को प्रभावित करने वाले प्रश्नों में दिलचस्पी लेकर वर्तमान की कसौटी पर उसे कसने वाली अनुभूति की तीव्रता और सूक्ष्म दृष्टि साहित्य में होनी चाहिए। साहित्य का संबंध मानव जीवन से है। *मुक्तिबोध* के अनुसार साहित्य *जीवन की पुनर्रचना है।* साहित्य का कथ्य समाज की घटना है, जो कि स्वयं में बहुत विस्तृत है। जब साहित्य भाषा जैसे सामाजिक माध्यम को अपनाता और समाज के पूर्वानुभवों से संबध्द रहता है तो अवश्य ही समाज वस्तु अथवा घटना उसके विषय का निर्धारण करती है। साहित्य का संपूर्ण कथ्य समाज की घटनाएँ है। समाज की सीमा और उपलब्धियों का यथार्थ चित्रण करना साहित्य का धर्म है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज के बिना अपना जीवन का निर्वाह कदापि नहीं कर सकता, क्योंकि सूक्ष्मतम आवश्यकताओं की पूर्ती हेतु उसे समाज पर निर्भर रहना पडता है। इसलिए मनुष्य को विविध पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने पडते हैं। मानव का मानव के साथ संबन्धों के ताने बाने रूपी जाल को वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करने वाला शास्त्र ही समाजशास्त्र है।यह सर्वथा मान्य है कि समाजशास्त्र को सामाजिक विज्ञान की संज्ञा से अभिहित किया गया है। जिसका उद्देश्य मनुष्य के व्यवहार का सामाजिक दृष्टिकोण से अध्ययन करना है। यह सामाजिक संबन्धों एवं उनके विभिन्न स्वरूपों का प्रेमबध्द ज्ञान हमें प्रदान करता है। अतः इसे अन्य सामाजिक विज्ञान जैसे अर्थशास्त्र ,राजनीतिशास्त्र, इतिहास आदि की श्रेणी में रखा जा सकता है।

मानवीय संवेदनाएँ काल और परिवेश के अनुसार बदलती रहती है। साहित्यकार अपनी कृति के माध्यम से युगीन परिस्थितियों के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर युगीन रूढियों को तोडने की कोशिश करता है। बदलते समाज का स्पष्ट रूप साहित्य में पाया जाता है, जो साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व का समर्थन करता है।

साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन के अन्तर्गत साहित्य तथा कला की पहचान सामाजिक संदर्भो के परिप्रेक्ष्य में किया जाता है। क्योंकि समाज का क्षेत्र जितना विस्तृत होगा, उतनी ही समाजशास्त्रीय आलोचना विस्तृत व्यापक एवं समग्र सामाग्री से युक्त होगी। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांसकृतिक पक्षों आदि के आधार पर सामाजिक पक्ष काअध्ययन सफल एवं उचित हो सकेगा।

साहित्य का समाजशास्त्र अपने विषय संबध्द हेतु साहित्य की विविध विधाओं तथा उपन्यास, कहानी, नाटक, कविता, निबन्ध, रिपोर्ताज संस्मरण आदि का विश्लेषण करता है। साहित्य के विधाओं में उपन्यास समाज शास्त्रियों के लिए सबसे अधिक अनुकूल है क्योंकि अपने समय,समाज और इतिहास की प्रक्रिया से परिभाषित मनुष्य ही उपन्यास रचना का लक्ष्य है और समाजशास्त्री अन्वेषण का भी।

उपन्यास समाज का गद्य है। उपन्यास वर्णित समाज भी मानव समाज की तरह ही है। वह मानव जीवन की संपूर्ण गति विधियों, सामाजिक प्रक्रियाओं, मानव जीवन के विभिन्न प्रारूपों, मानवीय अंतःक्रियाओं, सामाजिक संबन्धों, संस्थाओं, सामाजिक परिवर्तन आदि के चित्रण में सक्षम है। समाजशास्त्र के आलोचकों के अनुसार हम प्रत्येक उपन्यास में समाजशास्त्र की सामाग्री और समाजशास्त्र के परिच्छेद में उपन्यास का अंकुर खोज निकाल सकते हैं।

उपन्यास के समाजशास्त्र में उपन्यासकार की वर्गचेतना, विचारधारा या विश्वदृष्टि के सहारे उपन्यास का सामाजिक अभिप्राय जानने की कोशिश होती है। एक उपन्यासकार जीवन यथार्थ के रूप और स्तर को महत्व देता है तो दूसरा किसी और रूप का चित्रण करता है। इसके साथ ही यथार्थ को देखने की दृष्टियाँ भी अनेक हो सकती है। इन बातों से उपन्यास का कलात्मक रूप प्रभावित होता है। उपन्यास के समाजशास्त्रीय विवेचन में किसी रचना की सामाजिकता की खोज

करते समय उसके कलात्मक रूप से लेखक की चेतना और यथार्थ के रूप के संबन्ध की पहचान आवश्यक है।

उपन्यास गद्य में लिखित कथा है। जिसमें मुख्यतः काल्पनिक पात्र और घटनाएँ रहती हैं। उपन्यास को जीवन का एक बडा दर्पण कहा जा सकता है। इसमें साहित्य की अन्यविधाओं की अपेक्षा अधिक विस्तारवादी दृष्टि रहती है। स्पष्ट है कि व्यक्ति उन घटनाओं एवं परिस्थितियों की वर्ण विषय के रूप में अपेक्षा करता है जो स्वयं उसके द्वारा भोगी हुई हो या जिसका उसने स्वयं अनुभव किया है, ऐसी स्थिति मानव, सामाजिक-यथार्थ और सत्य व संभाव्य घटना ही है। अतः समाज विज्ञान की शाखा के रूप में उपन्यास के समाजशास्त्र की वस्तुनिष्ठता पर संदेह नहीं रह जाता।

विद्यासागर नौटियाल गढवाल के महान सपूत और महत्वपूर्ण कथाकार है। टिहरी - ग़ढवाल रियासत के क्रूर सामंतवादी और कांग्रेस कार्यवाद का साहस पूर्वक प्रतिरोध कर मध्य हिमालय की घाटियों-चोटियों की विकट राहों पर कंधे पर अपने साथियों के साथ रिक्तम पताका झेलने वाले गढवाल के इस महान सपूत ने अपने जीवन और कृतित्व के द्वारा मिसालें कायम की हैं।हिन्दी कथाकारों में यशपाल और अज्ञेय अपने जीवन में क्रान्तिकारी रहे थे। उनके बाद की पीढी में फणीश्वरनाथ रेणु और विद्यासागर नौटियाल जी दो ऐसे कथाकार है जिन्होंने जीवन के आरंभिक वर्षों में संघर्ष और लडाई का रास्ता चुना।

विद्यासागर नौटियाल एक ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने अपनी रचनाओं की वस्तु और रूप तो पर्वतीय रखा है किन्तु केवल पर्वतीय जीवन तक सीमित नहीं है। उसके प्रभाव क्षेत्र समग्र विश्व में और विशेषकर भारत में उपलब्ध है। उनमें गरीबी, अन्याय, शोषण, जातिवादी संकीर्णता, प्रभुवर्ग की प्रताडना, शातिर अफसर शाही और दास्यु - व्यापारियों से राजनीतिज्ञोंकी मिलीभगत से उभरने वाले षडयंत्रों के रूप में मानव विरोधी हरकतें, सारे विश्व में फैली हुई हैं। विद्यासागर नौटियाल ने इस तरह समूची मनुष्य जाति के प्रति मानव-विरोधी दृष्टि के फैलाव को व्यक्त किया है और मनुष्य को आगाह किया है कि इसे रोकना अब जीवित लोगों का ही दायित्व है। विद्यासागर नौटियाल की रचनाओं में परंपरा और आधुनिकता का अद्‌भुत रसायन मिलता है। वे एक जिम्मेदार नागरिक के रूप में व्यवस्थाओं द्वारा प्रचारित और समर्पित मानव विरोधी पक्ष को हर कीमत पर वाणी की स्वतंत्रता के जिम्मेदार उपयोग के रूप में सामने लाते हैं। नैटियाल जी का

अधिकांश लेखन जातीय स्मृति का दस्तावेज है। नौटियाल जी आज हिन्दी के एक मात्र ऐसे प्रतिष्ठित कथाकार हैं जिन्होंने पहाड को ही नहीं पहाडी जीवन के संघर्ष को भी गहरी ललक एवं आत्मीयता के साथ प्रस्तुत किया है।

सूरज सबका है उपन्यास ऐतिहासिक कथाभूमि के बाद भी एक ऐतिहासिक उपन्यास नहीं है। यह उपन्यास लग-भग दो सौ वर्ष के गढवाल की कथा कहता है। इतिहास के संबन्ध में नौटियाल जी की दृष्टि साफ है, उपन्यास में कई स्थलों पर लेखक की इतिहास दृष्टि व्यक्त हुई है - जनता का इतिहास तो अभी लिखा जाना बाकी है। इस उपन्यास का कथारंभ 1814-1815 से होता है। जब गढवाल में गोरख्याणी कई छोटे छोटे भागों में विभक्त है। आजादी की अर्दशती के समय इस उपन्यास का प्रकाशन 1997 में हुआ।

उत्तरबायां है उपन्यास हिमाच्छादित बुग्यालों और ऊँचे विस्तृत चरागाहों में बरसात के दौरान बर्फ की खुशबु के बीच भैंसवालों के समूहों के आपसी संबन्धों और परिधि पर बसर कर रहे लोगों के जीवन का साक्षात्कार है। उपन्यास बेचैन करनेवाली यथार्थ और जमीनी सच्चाइयों, आपसी रिश्तों को मानवीय गरिमा देने के बीच एक संयत भाषा में आन्दोलित होता रहता है और इन उपेक्षितों की पीडा से मुख्यधारा को अत्यन्त मार्मिकता से साक्षात्कार कराता है।

झुण्ड से बिछुडा उपन्यास का कथा फलक बहुत छोटा है। लेकिन पहाडी लोगों के जीवन में बाघ के आतंक का यदि किसी आलोचक को इस उपन्यास को पढते हुए अमिरिकी उपन्यासकार हेमिंग्वे की अमर कृति *डेत इन दि अफ्टरनून* का स्मरण होता है तो बिल्कुल सही है क्योंकि यह शिकार के शिकारी नहीं बल्कि कला, रोमांच और जीवन की गतिशीलता का प्रतीक भी है। विडंबना यह है कि *दुश्मन* जैसा शिकारी शेर से तो भिड सकते हैं लेकिन व्यवस्था उन्हें तोड डालती है। शतरू की उपस्थिति राजसत्ता की छत्र छाया में पहले वाले गाँव के ताकतवर लोग ही नहीं पटवारी और अन्य सरकारी कर्मचारियों के लिए भी एक बडी चुनौती है क्योंकि शतरू में उसके स्वर्गीय तोपची पिता की जिद ही नहीं प्रबल अहंकार भी है जो किसी के सामने झुकना नहीं जानता।

यमुना के बागी बेटे उपन्यास ऐतिहासिक और पौराणिक आख्यान पर आधारितहै। इसका मूलस्त्रोत है 1930 के आस पास टिहरी- गढवाली रियासत में

जन - विद्रोह की आग से उत्पन्न सामंत की छोटी-बडी क्रूर यातनाएँ और यंत्रणा की घटनाएँ कथा के केन्द्र में है। राजाशाही और रवाई के रवाल्टें। रवाल्टों का जीवन जल, जमीन और जंगल पर टिका है। वे खेती और पशुपालन पर आश्रित है। जंगल उनकी घास लकडी और चारे की जरूरत पूरी करता है। यमुना नदी के तट पर बसा रवांई जंगल के बिना एक पल भी नहीं चल सकता। राजशाही की नजर उसके जंगलों पर है। वह उन्हें गँवार और जंगलों का दुश्मन मानकर चल रही है। यह उपन्यास छोटा है लेकिन फलक बडा। भारतीय स्वतंन्त्रता आन्दोलन के इतिहास का यह दुःखद अध्याय तिलाडी कांड ओझल ही रह जाता, यदि नौटियाल जी इस ओर हमारा ध्यान आकृष्ठ नहीं करते। पुराख्यान से उठते इस आख्यान का वृत्तान्त यदि मार्मिक है तो इसलिए भी कि यह एक ऐसी सामंती क्रूरता की कहानी है, जिसके नीचे दबा पहाडी का जन-जीवन कुचला जा रहा था। इतिहास की घटनाओं को कोई लेखक अपनी कल्पना शक्ति से कितना रोमांचक और दिलचस्प बना सकता है इसका उदाहरण है यह उपन्यास।

भीम अकेला नौटियाल जी का यात्रा संस्मरणता का उपन्यास है। नौटियाल जी अपने जीवंत रिपोर्ताज प्रस्तुत करते हुए ऐसी पत्रकारिता का अनुपम उदाहरण सामने रखते हैं। जो स्वातंत्रयोत्तर भारत में सांसे तोडती नजर आ रही है। कथा के बीच कथा और समय की सत्यकथा का ऐसा जुडाव इधर के तीनों दशकों की किसी कृति में शायद ही देखने को मिला हो।यह एक एम.एल.ए का जिम्मेदार बयान है जिसमें व्यवस्था की कलई कदम-कदम पर खुलती हैं। दिखावटी विकास की सरकारी नीतियाँ कितनी खोखली है और सूरमा भरदारी ने मुख्यमंत्री को पत्र क्यों लिखा !कैसी है वह जगह आज, जहाँ पांडव अपने पापों का प्रायश्चित करने आये थे। *भीम अकेला* पढने के बाद हम अकेले नहीं रह सकते क्योंकि हमारे साथ तेजसिंह, भीम की कथा, बुधसिंह का किस्सा, रम्य प्रकृति के बीच का उदास जीवन, कामरेड सआदती बाबक, लोकरंग और गांधी के सैनिक भी होंगे और सबसे ऊपर होगी वह दृष्टि जो व्यक्ति को समाज से जोडती है। इस कृति की विशेषता है कि यह कई विधाओं को जोडती है।

नौटियाल जी की भाषा चुस्त और संयत है। जैसे पात्र हैं, वैसे उनका जीवन है वैसी उनकी भाषा है। दिलचस्प बात यह है कि आज हिन्दी पाठकों के बीच से तेजी से खिसकती पठनीयता की जमीन को बचाने का भी पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध है।

साहित्यकार अपने विशाल अनुभव से जगत में से चुनकर जो कुछ किसी रचना में प्रस्तुत करता है, दूसरे शब्दों में जिसे कथनीय मानता है वही कथ्य है, शिल्प वस्तुतः समूची कृति के अंतःभाव का बाह्य रूपकार है वह वस्तु की नाटकीय ढंग से संपूर्ण उपस्थिति है।

गंगाप्रसाद विमल लिखते है कि विद्यासागर नौटियाल ने एक साथ वहाँ शतरू के चरित्र में नियति, प्रारब्ध जैसी भ्रान्ति धारणाओं की तुलना में बाघ के सामने उसके मृत्यु योग की विभीषिका को, उसके बेरोजगार, अभिशप्त जीवन को, शोषण चक्र के अनासक्त भाव को श्रीधर प्रसाद के कारनामों के रूप में और असुरक्षा के बहुआयामी स्वरूप को न्यायप्रिय हाकिम द्वारा हस्ताक्षरित गैर जमानती वारंट के रूप में प्रस्तुत कर उपन्यास अंश को एक पूर्ण कथा का सा भाव अपनी बेजोड रचना क्षमता के रूप में प्रस्तुत किया है। विद्यासागर नौटियाल की कथाएँ हिन्दी आलोचना जगत के सामने आलोचना को गैर-जिम्मेदार, शाब्दिक फिजूल खर्च, अर्थहीन करार देती है। इस पर सभी को, पाठक, प्रकाशक, आलोचक, पत्रिकाओं और अन्य अंतःसंबंधित इकाइयों का गंभीरता से सोचना चाहिए। विद्यासागर नौटियाल के कथासंसार के भीतर जो अनुपम अनुभव है, वह व्यक्तियों, जातियों और वर्गों का लंबे अर्से से शोषणकारी शक्तियों, वर्चस्ववादी शक्तियों की प्रताडना का अनुभव है। वह अपनी क्षेत्रीयता में वैश्विक है और इस नाते आज की दुनिया में शोषणकारी और वर्चस्ववादी शक्तियों के रूप बदलकर आने पर भी बदस्तूर है।

नौटियाल जी अपने उपन्यासों में पात्रों का चित्रण इस तरह किया है कि हर पात्र हमारे आस पास धूमता ही रहता है। *सूरज सबका है* उपन्यास का काफू चौहान वीर भड है, लोगों की रक्षा के लिए अपने प्राण देने वाला वीर। फुलमा अपने पति की आजादी के लिए खुद बिक जाती है, माधोसिंह भंडारी गांव के लोगों को पानी देने के लिए पहाड को ही खोद डाला, रानी कर्णावती का साहस, बुध्दिचातुर्य, दिल्ली के मुगल सल्तनत के सरदार नजावतखाँ की मूर्खता, आजाद भारत से गुजरते हुए देवीदत्त की सहृदयता, सोनीगाँव की बडीदादी का संघर्ष है।*उत्तर बायां है* उपन्यास का करणू, सदरू, हुकम के जीवन में खाजी,कन्हैया, देवी प्रसाद, धनीसिंह और रथीसेठ जैसे संकट पैदा करने वाले लोग, बेकसूर लोगों पर सत्ता के अत्याचार एक तरफ होते तो दूसरी तरफ आयशा और वहीद

का प्यार, गूजरों पर हमला, सकीना और हसीना की बेबस जिन्दगी। गीरीबी,संघर्ष करते हुए लोगों का चित्रण नौटियाल जी के उपन्यासों में देखने को मिलता है।

झुण्ड से बिछुडा उपन्यास में दुश्मन का मुकाबला बाघों से होता था। गाँव की रक्षा करने वाला तोपची, सरला जो दुश्मन की माँ थी, बेटे को तोपची बनाना नहीं चाहती।शान्ति बुढिया जो गाय को अपना सब कुछ मानकर जीवित रहेने वाली, जग्गू जो दुश्मन का पिता था, तोपची गांव की रक्षा के लिए अपने प्राण दे बैठा, बाघ किस तरह शान्ति बुढिया की गाय पर वार किया है, सुबेदार सिंह की पल्टन की कहानियाँ, श्रीधर प्रसाद गरीबों पर शोषण करने वाला, पटवारी आदि का चित्रण किया गया। *यमुना के बागी बेटे* उपन्यास में ऐतिहासिक पात्र अष्टवसु, गंगा, शान्तनू, सत्यवती, देवव्रत, अंबा, शाल्व, रेणुका, जमदग्नी, ऋषि, मुनियों का चित्रण मिलता है। वर्तमान पात्रों में सरदार सुन्दरसिंह जो टिहरी में रहकर गढवाल के इतिहास के बारे में पता करता है। नरेन्द्रशाह की नई राजधानी नरेंद्रनगर, चक्रधर जुयाल गरीबों का शोषण करनेवाला, नारियों पर अत्याचार करनेवाला,पद्मदत्त रतूडी लोगों को हमेशा परेशान करनेवाला, किरानदत्त गाँव का भलाई करनेवाला, दुश्मनों को भी सहायता करने वाला जैसे अनेक पात्र हमारे सामने आते है।

भीम अकेला उपन्यास में एक ओर ऐतिहासिक पात्र अर्जुन, श्रीकृष्ण, भीम, कुंती, पांडवों का यात्रा वर्णन, मिलता है तो दूसरी ओर आजादी के लिए प्राण देने वाले,मोलू भरदारी, नागेन्द्र सकलानी, अधमरा तेजसिंह, देवीदत्त रतूडी, अपनी बहादूरी का वर्णन करनेवाला बुधसिंह, शास्त्री इन्दुभूषण, नौटियाल का पल्टन से भागना, सआदती बाबक अंग्रेजों से छुपकर घूमना, जोशी जिसका दुकान जलने पर भी किसी पर इल्जाम नहीं लगाने वाला, सूरमा भरदारी जिसके पच्चीस साल बाद पेंशन देकर फिर उसको रोकदेना। इन सबका वर्णन इस उपन्यास में मिलता है।

हर युग की सामाजिक स्थिति एक जैसी नहीं होती, वह परिवर्तनशील होती है। प्राचीन युग के समाज में वर्ण व्यवस्था, अन्धविश्वास, सतीप्रथा, बालविवाह आदि विभिन्न प्रकार की कुरीतियाँ प्रचलित थी।लेकिन जैसे-जैसे समाज आधुनिक युग में पदार्पण करने लगा वैसे-वैसे ये सारी कुरीतियाँ, रूढियाँ समाप्त होने लगी। लेकिन आज भी कुछ कुप्रथाएँ कुछ मात्रा मेंसमाज में प्रचलित हैं। आधुनिक युग तक आते-आते समाज उच्चवर्ग, मध्यवर्ग और निम्नवर्ग इस प्रकार तीन वर्गों में

विभाजित हो गया। उच्चवर्ग को जीवन की सारी सुख-सुविधाएँ प्राप्त होती गई जबकि मद्यवर्ग जो न मजदूर बनकर रह सकता है और न ही पूँजीपति बन सकता है, नौकरी पेशा करते हुए यह वर्ग अपनी आर्थिक परिस्थितियों से जूझता हुआ नजर आता है, और तीसरा वर्ग सारा जीवन काम करना ही इसी वर्ग की नियती है। इस वर्ग की स्थिति अत्यंत दयनीय है।

गढवाली समाज में अनेक राजाओं ने शासन किया है। यहाँ अंग्रजों ने अपना हक जमा रखा। हुकूमत बदलती रही और शासक बदलते रहे, आम जनता स्वतंत्रता के लिए लडती रही। आम जनता पर किसी राजा का असर नहीं था। जनता बस स्वतंत्रता चाहती थी। देशी राजाओं और अंग्रेजों के पालन का अंत तो हुआ लेकिन परगणाधिकारी, पटवारी आदि अधिकारियों के जुल्म तो गढवाली समाज में प्रजा को सहना ही पडता था। किसान अपने बच्चों का नाम राजकुमार नहीं रख सकते। राजकुमार तो सिर्फ महाराजाओं के महलों में पैदा हो सकते हैं। सामान्य लोगों के घरों में पैदा हुए लडकों के नाम सैणू, बैसाखू, जुठिया, भादू, मुस्सा, फजीति आदि होते थे।

विद्यासागर नौटियाल जी कहते है - *मेरा जन्म एक जंगलाती परिवार में हुआ था, यमुना घाटी का अन्न, जल व वायू मेरे बचपन की हिफाजत करते रहे। अपने जन्म से तीन साल पहले घटित तिलाडी कांड की दारूण कथाएँ मेरे दिल को एक भारी पत्थर के मानिंद दबाती रहती थी। उस स्वाभिमानी रवांल्टों की वीरगाथा को सुनकर मैं उस ऋण से मुक्त होने की योजनाएँ बनाता रहता था।*

अपनी रियासत के एक सुदूर कोने पर बसे रबाई प्रान्त के लोग अपने जल-जमीन-जंगल के हक की रक्षा के लिए अपनी जान कुर्बान करने की तैयारी करने लगे हैं। वे ढंढक पर उतर आए हैं। मर्द लोग भी इन खबरों को सुनते है तो आश्चर्य में डूबने लगते हैं कैसे बहादूर है ये रवांल्टे ? प्रत्येक युग का सामाजिक, राजनीतिक एवं सांसकृतिक जीवन किसी न किसी प्रकार से आर्थिक मूल्यों से प्रभावित रहा है। अर्थ पर ही समाज का विकास आधारित है, यह एक सर्वमान्य सत्य है। भारतीय धर्म के अनुसार अर्थ को मोक्ष प्राप्ति का साधन माना गया है। आजादी मिलने के इतने वर्षों बाद भी देश की अर्थ व्यवस्था पर पूँजीवादी शक्तियों का शिकंजा बना हुआ है। जन साधारण की अभावग्रस्त स्थिति में कोई सुधार नहीं आया। आर्थिक विषमता दिन प्रतिदिन बढती जा रही है। इससे जनता बेरोजगारी,

महंगाई, भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी का शिकार हो रही है। सामान्य व्यक्ति सोचता है कि अर्थभाव सिर्फ निम्न स्तरीय व्यक्ति को ही होता है, लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है। समाज के उच्चवर्ग पूंजीपति वर्ग को भी आर्थिक विषमताओं को भोगना पडता है। नौटियाल जी ने व्यक्ति की आर्थिक समस्याएँ, भूख, गरीबी और विभिन्न प्रकार के अर्थभावों का बहु आयामी चित्रण कर आज के सामाजिक परिवेश की गहरी पहचान प्रस्तुत की है।

नौटियाल जी के अनुसार - यह बात सब को मालूम थी कि गाय की मौत शान्तिबुढिया के जीवन के लिए घातक हो उठेगी। उसे सिर्फ मानसिक आघात नहीं लगा है, सीधे-सीधे उसकी रोजी पर हमला हो गया है। गाय उसके पेट का पालन कर रही थी। किसी घर के अंदर जिस तरह रोजी कमाने वाले की मौत से विकट समस्या खडी हो जाती है, शान्ति के सामने वैसे ही विकराल समस्या खडी हो गई थी।

नौटियाल जी के उपन्यास उन गढवालियों की जीवंत कथाएँ है। घास गूजरों की भैंसों, खडवालों और पशुओं के लिए जीवनदात्री तथा संजीवनी है। घास में जो जीवन छुपा है, उसको नौटियाल जी की नजर से देखने पर ही साहित्य तथा जीवन के संबन्धो को समझा जा सकता है। परन्तु बडे लोग तो घास को केवल अपने बगीचे में उगाते हैं। केवल उसकी हरियाली देखने या नंगे पांव उस पर चल कर ठंडक महसूस करने के लिए। यह घास भी माली उगाता है,वही से पानी देता है काटता है। साहब लोग तो उसे अपने गोरे पावों के तलवे से रौंदते हैं। मरूस्थल या सागर के किनारों पर बसे मछुआरों का जीवन अलग अलग रहने पर भी मानव जीवन के अनुभवों में कोई साँझ बनाए रहता है तो इसी साँझ को समझने के लिए विद्यासागर नौटियाल जी के साहित्य में चित्रित जीवन को भी समझना होगा। घास, जंगल तथा मानव संबन्धों को समझना भी आवश्यक है।विद्यासागर नौटियाल जी के उपन्यासों में लोकगीतों का वर्णन मिलता है। गढवालीके अनेक लोकगीतों में पहली पंक्ति के बोल केवल छंद मिलाने के लिए जोड लिए जाते हैं। वे गीत के असली मतलब पर अपना ध्यान केंद्रित करते हैं।

बाबले की कूची साली, बाबले की कूची ।
गीतों की तांद पर साली, तू दीखती ऊंची।

पहाडियों के ढलानों-भीटों पर एक लम्बी, सींकदार पत्तियों वाली घास उगती है, जिसे बाबला कहते हैं। उसके बुने मजबूत रस्सी से किसी जमाने में झूला पुल भी बनाए जाते थे। पहाडों में घरों को बुहारने के झाड़ू व दीवारों पर चूना पोतने की कूचियां भी उस बाबला घास से बनाई जाती है। गाँव के लोगों के आचार -विचार रहन-सहन, खान-पान, उत्सव-त्यौहार आदि आज भी विद्यमान है। संस्कृति का संबन्ध मनुष्य के उस समस्त घटना क्रम से है, जो कि एक सामाजिक सदस्य के रूप में सोचता और विचारता है अथवा विभिन्न क्रिया-कलाप करता हैं।

नौटियाल के रचना संसार के भीतर जो अनुपम अनुभव है वह व्यक्तियों, जातियों और वर्गों का लंबे अर्से से शोषणकारी एवं वर्चस्ववादी शक्तियों की प्रताडना का अनुभव है। वह अपनी क्षेत्रीयता में वैश्विक है और इस नाते आज की दुनिया में शोषणकारी और वर्चस्ववादी शक्तियों के रूप बदल कर आने पर भी बदस्तूर है। संवेदना के स्तर पर उसकी प्रतीति देकर विद्यासागर नौटियाल जैसे समग्र विश्व को संबोधित हैं और आदमी को बाहर और भीतर से उस शक्ति से निपटने के लिए एक जुट हो जाना चाहिए क्योंकि असमता रूग्णता का पर्याय है। रूग्ण व्यवस्थाओं, सत्ताओं की समाप्ति का मानवीय सपना नौटियाल के कथा साहित्य का केन्द्रीय विषय है। विद्यासागर नौटियाल समूची मनुष्य जाति के प्रति मानव -विरोधी दृष्टि के फैलाव को व्यक्त किया है और मनुष्य को आगाह किया है कि इसे रोकना अब जीवित लोगों का ही दायित्व है।

ग्रंथ-सूचि

आधार ग्रंथ

पुस्तक का नाम	लेखक/ संपादक		प्रकाशन
1. सूरज सबका है	विद्यासागर नौटियाल	1997	राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड 2-38,अंसारी मार्ग दरियागंज नई दिल्ली 11002
2. उत्तर बायां है	विद्यासागर नौटियाल	2003	राधाकृष्ण प्रकाशन प्राईवेट लिमिट्ड जी.17,जगतपुरी दिल्ली 110051
3. झुण्ड से बिछुडा	विद्यासागर नौटियाल	2008	भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन 18,इन्स्टीटयूशन एशिया, लोदीरोड न्यू दिल्ली 110003
4. यमुना के बागी बेटे	विद्यासागर नौटियाल	2006	सामायिक प्रकाशन 3320-21 जटवाडा नेताजी सुभाष मार्ग दरियागंज,नई दिल्ली 110002

5. भीम अकेल	विद्यासागर नौटियाल	1994	वाणी प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली 110002
6. मोहन गाता जाएगा	विद्यासागर नौटियाल	2004	राधाकृष्ण प्रकाशन जी 17, दिल्ली -110092
7. बागी टिहरी गाए जा....	विद्यासागर नौटियाल	2007	सामायिक प्रकाशन नई दिल्ली 110002
8. प्रतिनिधि कहानियाँ	विद्यासागर नौटियाल	2006	किताब घर प्रकाशन 4855-56124 अंसारी रोड दरियागंज नई,दिल्ली 110002

सहायक ग्रंथ

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और उनकी आलोचना	1973	रामविलास शर्मा राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली
2. आठवें दशक की हिन्दी कहानियों में जीवनमूल्य	1994	डॉ.धर्मेश देशमुख विद्याप्रकाशन कानपूर
3. आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में प्रेम की परिकल्पना	1972	विजयमोहनसिंह जीत मल्होत्रा,रचना प्रकाशन
4. आलोचना और आलोचना -इन्द्रनाथ मदान	1979	लोकभारती प्रकाशन इलहाबाद
5. उपन्यास का समाजशास्त्र -विश्वम्भर दयालगुप्त	1979	श्री पब्लिशिंग हाउस अजमेरी गेट,दल्ली
6. उपन्यास और लोग जीवन -रैल्फ फाक्स	1979	पीपुल्स पब्लिकेशन हाउस, अजमेरिगेट दिल्ली
7. उपन्यास स्वरूप, संरचना तथा शिल्प डॉ.शान्तिस्वरूप गुप्त	1980	लेधीग्रंथ निकेतन
8. ऋग्वेद -श्री पंकज व्दिवेदी शर्मा (भाष्यकार)	1962	आर्यसाहित्यमंडल लिमिटेड अजमीर
9. काव्यमीमांसा -केदारनाथ शर्मा		चौखम्भ विद्याभवन वारणासी
10. काव्यालंकार -भामह	1962	राष्ट्रभाषा परिषद पट्ना, बिहार
11. छायावाद का समाजशासत्र-शसिमुदिराज	1988	परिमल प्रकाशन इलहाबाद

12. तीसरा सप्तक -अज्ञेय		नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली
13. धर्म और समाज -डॉ.राधाकृष्णन	1991	राजकमल एंड सन्स नई दिल्ली
14. नारी शोषण आइने और आयाम-आशारानी व्योरा	1992	नेशनल पब्लिशिंग हाउस
15. नया हिन्दी काव्य -शिवकुमार मिश्र	1962	अनुसंधान प्रकाशन कानपूर
16. निबन्ध सोपान - श्रीहरि दामोदर		भारत बुक प्रकाशन भागलपूर
17. बृहत् हिन्दी कोश -के.जि.श्रीवात्सवा	1952	हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास
18. परंपरा इतिहास बोध और संस्कृति -श्यामचरण दुबे	1995	राधाकृष्ण प्रकाशन,दिल्ली
19. मम्मट- डॉ गणपति चंद्रगुप्त	1985	भारतीय विद्याभवन वारणासी
20. मनुस्मृति -टीकाकार रामचन्द्रशास्त्री	2000	विद्याविहार, नई दिल्ली
21. मार्क्सवाद और उपन्यासकार -यशपाल		लोक भारती महात्मागाँधी मार्ग इलाहाबाद
22. मुक्तिबोध-नयी कविता का आत्मसंघर्ष	1977	विश्व भारती प्रकाशन घनवटे चम्बस नागपुर -12
23. मैलाआंचल-फणीश्वरनाथ रेणु	1969	राजकमल प्रकाशन दिल्ली
24. रहीम के काव्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन-मंजुशर्म	1981	साहित्यरत्नालय

गिलास बाजार
कानपुर

25. समाज शास्त्र का विश्वकोश-संजीव महाजन 2009 अर्जुन पब्लिकेशन हौस

26. समीक्षा शास्त्र -कृष्णलाल हंस 1975 अजित बॉक्स फैक्टरी,कानपुर

27. साहित्य का उद्देश्य -प्रेमचंद 1969 हंस प्रकाशन, इलाहाबाद

28. साहित्य और सामाजिक संदर्भ-शिवकुमार मिश्र 1977 कला प्रकाशन

29. साहित्य का समाज शास्त्र-
अवधारणा सिध्दान्त एवं पद्धति-विश्वम्बर दयाल गुप्त 1982 सीता प्रकाशन मोती बजार,हाथरस

30. साहित्य के रूप -राम अवध द्विवेदी 2017 भारतीय भंडार इलहाबाद

31. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका-मैनेजर पांडेय 2001 हरियाणा साहित्य अकाडमी पंचकूला

32. साहित्य निबन्ध -गोविन्द लाल छाबडा 1979 यूनाइटेड बुक हाउस, दिल्ली

33. साजाजिक विचारधारा -रवीन्द्रनाथ मुखर्जी 1988 विवेक प्रकाशन नई दिल्ली

34. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में सामाजिक चेतना - सोफिया मैथ्यू 1996 सूर्य प्रकाशन नई सडक दिल्ली

35. स्त्री उपेक्षिता-प्रभाखेतान 2002 हिन्दी पाकेट बुक्स, प्रैवेट लिमिटेड जी.टी.रोड दिलेशादगार्डन शाहदरा,दिल्ली

36. स्त्री विमर्श कलम और कुदाल के बहाने
-रमणीका गुप्ता 2004 नवलेखन प्रकाशन मेनरोड हजारीबाग

37. श्रृंखला की कडियाँ - महादेवी वर्मा 1977 भारती भंडार इलहाबाद

38. श्रेष्ठ हिन्दी निबन्ध - सं. श्री शरण 1978 प्रेम प्रकाशन युनाइटेड बुकहाउस

39. हिन्दी उपन्यास का शास्त्रीय विवेचन- डॉ.श्रीनारायण अग्निहोत्री 1961 सरस्वती सदर आगरा

40. हिन्दी उपन्यास एक अंतर्यात्रा-रामदरश मिश्र 2004 वाणी प्रकाशन, नईदिल्ली

41. हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ - शशिभूषण सिंहल 1988 आगरा विनोद पुस्तक

42. हिन्दी कहानी का शिल्प विधान -डॉ.राधेश्याम गुप्त 1977 हिन्दी साहित्य संस्थान अजमेर

43. हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी- 1994 चंदुलोक प्रकाशन
-रेवा कुलकर्णी

44. हिन्दी समीक्षा -स्वरूप और संदर्भ- रामदरश मिश्र 1974 द मैकामिलन कंपनी ऑफ इंडिया,दिल्ली

45. हिन्दी साहित्य का इतिहास -आयार्य रामचंद्र शुक्ल सं 2022 नागरी प्रचारणी सभा काशी

46. हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास 1952 राजकमल

		प्रकाशन
हजारी प्रसाद द्विवेदी		1- बी-नेताजी सुभाष मार्ग नई दिल्ली
47. पुस्तक पकी आँखे-विश्णुचंद्र शर्मा		2008 स्वाज प्रकाशन 4697.21-ए अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली-110002

ENGLISH

1. A dictionary of modern critical terms	1987	Roger fowler routledge,revenl
2. Dictionary of Sociolegy		Anmol publication private ltd 4374-4B Ansari road,DariyaganJ New Delhi
3. Towards the socialogy of Novel-Luicen Goldman	1975	Tavi stock publication-11 New better lane London
4. Literature and gender-Good man	1996	Routledge-2 New fitter lane London

पत्र-पत्रिकाएँ

1. अन्यथा	सं-कृष्ण किशोर	2007 जून
2. आर्यकल्प	सं-अवधेश मिश्र	2008 सितंबर
3. आलोचना	सं-कुर्मेदु शिशिर	2002 अप्रैल-जून
4. भाषा	सं-शशि भरध्वाज	2000 जून
5. हंस	सं-राजेन्द्र यादव	1994 आगस्त